वीर केशरी शिवाजी

लेखक

नन्दकुमारदेव शर्मा

प्रकाशक

हिन्दी पुस्तक एजेन्सी

१२६, हरिसन रोड, कलकत्ता

धम संस्करण | १९८० | खद्दरकी जिल्द ४)
रेशमी जिल्द ४।)

प्रकाशक—
बैजनाथ केडिया
प्रोप्राइटर
हिन्दी पुस्तक एजेन्सी
१२६, हरिसन रोड, कलकत्ता

जगदीशनारायण तिवारी द्वारा
मुद्रित—
"वणिक प्रेस"
१, सरकार लेन, कलकत्ता

दो शब्द

प्रिय पाठको! आज मैं 'हिन्दी-पुस्तक एजेन्सी-मालाकी २१वीं संख्या 'वीर केशरी शिवाजी' आप लोगोंकी भेंट करता हूं। इस वीर पुरुषकी उज्ज्वल कीर्त्तिका पठन पाठन और मनन करनेसे भारतकी भावी सन्तान भी वीर बनेगी इसी उद्देश्यसे गौ ब्राह्मण भक्त छत्रपति शिवाजीकी जीवनी इसमें प्रकाशित की है। यह उसी शिवाजीकी जीवनी है जिन्हें हिन्दू आज भी शिवजीका अवतार मानते हैं, जिनके विषयमें भूषणने कहा है कि 'शिवाजी न होते तो सुनति होती सबकी।' पाठको! क्या औरङ्गजेबी शासन आपको याद है? क्या उस ज़मानेके लूट खसोट, मन्दिरों और देव मूर्तियोंका तोड़ा जाना, देवस्थानोंपर लगे हुए कर, बलात् हिन्दुओंका मुसलमान बनाया जाना आदि बातें आप भूल सकते हैं? यदि नहीं तो उन अत्याचारोंसे बचानेवाले, उस समयके भारत-गगनपर मँडलानेवाली विपद्-घटाओंको हटाने वाले सूर 'शिवा'को भी आप कदापि न भूले होंगे। शिवाजीकी जीवनी एक सच्चे राष्ट्रवीर, धर्म-वीर, कर्म-वीर, गौ-ब्राह्मण

भक्तकी जीवनी है। समय समयपर भारतमें भगवान्‌के कथनानुसार—"यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत, अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्"—जिन महापुरुषोंका अवतार करता है उन्हींमेंसे एक हमारे चरित्रनायक भी थे। इसके लेखक हिन्दी-संसारके प्रसिद्ध इतिहास लेखक 'प० नन्दकुमार देव शर्मा' हैं जिनकी ओजस्विनी भाषा और असाधारण प्रतिभासे हिन्दी-पाठक चिरपरिचित हैं। पुस्तकको यथाशक्ति सुन्दर बनानेमें भी मैंने चेष्टा की है।

विनीत—

—प्रकाशक

निवेदन

संसारके महापुरुषोंमें महाराजा शिवाजीका स्थान भी अत्यन्त श्रेष्ठ और उच्च है। बल्कि यों कहना चाहिये कि शिवाजी उन महापुरुषोंमेंसे थे, जो अपनी चमत्कारिक प्रतिभा और अलौकिक शक्तिसे इतिहासका पन्ना पलट देते हैं। जिस समय हिन्दू-जाति अन्याय और अत्याचारकी चक्कीमें पिस रही थी, जिस समय हिन्दू जातिके अनेक लाल अपने देश और जातिके गौरवकी रक्षा न करके, अन्यायी और अत्याचारी गुटमें सम्मिलित होना ही उन्नतिकी चरम सीमा समझते थे, उस समय महाराष्ट्र केशरी शिवाजीने अन्याय और अत्याचारोंका दमन करके महाराष्ट्र प्रान्तमें स्वराज्य स्थापित करके संसारको यह दिखा दिया कि अभी भारत "वीर विहीन" नहीं हुआ है।

शिवाजीकी प्रतिभा सर्वतोमुखी थी। राज काजमें, प्रजा पालनमें, सैन्य-सञ्चालन और सङ्गठनमें, शत्रुओंके दमन करनेमें उन्होंने अपनी अलौकिक प्रतिभाका परिचय दिया था। परन्तु इतिहासकारोंने जितना शिवाजीके साथ अन्याय किया है, उतना और किसीके साथ किया है या नहीं, इसमें सन्देह है। उनके समकालीन मुसलमान इतिहास लेखकोंने ईर्ष्या-द्वेषसे

प्रेरित होकर सत्यकी हत्या करनेमें सङ्कोच नहीं किया है। इन इतिहास-लेखकोंने बिना किसी सङ्कोचके शिवाजीको चोर, डाकू, लुटेरा लिखनेमें ही अपने कर्त्तव्यकी इतिश्री समझी है। इन मुसलमान इतिहास-लेखकोंके पद चिह्नोंपर चलनेवाले ग्राण्ट डफ आदि अङ्गरेज लेखकोंने भी शिवाजीके चरित्र चित्रण करनेमें यथोचित कर्त्तव्यका पालन नहीं किया है। पर सत्य छिपानेसे नहीं छिपता है, कभी न कभी प्रकट हो ही जाता है।

पिछले कई वर्षोंसे महाराष्ट्रके अनेक विद्वान अपने इतिहासका अनुशीलन, मनन और अनुसंधान कर रहे हैं। उन्होंने इतिहास सम्बन्धी बहुत सी नयी बातोंका पता लगाकर अनेक भ्रमोंको दूर कर दिया है। शिवाजीपर जो आक्षेप किये जाते थे, उनकी भी निस्सारता प्रकट कर दी है। महाराष्ट्र विद्वानोंकी खोज और परिश्रम व्यर्थ नहीं हुए हैं। इसका प्रत्यक्ष परिणाम देखनेमें यह आ रहा है कि कुछ दिनों पहले जो लोग, शिवाजीके प्रति चोर, डाकू, लुटेरा आदि कहकर घृणा प्रकट करते थे, वे आज शिवाजीका गुणगान कर रहे हैं। कुछ दिनों पहले जिन सरकारी, और सरकारसे सहायता पानेवाले स्कूलोंकी पाठ्य पुस्तकोंमें शिवाजीको चोर, डाकू, लुटेरा आदि कहा जाता था, आज उन पाठ्य पुस्तकोंमें भी शिवाजीके प्रति श्रद्धा, भक्ति प्रकट की जा रही है। यहांतक कि मार्गशीर्ष कृष्ण ४—संवत् १९७८ वि०—१९ वीं नवम्बर सन् १९२१ ई०) को प्रिंस आफ वेल्सने शिवाजीके स्मारककी नींव रखते समय उनकी वीरता, राजनीतिज्ञता और

शिवाजी ।

प्रथम परिच्छेद

महाराष्ट्रकी विशेष विशेषताएं ।

"ये नदियाँ ये झील सरोवर कमलोंपर भौंरोंकी गुञ्ज,
मधु सुरीले बोलोंसे अनमोल घनी वृक्षोंकी कुञ्ज ।
ये पर्वतकी रम्य शिखा औ शोभा सहित चढ़ाव उतार,
निर्मल जलके सारे झरने सीमा रहित महा विस्तार ।"

प्राचीन ग्रन्थकारोंने भारतवर्षके दक्षिण भागको कई भागोंमें बांटा है। उनमें पांच मुख्य हैं—द्रविड़, कर्नाटक, आन्ध्र वा तैलंगण, गोंडवाणा और महाराष्ट्र। परन्तु मुसलमानोंका "दक्खिन" अथवा दक्षिण इतना विस्तृत और बड़ा न था। उसमें प्राय समस्त तैलंग तथा गोंडवाणेका कुछ अंश और महाराष्ट्रका अधिक भाग (कृष्णा और नर्मदाका मध्यवर्त्ती प्रदेश) मिला हुआ था।

प्रकृतिने महाराष्ट्र प्रदेशपर बड़ी कृपा की है। महाराष्ट्र प्रदेशको प्रकृतिकी ओरसे वे बातें प्राप्त हैं, जिनसे मैदान, अरब समुद्र तथा हिन्द महासागरमें गिरनेवाली गङ्गा, सिन्ध एवं अन्य

बड़ी बड़ी नदियोंके अधिवासी वञ्चित हैं। महाराष्ट्रमें सबसे विशेषता यह है कि यह दोनों ओर बड़े बड़े पहाड़ोंकी श्रेणियों से ढका हुआ है, अर्थात् सह्याद्रि श्रेणी उत्तरसे दक्षिणकी ओर, सतपुड़ा तथा विन्ध्या पर्वतकी श्रेणियां पूर्वसे पश्चिमको फैली हुई हैं। इसके अतिरिक्त और छोटी छोटी पर्वत श्रेणियां हैं, जिनके कारण यहांकी भूमि विषम और ऊंची-नीची बन गयी है। इस प्रदेशमें एक छोरसे दूसरे छोरतक दुर्गम घाटियों का प्रकृतिकी ओरसे ऐसा सिलसिला बना हुआ है जैसा भारत के और किसी भागमें नहीं पाया जाता। इन पहाड़ियोंपर जो किले बने हुए हैं उनसे महाराष्ट्र प्रान्तके निवासियोंको अपनी राजनीतिक आकांक्षाएं और इच्छाओंकी पूर्त्तिमें विशेष सहायता मिली थी। महाराष्ट्रके राजनीतिक उत्थानमें ये किले परम सहायक हुए थे।*

*—महाराष्ट्रके किलोंके [illegible] (Revd [illegible] ell) ने [illegible] है —'Once they (the hill forts) were everything the [illegible] centres of political life, and great nurseries of [illegible] spirit, the keys and keepers too of the surrounding coun tries the refuge in every hostile storm of invasion the receptacles of wealth and wisdom the much desired prize for which each conqueror strove ..... the seats of Govern ment the schools of youth the resource of a dignified old age Undoubtedly too, they were foster mothers of Maharatta nationality and interwoven with every element of the national greatness They reared the hardy tribes which have been called the Goths of India on their summits trea ties were framed and terms were signed with the [illegible]

पहाड़ोंके कारण यह प्रदेश सुरक्षित है और इन पर्वतोंपर जो किले हैं उनके कारण और भी सुरक्षित होगया है। किसी कविका निम्नलिखित पद्य महाराष्ट्र प्रदेशके विषयमें खूब फबता है —

> "बहु विधि दृश्य अदृश्य कला कौशल सौं छायो,
> रक्षन निधि नैसर्ग मनहु यिरि दुर्ग बनायो।
> अथवा विमल बटोर विश्वकी निखिल निकाई
> गुप्त राखिबे काज सुदृढ़ सदूक बनाई।"

मुसलमानोंके समयमें ये किले महाराष्ट्र प्रदेशके मुख्य स्तम्भ थे और राजकीय इतिहासमें इनका बड़ा भारी महत्त्व है। आगे इस पुस्तकमें पाठकोंको पता लगेगा कि जब महाराष्ट्र केसरी छत्रपति महाराज शिवाजीने जननीसे बढ़कर अपनी जन्म भूमि महाराष्ट्रको पराधीनताकी बेड़ीसे मुक्त किया था तब उस समय उन्होंने इन किलोंसे कितना लाभ उठाया था।

इस प्राकृत बनावटका महाराष्ट्र प्रान्तके जल वायुपर भी विशेष प्रभाव हुआ है। उत्तरकी भांति महाराष्ट्रमें न तो बहुत

---

princes of the plains of India in their subterranean chambers were carried the plunder of great cities in all parts of Asia Along their proud ramparts troops of richly dressed and well armed men were ever moving Bright silken ensigns threw broad folds over their towers and the numerous cannon of their bristling battlements woke up ever and anon echoes the schools of the surrounding mountains It was a gay and gallant scene — Rev Gell

गर्मी पड़ती है और न बहुत जाड़े पड़ते हैं। यहांका जल-वायु आरोग्यवर्द्धक है। यहांके निवासी वर्षभर आमन्द ही मनाते हैं। पहाड़ोंके कारण यद्यपि भूमि अति उर्वरा नहीं है पर ऊसर भी नहीं है। नदी-तटस्थ पृथ्वी अत्यन्त उपजाऊ है। प्राकृतिक सहायतासे किसी समय जैसे यूनानवासी असीम शक्तिशाली हुए थे ठीक उसी प्रकार महाराष्ट्र निवासियोंने भी अपनी उन्नति की थी।

प्राकृतिक सुविधाओंके अतिरिक्त यहांके निवासियोंके शीलका भी इस प्रान्तके इतिहासपर विशेष प्रभाव पड़ा है। जिस समय आर्यगण उत्तर भारतमें आये थे उस समय यहां द्राविड़ अधिप थे। द्राविड़ोंसे आर्योंका भयङ्कर युद्ध हुआ, उसमें द्राविड पराजित हुए और दक्षिणमें चले गये। कुछ काल पीछे आर्य लोग भी दक्षिणकी ओर बढ़े, दक्षिणी प्रायद्वीपमें द्राविड़ोंका सिक्का जमा हुआ था। यहां उत्तर भारतके समान आर्य लोगोंको द्राविड़ों से युद्धमें सफलता प्राप्त नहीं हुई। इस प्राकृत परिस्थितिके कारण महाराष्ट्र देश ऐसे मनुष्योंसे बसा हुआ था, जिनमें आर्यों और द्राविड़ोंका लगभग समान ही भाग था। दोनों जातियोंके गुण तो उनमें मौजूद थे, परन्तु उनके दुर्गुण उनमें बढ़ने नहीं पाये थे। इस सम्मिश्रणका परिणाम किसी अंशतक भाषाकी विचित्रतामोंमें दिखलायी पड़ता है जिसका निकास तो द्राविड़ोंसे है पर जिसकी उन्नति और रचनापर आर्योंका भी पूरा प्रभाव पड़ा है। उनकी शारीरिक बनावट उत्तरी हिन्दूके

लोगोंकी भांति सुन्दर, कोमल और सुडौल नहीं हैं। पर वे दक्षिणी द्राविड़ोंकी भांति अत्यन्त कठोर और काले भी नहीं हैं। जिस प्रकार महाराष्ट्र आर्योंमें पहलेके बसे और बादमें आये हुए सीदियन आक्रमणकारियोंका मिश्रण है उसी तरह आर्योंके पहलेके बसे हुए जङ्गली, भील कोल, रामोशी और अन्य नीची जातियाँ तथा वर्णको द्राविड जातियोंमें भी सम्मिलित हैं।

इस मिश्रणसे महाराष्ट्रकी संस्थायोंमें और धर्ममें कुछ ऐसी समता है जो हिन्दुस्तानमें अन्यत्र नहीं पायी जाती है। कई जातियोंके सम्मिश्रणसे यहां एक नया जीवन उत्पन्न हो गया था। उत्तरीय भारतमें जो संस्थाएं अज्ञात थीं वे दक्षिण भारतमें उत्पन्न हुई थीं। इनमें ग्राम-जनोंकी संस्थाएं मुख्य हैं। अन्य संस्थाओंकी अपेक्षा ग्राम-संस्था अर्थात् गांवोंके प्रबन्धकी विधि बहुत ही अनोखी और प्रसिद्ध है। ग्राम-संस्थाओंकी इतनी उन्नति हुई कि विदेशियोंके आक्रमणके पीछे भी उनका स्वरूप बना हुआ है। इन संस्थाओंमें प्रजातन्त्र राज्यके स्थापनका मूल था। पर दुर्भाग्य-वश यह संस्थाएं उस कोटिमें पूर्णतया परिणत नहीं हुई, तथापि इसके द्वारा स्वतन्त्रताका बीज बढ़ता आ रहा है और राज्य प्रबन्धके बड़े बड़े उद्देश्य सिद्ध हुए हैं। स्वर्गीय न्याय-मूर्त्ति रानाडे अपनी पुस्तक "राइज़ आव मराठा-पावर"में लिखते हैं कि "पञ्चायतोंसे ग्रामोंके प्रबन्धकी प्रथा यहां अभीतक प्रचलित है, जो वर्त्तमान शासन विधिका एक मुख्य अङ्ग है और जिसके द्वारा सरकारमें ऊंचे ऊंचे लक्ष्य और उद्देश्य सिद्ध होते हैं। ब्रिटिश

सरकारको यह इतनी लाभदायक सिद्ध हुई कि कुछ परिवर्तनों और सुधारोंके साथ सिन्ध और गुजरात जैसे प्रान्तोंमें भी उसने उसी प्रथाका अनुसरण किया है, जहां मुसलमानोंका प्रभुत्व और प्रभाव इतना प्रबल था कि उन्होंने इस प्रथाका समूल नष्ट कर दिया था।"

पञ्चायत और ग्राम प्रबन्ध विधिके साथ ही साथ रैयतवाड़ी, मिरासी आदि संस्थाएं पहले समयकी स्वतन्त्रताकी द्योतक हैं। इन संस्थाओंसे महाराष्ट्रोंको स्वराज्य स्थापनमें विशेषरूपसे सहायता प्राप्त हुई थी क्योंकि इन संस्थाओंके कारण महाराष्ट्र प्रायः ऐक्य सूत्र-बद्ध थे।

उत्तर भारतमें मुसलमानोंके जितने जल्दी पैर जमे, उतने दक्षिण भारतमें नहीं जमे। इसका एक कारण यह था कि पहले मुसलमान उत्तर भारतमें ही आये थे। संवत ८५७ वि० से मुसलमानोंकी निगाह उत्तर भारतपर गड़ी थी, संवत् १०५८ वि० से उन्होंने उत्तर भारतपर आक्रमण किये और संवत् १२५१ वि० से मुसलमानोंका उत्तर-भारतमें एकछत्र राज्य स्थापित हो गया था, उसके सौ वर्ष पीछे अर्थात् १३५१ वि० सन् १२९४ ई०में मुसलमानोंका पहला आक्रमण दक्षिणपर हुआ। आक्रमणकर्त्ता अलाउद्दीन खिलजी था। उस समय यादववंशका राजा रामदेव देवगिरि अथवा देवगढ़का शासक था। रामदेव पराजित हुआ। खिलजी बहुतसा धन और इलिचपुरका इलाका लेकर दक्षिणसे लौट आया। अलाउद्दीनके राजत्वकालमें, उसके

सेनापति मलिक काफूरने दक्षिणपर तीन बार चढ़ाई की थी। और संवत् १४०४ वि० सन् १३४७ ई० तक महाराष्ट्रपर दिल्लीके सुलतानोंका प्रभुत्व रहा था। परन्तु मुसलमानोंके प्रभुत्व हो जानेपर भी बीच बीचमें राजक्रान्तियां होती रहीं। जब कभी दक्षिणके निवासी अवसर देखते तब ही वे मुसलमानोंसे लड़ बैठते थे। इसका परिणाम यह हुआ कि संवत् १३८० वि० सन् १३२३ ई० के पीछे तुङ्गभद्राके किनारे विजयनगरमें एक हिन्दू-राज्यकी नींव पड़ी जो लगभग दो सौ वर्षतक रहा था। संवत् १३८२ वि० सन् १३२५ ई० में मुहम्मद तुगलक दिल्लीका बादशाह हुआ। उसने देवगिरिका नाम दौलताबाद रखकर, उसे अपनी राजधानी बनानेकी चेष्टा की, उसका परिणाम यह हुआ कि उसके राज्यमें अशान्ति फैल गयी। इस उलट-फेरमें थोड़े दिनों पीछे बहमनी राज्य स्थापित हुआ। लगभग पौने दो सौ वर्षतक बहमनी राज्यका दौरदौरा रहा था। पीछे बहमनी राज्यके पांच टुकड़े हो गये थे। और जब शिवाजी महाराष्ट्रकी रङ्गभूमिपर आये थे तब बहमनी राज्यके पांच टुकड़ोंमेंसे तीन टुकड़े—निजामशाही, आदिलशाही और कुतुबशाही—मौजूद थे। परन्तु मुसलमानी सत्ताके जम जानेपर भी वहां हिन्दुओंका हिन्दुत्व नष्ट नहीं हुआ। यही नहीं, किन्तु हिन्दुओंकी सहायता बिना मुसलमानी शासनका कोई काम ही न चलता था। सेना, व्यापार इत्यादि अनेक बातोंमें मराठोंके बिना मुसलमानी सत्ता बिलकुल लंगड़ी थी। अनेक राजनीतिज्ञ और शूरवीर

नाश कर दिया जाय। संसारमें ऐसे बहुत कम विजेता मिलेंगे जो इस नियमसे बचे हों, जिन्होंने विजित जातिकी सभ्यता मटियामेट करनेकी चेष्टा न की हो। संसारमें सभ्यताका घमण्ड करनेवाली जातियां भी इस नियमसे नहीं बची हैं। पोलेण्डकी सभ्यता नष्ट करनेके लिये उसके विजेताओंने क्या क्या उद्योग नहीं किये थे ? आयर्लैंडके बच्चोंको अपनी मातृभाषा गेलिक पढ़नेसे क्यों वञ्चित किया जाता था ? भारतकी प्राचीन सभ्यतापर कुठार चलानेके लिये आजकल भी क्या क्या प्रयत्न नहीं किये जाते हैं ? महाराष्ट्र प्रान्तमें तत्कालीन विजेताओंको वहांकी सभ्यता मटियामेट करनेमें सफलता प्राप्त नहीं हुई, उसका कारण यह है कि राज्यक्रान्तिके साथ ही साथ वहां समय समयपर धर्मक्रान्ति भी होती रही है। संसारमें प्रायः यह एक प्राकृतिक नियम देखनेमें आता है कि जब एक ओरसे कोई क्रिया होती है तब दूसरी ओरसे प्रतिक्रिया भी होती रहती है। जबसे हिन्दूधर्म, हिन्दू-सभ्यतापर आक्रमण हुआ था तबसे उसके प्रतिकारके लिये भी किसी न किसी शक्तिका आविर्भाव होता रहा था। यह शक्ति और कुछ नहीं, तत्कालीन साधु सन्तोंका धर्म प्रचार था। न केवल महाराष्ट्रमें ही, किन्तु समस्त भारतमें साधु सन्त लोग धर्म-जागृतिका काम करते रहे थे। महाराष्ट्रके बाहर अन्य प्रान्तोंमें गुरु नानकदेव, सूरदास, तुलसीदास, कबीर, रामानन्द, चैतन्य महाप्रभु, चरणदास, सुन्दरदास, दादूदयाल आदि कितने ही साधु महात्माओंने पञ्जाब, बङ्गाल,

उत्तर भारत तथा राजस्थानमें समय समयपर धर्म जागृति की थी, परन्तु महाराष्ट्रके साधु-सन्तोंके प्रयत्नमें धर्मक्रान्तिके अन्तर्गत राजक्रान्ति भी थी। चौदहवीं शताब्दीमें महाराष्ट्रके नेताओंने देखा कि विदेशी राज्यसत्ताके कारण संस्कृत साहित्यका पुनरुद्धार नहीं हो सकता है। अतएव उन्होंने धर्म और कर्त्तव्य बतलानेवाले संस्कृत ग्रन्थोंका मराठीमें अनुवाद करके सर्वसाधारणमें जागृति प्रचार करनेका विचार किया। चांगदेव, मुकुंदराज, वहिरंगभट्ट इत्यादि भक्ति मार्गावलम्बी कवियोंने कई भक्ति-रसपूर्ण काव्य लिखकर जन साधारणकी रुचि धर्मकी ओर आकर्षित की। परन्तु अवनतिका प्रवाह बदलनेका सामर्थ्य इनमें न था। मुकुन्दराजकी कविता शुद्ध तथा भक्ति-रसपूर्ण होनेसे लोगोंकी रुचि उसपर बहुत हो गयी थी। साधुवर्य ज्ञानेश्वर महाराज चौदहवीं शताब्दीके मध्यमें हुए थे। उन्होंने श्रीमद्भगवद्गीतापर ज्ञानेश्वरी टीका की थी। इसपर लोग बहुत मोहित हुए थे। आज भी महाराष्ट्रमें ज्ञानेश्वरी टीकाका लोग उतना ही आदर करते हैं जितना समस्त भारतमें गोस्वामी तुलसीदासकृत "रामचरित मानस" का है। ज्ञानेश्वरके भाई निवृत्तिनाथ, सोपानदेव तथा उनकी बहिन विदुषी मुक्ताबाईने महाराष्ट्रके उद्धारके लिये प्रबल प्रयत्न किया था। उनके समकालीन नामदेव, गोरा कुम्हार, उद्धव चिद्घन चोखामेळा इत्यादि अनेक भक्त-कवि हुए थे जिन्होंने अपनी रसीली और भक्ति प्रदर्शिनी कविता तथा उपदेशोंसे महाराष्ट्र प्रदेशमें धर्म

जागृति उत्पन्न की थी। स्मरण रखना चाहिये कि चोखा मेला अतिशूद्र जातिका था। चोखामेला ही क्यों पन्द्रहवीं शताब्दीमें रोहिदास नामक चमार प्रसिद्ध साधु कवि हो गया है। जिसके रचित भजन अबतक लोग बड़े चावसे गाते हैं। एकनाथ, तुकाराम, नरहरि सोनार, सावतामाली, शेखमहम्मद, सेतोबायवार इत्यादि साधु और कवि १६ वीं शताब्दीके अन्त तथा सत्रहवीं शताब्दीके पूर्वार्द्ध समयमें हुए थे।

उत्तर भारतमें मियाँ नजीर रसखान आदि मुसलमान कवि जिस प्रकार राम और कृष्णके भक्त हो गये हैं उसी प्रकार महाराष्ट्र प्रदेशमें शेखमहम्मद मुसलमान होनेपर भी रघुकुल शिरोमणि भगवान श्रीरामचन्द्रके भक्त थे। शेख सुलतान, शेख शरीफ आदि मुसलमान कवि भी रामभक्त थे। हिन्दुओंके समान हो ये लोग महाराष्ट्र प्रदेशके हिन्दू-मुसलमानोंको एकता तथा देश सेवाका उपदेश करते थे।

प्रायः यह देखनेमें आता है कि पुराने रीति-रवाज और संस्थाएँ कितनी ही बुरी और जरा जीर्ण क्यों न हो गयी हों पर लोगोंको उनसे ऐसा मोह हो जाता है कि उनके विरुद्ध आवाज उठानेवालोंके वे शत्रु हो जाते हैं। जिस समय महाराष्ट्र प्रदेशमें साधु महात्माओंने भक्ति-मार्गका प्रचार और सुधारका आरम्भ किया था, उस समय पुराने विचारके कर्मकाण्डी ब्राह्मण इन लोगोंके विरुद्ध हुए थे। श्रीसमर्थ रामदास स्वामी ब्राह्मण थे, तुकाराम वैश्य थे, परन्तु कर्मकाण्डी ब्राह्मण उन्हें

कुलोत्पन्न रामदास स्वामी और तुकारामसे लेकर नीच जातियोंके साधुओंतकके विरोधी थे पर इन कर्मकाण्डी ब्राह्मणोंके विरोधकी परवा न करते हुए, साधु सन्तगण अपने कर्त्तव्यमें दृढ़ चित्त रहे, जिसका परिणाम यह हुआ कि विरोध शान्त हो गया और उन्हें अपने उद्देश्यमें सफलता प्राप्त हुई।

ज्ञानेश्वरके अनुयायी तथा अन्य साधु सन्तोंके मस्तिष्कमें स्वराज्यकी कल्पना उत्पन्न नहीं हुई थी। धर्म-जागृति और समाज सुधारके अतिरिक्त इनके जीवनका और कोई उद्देश्य न था। जाति भेदके कारण उत्पन्न होनेवाले उच्च नीचत्वके भाव दूर करनेमें ज्ञानेश्वरियोंने जितने प्रयत्न किये थे उतने शायद ही और कभी हुए होंगे। सब लोगोंमें समान भाव रखना और आत्मिक बलकी जागृति करना, ज्ञानेश्वरी साधुओंके जीवनका मुख्य उद्देश्य था। एकनाथके अनुयायियोंमें अवश्य स्वराज्य स्थापनके विचार थे। जैसे शिवाजीके समयमें श्रीसमर्थ रामदास स्वामी महाराष्ट्रके धर्मगुरु थे, वैसे ही शिवाजीके पिता शाहजीके समयमें एकनाथ स्वामी महाराष्ट्रके शिक्षक थे।

यद्यपि ज्ञानेश्वरी साधुओंके मस्तिष्कमें स्वराज्यकी कल्पना उत्पन्न नहीं हुई थी तथापि उन्होंने धार्मिक और सामाजिक सुधार करके श्रीसमर्थ रामदास स्वामीके कार्यक्षेत्रको सुगम कर दिया था। ज्ञानेश्वरी साधुओंसे पहले लोग कर्मकाण्डमें ही समस्त कर्त्तव्योंकी इतिश्री समझते थे। हीन जातियोंका तिरस्कार किया जाता था। ज्ञानेश्वरी साधुओंके प्रयत्नसे

धार्मिक और सामाजिक विषयमें महाराष्ट्र प्रदेशके निवासियोंके विचार और भावोंमें परिवर्त्तन हुआ। उन्होंने एक उच्च आदर्श उपस्थित किया जिसका परिणाम यह हुआ कि व्यक्तियोंके आचार विचार सुधर गये। ज्ञानेश्वरी साधुओंने जितने ही संघ स्थापित किये, जिनमें राष्ट्रीय जीवन डालनेका अवसर श्रीसमर्थ रामदास स्वामीको प्राप्त हुआ। यदि समर्थसे पूर्वकालीन साधु महाराष्ट्र प्रदेश निवासियोंके आचार विचार सुधारनेकी चेष्टा न करते तो श्रीसमर्थ रामदासका काम अत्यन्त दुर्गम हो जाता। इसमें सन्देह नहीं है कि जिस समय रामदास हुए, उस समयतक उनके पूर्वकालीन साधु-सन्तोंने अपने उपदेशोंसे जनसाधारणमें धार्मिक तेज, आत्मिक बल तथा आत्मविश्वास और कर्त्तव्यकी जागृति उत्पन्न कर दी थी। जमीन तैयार होनेके पीछेका काम करनेके लिये समर्थ रामदास इस संसारमें आये थे। समर्थ रामदासने महाराष्ट्र प्रदेशमें एक नवीन जागृति उत्पन्न कर दी। उनके सदुपदेशोंसे महाराष्ट्र प्रान्तमें नवीन जीवनका सञ्चार हुआ। समर्थ रामदास स्वामी महाराष्ट्रमें सच्चा राष्ट्र धर्म प्रचलित करनेमें समर्थ हुए थे।

समर्थ रामदास स्वामीने राष्ट्र और धार्मिक जीवनकी समस्त समस्यायें हल की थीं। उन्होंने केवल आध्यात्मिक उपदेश ही नहीं दिये थे, किन्तु उन्होंने सामाजिक और राजनीतिक अत्याचारोंके विरुद्ध भी अपनी आवाज उठायी थी।

महाराष्ट्र प्रान्तके तत्कालीन शासकोंकी साधु-सन्तोंपर वक्र दृष्टि रही थी, कितनी ही बार साधुओंको शासकोंका कोप भाजन बनना पड़ा था। महाराष्ट्र प्रदेशके तत्कालीन शासकोंने कितने ही साधुओंको कारागारमें ठूंस दिया था परन्तु समर्थ रामदास स्वामीने शासकोंके पास स्वयं जाकर मुसलमानोंको समझाकर उन्हें कैदसे छुड़ाया था। स्वयं रामदास स्वामीपर भी राजपुरुषोंकी वक्र दृष्टि हुई थी, परन्तु वक्तृत्व-चातुर्यसे उन्होंने अपनेको भी बचाया तथा औरोंकी भी रक्षा की। इस प्रकारके गुण दूसरे साधुओंमें न थे। अस्तु—

पाठकोंने ऊपर लिखे हुए वृत्तान्तको पढ़कर अनुमान कर लिया होगा कि उस समय महाराष्ट्र प्रान्तमें पहले धर्मक्रान्ति हुई थी। उसके पीछे नैतिक उन्नति हुई। धर्म-क्रान्तिका मराठोंके चरित्रपर विशेष प्रभाव पड़ा। उनके आचरण सुधर गये, समाजमें प्राय एक प्रकारके विचार उत्पन्न हो गये। आत्म विश्वास उत्पन्न हुआ और इन सद्गुणोंका परिणाम राष्ट्रीय जीवनके अभ्युदयमें हुआ।

मुसलमानोंका उद्देश्य भारत आनेमें अपने व्यापारकी उन्नति करनेका न था। वे अङ्गरेजोंके समान ईस्ट इण्डिया कम्पनी बनाकर हिन्दुस्तानमें नहीं आये थे, न उनकी पहले राज्य-स्थापन करनेकी लालसा थी। यद्यपि पीछे उनकी राज्य स्थापनकी तृष्णा बढ़ गयी थी तथापि पहले वे हिन्दुस्तानमें धर्मसम्बन्धी अपने विचारोंका प्रचार करने ही आये थे। उत्तर-

के भजन गाते हुए जाते थे जिसका प्रभाव भी पड़ता था। इसका परिणाम यह हुआ कि गांव गांवमें संघ स्थापित हो गये, यही महाराष्ट्रकी जागृतिका संक्षेपमें इतिहास है।

सिक्ख सम्प्रदायके प्रवर्तक बाबा नानक, हिन्दू मुसलमानोंमें कुछ भेद-भाव न करते थे। गुरु नानकके पीछे सिक्ख सम्प्रदाय में जो हिन्दू जबर्दस्ती मुसलमान बना लिये गये थे, उनमेंसे जो कोई इस्लाम मतका परित्याग करके हिन्दू बनना चाहता था, उसको सिक्ख-समाज अपने मतकी दीक्षा देकर अपने मतमें सम्मिलित कर लेता था। महाराष्ट्रोंने भी इस प्रकारकी शुद्धि आरम्भ कर दी थी, कि जो कोई मराठा बलपूर्वक मुसलमान कर लिया जाता था उसको वे शुद्ध करके पुनः हिन्दू कर लेते थे। शिवाजीके समयमें कई व्यक्तियोंको शुद्ध किया गया था। बाबा जी निम्बालकर नामक एक वीर पुरुष किसी विपत्तिमें फंसकर मुसलमान होगया था। उसका विवाह आदिलशाहकी पुत्रीके साथ हुआ था। परन्तु उसको इस्लाम मतमें रहना पसन्द नहीं था, वह पुनः हिन्दूधर्ममें आना चाहता था। पर समाजके भयके कारण कोई उसे हिन्दू-समाजमें सम्मिलित करनेके लिये तैयार न था। अन्तमें उसने शिवाजीकी माता श्रीमती जीजाबाई से अपनी इच्छा प्रकट की। उस वीर माताने अनेक महाराष्ट्रों को इकट्ठा किया और उन सबको समझाया कि निम्बालकरको शुद्ध करके हिन्दू कर लेना चाहिये। अन्तमें महाराष्ट्रगण जीजाबाईके प्रस्तावसे सहमत हुए और निम्बालकरको शुद्ध

करके हिन्दू कर लिया। इतना करके ही जीजाबाई चुप नहीं हुई किन्तु आगे उन्होंने यह काम किया जो आजकलके अनेक समाज सुधारक भी करनेको तैयार न होंगे। उन्होंने अपनी पोती अर्थात् शिवाजीकी पुत्री श्रीमती सखूबाईके साथ शुद्ध किये हुए निम्बालकरका विवाह कर दिया। यह घटना सं० १७१५ वि० में हुई थी। महाराष्ट्रोंका यह शुद्धि कार्य पोर्तगीजोंके समयमें भी रहा था। मीराबाईके समान मुक्ताबाई, आकाबाई, वेणाबाई आदि कई धर्मोपदेशिकायें हुई थीं जिन्होंने अपने सदुपदेशोंसे महाराष्ट्र प्रान्तमें धार्मिक क्रान्ति की था। पीछे उस धार्मिक क्रान्तिसे महाराष्ट्रमें राज्यक्रान्ति कैसे हुई, आगेके पृष्ठोंमें शिवाजीके चरित्रमें इसी विषयकी विवेचना की गई है। जिन लोगोंका यह कहना है—कि महाराष्ट्रके हिन्दुओंकी अत्याचारयुक्त लुटेरेपनकी अग्नि यद्यपि कुछ कालतक दबी रही थी, तथापि विजयी मुसलमानोंका सामना करनेसे उनके छिपे हुए अङ्गारे निकल पड़े और उन्होंने प्रचण्ड ज्वालाका रूप धारण कर समस्त सह्याद्रि पर्वतके वनकी सूखी घासको भस्मसात् कर दिया, दूर दूरके लोग इस दावानलकी बढ़ती हुई धुआंधार लपटको देखकर ठक रह गये *—वे मुस्ले

*—James Grant Duff ने इस तरह वर्णन किया है—the turbulent predatory spirit of the Hindus of Maharashtra though smothered for a time had its latent embers stirred by contentions of their Mahomedan conquerors till at

हैं। महाराष्ट्रकी राज्य क्रान्ति एक दिनमें नहीं हुई थी। पहले महाराष्ट्रमें धर्म क्रान्ति हुई, पीछे उस धर्म-क्रान्तिने ही राज्यक्रान्तिका रूप धारण कर लिया था। महाराष्ट्रका उदय कार्य्य-कारणसे सम्बन्ध रखता है, जैसा कि ऊपर दिग्दर्शन कराया जा चुका है, और आगे भी पाठकोंको इस सम्बन्धमें ज्ञात होगा कि महाराष्ट्रकी स्वतन्त्रताके क्या कारण थे ?

parched grass kindled amid the forests of the Sahyadri mountains, they burst forth in spreading flames and men afar off wondered at the conflagration—

वंश इसी सिसोदिया कुलमें है। महाराणा कुम्भा, महाराणा सांगा, महाराणा हम्मीर, महाराणा प्रतापसिंह, महाराणा राजसिंहआदि प्रातःस्मरणीय नर-केसरी और वीरोंने इसी कुलकी शोभा बढ़ायी थी। इसी वंशमें महाराणा अजयसी हुए थे। उनके पीछे क्रमशः सुजनसी, दिलीपसी, सिंघजी, भोंसाजी और देवराजजी हुए। कालचक्रकी कुटिल गतिने राजस्थानमें देवराजजीका भाग्य पलट दिया। उन्हें भाग्य परिवर्त्तनके साथ ही स्थान परिवर्त्तन भी करना पड़ा। राजस्थान छोड़कर वे दक्षिणको चले गये और भोंसाजीके पुत्र होनेके कारण भोंसले कहलाये। कुछ लोगोंका यह भी मत है कि देवराजजीके वंशज, दक्षिणमें दौलताबादके निकट वेरूल गांवके भोंसले नामक दुर्गमें जा बसे थे, इस कारण इनके वंशको भोंसला कहने लगे। कुछ भी हो छत्रपति महाराज शिवाजीके पूर्वज राजपूतानेसे दक्षिणमें आकर "भोंसला"के नामसे प्रसिद्ध हुए। इसी वंशमें

वैष्णव था। उनके नाम प्रवर के और वे नागर ही थे। महाराणा कुम्भाने गीतगोविन्दपर जो "रसिक प्रिया" टीका लिखी है उसके आदि श्लोकमें अपनेको वैजवाप गोत्रका ही लिखा है। चित्तौरगढ़के संवत् १३३१ वि॰ के शिलालेखसे और आबू पहाड़पर अचलेश्वर मन्दिरके पास एक मठमें संवत् १३४२ के एक शिलालेखसे—जो राजा समरसिंहका है—यही पता लगता है कि मेवाड़के महाराणाओंके पूर्वज नागर ब्राह्मण थे। मुहणोतनैणसी (मेहता नयणसि ह—जो जोधपुर—नरेश—महाराज जसवन्तसिंहके सन् १६५८—१६८१ ई॰ तक दीवान थे) ने अपनी ख्यातिमें भी मेवाड़के महाराणाओंके पूर्वजोंको नागर ब्राह्मण ही लिखा है। मु॰ भी करीमुद्दीनकी 'तवारीख मालवा'में भी यही मत प्रतिपादन किया गया है। अतएव यह स्वभावतः ही प्रश्न होता है कि मेवाड़के राणा क्षत्रिय कैसे हो गये? इस प्रश्नका सीधा-सादा उत्तर यह है कि क्षत्रियोंके मेल-मिलापसे धीरे धीरे ये लोग क्षत्रिय होगये। यह मत, पूनाके सुप्रसिद्ध सर रामकृष्ण भाण्डारकरके सुयोग्य पुत्र मिस्टर देवदत्त रामकृष्ण भाण्डारकरका है।

आगे चलकर सम्भाजी [1] नामक एक पुरुष हुआ। उसका लड़का बाबजी हुआ। बाबजीके दो पुत्र हुए। सन् १५५० ई० में एक मालोजी और सन् १५५३ में दूसरा विठोजी। इनमेंसे मालोजी, छत्रपति शिवाजीके पितामह थे। दक्षिणमें भोंसला वंश सिंघनापुरके महादेव और तुल्जापुरकी भवानीका उपासक हुआ।

भोंसलोंकी भांति दक्षिणमें "जाधव" या "यादव" वंशका भी बहुत ख्याति थी। इस घरानेका लखूजी जाधवराव नामक एक सरदार निजामशाही सेनामें था। यह सरदार देवगिरिके यादववंशका था। लखूजी जाधवको निजामशाहीमें दस हजार सवारोंका "मनसब" प्राप्त था। कुछ जागीर भी सेनाके

१—कहा जाता है कि प्राचीन दक्षिणी राज्योंके नष्ट भ्रष्ट करनेके लिये [illegible] वंशी क्षत्रिय राजकुमार दक्षिणमें पहुंचा था। यह राजकुमार [illegible] [illegible]

व्ययके लिये मिली हुई थी (और किसी किसी इतिहास-लेखकके अनुसार लखूजीको बारह हजारका मनसब प्राप्त था)। और इसके अतिरिक्त सरदेशमुखी* भी इन्हीं घरानेके नाम थी। शिवाजीके पितामह मालोजी भोंसले इन्हीं लखूजी जादवके अधीन "बर्गीगिरी"के पदपर नौकर थे।

मालोजी शरीरके बड़े हृष्टपुष्ट थे और ऐसे मोटे और स्थूल कायके थे कि बहुत कम घोड़े उनके बोझको सहन कर सकते थे। लखूजी जादवरावके अधीन नौकर होनेके पहले मालोजी और विठोजी अपने गाँव वेरूलमें खेती करते थे। मालोजी लखूजी जादवके अधीन निजाम शाहके यहां किस प्रकारसे नौकर हुए इस घटनाके सम्बन्धमें एक इतिहास-लेखकने लिखा है कि एक दिन सन्ध्याके समय विठोजी खेतपर चले गये और उन्हें वहां बहुत देर हो गयी, रात हो गयी पर विठोजी नहीं आये। उन्हें बुलानेके लिये मालोजी गये। जैसे ही मालोजी गये, एक

युद्ध करनेमें ही व्यतीत किया। विजयभानुकी मृत्युके पीछे कर्णसेन सिंहासनपर बैठे। इनके समयमें मुसलमानोंके आक्रमण हुए जिनसे यह दक्षिणकी ओर चले गये और दौलताबादके निकट वेरुल नामक ग्रामके भोंसले कुलमें आ बसे—तबसे भोंसले कहलाये। कर्णसेनके पुत्र जयकरण और उनके पुत्र महाकरण हुए। महाकरण एक युद्धमें मारे गये। उनके पुत्र शिवभानने पिता भीमाकुल को अपने साथ विभक्त कर लिये। मम्भाजी इन्हींके पुत्र थे। ऊपरकी नामावली और इस नामावलीमें कुछ अन्तर पड़ता है पर मम्भाजीका नाम दोनों नामावलीमें आता है। इसके अतिरिक्त घटनाओंका क्रम मिलता हुआ है। इससे यह प्रतीत होता है कि शिवाजीके पूर्वज राजस्थानसे दक्षिणको गये थे।

* मालगुजारीके दशमांशको सरदेशमुखी और चौथे भागको चौथ कहते हैं।

काला मोर और नीलकण्ठ पक्षी उनके मार्गमें बाईं ओरसे दाहिने हाथकी ओर गये। यह अच्छा शकुन था। मालोजी इस शकुनसे बड़े प्रसन्न हुए। रात अंधेरी थी, कुछ दिखलायी नहीं पड़ता था, जिसके कारण मालोजी एक स्थानमें ठोकर खाकर गिर गये। यहां उन्हें दिखलायी पड़ा कि पृथ्वीमेंसे भवानी उनके सामने आकर खड़ी हो गयी है। मालोजी भवानीको देखकर डरे और मूर्च्छित होनेको ही थे कि भवानीने उनसे कहा कि 'तेरे घरमें शिवाजीका अवतार होगा। वह हिन्दूधर्मका पुनरुद्धार करेगा और मुसलमानोंको इस पृथ्वीसे निकाल देगा। और एक ऐसा राज्य स्थापित करेगा, जो तेरे वंशमें सत्ताईस पीढ़ीतक रहेगा। सत्ताईसवां राजा अन्धा होगा और उसके समयमें राज्य जाता रहेगा।' ऐसा कहकर भवानीने उन्हें सांपका एक बिल बतलाया और उसे खोदनेकी आज्ञा दी और कहा कि 'इस बिलमें तुम्हें बहुतसा धन मिलेगा।' मालोजी यह सुनकर चकित स्तम्भित हुए। पहले उन्होंने भवानीकी इस आज्ञाके पालनमें कुछ आनाकानी की और वे सोचने लगे कि न मालूम यह किसका धन है यदि मुसलमान शासकोंको इस धनका पता लग जायेगा तो वे धन भी छीन लेंगे और मुझे मार डालेंगे। *लेकिन भवानीने उनसे कहा कि इसमें डरकी कुछ भी बात नहीं है। श्रीगोंदको चले जाओ और वहां इस धनको शेषाजी नायकके यहां जमा कर दो। यह कहकर देवी अन्तर्धान हो गयीं.......। मालोजी मूर्च्छित होकर वहीं पृथ्वीपर गिर पड़े।

* ....

इसी बीचमें विठोजी अपने घर आये और मालोजीको वहां न पाकर बड़े चिन्तित हुए। वे पुनः खेतकी ओर मालोजीको देखने के लिये गये। मार्गमें उन्होंने मालोजीको मूर्च्छितावस्थामें पाया। मालोजीकी दशा देखकर वे दुःखी हुए और जैसे तैसे उन्होंने मालोजीको चेत कराया। होश आनेपर मालोजीने समस्त घटनाका वर्णन विठोजीसे किया। दोनों भाई घर चले आये। जैसे तैसे वह रात तो घरपर बितायी, दूसरे दिन सबेरे दोनों भाइयोंने सांपके बिलको खोदा तो उसमें बहुतसा धन मिला और इस धनको उन्होंने शेषाजी नायकके यहां पहुंचा दिया। इससे मिलती-जुलती घटना किसी किसीने मालोजीके चरितमें शाहजीके विवाहके सम्बन्धमें लिखी है, जिसका उल्लेख आगे है।

ऊपर लिखी हुई घटनाका वर्णन इतिहास-लेखकोंने भिन्न २ रीतिसे किया है पर परिणाम यही निकलता है कि मालोजी को कहींसे गड़ा हुआ धन मिला था। समस्त घटनाओंके विषय में कुछ कहा नहीं जा सकता कि वह कैसे और क्यों हुई। भारतके इतिहासमें यह बात सदैवसे चली आरही है कि महा-पुरुषोंके चरित्रमें कुछ न कुछ अलौकिक बात मिला दी जाती है कि जिससे असली घटनाका पता लगाना भी दुर्घट हो जाता है। अस्तु, जो कुछ हो इसमें सन्देह नहीं कि मालोजीको कहींसे अच्छी सम्पत्ति प्राप्त हुई थी। ग्राण्ट डफने मालोजीकी इस सम्पत्ति प्राप्तिके विषयमें लिखा है कि मालोजीने कहीं लूटसे—

यह धन प्राप्त कर लिया होगा। पर हम ग्राण्टके इस मतसे भी सहमत नहीं हैं क्योंकि भारतमें प्राचीन समयमें धनको गाड़ कर भी रखते थे। इसलिये सम्भव है कि उन्हें कहींसे गड़ा हुआ धन मिल गया होगा।

श्रीगोंदके शेषाजी नायकको भी भवानीने यह स्वप्न दिया कि वह मालोजीके धनको अपने पास अच्छी तरहसे रखे, किसी प्रकारकी बेईमानी न करे। इसी धनसे मालोजीने वेरूलमें गिरी शीश्वरका मन्दिर बनवाया और सिंगानपुरमें भी एक मन्दिर और एक तालाब बनवाया।। सन् १५७७ ई०में मालोजी और विठोजी, फाल्टनके बलवान सरदारके पूर्वज जगपतराव अथवा वामकुराव निम्बालकरके यहां नौकर हुए और बहुत जल्दी निम्बालकरके यहां उन्होंने अपनी उन्नति की। वहां उनके अधीन कई हजार घोड़े रहने लगे। बीजापुरकी रियासतमें उन्होंने लूट मार मचाई। एक दिनकी बात है कि मालोजी और विठोजी जहां रहते थे कि बीजापुरके सवारोंने उन लोगोंको चकाचक आ घेरा। इस आकस्मिक विपत्तिसे मालोजी और विठोजी घबड़ाये नहीं, उन्होंने इस सङ्कटके समयमें असीम साहसका परिचय दिया। उन्होंने अत्यन्त धैर्य्य साथ बीजापुरके सवारोंका सामना किया और उन्हें परास्त कर दिया। उनकी इस वीरता की बात अहमदनगरके तत्कालीन बादशाह मुरताज निजामशाह प्रथमके कानोंतक पहुंची। उसने दोनों भाई मालोजी और विठोजीको अपने यहां बुला लिया और अपनी सेनामें दोनोंको नियुक्त

किया। अहमदनगरके दरबारमें लखूजी जादवरावका ध्यान इन दोनों भाइयोंकी ओर आकृष्ट हुआ। लखूजी जादवरावके प्रभावसे ही मालोजीने अपने पूर्व स्वामी निम्बालकरकी बहिन दीपाबाईसे विवाह किया।*

मालोजी बड़े शूरवीर और कर्त्तव्यपरायण व्यक्ति थे। इनकी कर्त्तव्यपरायणताको देखकर लखूजी जादवने निजाम शाहके द्वारा सेनामें इन्हें शिलेदारकी जगह दिलवायी। शिलेदारके पदपर पहुंच कर मालोजीने अच्छी उन्नति की और राज्यके बड़े बड़े काम किये। मालोजीकी स्त्री दीपाबाईके कोई लड़का नहीं होता था। इनके छोटे भाई विठोजी भी शिलेदार थे। विठोजीके आठ लड़के थे पर मालोजीके कोई पुत्र न था। पुत्र न होनेका इनकी स्त्री दीपाबाईको अत्यन्त दुःख था। दीपाबाई अत्यन्त पतिभक्ता और धर्मात्मा थीं। उन्होंने पुत्र प्राप्तिके निमित्त अनेक व्रत, जप-तप, पूजा-पाठ स्वयं किये और ब्राह्मणोंसे कराये। परन्तु उन्हें पुत्र मुखके देखनेका सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ। अन्तमें उन्होंने पुत्र मुख देखनेकी लालसाके कारण, अहमद नगरके पीर शाह शरीफकी दरगाहमें मिन्नत मांगी। दीपाबाईकी इस प्रकार पुत्र प्राप्तिकी उत्कट लालसा को देखकर प्रति बृहस्पतिवारको मालोजी फकीरोंको खैरात और भीख दिया करते थे। लगभग ७ मासतक उन्होंने इसी

*—किसी किसी लेखकने इसके विपरीत लिखा है कि मालोजीका विवाह लखूजी जादवरावकी यहां पहुंचनेसे पहले ही हो चुका था।

प्रकारसे बहुतसा दान पुण्य किया। अन्तमें दीपाबाईकी लालसाके पूर्ण होनेका सुअवसर प्राप्त हुआ। सन् १५९४ ई० में दीपाबाईके पुत्र हुआ। शाह शरीफकी मिन्नतसे पुत्र होनेके कारण उन्होंने अपने लड़केका नाम "शहाजी" रखा। थोड़े दिनों पीछे उनके एक दूसरा पुत्र हुआ जिसका नाम उन्होंने शरीफजी रखा। आगे चलकर शहाजीको शाहजी कहने लगे। यही शाहजी शिवाजीके पिता हैं।

मालोजीने निज़ामशाहीमें अपनी उत्तरोत्तर उन्नति की। जब उनके पुत्र शाहजी* की अवस्था पांच वर्षकी थी तब एक साधारण घटना हुई जिसके कारण न केवल महाराष्ट्र प्रान्तका किन्तु समस्त भारतवर्षका इतिहास पलट गया। घटना यह थी कि होलीके अवसरपर रङ्ग-पञ्चमीके दिन मालोजी अपने पुत्र शाहजीको साथ लेकर लखूजी जाधवरावके यहां मिलने गये थे। लखूजी बालक शाहजीके रूप-लावण्यको देखकर बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने शाहजीको अपनी गोदीमें बैठा लिया कि लखूजीकी लड़की जीजाबाई, जिसकी अवस्था उस समय तीन वर्षकी थी, खेलती हुई अपने पिताके पास आ पहुंची। प्रायः देखा जाता है कि जब समवयस्क दो बालक मिलते हैं तब आपसमें मिलकर खेलने लग

---

* [illegible] अवस्था [illegible] लिखी है। [illegible] शाहजीकी अवस्था [illegible] ८—९ [illegible] लिखी है। [illegible] सन् [illegible] ई० [illegible] सन् [illegible] [illegible] हुआ था।

जाते हैं। अतएव शाहजी और जीजाबाई भी खेलने लगे। वे एक दूसरेपर गुलाल और अबीर फेंकने लगे। इन बालकोंकी बाल-लीला देखकर लखूजीको बड़ा आनन्द हुआ और कौतूहल वश वे बोले —"जीजी, यह दुलहा तुमको पसन्द है? वाह! कैसी अच्छी जुगल (युगल) जोड़ी बनी है।" लखूजीने ये शब्द केवल हंसीमें कहे थे। परन्तु शाहजीके पिता मालोजी और चचा विठोजी अपने स्थानसे उठ खड़े हुए और उपस्थित जनता को सम्बोधन करके कहा—"भाइयो! सुनो, लखूजी जादवराव क्या कहते हैं। आजसे जादवराव हमारे समधी हुए। अब जीजा हमारे बेटेकी बहू है। जो कुछ जादवरावजीने कहा, वह आप सब सुन ही चुके हैं। अब जो कुछ निश्चय हो चुका है, वह बदला नहीं जा सकता है। पञ्चायतमें बड़े आदमी जो कुछ कह देते हैं उससे पीछे नहीं हटते हैं।" यह कहकर दोनों भाई अपने स्थानोंपर बैठ गये। इस प्रकार उन्होंने समस्त उपस्थित जनताको साक्षी ठहरा लिया। समस्त उपस्थित मण्डली इस बातसे सहमत हुई। विनोदके उपरोक्त शब्द कहते समय लखूजीको स्वप्नमें भी यह ध्यान न हुआ था कि विनोदके ये शब्द किसी दिन सचमुच निबाहने पड़ेंगे। बातका बतङ्गड़ हो जायगा। उन्होंने उस समय यही समझा कि मालोजी भी मेरी भांति जो कुछ कह रहे हैं, वह सब विनोदमें ही कह रहे हैं।

होलिकोत्सव समाप्त हुआ। दूसरे दिन लखूजी जादव

रावने अपने समस्त इष्ट मित्रोंको भोजनके लिये निमन्त्रण दिया, मालोजीको भी निमन्त्रण भेजा। इसपर उन्होंने जाधवरावसे कहला भेजा कि "कल जो बातचीत हुई है, उससे अब आप हमारे समधी हो गये हैं। विवाह किसी उचित समयमें किया जायेगा, जब हम और आप सहभोज्य करेंगे। इस समय आप न तो हमें निमन्त्रण दे सकते हैं और न हम आपके यहां आ सकते हैं।" भोज्य-समाप्तिके पीछे जो लोग लखूजीके यहां उत्सवमें सम्मिलित होनेके लिये आये थे वे विदा हुए। उनके विदा होनेके पीछे लखूजीने इस हँसी दिल्लगीका सब हाल अपनी स्त्री म्हलसा बाईसे कहा तो वह मालोजीकी इस धृष्टतापर बहुत बिगड़ी और अपने पतिसे कहा—"मालोजी आपके अधीन हैं, तथा धन, मान प्रतिष्ठा आदि किसीमें भी आपके बराबरके नहीं हैं बल्कि आपसे हीन हैं, अतएव यह सम्बन्ध हमें कदाचित् स्वीकार नहीं है। मालोजीकी यह गुस्ताखी कि वह अपने लड़केके साथ हमारी लड़कीका ब्याह करनेको तैयार हों! वह मामूली सिले दार हैं। उनकी प्रतिष्ठा ही क्या है। वह एक धनाढ्य मनसब दारकी लड़कीके साथ अपने लड़केके विवाहका स्वप्न देखें! इस प्रकार मालोजीकी निन्दा करके म्हलसाबाईने अपने पतिदेव लखूजी जाधवरावको यह फटकार बतलायी कि आपको बिना विचारे भरी पञ्चायतमें इस प्रकारके शब्द मुंहसे नहीं निकालने चाहिये थे। सबसे बढ़कर आपने यह भूल की कि जब मालोजीने खड़े होकर आपके शब्दोंकी ओर उपस्थित जनमण्डलीका ध्यान

आकर्षित किया तब आपने उसकी बातोंका खण्डन क्यों नहीं किया ? मालोजी हमारे अधीन हैं। हमारी लड़की उनके घरमें कभी नहीं जा सकती है। जब दुनिया यह सुनेगी कि एक मनसबदारकी बेटी उसके मातहत शिलेदारके यहां आ रही है तब हँसेगी और हमारी बड़ी निन्दा होगी। शिरके निम्बालकर और महाडीक हमारे बराबरके सरदार और मनसबदार हैं। इम बराबरके सरदारोंको छोड़कर हम निम्न श्रेणीके मालोजीके यहां क्यों सम्बन्ध करें ? इसपर लखूजी जादवरावने अपनी स्त्रीको सन्तुष्ट करते हुए कहा—"मैंने यह बात केवल हंसी दिल्लगीमें कही थी। मैं इससे वचनबद्ध नहीं हूं।" इस प्रकार अपनी स्त्रीका समाधान करके लखूजीने मालोजीसे कहला भेजा कि हंसी दिल्लगीकी बातोंमें इस प्रकारका हठ करना ठीक नहीं है। हमारे घरके लोग इस बातको स्वीकार नहीं कर सकते। उस दिन उत्सवमें मैंने जो कुछ कहा था वह केवल हँसीमें कहा था, उस हँसीकी बातका बतङ्गड़ करना ठीक नहीं है। आप निमन्त्रण अवश्य स्वीकार कीजिये, भविष्यमें क्या होगा सो केवल परमात्मा ही जानता है।" इसपर मालोजीने कहला भेजा कि "इतने आदमियोंके बीचमें जो बात कही गयी है, वह अब कैसे टाली जा सकती है। अब हम आपके घरानेसे सगाईका दावा करते हैं।" इस प्रत्युत्तरपर लखूजी जादवराव अत्यन्त क्रुद्ध हुए और भोज्य-समाप्तिके पीछे उन्होंने अपने कारकूनको बुलाकर यह आज्ञा दी कि मालोजी

और विठोजीका पिछला जो कुछ हिसाब निकलता हो वह चुका दो। लखूजीके आज्ञानुसार मालोजी और विठोजीका हिसाब चुका दिया गया। दोनों भाइयोंको लखूजीने सिलेदार के पदसे हटा दिया और साथ ही उन लोगोंको लखूजीने अपनी जागीरसे तत्काल निकल जानेकी आज्ञा दी। इस आज्ञाके अनुसार दोनों भाई अहमदनगरके अपने गांव वेरूलको चले गये। सिलेदारीके पदको जो उन दोनोंने इतने दिनोंतक योग्यतापूर्वक निबाहा था, उनके हाथसे जाता रहा। अपने गांवमें पहुंचकर दोनों भाई मालोजी और विठोजी पुनः खेती बारी करने लगे। एक प्रकारसे तो उस समय शाहजी और जीजाबाईके सम्बन्धकी बात टल गयी। लखूजी जादवरावने समझा होगा कि चलो अच्छा हुआ, यह बला टली। पर होता वही है जो परमात्माको मञ्जूर होता है। परमात्माको यह मञ्जूर न था कि जीजाबाईका शाहजीसे विवाह न हो। आगे चलकर पाठक पढ़ेंगे कि लखूजी जादवरावके इतने जोड़-तोड़ लगानेपर भी शाहजीका जीजाबाईसे विवाह हुए बिना नहीं रहा।

लखूजी जादवरावके इस प्रकारके बर्तावसे मालोजी अत्यन्त दुःखी हुए। यह बात उन्हें बहुत बुरी लगी कि लखूजीने इस प्रकारका बर्ताव उनसे केवल धनी और उच्च पदपर न होनेके कारण ही किया है। मालोजी उन मनुष्योंमेंसे न थे जो इस प्रकारके अपमानको सहन करके चुपचाप बैठ जाते। वे

स्वाभिमानी पुरुषोंमेंसे थे जो अपमान सहन करनेकी अपेक्षा, अपनी मृत्यु हो जाना अच्छा समझते हैं। अतएव मालोजीने लखूजी जादवरावसे अपना बदला लेनेकी ठान ली। दोनों भाई मालोजी और विठोजीको रात दिन यही धुन रहती थी कि किस प्रकारसे लखूजी जादवरावसे अपने अपमानका बदला लिया जाय और शाहजीका लखूजीकी बेटी जीजाबाईसे विवाह किया जाय। एक दिन माघकी पूर्णिमाको दोनों भाई मालोजी और विठोजी अपने खेतकी रखवारीके लिये गये थे। दोनों भाइयोंने आपसमें बारी बारीसे खेतकी रखवारी करना निश्चय किया। पहले विठोजी सो गये और मालोजी खेतकी रखवारी करते रहे। जिस स्थानपर मालोजी खेतकी रखवारीके लिये बैठे हुए थे, वहां चींटियोंका एक बिल था। थोड़ी देर पीछे उन्हें उस बिलमेंसे सोनेका कङ्कण पहने हुए भवानीका एक हाथ निकलता हुआ दिखलायी पड़ा और उस हाथसे भवानीने उन्हें आशीर्वाद दिया। पीछे वह हाथ धीरे धीरे बिलमें घुस गया, ऐसा मालोजीको प्रतीत हुआ। उन्होंने अपने छोटे भाई विठोजीको जगाया और यह सब हाल कहा। इसपर विठोजीने उनसे कहा कि यह आपका भ्रम है, आप सोइये, मैं खेतकी रखवारी करता हूं। अतएव मालोजी सो गये और विठोजी खेतकी रखवारी करने लगे। निद्रावस्थामें मालोजीको एक अद्भुत स्वप्न दिखलाई पड़ा। उन्होंने स्वप्नमें देखा कि उनके सामने भवानीकी मूर्त्ति गौरवर्ण धारण किये हुए, मस्तकमें कुङ्कुम

लगाये, शरीरमें सुन्दर वस्त्र और सुवर्ण मुक्ता और रत्न-जटित अलङ्कार पहने हुए खड़ी हैं। देवी आगे बढ़ी और उनकी पीठमें थप्पड़ मारकर उन्हें जगाया और कहा कि "मैं तेरे ऊपर प्रसन्न हुई हूं। इस बिलमें एक सांप रहता है यह मेरा स्वरूप है। तू उसे नमस्कार करके उस बिलको खोद, तुझे उस बिलमें बहुत सा रुपया मिलेगा। सांप तुझे किसी प्रकारकी हानि नहीं पहुँचायेगा। सांप जिस मार्गसे जाय, उस मार्गसे तू मत आना। इस भूमिमें तेरे वंशमें सत्ताईस पीढ़ीतक राज्य रहेगा।"* मालोजीकी निद्रा भङ्ग हुई, उन्होंने स्वप्नका समस्त वृत्तान्त विठोजीसे कहा। तब दोनों भाइयोंने उस बिलको खोदा तो उसमें स्वप्नके अनुसार बहुतसा सोना और जवाहरात मिले। उस धनको दोनों भाई घर ले आये और पीछे उसे अहातेमें गाड़ दिया। किसी किसी इतिहास-लेखकने इस घटनाको इस प्रकार लिखा है कि मालोजी और विठोजी अहमदनगरसे तुलजापुरको चले गये और वहां उन्होंने भवानीकी आराधना की और उसी रातको उन्हें यह स्वप्न हुआ कि भवानीने उन्हें शाहजीके विवाह

---

*—कृष्णराव अर्जुन केलूसकर कृत शिवाजी चरित्र (मराठी)। मिस्टर सी० ए० किनकेड और रावबहादुर दत्तात्रेय बलवन्त पारसनीसने इस घटनाको कुछ परिवर्तन करके मालोजीके निजाम शाहके यहां लखूजी जादवरावके अधीन नौकर होनेके पूर्व लिखी है जिसको पाठक पीछे पढ़ चुके हैं। हमें केलूसकरजीका कथन सत्य प्रतीत होता है। यदि पहले मालोजीके पास धन होता तो [illegible] चाकरी क्यों करते ?

सम्बन्धी कार्यमें पूरी सहायता देनेका वचन दिया है।* अस्तु जो कुछ हो, इस धनको पाकर मालोजीको नवीन शक्ति प्राप्त हुई और श्रीगोंदेके साहूकार शेषाजी नायककी सहायतासे उन्होंने एक हजार घोड़े खरीद लिये और बहुतसे शिलेदार और सिपाही अपने यहाँ रख लिये। उन्होंने बहुतसा दान-पुण्य किया। कितने ही स्थानोंमें मन्दिर और धर्मशालाएँ बनवायीं जिससे उनकी कीर्त्ति दूर दूरतक फैल गयी।

इस प्रकार अपना सिक्का जमाकर मालोजीने अपनी उद्देश्य सिद्धिकी चेष्टा की, उन्होंने पुन लखूजी जादवरावसे जीजा बाईकी शाहजीसे सगाई करनेके लिये कहा, परन्तु लखूजी जादवराव किसी प्रकारसे भी अपनी लड़कीकी शाहजीसे सगाई करनेके लिये राजी नहीं हुए। मालोजी भी अपने दृढ़ सङ्कल्पसे टलनेवाले न थे, उन्होंने यह प्रण कर लिया कि जैसे बने वैसे जादवकी पुत्रीके साथ अपने पुत्रका विवाह करना। "कार्यंवा साधयेत् शरीरंवा पातयेत्।" बस इस दृढ़ सङ्कल्पके अनुसार मालोजीने जादवरावकी जागीरमें लूट मार आरम्भ कर दी और निम्बालकर सरदारोंसे लिखा पढ़ी की कि आपलोग हमें दो हजार घुड़सवारोंकी सहायता दीजिये, हम जादवरावके उच्च वंशका अभिमान तोड़ेंगे। मालोजीकी यह युक्ति काम कर गयी। निम्बालकर सरदारोंने उन्हें दो हजार घुड़सवारोंकी सहायता दी

*—सी० ए० किनकेड और रावबहादुर दत्तात्रय बलवन्त पारसनीस कृत The history of the Maratha People (मराठी जातिका इतिहास)।

उपाधि दी और शिवनेरी तथा चाकणका किला और समीपका प्रदेश तथा खर्चके लिये पूना और सूपाके जिले जागीर स्वरूप दिये।* यह घटना संवत् १६६१ वि० मार्च सन् १६०४ ई० में हुई थी।

सहृदय पाठकोंके हृदयमें यह स्वभावतः ही प्रश्न उठता है कि मालोजी और विठोजी, दूसरेके पत्थर फेंककर मसजिद भ्रष्ट की थी वास्तविक अपराधी ये दोनों भाई थे। पर इनको दण्ड न देकर निजामशाहने इन्हें मनसब और राजा आदिकी उपाधि क्यों दी? इनसे मैत्री क्यों की? इतिहासरसिक पाठकोंसे यह अविदित नहीं है कि उन दिनों निजामशाहीमें कुछ दम बाकी नहीं रहा था। मुगल सम्राट अकबरकी अहमदनगरकी निजामशाहीपर बड़ी वक्रदृष्टि थी। वे निजामशाहीकी हस्ती मिटानेकी भारी चेष्टा कर रहे थे। उस समय निजामशाहने यही उचित समझा कि किसी प्रकार मराठोंको अपनेमें मिलाये रखना चाहिये। यदि उस समय मालोजी, विठोजी आदि मराठे सरदार निजामशाहसे असन्तुष्ट होकर मुगलोंसे मिल जाते तो निजामशाहको एक और नयी विपत्तिका सामना करना पड़ता। अतएव यह मैत्री भी राजनीतिक उद्देश्यसे खाली न थी।

मालोजीने अपने साहस और परिश्रमसे निजामशाहको अपनी ओर कर लिया। "सह्यो मये कोठपाल मम डर काहेका"—

*—"शिवदिग्विजय" में मालोजीको जागीरकी सनद बड़ी तफसीलसे दी हुई है जिसमें पूना, नासिक अहमदनगर और खास ईसके कुछ परगने भी शामिल हैं।

बस फिर क्या था मालोजीकी बन आयी, लखूजी जादवको भी यह बहाना नहीं रहा कि मालोजी हमारी हैसियतके नहीं हैं। निजामशाहने मालोजी और लखूजी जादवराव दोनोंको अपने परिवार और रिश्तेदारोंको दौलताबाद लानेका हुक्म दिया। सुलतानकी इस आज्ञाके कारण दोनों अपने परिवार और सगे-सम्बन्धियों सहित दौलताबाद पहुंचे। निजामशाही सुलतानकी आज्ञाके अनुसार वहां जीजाबाई और शाहजीका विवाह बड़ी धूम धामसे हुआ। विवाहमें सुलतान स्वयं उपस्थित हुए। उनके उपस्थित होनेके कारण राज्यके सब अमीर-उमरा और सरदार विवाहमें सम्मिलित हुए। मालोजीने इस विवाहमें दिल खोलकर खर्च किया। उन्होंने राज्यके उमरावों और सरदारोंकी बड़े धूमधामसे दावत की। ब्राह्मण और फकीरोंको बहुतसा दान पुण्य किया। संवत् १६६१ वि० सन् १६०४ ई०के एप्रिल मासमें शाहजी और जीजाबाईका विवाह हुआ था।

विवाहके पीछे मालोजीने निजामशाही राज्यकी अत्यन्त योग्यतापूर्वक सेवा की। राज्यके बड़े बड़े अफसर उनसे कितने ही विषयोंमें सलाह लिया करते थे। शाहजी भी अपने पिताके साथ दरबारमें जाया करते थे। वे बहुत सुन्दर थे। उनकी बुद्धि बड़ी तीव्र थी। वे नम्रस्वभाव और सुशील थे इसलिये उनसे निजामशाह और दूसरे उमरा अत्यन्त प्रेम और स्नेह करते थे। निजामशाही राज्यमें मालोजीने पन्द्रह वर्षतक मन

सयदारी भोगी। दरबारमें उनकी अच्छी प्रतिष्ठा रही। संवत् १६७६ वि० सन् १६१९ ई०में उनका देहान्त हुआ। मालोजी की मृत्युके पीछे निजामशाहने शाहजीको उनकी जागीर और पद प्रदान किया। संवत् १६८६ वि० (सन् १६२९ ई०) तक निजामशाहीके यहां ही शाहजी रह आये। अपनी वीरता और बुद्धिसे बराबर अपनी उन्नति करते रहे। पीछे संवत् १६८७ विक्रमी सन् १६३० ई० में निजामशाहीके अधःपतनके समयमें ये मुगलसम्राट शाहजहांके यहां चले गये। वहां नये सिरेसे पूना और सूपाकी जागीरकी बादशाहसे स्वीकृति प्राप्त की और जागीरमें और भी कुछ नये गांव प्राप्त किये। कुछ दिनों पीछे मुगलसम्राट शाहजहांकी स्वीकृतिसे अहमदनगरके निजाम शाहने उनके गांव छीन लिये। तब शाहजीने क्रोधित होकर मुगल साम्राज्यके यहांकी नौकरी छोड़ दी और बीजापुरके दरबारमें पहुंचे।

बीजापुर दरबारमें पहुंचकर शाहजीने अच्छी वीरता प्रकट की थी। मुगल साम्राज्यकी ओरसे महाबतखां उस समय दक्षिणमें था। बीजापुर, अहमदनगर और मुगल साम्राज्यकी आपसमें खटपट मच रही थी। उस समय दक्षिणकी मुसलमानी रियासतें मुगल साम्राज्यकी बढ़ती हुई शक्ति देखकर समझ गयी थीं कि एक न एक दिन हमारा भी अन्त हुए बिना न रहेगा। अहमदनगरकी निजामशाहीने कुछ थोड़ीसी मुठभेड़के पीछे बहुतसा रुपया दण्डस्वरूप देकर मुगल साम्राज्यसे सन्धि कर

ली थी। यह उस समयकी बात है, जब शाहजीने बीजापुर दरबारकी सेवा स्वीकार की थी। पर बीजापुर दरबारका मुगल-साम्राज्यसे युद्ध चल रहा था। शाहजीने बीजापुर पहुँ-चते ही उसके बादशाह मुहम्मद आदिलशाहसे दौलताबादपर आकस्मिक् और शीघ्र ही आक्रमण करनेका अनुरोध किया। बीजापुरके बादशाहको भी शाहजीकी यह राय पसन्द आयी और उनकी अध्यक्षतामें बीजापुरकी बहुत बड़ी सेना दौलताबादपर आक्रमण करनेके लिये भेजी। दौलताबाद उस समय अहमद नगरकी निजामशाहीके हाथमें था। निजामशाहीकी ओरसे फतेहखाँ उसका किलेदार था। उसने शाहजीके बीजापुरकी सेना सहित आनेका समाचार सुनते ही महाबतखाँसे सहायता माँगी। महाबतखाँ शीघ्र ही दौलताबादकी रक्षाके लिये तैयार हुआ। इस रक्षाका उद्देश्य ठीक वैसा ही था, जैसा कि पिछले यूरोपियन महासमरमें यूरोपकी बड़ी बड़ी शक्तियोंकी इच्छा रक्षाके बहाने यूरोपके छोटे छोटे राज्योंका अस्तित्व मटियामेट करनेकी थी। संसारके चाहे जिस देश और चाहे जिस जातिके इतिहासको देख लीजिये, ऐसे एक नहीं अनेक उदाहरण मिलेंगे कि बलवान व्यक्ति और राष्ट्रोंने निर्बल व्यक्ति और राष्ट्रोंको रक्षाके बहाने ही समाधिस्थलमें पहुँचा दिया है। प्राय बलवान राष्ट्र, दुर्बल राष्ट्रोंके रक्षकके बहाने ही भक्षक हुए हैं। आज भी दुनियामें ऐसे स्वार्थी राष्ट्रोंकी कमी नहीं है, कि जिनकी जठराग्निकी ज्वाला परमार्थ और रक्षाके ढोंगसे अपने

अधीन और निर्बल राष्ट्रोंके भक्षण करनेसे ही शान्त हो रही है। आजकल सभ्यता और शिष्टताकी डोंग हाँकनेवाली जातियों का तो यह स्वाभाविक नियम हो गया है कि परमार्थ और रक्षाका लोभ देकर दुर्बल राष्ट्रोंको अपने चङ्गुलमें फँसा लेना और उसका खून इस तरहसे चूसना कि उसकी हस्ती ही संसारसे मिट जाय। फिर भला उस समयके मुगल-साम्राज्यको ही क्या दोष दिया जाय? दौलताबादकी रक्षाके लिये महाबतखाँ अपनी सेना सहित तैयार हुआ। पर शाहजी महाबतखाँसे पहले ही दौलताबाद पहुंच गये और दौलताबादके किलेदारको समझाया कि हमारा तुमसे लड़नेका उद्देश्य नहीं है। हम, तुम दोनों मिल कर बीजापुरकी ओरसे मुगलोंसे लड़े। साथ ही उनसे यह भी कहा कि अगर तुम शोलापुर और उसके साढ़े पांच गांवको छोड़ दो तो बीजापुरके बादशाह, दौलताबाद तथा अहमदनगर राज्य का जो कुछ भाग बच रहा है तुम्हें दे देंगे। बेचारा फतहखाँ शाहजीकी बातोंमें आ गया और उसने ये सब शर्तें स्वीकार कर लीं और शाहजी अपनी सेना सहित दौलताबादके किलेमें दाखिल हुए। इतनेमें ही महाबतखाँ भी दौलताबाद पहुँच गया और जब उसकी सेना दौलताबादके किलेके नीचे पहुँची तब शाहजीने उसपर किलेके ऊपरसे तोपें दाग दीं। महाबतखाँ को यह बात बहुत बुरी लगी। अब उसके क्रोधका ठिकाना न रहा। उसने अपनी सेनाके राजपूत लेकर दौलताबादके दुर्गपर आक्रमण किया। यद्यपि इस युद्धमें महाबतखाँकी सेनाकी बहुत

हानि हुई पर उसने शाहजीकी सेनाको पीछे हटा दिया। जब फतेहखांने देखा कि शीघ्र ही उसके दुर्गका पतन होनेवाला है तब उसने दस लाख रुपये युद्धके हानिस्वरूप देनेका वचन दिया और दौलताबादका किला और मुर्तजा निजामशाह दूसरेके लड़के हुसेन निजामशाह (जो निजामशाही राज्यका बादशाह था) को महाबतखांके हवाले किया। महाबतखांने हुसेन निजामशाह और फतेहखां दोनोंको दिल्लीके मुगल सम्राट शाह जहांके पास भेज दिया। हुसेनखां ग्वालियरके किलेमें कैद किया गया और देशद्रोही फतेहखांको बीस हजार वार्षिक आय की जागीर मिली।

दौलताबादके दुर्गके पतन होनेके पीछे शाहजीने मुगल सेना को वहांसे हटानेकी एक बार और चेष्टा की। दौलताबादसे लूटका माल और कैदियोंको लेकर महाबतखां चल दिया और वहां अपनी सेनाका एक दल रक्षाके लिये छोड़ आया। शाहजीने महाबतखांके चलते ही दौलताबादके दुर्गपर आक्रमण किया। मुगल सेनाके खा दुर्रान नामक एक वीरने किसी प्रकारसे दुर्ग की रक्षा की और महाबतखांके पास शाहजीकी चढ़ाईका समा चार भेजा। यह समाचार पाते ही महाबतखां फिर अपनी सेना सहित पहुँचा। शाहजी युद्ध क्षेत्रसे हट गये पर मुगल -साम्राज्यकी अधीनता स्वीकार नहीं की। दौलताबादसे वे बीजापुर पहुँचे और अहमद निजामशाहके एक बालक वंशधरको अहमदनगरको निजामशाह करके, राज्यकार्य्य

चलाने लगे। पहले तो शाहजीको इस कार्य्यमें सफलता प्राप्त हुई, बीजापुरकी सेनाकी सहायतासे उन्होंने परेंडामें मुगलोंको पराजित किया और अहमदनगरसे उन्हें निकाल दिया। मुगल सेना अहमदनगरसे खानदशमें पहुँची, वहाँ महाबतखाँकी मृत्यु होगयी। मुगल सम्राट शाहजहाँने फिर युद्धकी ठानी। बादशाह शाहजहाँने चालीस हजार सेना बीजापुर और अहमदनगरसे लड़नेके लिये भेजी। इस सेनाके दो भाग किये, एक तो बीजापुरपर आक्रमण करनेके लिये भेजा गया और दूसरा दल शाहजीका सामना करनेके लिये गया। शाहजीने मुगल सेनासे मैदानमें युद्ध करनेकी अपनी सामर्थ्य न देखकर रणक्षेत्रसे हट जाना उचित समझा। पर वे छिपे छिपे मुगल सेनापर अब कभी मौका देखते आक्रमण किये बिना नहीं रहते थे। इधर शाहजी इस तरहसे मुगल-सेनाको तङ्ग कर रहे थे, उधर बीजापुर-दरबार भी खाली न बैठा था। उसने भी मुगल-सेनाका डटकर सामना किया। मुगल सम्राट शाहजहाँने देखा कि न तो शाहजी ही अधीनता स्वीकार करते हैं और न बीजापुर दरबारका पराभव होता है। ठीक यही दशा है कि—

"इधरके रहे न उधरके हम,
न खुदा ही मिला न विसाले सनम।"

इसलिये सेनाका जो दल शाहजीपर आक्रमण करनेके लिये भेजा गया उसको आज्ञा दी कि वह शाहजीका पीछा न करके बीजापुरपर जो सेना आक्रमण कर रही है उसीमें मिल जाय।

इसके पीछे समस्त मुगल-सेनाने बीजापुरपर चढ़ाई की। बीजा पुर और मुगल सेनाके कई युद्ध हुए जिनमें जय, पराजयका कुछ भी निश्चय नहीं हुआ। मुगल और बीजापुर-दरबार दोनों की सेनायें बार बारके युद्धके कारण थक गयीं। अन्तमें बीजा पुरके बादशाह मुहम्मद आदिलशाहने संवत् १६९३ वि० (६ मई सन् १६३६ ई०) को मुगल सम्राट शाहजहांसे यह सन्धि कर ली कि बीजापुर दरबार शाहजीका साथ नहीं देगा और शाहजी की शक्ति-ह्रास करनेमें मुगल-सेनाकी सहायता करेगा। बीजा पुर-दरबारकी ओरसे यह वचन भर लेनेपर बादशाह-शाहजहाने बीजापुर-दरबारको परेण्डा शोलापुर साढ़े पाच गांव सहित, अहमदनगर, कोकणका भाग वेसिनके उत्तरतक, भीमा और नीरा नदीका भाग, चाकणके उत्तरतक मध्य दक्षिणमें नाल दुगा, कल्याण और बिदरके जिले दे दिये। इस प्रकार बीजापुर दरबार और मुगल साम्राज्यमें सन्धि हुई। एक और एकग्यारह" होते हैं—अब बीजापुर दरबार और मुगल-सम्राट दोनोंने मिलकर शाहजीको दमन करनेकी ठानी।

शाहजीने बीजापुर और मुगल दोनोंकी सम्मिलित सेनाओंसे अपने बचावकी युक्ति सोची। उक्त दोनों सेनाओंने शाहजीको उत्तर और दक्षिण दोनों ओरसे घेरा। शाहजीने इस बार दोनों सेनाओंको बेतरह छकाया। वे सह्याद्रिके मार्गसे कोकण प्रदेश को पहुँच गये। कोकणसे कुछ दिनों पीछे देश पहुँचे। मुगल और बीजापुरकी सेनाएँ सह्याद्रिके पश्चिमकी ओर ही उन्हें ढूंढ़ती

रह गयी। उसे पता ही न लगा कि शाहजी किधर हैं। पीछे जब बीजापुर और मुगलोंकी सम्मिलित सेनाको पता लगा तब वह भी उसी ओर शाहजीका पीछा करनेको चल पड़ी। अब शाहजीने अपना कुछ वश चलता हुआ न देखकर कोकनमें कल्याणके पास माहुली किलेमें शरण ली। वहां मुगल और बीजापुरकी सम्मिलित सेनाने उन्हें घेर लिया। शाहजीने भी बहुत दिनोंतक मुगल और बीजापुरकी सेनाओंका मुकाबिला किया। अन्तमें संवत् १६६३ वि० (अक्टूबर—सन् १६३६) में शाहजीने सन्धिकी प्रार्थना की और सन्धि इस शर्तपर हुई कि वे अहमदशाहके उस बालक वंशधरको मुगल-सम्राट शाहजहांको सौंप देंगे जिसको उन्होंने निजामशाहीका बादशाह किया और स्वयं जिसके राजप्रतिनिधि बने हुए हैं। शाहजीने यह सन्धि स्वीकार कर ली और सन्धिके तय किये हुए नियमोंके अनुसार उन्होंने बालक निजामशाहको मुगल सम्राटको सौंप दिया और साथ ही उन्होंने छः किले भी मुगल सम्राटकी भेंट किये। मुगलोंसे सन्धि हो जानेपर शाहजी बीजापुर-दरबारकी सेवामें फिर आ गये। बीजापुर-दरबारमें पहुंचनेके पीछे शाहजीने पूना और सूपाकी अपनी जागीर फिर प्राप्त कर ली और अहमद-नगरकी निजामशाही सदैवके लिये नष्ट हो गयी।

तीसरा परिच्छेद

जन्म और शिक्षा

"दसरथजूके राम भे, बसुदेवजीके गोपाल,
सोई प्रगट साहिके, श्री सिवराज भुवाल।
उदित होत सिवराजके, मुदित भये द्विजदेव,
कलियुग हरयो मिटयो सकल, म्लेच्छनको अहमेव॥"

शिवाजीका जन्म वैशाख शुक्ला २ संवत् १६८४ वि० शालिवाहन शाके १५४६, १० वीं अप्रैल सन् १६२७ को हुआ। पाठक पढ़ ही चुके हैं कि शिवाजीके जन्मके समय उनके पिता शाहजी की कैसी परिस्थिति थी।* उस समय शाहजी निजामशाहकी

---

*—शिवाजीकी जन्मतिथिके सम्बन्धमें इतिहास-लेखकोंमें मतभेद है। मल्हार रामराव कृत बखर चिटनिसमें शिवाजी महाराजका जन्म समय वैशाख शुक्ला द्वितीया गुरुवार लिखा है पर उस तिथिको गुरुवार न था। रायरीके बखरमें शाके १५४८ क्षय नाम, संवत्सर वैशाख शुक्ला पञ्चमी और सोमवार लिखा है। परन्तु उस तिथिको सोमवार नहीं था। इसलिये ये दोनों तिथियां विश्वास योग्य प्रतीत नहीं होती हैं। काव्येतिहाससंग्रहकर्त्ताके पास, जब किसीने, काशीनाथ कृत एक जन्म-कुण्डली भेजी थी, उसमें शिवाजीकी जन्म-तिथिमें पञ्चमी और रोहिणी नक्षत्र लिखा है। राजवाड़े कृत-मराठी इतिहास साधन खण्ड ४ और विल्की (Wilkys) कृत मैसूरके इतिहासमें भी वैशाख शुक्ला पंचमी शिवाजीकी जन्म तिथि लिखी है। यह सही प्रतीत होती है। पर वैशाख शुक्ला द्वितीयाको शिवाजीकी जयन्ती मनाई जाती है अतएव इस कारण मैंने ऊपर वही जन्मतिथि दी है। प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता बाबू यदुनाथ सरकारका इस विषयमें यह मत है —' "Of the exact date of his

ओरसे मुगलोंसे युद्धमें उलझे हुए थे। एक स्थानपर वे स्थिर होकर नहीं रहे थे। मुगल सेनाका सामना करने और अपने प्राणोंकी रक्षाके लिये इधर उधर भटक रहे थे। निजामशाहीके पुराने शुभचिन्तक सेवकों और शाहजीके अनेक सगे सम्बन्धियों ने भी मुगल-साम्राज्यका आश्रय ग्रहण कर लिया था। यद्यपि यादव घरानेकी लड़कीसे शाहजीका विवाह हो चुका था; परन्तु इस विवाहके पहले यादव घराने और भोंसले-वंशमें जो फूट पड़ गयी थी वह दूर नहीं हुई। शाहजीके श्वसुर लखूजी जादव भी अपने जामाता शाहजीके वैरी बने हुए थे। उन्होंने भी अपने पुराने अन्नदाता निजामशाहको छोड़कर मुगल-साम्राज्यका

(Shivaji) birth and incidents of his boyhood there is no contemporary record. Even Krishnaji Anant Sabhasad writing in 1694 is silent on these points The earliest mention of them is found in works composed 150 years after his birth, when the Shivaji's myth had been fully developed among the Marathas and baseless legends and deliberate fabrications had entirely overspread the few historic truths about him that were still preserved in unwritten memory

इसका तात्पर्य यह है कि शिवाजीकी जन्मतिथि और उनके बाल्यकालकी घटनाओंका किसी समकालीन लेखमें पता नहीं चलता। यहांतक कि कृष्णाजी अनन्त सभासद्‌ने भी इस विषयपर चुप्पी साध ली। यह शिवाजीकी मृत्युके डेढ़ सौ वर्ष पीछे जब मराठोंमें शिवाजीकी चर्चा-कथाएं बहुत बढ़ गयी थीं तब जो पुस्तकें लिखी गयीं उनमें ऐतिहासिक सत्य बहुत कम है पर उनमें मनगढ़न्त बातें बहुत भर दी गयी हैं। श्रीयुत चतुर्भुज शास्त्री [illegible] "मराठी भाषाकी त्रैमासिक पत्रिका" भारत इतिहास संशोधक सन् १९१९ की प्रथम संख्यामें यह मत प्रकट किया है कि [illegible] शिवाजीकी जन्मतिथि मार्च सन् १६३० लिखी है वह ठीक प्रतीत [illegible]

साथ दिया था। वे भी शाहजीसे अपने पुराने अपमानका बदला लेनेके लिये तुले बैठे हुए थे। इसमें सन्देह नहीं कि शाहजीका यह समय बड़े सङ्कटका था। परन्तु इस सङ्कटकी कुछ भी परवा न करते हुए उन्होंने मुगल और बीजापुरकी सम्मिलित सेनाओंका किस तरहसे सामना किया था सो पिछले पृष्ठोंमें लिखा जा चुका है। यहां उसके दुहरानेकी आवश्यकता नहीं है। केवल इतना ही यहां लिखना है कि जिस समय शाहजी मुगल सम्राट शाहजहांके कोपपात्र बने हुए थे उस समय लखूजी जादवकी इच्छा शाहजीको पकड़नेकी थी। वे बराबर इस उद्योगमें थे कि शाहजी जीते हुए किसी प्रकारसे उनके हाथ लगें। माहुली किलेसे भागते समय शाहजीके साथ गर्भवती जीजाबाई और उनके तीन चार वर्षके ज्येष्ठ पुत्र सम्भाजी भी थे। लखूजी जादवरावने बड़ी तेजीके साथ उनका पीछा किया। शाहजीने अपनी गर्भवती स्त्री जीजाबाईको एक घोड़ेपर सवार कराया और बड़ी तेजीके साथ शत्रुओंके चङ्गुलसे बचनेके लिये भागे। परन्तु जीजाबाई गर्भवती होनेके कारण बहुत दूरतक घोड़ेपर चल न सकीं। उन्हें विशेष कष्ट हुआ। शाहजी बड़ी विपत्तिमें फँसे और अपनी स्त्री जीजाबाईको कहीं छिपानेकी चेष्टा करने लगे। मार्गमें जुन्नारका किला पड़ा। उक्त किलेका अध्यक्ष श्रीनिवासराव एक स्वतन्त्र जागीरदार और शाहजीका मित्र था। उसने शाहजीसे जीजाबाईकी रक्षाका वचन भरा। लाचार होकर शाहजीको अपनी गर्भवती स्त्री जीजाबाईको श्रीनिवासरावकी

४

शरणमें छोड़ना पड़ा और उसके कथनके अनुसार उन्होंने जीजा बाईको शिवनेरीके किलेमें पहुँचा दिया और अपनी स्त्रीकी रक्षाके लिये कुछ घुड़सवार भी वहां रखे। शिवनेरीके दुर्गमें जीजाबाई को छोड़कर शाहजीके चले जानेके थोड़ी देर पीछे लखूजी जाधव राव भी पहुँच गये। जो लोग लखूजीके साथ थे उन्होंने लखू जीसे कहा—"आपका वैर शाहजीसे है। जीजाबाई निर्दोष है। जीजाबाई आपकी पुत्री है, यदि वह मुगलोंके हाथमें पड़ गयी तो दुनिया क्या कहेगी? यदि मुगलोंके हाथ जीजाबाई पड़ गयी तो उसकी बड़ी दुर्गति होगी। इसलिये आपको यही उचित है कि आप जीजाबाईकी इस समय रक्षा करें।" अपने सङ्गी साथियोंका यह कथन जादवरावको उचित प्रतीत हुआ। अतएव वे अपनी बेटी जीजाबाईसे मिलने पहुंचे। जीजा बाईने अपने पिताको देखते ही बड़ी फटकार बतलायी और डपटकर कहा कि "मैं अपने पति शाहजीके बदले अब आपके हाथ में पड़ गयी हूं। उनसे आप जो कुछ बदला लेना चाहें, वह खुशी से मुझसे लीजिये। मैं सब तरहसे तैयार हूं। जीजाबाईके यह हृदयविदारक शब्द सुनकर लखूजी जादवरावने अत्यन्त स्नेह पूर्वक अपनी लड़कीके माथेपर हाथ फेरा और कहा कि जो कुछ होना था सो हो गया, इसके लिये अब कुछ उपाय नहीं है। [illegible] तुम कहां जाओगी? तुम्हारे मनमें किधर जानेकी है? मेरी [illegible] तो यही अच्छा होगा कि तुम मेरी जागीर सिन्धखेड़ चली [illegible] वहां तुम सुरक्षित रहोगी। किसी प्रकारका कष्ट न [illegible]

जीजाबाई अत्यन्त स्वाभिमानी स्त्री थीं, उन्होंने यह उचित नहीं समझा कि जिस पिताने उनके पतिसे वैर बांध रखा है उसके घर जायँ। उन्होंने अपने पितासे स्पष्ट कह दिया कि मेरे मनमें यहीं रहनेकी है अन्यत्र कहीं जानेकी नहीं।" * लखूजी जादव

---

*—लखूजी जादवराव और शाहजीकी दुश्मनीका कारण, कई बखरोंमें यह भी लिखा हुआ है कि सुलतानजमालकी मृत्युके पीछे उसका ७ साल वर्षका बालक निजामशाह हुआ। सुलतान निजामशाहकी बेगमने अनन्त नामक एक मुत्सद्दीसे पूछा कि किसको वजीर किया जाय। उसने शाहजीको वजीर नियत करनेकी सलाह दी और उसकी सलाहसे शाहजी वजीर नियत हुए। यह बात लखूजी जादवरावको बुरी लगी क्योंकि शाहजी, निजामशाहकी अनुपस्थितिमें राजसिंहासनपर बैठते थे, लखूजी जादवराव आदि बड़े बड़े सरदारोंको राजसिंहासनके आगे सिर झुकाना पड़ता था। यह बात लखूजी जादवको बहुत बुरी लगी कि जिसका बाप मेरे अधीन चाकर था उसीको मुझे सिर झुकाना पड़ता है। बस इसीसे चिढ़कर उसने अपना एक वकील मुगल दरबारमें भेजा और मुगल सम्राट्को निजामशाहपर चढ़ाई करनेके लिये उकसाया। मुगल सम्राट् शाहजहाँने साठ हजार सेना जादवराव तथा अन्य मराठा सरदारोंके अनुरोधसे निजामशाहीपर चढ़ाई करनेके लिये भेजी। शाहजी किलेमें रहते समय शाहजी व मालवक मुगल सेनासे लड़े थे परन्तु उस समय बालक निजामशाहकी माता लखूजी जादवरावसे मेल करने लगीं तब उन्हें बुरा लगा और सोचने लगे कि जब निजामशाहकी माता ही जादवरावसे मिलना चाहती है तब अपना प्राण गँवानेसे क्या मतलब? इसलिये वे अपने भाई शरीफको वहां छोड़कर बीजापुरकी ओर चल दिये। शाहजी एक रातको अचानक निकले परन्तु मुगल सेनाको किसी प्रकार खबर लग गयी। लखूजी जादवरावने उनका पीछा किया, शाहजीके साथ उस समय उनका तीन-चार वर्षका लड़का सम्भाजी और जीजाबाई थीं। गर्भवती होनेके कारण जीजाबाई तेज नहीं चल सकती थीं। उस समय जुन्नारमें श्रीनिवासराव नामक सरदार, शाहजीके मित्र थे। उन्होंने जीजाबाईको शिवनेरीके किलेमें आश्रय दिया। इसके विपरीत कई बखरोंमें यह भी लिखा हुआ है कि शाहजीके साथ जानेपर रास्तेमें जीजाबाई पकड़ी गई थीं। लखूजी जादवरावने अपनी पुत्रीकी इस दशापर बहुत तरस खाया और उन्हें शिवनेरीके किलेमें भेज पाँचसौ सवार उनकी रक्षाके लिये नियत किये।

रावने अपनी पुत्री जीजाबाईको बहुत कुछ समझाया बुझाया। उनसे अपने साथ चलनेका बहुत कुछ आग्रह किया, पर उन्होंने अपने पिताकी एक भी बात न मानी और हठपूर्वक कहा कि "हमको शिवनेरीके किलेमें ही रहने दो"। लाचार होकर लखूजीने जीजाबाईको शिवनेरीके किलेमें रहने दिया और अपनी सेनामेंसे कुछ आदमी जीजाबाईकी रक्षाके लिये वहां रख दिये। शिवनेरीका किला पूनासे २५ मीलकी दूरीपर है। इस दुर्गमें ही उपरोक्त घटनाके दो मास पीछे शिवाजीका जन्म हुआ। उक्त किलेकी अधिष्ठात्री देवी शिवाईके नामपर ही जीजाबाईने अपने नवजात शिशुका नाम शिवाजी रखा। इस नामके सम्बन्धमें कहा जाता है कि जीजाबाईने उस सङ्कटके समय किलेकी अधिष्ठात्री देवी शिवाईसे प्रार्थना की थी कि यदि मेरे पतिदेवके ऊपरसे यह सङ्कट टल जाय और मेरे पुत्र हो, तो हे माता! तेरे नामपर ही अपने पुत्रका नाम रखूंगी।*

* शिवाजीके जन्मके और नामके सम्बन्धमें कितनी ही और कथायें भी प्रचलित हैं। एक कथामें लिखा है कि वह पुत्र जन्मानेके अनन्तर [illegible] निजाम शाहीकी रक्षाके लिये मुगलोंसे युद्ध कर रहे थे और युद्धके कारण उन्हें अपनी स्त्री के पास आनेका ध्यान ही नहीं रहा था कि एक रातको उन्हें स्वप्नमें [illegible] फिर हाने एक गुसाईं अपना त्रिशूल हाथ दिखायी दिया और उनमें एक आम शाहजीके हाथमें दिया और शाहजीसे कहा कि इस आममेंसे आधा तुम खाओ और आधा अपनी स्त्रीको खिलाओ। जो पुत्र होगा [illegible] होगा, वह शिवजीका अवतार होगा। तुम उस बच्चेको [illegible] मुसलमानोंके शासन [illegible] करनेके लिये [illegible] बनाना। जब उस बच्चेको बारह वर्षकी अवस्था हो जाय तब उसको [illegible] हो [illegible] पूर्वक [illegible] देना। [illegible] [illegible] और [illegible] उस बच्चेको

जिस समय शिवाजीका जन्म हुआ, उस समय शाहजी बीजापुरमें थे। यहां पुत्र जन्मका समाचार उनके पास एक दूत द्वारा भेजा गया। शाहजी इस समाचारको पाकर अत्यन्त प्रसन्न हुए। उन्होंने समाचारवाहकको बहुतसा पारितोषिक दिया।

यद्यपि शिवाजीकी माता जीजाबाई, शिवाजीके जन्मके समय शिवनेरीके किलेमें एक प्रकारसे कैद थीं, परन्तु पुत्र जन्मके समय उन्होंने अपनी उस पराधीनताकी अवस्थामें भी बड़ा हर्ष मनाया। उस समयकी परिस्थितिके अनुसार उन्होंने पुत्र जन्मोत्सवके उपलक्ष्यमें किसी बातकी कसर नहीं छोड़ी। आसपासके गांवोंमेंसे बहुतसी स्त्रियाँ बुलाई गयीं। उन्होंने गाना बजाना किया। स्त्रियोंको विदा करते समय उन्हें बहुतसे पदार्थ शिवाजीके जन्मोत्सवके उपलक्ष्यमें भेंट किये गये। इस घटनासे ही पाठक अनुमान कर लें कि शिवाजीके जन्मके समय जीजाबाईको कितनी प्रसन्नता हुई थी।

प्रायः यह देखनेमें आता है कि जननीके स्वभाव और विचारों का प्रभाव गर्भस्थ बालकके हृदयपर पड़े बिना नहीं रहता। शिवाजीके जन्मके समय महाराष्ट्र प्रदेशमें युद्धकी धूम मची हुई थी। शिवाजीके पिता शाहजी युद्धमें व्यस्त थे। शिवाजीकी माता संकटमें थीं। बल्कि यों कहना चाहिये कि एक प्रकारसे उस

आप भी खाया और अपनी स्त्री जीजाबाईको भी खिलाया। इसके पीछे शिवाजीका जन्म हुआ। दूसरी कथा इस सम्बन्धमें यह प्रचलित है कि जन्मके समय पिताको शिवजीने स्वप्न दिया कि मैंने तेरे घरमें अवतार धारण किया है इस-लिये उन्होंने अपने पुत्रका नाम शिवाजी रखा।

समय थे कैदमें थीं। प्रायः यह बात देखनेमें आती है कि अनेक शूर, भीर, धीर, चतुर पराक्रमी महापुरुषोंका जन्म सङ्कट कालमें ही हुआ है। सम्राट् अकबरके जन्मकी घटनासे शिवाजीकी जन्म घटना बहुत कुछ मिलती जुलती है। अकबर और शिवाजी दोनोंके पिता अपनी गर्भवती स्त्रियोंके साथ रक्षाके लिये इधर उधर भटक रहे थे। दोनोंका ही जन्म ऐसी सङ्कटावस्थामें हुआ जब उनके पिताओंको कहीं भी ठौर ठिकाना न था। चारों ओर शत्रुओंसे घिरे हुए थे। आगे चलकर अकबर और शिवाजी दोनों बड़े धीर वीर निकले। अकबरने अपने बाप हुमायूंका खोया हुआ राज्य पुनः प्राप्त किया और मुगल साम्राज्यकी हिन्दुस्तानमें जड़ जमायी। शिवाजीने महाराष्ट्र प्रदेशमेंसे अत्याचार और अन्यायकी जड़ मिटाकर, स्वराज्य स्थापित किया। अतएव इसमें कुछ सन्देह नहीं है कि जननीके विचार और जन्मभूमिकी परिस्थितिका शिवाजीके हृदयपर भी प्रभाव पड़े बिना नहीं रहा।

शिवनेरके किलेमें जीजाबाई * अपने पुत्र शिवाजी सहित तीन वर्षतक रही थीं। उनके ये तीन वर्ष सङ्कट और विपत्तिसे खाली नहीं बीते। शिवाजीके जन्मके दो वर्ष पीछे उनके मामा

* जीजाबाईके छः पुत्र हुए थे। बड़े पुत्रका नाम सम्भाजी था। वे शिवाजीसे चार वर्ष बड़े थे। मराठी भाषाकी मासिक पत्रिका 'भारत इतिहास संशोधक मण्डलो'की [illegible]—सन् १९११ ई० में श्रीयुत [illegible] शास्त्री [illegible] भाषाके ग्रन्थ—"शिवभारत"के आधारपर लिखा है कि जीजाबाईके शिवाजी सहित छः लड़के हुए थे जिनमेंसे चार बच्चे बचपनमें ही मर गये थे। पांचवें सम्भाजी थे और छठे शिवाजी।

लखूजी * जादवको मुरताजखांने धोखेसे मरवा डाला। संवत् १६९० वि० सन १६३३ ई० में जीजाबाईको उनके शत्रुओंने कैद कर लिया। इसका कारण यह था कि मुरताज निजामशाह दूसरेने महलदरखां नामक एक मनुष्यको त्र्यम्बकका सूबेदार नियत किया था। यह शाहजहां बादशाहको छोड़कर आया था। उसने बादशाहको प्रसन्न करनेके लिये शाहजीकी स्त्रीको कैद कर लिया था। उस समय जीजाबाईके पास शिवाजी भी थे। मुगल सैनिकोंकी बड़ी इच्छा थी कि किसी प्रकारसे शिवाजीको पकड़ लें और उन्हें शाहजीका शरीर बन्धक रखें।†

---

* लखूजी जादवराव पहले मुगलोंसे मिले हुए थे, पीछे उनकी इच्छा पुन: निजामशाही राज्यमें पुनर्मिलनेकी हुई। कारण मलिक अम्बरका लड़का फतहखां निजामशाहीका वजीर हुआ। मुरताजखां शाहने किसी बातपर चिढ़कर फतहखांको कैदकर लिया और तकरबखां नामक एक दूसरे मनुष्यको वजीर किया। इस उलट-फेरके समयमें लखूजी जादवरावने निजामशाहोंसे फिर अपने भाग्यकी बाजी लगायी। मुरताजखां निजामशाहने लखूजी जादवराव और उनके पुत्र अचलजीको दौलताबादके किलेमें मिलनेके लिये बुलाया और वहां धोखेसे उन दोनों बाप बेटोंको मरवा डाला। लखूजी और उनके पुत्र दोनों खूब बहादुरीसे लड़े, और अन्तमें मारे गये। उस समय लखूजी जादवरावकी स्त्री, कुछ सैनिकोंके साथ शहरमें एक मकानपर ठहरी हुई थी। पति और पुत्रकी मृत्युका समाचार पाकर वहांसे चली गयी और मुगल सम्राट्से अपने पतिकी जागीर और मनसबकी प्रार्थना की। मुगल सम्राट्ने उसके पोते मीलाजीरावको लखूजीकी जागीर और मनसब दे दिया। इसके पीछे अचलजीके वंशधर मुगलोंके यहां ही नौकर रहे।

†—शरीर बन्धककी पद्धति तात्पर्य यह था कि जब कभी एक राजा अथवा और कोई आदमी, दूसरे राजा या अपने किसी प्रतिद्वन्द्वीसे सन्धि करता था तब वह अपने कुछ आदमी प्रतिद्वन्द्वीके यहां धरोहरके तौरपर भेजता था। सन्धि तय हो जानेपर वे आदमी वापिस चले आते थे।

और शाहजीसे मनमानी सन्धि कर लें ; क्योंकि अपने बेटे शिवाजीके मुगलोंके चङ्गुलमें फंस जानेपर शाहजीको मुगलोंकी इच्छित शर्तें स्वीकार करनी पड़तीं पर जीजाबाईके * सामने मुगलोंकी दाल गल न सकी। उन्होंने शिवाजीको ऐसी जगह छिपा दिया जहां मुगलोंको पता ही न लग सका और शिवाजी उस समयतक सुरक्षित रहे जिस समयतक शाहजीने मुगलोंसे सन्धि कर ली। केवल इस घटनासे ही प्रतीत होता है कि जीजा बाई बड़ी चतुर थीं, क्योंकि तीन वर्षतक मुगलोंकी कैदमें रहीं पर मुगल शिवाजीका पता नहीं लगा सके।

यद्यपि संवत् १६८३ वि० सन् १६२३ ई० में जीजाबाई अपने पुत्र सहित मुगलोंकी कैदसे छूट गयीं पर शाहजीने इस समय भी विशेषरूपसे शिवाजी और उनकी माताकी ओर ध्यान नहीं दिया। इसका कारण यह था कि संवत् १६८७ वि० सन् १६३० ई० में शाहजीने तुकाबाई नामक एक और स्त्रीसे विवाह कर लिया था। इससे शाहजी जीजाबाईसे अलग रहते थे।

* किसी किसी इतिहासलेखकने लिखा है कि जिस समय जीजाबाईको मुगलोंने कैद किया था उस समय लखूजी जादवरावका एक भाई मुगलोंकी सेनामें था। उसने मुगलसेनापतिसे कहा कि हमारे और शाहजीके झगड़ेसे जीजाबाई और उसके पुत्रको व्यर्थ किसी कष्ट दिया है। इसमें इनका कुछ भी नहीं बिगड़ा था पर हमारे इस बातसे बड़ा ... होगा क्योंकि जीजाबाई हमारे घरानेकी लड़की है। मुगल सरदारने लखूजी जादवरावके भाईकी यह प्रार्थना मंजूर कर ली और जादवरावके भाईने जीजाबाईको उनके पुत्र सहित एक किलेमें सुरक्षित रखा। इस प्रकार शिवाजीके ऊपर बाल्यकालमें भी संकट आया था पर टल गया।

"नयी आ गयी पुरानीको दूर करो रे"—यही दशा उस समय शाहजीकी हुई।

जीजाबाईके होते हुए भी शाहजीने दूसरा विवाह क्यों किया? इस विषयमें अनेक इतिहास-लेखकोंका आपसमें मत भेद है। फारसीकी पुस्तक "तारीखे शिवाजी" में लिखा हुआ है—"शाहजीका बड़ा लड़का सम्भाजी कांकगिरिके युद्धमें मारा गया था और शाहजीका लखूजी जादव और उनके कुटुम्बियोंसे विशेष वैमनस्य हो गया था। शाहजीने सोचा कि लखूजी जादवकी लड़कीसे जो लड़का पैदा हुआ है, वह मेरे किसी काम न आयेगा। इसलिये उन्होंने दूसरा विवाह कर लिया और जीजाबाई तथा शिवाजीका परित्याग कर दिया।" तारीखे शिवाजी" के लेखकको यह गप्प प्रत्यक्ष प्रतीत होती है। क्योंकि शाहजीके दूसरे विवाहके बहुत दिन अर्थात तेईस वर्ष पीछे सम्भाजी कांकगिरिके युद्धमें मारे गये थे। इस प्रकार शाहजीका विवाह संवत १६८७ वि० सन् १६३० ई० में हुआ था और कांकगिरिका युद्ध संवत् १७१० वि० सन् १६५३ ई०में हुआ था। इसलिये तारीखे शिवाजीके लेखकका कथन विश्वासयोग्य और प्रमाणित नहीं है।

मराठी भाषामें एक त्रैमासिक पत्रिका "भारत इतिहास संशोधक" निकलती है। सन् १९२१ ई० की उक्त मासिक पत्रिकाकी प्रथम संख्यामें श्रीयुक वासुदेव शास्त्री खरेने शाहजीके दूसरे विवाहके सम्बन्धमें लिखा है कि सन् १६३० (संवत् १६६४ वि०)

में जब शाहजी बीजापुर दरबारमें पहुँच गये थे और उन्हें बीजापुर दरबारसे जागीर मिली थी तब उन्होंने जागीर प्राप्ति उपलक्ष्यमें दूसरा विवाह बीजापुरमें वहांके एक सरदारकी पुत्री से किया था। खरे महोदय लिखते हैं कि "शाहजीने जीजाबाईसे दुनियाको दिखानेके लिये बनावटी झगड़ा कर लिया था और शिवाजीको स्वतन्त्र राज्य स्थापन करनेके लिये, गुप्तरूपसे उत्साहित करनेके लिये, जीजाबाई और शिवाजीको अलग रखा था।" हम खरे महोदयके मस्तिष्ककी इस उपजसे सह मत नहीं हैं क्योंकि खरे महोदय अपने इसी लेखमें जिदे द शाका वलीमें लिखित शिवाजीकी जन्मतिथि—मार्च सन् १६३० ई० का समर्थन करते हैं। इस विचारसे देखा जाय तो सन् १६३७ ई० में शिवाजीकी अवस्था सात वर्षकी होती है। सात वर्षकी अवस्थाके बालकके हृदयमें स्वराज्य स्थापनाकी इच्छा उत्पन्न होना कठिन है। अतएव खरे महोदयका मत उचित प्रतीत नहीं होता। इस विषयमें प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता प्रोफेसर यदुनाथ सर कारने यह अटकल लगायी है कि जीजाबाईके रूपलावण्यके ह्रास हो जानेके कारण शाहजीने दूसरा विवाह कर लिया था। उक्त सरकार महोदय लिखते हैं —

It is however beyond dispute that Jija Bai now lost her husband's love probably with the loss of her youth and Shahji abandoned her and her new born son and took a younger and more beautiful

wife, Tukabai Mohita, on whom and whose son Vyankoji lavished all his affection and wealth"

इसका भावार्थ यह है कि "यह निर्विवाद सिद्ध है कि शायद जीजाबाई अपने यौवनके ह्रास हो जानेके कारण अपने पतिके प्रेमसे वञ्चित हुई। शाहजीने उनको और उनके नवजात पुत्रको परित्याग कर दिया और अत्यन्त रूपवती और युवती तुका बाई मोहते नामक स्त्रीसे विवाह कर लिया। पीछे अपनी नयी स्त्री और उसके बेटे बङ्कोजीसे ही शाहजीने विशेष प्रेम रखा और अपनी समस्त सम्पत्ति उन्हें दे दी।" इन इतिहास-लेखकोंकी अटकलपर हमको हँसी आये बिना नहीं रहती और साथ ही इनकी बुद्धिपर खेद होता है। क्योंकि उस समय समस्त भारत वर्षमें बहु विवाहकी प्रथा प्रचलित थी और कहीं कहीं आजकल भी है। इस कुप्रथासे उस समयके महाराष्ट्र भी नहीं बचे थे और आजकल भी कहीं कहीं महाराष्ट्रोंमें बहुविवाहकी प्रथा प्रचलित है। स्वयं शिवाजीके कई विवाह हुए थे। तब शाह जीके विवाहके सम्बन्धमें अनेक प्रकारकी कल्पनाएँ करनेकी आवश्यकता ही क्या है? शाहजीके चरित्रसे यही पता लगता है कि वे उस समय मुगलोंसे युद्धमें व्यस्त थे, इसलिये उनका अपनी स्त्री जीजाबाईकी ओर बहुत कम ध्यान गया था। अस्तु, जो कुछ हो शिवाजीको अपने जन्मके बहुत दिनों पीछे पितृमुखके दर्शनका सौभाग्य प्राप्त हुआ था।

जीजाबाई सच्ची क्षत्राणी थीं। सच्चे क्षत्रियोंके समान ही

उन्हें अपने मान अपमानका विशेष ध्यान रहता था। सङ्कट और विपत्तियोंमें पड़कर उन्होंने अपने धैर्यको नहीं छोड़ा था। पतिका उनके प्रति प्रेम कम हो जानेपर भी उन्होंने सच्ची हिन्दू नारियोंके समान ही अपने स्वभाव और चरित्रका निर्माण किया था। विपत्ति और सङ्कटोंसे न घबड़ाकर और अपने पतिसे अलग रहनेपर भी उन्होंने असीम धैर्य्यका परिचय दिया था। वे नित्यप्रति पूजा, पाठ और धार्मिक कृत्योंमें ही अपना समय बिताती थीं। जीजाबाईके धार्मिक कृत्योंका शिवाजीके चरित्र पर विशेष प्रभाव पड़ा था। बालकोंका हृदय मिट्टीके कच्चे घड़े के समान होता है, बाल्यावस्थामें बच्चोंको जिधर चाहो उधर ही झुकाया जा सकता है। प्रायः यह देखनेमें आता है कि बाल्यावस्थामें मनुष्योंके हृदयपर भले बुरे जो संस्कार पड़ जाते हैं वे जन्मभर दूर नहीं होते। मातापिताका बड़ा भारी उत्तरदायित्वपूर्ण कर्त्तव्य यह होता है कि वे अपने बच्चोंको शिक्षित और कर्त्तव्य परायण बनावें। हमारे चरित्र-नायककी माता जीजाबाई अपने इस कर्त्तव्यको भलीभांति पहचानती थीं। वीर शिरोमणि सम्राट् नेपोलियन बोनापार्टके सम्बन्धमें सुना जाता है कि "वह कहा करता था कि मेरी माताने जो कुछ मुझे बनाया वह मैं हूं।" यही बात शिवाजीके सम्बन्धमें भी कही जाती है। जीजाबाईके धार्मिक आचरण और चरित्रका शिवाजीके जीवनपर विशेष प्रभाव पड़ा। जीजाबाईने सङ्कट-कालमें भी अपने पुत्र शिवाजीकी शिक्षा-दीक्षाकी उपेक्षा नहीं की। वे

बालक शिवाजीको पूर्वजोंकी शूरता और पूर्वकालके वैभवकी कहानियाँ सुनाया करती थीं जिनसे बाल्यपनमें ही शिवाजीके हृदयमें साहस, वीरता और महत्वाकांक्षाएँ उत्पन्न हो गयी थीं। स्वयं जीजाबाई बहुश्रुता थीं। उन्होंने पौराणिक कथाएँ और कीर्त्तन [21] बहुत सुने थे। सदैव वे रामायण और महाभारतकी वीरतापूर्ण कथाएँ, धार्मिक चरित्र और राजनीतिक बातोंकी चर्चा किया करती थीं। मातृमुखसे सच्चे प्रेमसे निकलती हुई उन बातोंको सुनकर बालक शिवाजीके मनपर विलक्षण प्रभाव हुआ। कथा-पुराण सुनने और देवदर्शन करनेकी आदत उनको बालकपनसे ही पड़ गयी थी। अतएव माताकी आदर्श धर्मशिक्षा पाकर शिवाजी एक धर्मनिष्ठ बालक हो गये थे। किसी विद्वानका कथन है कि हजार शिक्षक बालकको वह शिक्षा नहीं दे सकते हैं जो एक माता दे सकती है। यह अत्युक्ति नहीं है। शिवाजीके चरित्रके विषयमें ऊपर लिखा हुआ कथन ठीक प्रतीत होता है।

शाहजी मुगलोंसे युद्धकी समाप्तिके पीछे संवत् १६९४ वि०

२१ "कीर्तन" महाराष्ट्र में एक प्रकारका धार्मिक और नैतिक व्याख्यान हुआ करता है। मन्दिरोंमें हरिदास लोग यह "कीर्तन" करते हैं। कीर्तनकी विधि महाराष्ट्र प्रान्तके अतिरिक्त भारतके अन्य प्रान्तोंमें भी थोड़ी बहुत प्रचलित है। पर महाराष्ट्र तथा अन्य प्रान्तोंके 'कीर्तन'में बहुत भेद होता है। प्रान्तोंमें जो कीर्तन होते हैं उनमें कुछ लोग "हरिबोल" "हरिबोल" कहते हुए और धर्म सम्बन्धी भजन गाते हुए नगरमें भ्रमण कर आते हैं। पर महाराष्ट्र में ऐसा नहीं होता है। वहां संगीतमय धार्मिक व्याख्यान होता है जो सुननेमें न केवल आनन्ददायक होता है बल्कि शिक्षाप्रद भी होता है।

सन् १६२७ ई०में बीजापुरके आश्रित हुए। उन्हें अपनी पुरानी जागीर भी मिल गयी। शाहजी अपनी जागीरोंके प्रबन्धका भार ब्राह्मणोंपर सौंपा करते थे। इन ब्राह्मण प्रबन्धकर्त्ताओंमें नारोपन्थ और दादाजी कोंडदेव उनके परम विश्वस्त थे। नारोपन्थ तो कर्नाटककी जागीरपर काम करते थे और दादाजी पूनामें रहते थे। ये वर्त्तमान पूना नगरके मालथान स्थानमें उत्पन्न हुए थे। अच्छे विद्वान और योग्य प्रबन्धकर्त्ता थे। उन्होंने शिवाजीको रुचिके अनुसार सैनिक शिक्षा दी थी। दादाजी कोंडदेव प्रबन्ध सम्बन्धी नियम पालन करनेमें बड़े कड़े थे। स्वर्गीय जस्टिस महादेव गोविन्द रानाडेने अपनी पुस्तक 'Rise of the Marhatta power' में उनके प्रबन्धकी कड़ाईके सम्बन्धमें एक घटना लिखी है। उसीसे पाठकोंको उनके चरित्रकी महत्ताका पता लग जायेगा। घटना यह है —

"Plantations of fruit trees smiled over the land—and still bear testimony at Shivapur to the wisdom of the great Brahman minister. So strict was his discipline that once when he was tempted to pluck without leave a ripe mango of one of his master's trees, he ordered those

had done till shahaji ordered him to discontinue the practice,

इसका भावार्थ यह है कि "देशमें फल देनेवाले वृक्ष मुसकराते हुए खड़े थे और आज भी शिवपुरमें उस महान् ब्राह्मण-मन्त्रीकी बुद्धिमत्ताका प्रमाण दे रहे हैं। निग्रह और संयमके पालनमें वे इतने कड़े थे कि एक बार जब उनका जी अपने स्वामीकी आज्ञाके बिना एक फल तोड़नेको ललचाया, तब स्वयं उन्होंने इसके दण्डस्वरूप अपना दाहिना हाथ काटनेकी आज्ञा दी। परन्तु अपने अनुयायियोंके विशेष अनुरोधसे उन्होंने अपना हाथ नहीं कटवाया। इतना होनेपर भी उन्होंने अपने उस हाथमें आस्तीन नहीं पहनी जिससे कि उन्हें सदैव इस बातका स्मरण रहे कि इस हाथसे भूल हो गयी है। वे बहुत दिनतक ऐसा करते रहे, अन्तमें शाहजीकी आज्ञासे उन्होंने यह बन्द किया।" कोंडदेवने शाहजीको जागीरका बहुत अच्छा प्रबन्ध किया था। बीजापुर, दरबार और मुगलोंकी लड़ाईके कारण उनकी जागीर बहुत कुछ नष्ट हो चुकी थी। अकाल जङ्गली जानवर और लुटेरोंके आक्रमणसे रही सही भी बरबाद हो रही थी। उन्होंने जङ्गली जानवर भेड़िया आदिके मारनेके लिये पारितोषिक नियत किये। लुटेरे और डाकुओंसे भी देशकी रक्षा की। दस सालके भीतर शाहजीको इस प्रबन्धसे इतनी आमदनी हो गयी कि वे कुछ तीरन्दाज और पैदलोंको रखकर पहाड़ी किलोंकी मरम्मत कराने लग गये।

किसी किसी बखरमें यह लिखा हुआ है कि जब शाहजीने दादाजी कोण्डदेवकी इस न्यायप्रियताके विषयमें सुना तो उन्होंने सात सौ घोड़ा दादाजी कोण्डदेवको उपहार-स्वरूप दिये और आस्तीन पहननेका अनुरोध किया। कोई कोई इतिहास-लेखक यह भी लिखते हैं कि दादाजी कोण्डदेव इस भूलके लिये अपने गलेमें लोहेकी जञ्जीर पहने रहते थे। चिटनीसके बखरमें लिखा हुआ है कि "दादाजी कोण्डदेव शिवाजीके साथ शाहजीके एक बागमें घूम रहे थे तब उन्होंने एक आम तोड़ लिया था, जिसके लिए उन्होंने अपने साथियोंको जिस हाथसे आम तोड़ा था उस हाथको काटनेकी आज्ञा दी। इसपर शिवाजीने कहा कि आपका यह विचार ठीक नहीं है, क्योंकि आपने ही यह बाग लगाया है और आप ही इसके मालिक हैं। पर दादाजी कोण्डदेवने स्वीकार नहीं किया और वे अपनी मृत्यु पर्यन्त अपने उस हाथमें इतनी छोटी आस्तीन पहनते थे कि वह खुला ही रहता था।"

शाहजीने मुगलोंसे युद्धकी समाप्ति हो जानेके पीछे बीजापुर दरबारकी सेवा ग्रहण करनेपर अपने कारकुन दादाजी कोण्डदेवको लिखा—"मेरी स्त्री जीजाबाई और मेरा पुत्र शिवाजी शिवनेरके किलेमें रहते हैं। तुम उन दोनोंको पूना ले आओ और अपनी निगरानीमें वहीं रखो। उनकी आवश्यकताके अनुसार उनके व्ययका प्रबन्ध करो।" बस शाहजीके आज्ञानुसार, जीजाबाई और उनका पुत्र पूना लाए गए और वहीं दादाजी कोण्डदेवने उन्हें अपनी निगरानीमें रखा।

दूसरे वर्ष—अर्थात् संवत् १६६५ वि० सन् १६२८ ई०में दादाजी कोडदेव जो उनके अधीन जागीर थी, उसका हिसाब शाहजीको समझानेके लिये बङ्गलोर गये, तब जीजाबाई और शिवाजी भी दादाजी कोड्देवके साथ शाहजीसे भेंट करनेके लिये बङ्गलोर गये। शाहजीने मिलकर और थोड़े दिनोंतक वहां रहकर ये लोग दादाजी कोड्देवके साथ पूना लौट आये।

दादाजी कोड्देवकी देख-रेखमें ही शिवाजीकी शिक्षाका प्रबन्ध किया गया। पाठकोंको यहां यह स्मरण रखना चाहिये कि उस समयकी भारतकी शिक्षा प्रणाली आजकलकी सी न थी। उस समय भारतके बच्चे यूनिवर्सिटीकी वेदीपर बलिदान होनेकी अपेक्षा अपनेको रणचण्डीकी भेंट करना अधिक पसन्द करते थे। उस समय भारतके बच्चोंकी आजकलकीसी दशा न थी कि यूनिवर्सिटीके एक बालिश्त कागज़के टुकड़ेके लिये अपने शारीरिक बलका बलिदान कर दें। उस समय भारतके बच्चों को जीवनोपयोगी और देशोपयोगी शिक्षा मिलती थी। उस समय भारतमाताके बच्चे शारीरिक और आत्मिक बल प्राप्त करते थे। भारतका वह सुहावना और सुन्दर समय था, केवल किताबी विद्या रटनेमें ही अपना समय न बिताकर भारत-संतान साहस और वीरता दिखाना अच्छा समझती थी। अन्य भारत सन्तानोंके समान उस समयके महाराष्ट्र लोग भी लिखने पढ़नेकी ओर मन नहीं लगाते थे। लिखना पढ़ना सीखनेकी अपेक्षा वीर पुरुषोंके योग्य गुणोंको सीखनेमें उनका अधिक उत्साह

और साहस रहता था। उस समय भारत-माताके लाल यह अच्छी तरह जानते थे कि "कलम करे कितनी ही चाकर भालेके यह नहीं बराबर।" इस कारण शिवाजीका बालकपन गुरुकी पाठशालामें नहीं बीता। गुरुके मुखसे शान्ति आदिके गुणोंकी प्रशंसा सुनकर उन्होंने अपनेको निर्जीव और निरीह बनानेकी चेष्टा नहीं की। वे लिखने पढ़नेकी अपेक्षा सच्चे क्षत्रियोंके समान तेजस्विता, वीरता और साहसकी शिक्षामें अधिक मन लगाते थे। उन्होंने दादाजी कोंड़देवकी देखभाल में तीर छोड़नेमें, तलवार चलानेमें और बछा बेधनेमें, घोड़ेकी सवारी आदिमें दक्षता प्राप्त की थी।* यद्यपि शिवाजीने

* शिवाजी बहुत पढ़े लिखे थे या नहीं, इसका कुछ भी प्रमाण नहीं मिलता। [illegible]

बड़े बड़े पोथे नहीं रटे थे पर इन्हें व्यावहारिक और धार्मिक शिक्षाका अच्छा ज्ञान प्राप्त हो गया था और ऐसा अच्छा ज्ञान प्राप्त हुआ था जो बड़े बड़े पोथे रटनेवालोंको भी कभी नहीं होता है। उनकी माताके समान ही उनके अभिभावक दादाजी कोण्डदेवने उन्हें धार्मिक और राजकीय शिक्षा देनेमें किसी प्रकार-की कमी नहीं रखी थी। शिवाजीको हिन्दू धर्मानुसार कार्य करनेमें बड़ी श्रद्धा थी। वे बड़े ध्यानसे हिन्दू धर्मकी कथाओंको सुनते थे। रामायण, महाभारत और भागवतकी कथा सुननेमें उनको बड़ा आनन्द आता था। बालकपनसे ही कथा सुननेमें उनकी बड़ी श्रद्धा थी। हिन्दूधर्मपर ऐसी अचल भक्ति और हिन्दू धर्मानुसार कार्य्योंमें ऐसी भीतरी श्रद्धा होनेसे महावीर शिवाजीने हिन्दू नामका गौरव रखनेकी दृढ़ प्रतिज्ञा की थी। उनकी यह प्रतिज्ञा किसी प्रकार भी विचलित नहीं हुई। शत्रुके भृकुटी चढ़ानेपर और विपत्तिकी घोर टक्कर लगनेपर भी वे अपनी प्रतिज्ञासे चलायमान न हुए। शिवाजीने जीवनके अन्त काल तक निर्भयताके साथ अविचल चित्तसे उस साधु प्रतिज्ञाकी रक्षा की थी। रामायण, महाभारतकी वीरताभरी कथाओंके सुननेसे शिवाजीके चित्तमें वीररस उमड़ आया था, साहस बढ़ने लगा था। स्वजाति-प्रेम और देश हित कामनाकी जड़ उनके चित्तमें जम गयी थी। बस शिवाजीकी माता जीजाबाई और उनके अभिभावक दादाजी कोण्डदेवकी यही शिक्षा थी। इसी शिक्षाने शिवाजीको अपने जीवन-कालमें निराशा-सागरमें नहीं

डुबोया। इसी शिक्षाके कारण शिवाजीको अपने जीवनमें सफलता प्राप्त हुई।

दादाजी कोंडदेवसे शिवाजीने केवल वीरोचित शिक्षा ही, जैसे घोड़ेपर बैठना, तीरन्दाजी करना, भाला चलाना, तलवार चलाना, पटेबाजी आदि प्राप्त नहीं की थी। अस्त्र शस्त्रकी शिक्षाके अतिरिक्त उन्होंने लगान, मालगुजारी, हिसाब किताब, सेना रखकर अपनी तथा जागीरकी रक्षाका प्रबन्ध आदि करना भी सीखा था। यह पहले लिखा जा चुका है कि शाहजीकी जागीर का प्रबन्ध दादाजी कोंडदेवके अधीन था। उस समय भारतका प्रत्येक मनुष्य भुजबल रखता था, आजकलकी भाँति उस समय भारतवासी मुर्दा न थे। इसलिये उस समय लड़ाई झगड़े और लूट मार बहुत हुआ करती थी। शाहजीकी जागीर भी इन उत्पातोंसे बच नहीं सकी थी। जागीरकी रक्षाके लिये दादाजीने मावले जातिके लोगोंकी एक पैदल सेना तैयार की थी और गांव-गांव थानेकी पहरे बैठाकर चोरोंसे प्रजाकी रक्षाका प्रबन्ध किया था। अपनी जागीरके किले ठीक करवाकर उनपर थोड़े थोड़े लोग रख दिये थे। हिंसक जीवजन्तु बाघ भेड़िया आदिको मावलोंसे मरवा डाला था। अच्छी तरहसे जमीनकी माप करवाके बीघाबन्दी निश्चित करके फसलके हिसाबसे लगानके नियम बनाये थे। कई वर्षोंतक लगानकी माफी देकर जंगलकी जमीनको उपजाऊ बनाया था। इन सुधारोंका परिणाम यह हुआ कि जागीरमें जनसंख्या बढ़ गयी और पहलेसे

लगान भी अधिक आने लगा। दादाजी कोंडदेवके इस प्रबन्ध से शिवाजीको प्रबन्ध सम्बन्धी अच्छी शिक्षा मिली। प्रजाके मामले मुकद्दमोंको निपटाते समय भी दादाजी बालक शिवाजी को अपने पास बैठा लेते थे * शिवाजीको जमाबन्दी और प्रजाकी हालतका ज्ञान करानेके लिये वे अपने साथ शिवाजीको गाँव गाँव घुमाते थे। स्वराज्य स्थापन करनेमें दादाजी कोंडदेवकी शिक्षा शिवाजीको कितनी लाभकारी हुई, इसका पता पाठकोंको आगे चलकर मिलेगा।

बाल विवाहकी रीति इस देशमें आजसे नहीं बहुत दिनोंसे चली आती है। शिवाजीका भी प्रथम विवाह बालकपनमें ही हो गया था। संवत् १६९७ वि० सन् १६४० ई० में शिवाजीका प्रथम विवाह निम्बालकर घरानेकी कन्या सईबाईके साथ बड़ी धूमधामसे हुआ था। जिसके विषयमें मराठी भाषाके कई लेखकोंने लिखा है कि जिस समय शाहजी कर्नाटकके युद्धमें विजय प्राप्त करके बीजापुर लौटे थे उस समय उनकी इच्छा शिवाजीको बीजापुर बुलानेकी हुई थी। उन्होंने दादाजी कोंड़

* किसी २ इतिहास-लेखकने लिखा है कि बीजापुरमें रहते समय शिवाजी-को अपने पिताके सहवाससे भी बहुत कुछ शिक्षा मिली थी। दरबारी रीति-रिवाज अमीर उमरावोंके साथ व्यवहार, राज्य-संबन्धी बातें भिन्न भिन्न राजकीय विभागोंका भीतरी बाहरी प्रबन्ध, सेनाका प्रबन्ध, अश्वशालाकी व्यवस्था, सेना बारूद, तोप बंदूक, इत्यादि अनेक नवीन बातें उन्होंने वहां देखी थीं। किसी २ इतिहास-लेखकने यह भी लिखा है कि राजनीति-विषयक कोई विशेष बातें जब हुआ करती थीं तब शाहजी विशेष रूपसे अपने पुत्रको साथ बैठा लेते थे। अनेक राज नैतिक दाव पेंच वे सब शिवाजीको समझाते रहते थे।

देशको लिखा कि शिवाजीको बीजापुर भेज दो, उनका यहां विवाह होगा। पिताके इस विचारकी खबर जब शिवाजीको लगी तब उन्होंने दादाजी कोण्डदेवसे कहा कि मेरा विवाह बीजापुरमें नहीं होना चाहिये क्योंकि वहां विधर्मियोंके सम्मिलित होनेसे यह पवित्र कार्य भ्रष्ट हो जायगा। इसलिये मेरा विवाह पूनामें ही होना चाहिये। दादाजी कोण्डदेवने शिवाजीके इस विचारका समाचार शाहजीको दिया तब शाहजीकी अनुमतिसे शिवाजीका विवाह पूनामें ही हुआ।

संवत् १६९८ वि० सन् १६४१ ई० में शाहजीने शिवाजी और जीजाबाईको बीजापुर बुला लिया था। ऐसा प्रतीत होता है कि बीजापुरमें शिवाजी अपनी माता सहित पिताके पास दो तीन वर्ष रहे थे। संसारमें ऐसे बहुत कम विजित और विजेता हैं जिनका परस्पर मनोमालिन्य न रहता हो और एक दूसरेके प्रति जिनके अच्छे भाव रहे हों। जब एक जाति दूसरी जातिको अपने अधीन कर लेती है तब विजित जाति अपनी अधीनस्थ जातिको प्रत्येक बातमें नीचा दिखानेकी चेष्टा करती है। दुनियाके इतिहासमें ऐसे बहुत कम उदाहरण मिलेंगे कि विजेताओंने अपनी अधीनस्थ विजित जातियोंपर अत्याचार और अन्याय न किये हों। विजेताओंने अपनी अधीनस्थ विजित जातिको न सताया हो। हमारे मुसल्मान शासक भी इस दोषसे न बचे थे। उन्होंने भी संसारके अन्य विजेताओंके समान ही अपनी अधीनस्थ विजित जातियोंको सतानेमें किसी प्रकार

की कसर न छोड़ी थी। बीजापुरकी आदिलशाही भी संसारके इस नियमसे बच नहीं सकी थी। आदिलशाहकी राजधानी बीजापुरमें मुसलमान हिन्दुओंको सताये बिना नहीं रहते थे। वे अपनी मजहबी तामस्सुबमें आकर हिन्दुओंके जी दुखानेवाले कार्य्य करते थे। बालक शिवाजीके हृदयपर मुसलमानोंके इस कार्यका प्रभाव पड़े बिना नहीं रहा। बल्कि यों कहना चाहिये कि बीजापुरमें रहते समय बालक शिवाजीके हृदयपर जो प्रभाव पड़ा था उसीके फल स्वरूप उन्होंने आगे अपनी बड़ी अवस्था में वह कार्य किया जिससे महाराष्ट्र प्रदेशका इतिहास ही दूसरे रङ्गमें रङ्ग गया। बीजापुरमें रहते समय शिवाजीके हृदयमें जो विचार उत्पन्न हुए उन्हींके अनुसार भविष्यमें उनका कार्य क्षेत्र हुआ।

बीजापुरमें जिस समय शिवाजी पहुंचे थे, उस समय शिवाजीकी अवस्था लगभग चौदह वर्षकी थी। मराठी भाषाके इतिहासलेखकोंने लिखा है कि चौदह वर्षकी अवस्थामें ही शिवाजी सर्व प्रकारकी युद्ध-कलामें दक्ष हो गये थे। देखनेमें वे सुन्दर और बलवान थे। वे अत्यन्त चञ्चल और दृढ़प्रतिज्ञ थे। प्रत्येक कार्यको सोचने और विचारनेकी शक्ति उनमें थी, साथ ही लड़कपनसे ही वे विचारशील और दूरदर्शी थे। अपने धर्मपर किसी प्रकारका आघात होना वे लड़कपनसे ही सहन नहीं कर सकते थे। छोटी अवस्थासे ही उनमें घोड़े और हाथियोंके गुणदोष पहचाननेकी शक्ति थी। अस्त्र शस्त्र गोला बारूदके

कारखाने देखने और उनको जांच करनेका अनुराग उन्हें बालक पनसे ही था। वे गुणी, अनुभवी, विद्वान और बुद्धिमान व्यक्तियोंका सदैव आदर किया करते थे। अपनी चाल ढाल, रहन सहनसे वे प्रत्येक बुद्धिमान और विद्वान पुरुषको प्रसन्न कर लेते थे और उससे अनेक प्रकारके प्रश्न करके नयी नयी बातें सीखने की चेष्टा करते थे। उन्हें भोग विलास और बुराईसे लड़कपन से ही नफरत थी। आलसी और सुस्त आदमियोंसे वे घृणा करते थे। अपनेसे बड़ी अवस्थावालोंका वे सदैव आदर सत्कार करते थे। उनके इन्हीं गुणोंसे बीजापुरके सरदार और अमीर उमरा उनसे प्रसन्न रहते थे और उन्हें बहुत चाहते थे।

शिवाजीकी चालढाल और रहन सहनसे बीजापुरके अमीर उमरा इतने प्रसन्न हुए कि एक दिन उन्होंने बीजापुरके सुलतानसे शिवाजीकी बड़ी प्रशंसा की। अपने अमीरोंके मुंहसे शिवाजीकी बड़ी तारीफ सुनकर सुल्तानने शिवाजीको देखनेकी इच्छा प्रकट की। किसी किसी इतिहासलेखकने लिखा है कि शाहजीके एक मित्र मुरारपन्तने सुल्तानसे शिवाजीके पराक्रम, साहस तथा अन्य गुणोंकी विशेष प्रशंसा की। उसको सुनकर सुल्तानकी इच्छा शिवाजीको देखनेकी हुई। शाहजी तथा मुरारपन्तकी इच्छा शिवाजीको बीजापुरके दरबारमें उपस्थित करनेकी हुई। मुरारपन्तने शिवाजीसे कहा कि चलो आज तुमको दरबारमें ले चलें और बादशाहको सलाम करावें। यह सुनकर शिवाजीने अपने पिता शाहजी और मुरारपन्तसे अत्यन्त नम्रतापूर्वक कहा

कि हम हिन्दू हैं यादशाह विधर्म्मी और विदेशी है। हम गो और ब्राह्मणोंके दास हैं, यह उनका शत्रु है। हमारा और उनका मेल नहीं हो सकता। जो हमारे धर्म्मका शत्रु है उसको मैं सलाम नहीं करना चाहता। उसको छूनेसे मुझे कपड़े यदलने होंगे। मेरी इच्छा होती है कि सलाम करनेके यदले उसका सिर उड़ा दू। मार्गमें मुझे गोवध देखकर अत्यन्त दुःख होता है। गोवध देखकर मेरा खून उबल पड़ता है। आप यड़ोंके लिहाजसे तथा और कुछ परिणाम न हो यह सोचकर मैं जैसे तैसे अपने क्रोधको रोक लेता हूं। शिवाजीकी ऐसी यातें सुनकर शाहजीको अत्यन्त दुःख हुआ। उन्होंने अपने कारकुनों और शिवा जीके समवयस्क मित्रों द्वारा शिवाजीसे कहलाया कि "विध र्मियोंकी सेवा करनेसे ही तुम्हारे पिता इतने वैभवपर पहुंचे हैं। यादशाहसे द्वेप करना उचित नहीं है। तुम बुद्धिमान हो, तुम्हें ऐसी यातें कहना शोभा नहीं देता है। इस प्रकारकी यातें कह कर तुम अपने पिताकी अवज्ञा करते हो।" स्वयं जीजायाईने भी उन्हें समझाया कि तुम्हारे इस प्रकारके विचार ठीक नहीं हैं। पर उन्होंने अपनी हट नहीं छोड़ी। अन्तमें एक दिन स्वयं शाहजीने शिवाजीको अपने पास बुलाया और उन्हें समझाया कि इस प्रकारकी यातें तुम्हें नहीं करनी चाहिये। अय मुसल मान इस देशके शासक हैं, अपने धर्मकी रक्षा करते हुए उनकी सेवा करनेमें क्या क्षति है? यह ईश्वरकी मर्जी है कि इस बुरे समयमें भी हम मुसलमान यादशाहोंकी सेवा करके अपना

निर्वाह कर लेते हैं। यदि परमात्माको यह मञ्जूर न होता तो हिन्दुओंका ही राज्य क्यों चला आता और मुसलमानोंका राज्य क्यों होता? मैंने अपनी वर्त्तमान प्रतिष्ठा और वैभव समयके अनुसार ही कार्य करनेसे प्राप्त किया है। अब इसीमें अच्छा है कि जो प्रतिष्ठा और पद मैंने प्राप्त किया है तुम उसकी रक्षा करो और सुल्तानके कृपापात्र बननेकी चेष्टा करो।" शिवाजीने अत्यन्त सम्मानपूर्वक अपने पिताको यह उत्तर दिया कि "बड़ोंकी आज्ञा मुझे शिरोधार्य्य है परन्तु यवन गोहत्या करते हैं और देव ब्राह्मणोंको सताते हैं। यह मुझसे कभी सहन नहीं हो सकता।"

शिवाजीके हृदयमें मुसलमानोंके प्रति विद्वेष भाव देखकर शाहजीको अत्यन्त दुःख हुआ। उन्होंने शिवाजीको समझा भी दिया कि ऐसी बातोंका क्या परिणाम हो सकता है। शाहजी भी तत्कालीन मुसलमान शासकोंके अन्धभक्त न थे पर समयके अनुसार कार्य्य करते थे। इसलिये उन्होंने अपने होनहार पुत्रके विचारोंको अपने अधिकार और शक्तिसे दबानेकी चेष्टा नहीं की। पर किसी न किसी तरहसे उन्होंने शिवाजीको दरबारमें आनेके लिये राजी कर लिया। दरबारमें जानेसे पहले शाहजीने शिवाजीको दरबारके सब नियम बतला दिये कि "किस प्रकारसे सुल्तानको धरतीसे हाथ लगाकर मुजरा और सलाम करना चाहिये और कहां बैठना चाहिये, किस तरह बैठना चाहिये।" दरबारके सब नियम समझा बुझाकर शाहजी शिवाजीको अपने साथ दरबारमें ले गये। दरबारमें पहुंचकर

शिवाजीने दरबारके नियमके अनुकूल, सुलतानकी कोर्निश (सलाम) नहीं की। साधारण रीतिसे सलाम करके, वे अपने पिताके पास एक स्थानपर बैठ गये। शिवाजीका यह रङ्ग ढङ्ग देखकर बादशाहने मुरारपन्तसे पूछा कि "यह किसका लड़का दरबारमें आया है? क्या यह राजा शाहजीका लड़का तो नहीं है?" पन्तने उत्तरमें कहा कि राजा शाहजीका ही पुत्र है। शिवाजीने दरबारके नियमके अनुसार सलाम नहीं किया इससे सुलतानके हृदयमें किसी प्रकार वहम और सन्देह न हो यह सोचकर पन्तने सुलतानसे कहा कि "हुजूर! यह लड़का आज पहले ही दरबारमें आया है, दरबारके नियमोंसे अनभिज्ञ है इसलिये इसने दरबारके नियमोंके अनुसार सलाम नहीं किया है।" सुलतानको भी मुरारपन्तकी बात जँच गयी। इसके पीछे सुलतानने शिवाजी को जवाहरात और कपड़े दिये पर घर पहुँचते ही शिवाजीने दरबारी पोशाक उतार दी और स्नान किया।

इस घटनाके पीछे शिवाजी प्रायः अपने पिताके साथ दरबारमें जाया करते थे। परन्तु उन्होंने बीजापुरके सुलतानकी कभी कोर्निश नहीं की। साधारण रीतिसे वे सलाम करते थे। शिवाजीके इस व्यवहारसे बीजापुरके सुलतानके हृदयमें कुछ संशय उत्पन्न हुआ। उन्होंने शिवाजी महाराजको अपने पास बुलाकर कोर्निश न करनेका कारण पूछा। शिवाजीकी ईश्वर प्रदत्त विलक्षण बुद्धि थी, उन्हें मौकेकी खूब सूझती थी। जैसे वे वीर और राजनीतिज्ञ थे, वैसे ही हाजिरजवाब थे। उन्होंने

शीघ्र ही सुल्तानके प्रश्नका यह उत्तर दिया कि "मेरे पिताजी सदैव मुझसे मुजरा करनेके लिये कहते रहते हैं, परन्तु मैं दरबारमें आकर मुजरा करना भूल जाता हूँ और साधारण रीतिसे सलाम कर देता हूँ। इसके लिये मैं क्षमा प्रार्थी हूँ और हुजूर से प्रार्थना करता हूं कि मेरा सलाम ही मुजरेके समान समझ लिया जाय। इसके अतिरिक्त मैं पादशाह सलामत और अपने पितामें कुछ भेदभाव नहीं देखता हू। जिस समय मैं अपने पिता और हुजूरमें कुछ भेद करूंगा उस समय मैं कोर्निश करूंगा।" शिवाजी महाराजका यह उत्तर सुनकर पादशाह हँसे।

जिस मार्गसे शिवाजी दरबारको आया करते थे, उस मार्गमें कसाइयोंकी कितनी ही दूकानें थीं। इन दूकानोंपर गोमांस बिका करता था और मारे हुए जानवरोंके सिर लटके रहते थे जिनको देखकर शिवाजीको अत्यन्त दुःख होता था। राजदरबारके सामने कितने ही भटियारे मांस बेचनेके लिये बैठे रहते थे। ये सब बातें शिवाजीके आन्तरिक भावोंको भड़कानेके लिये काफी थीं। परन्तु वे किसी तरहसे अपने आन्तरिक क्रोधको रोके रहते थे। एक दिनकी बात है कि वे राजप्रासादकी ओर जा रहे थे। मार्गमें उन्होंने एक कसाईको गोवध करते हुए देखा, बस फिर क्या था उनकी जो क्रोधाग्नि दबी हुई थी वह भड़क उठी। वे कसाईके ऊपर टूट पड़े और उसे घूसोंकी मार लगाई। शिवाजीकी मारके सामने कसाई ठहर न सका, गौकी उसके हाथसे रक्षा हुई। यह समाचार समस्त बीजापुरमें फैल गया,

और बीजापुरके बादशाहके कानोंतक भी पहुँचा, परन्तु बीजापुर दरबारमें शिवाजीके पिता शाहजीका विशेष प्रभाव था, इस लिये इस विषयकी विशेष तहकीकात नहीं हुई और कसाईको मारनेकी बात जहाँकी तहाँ दब गयी।

शिवाजीकी तबीयत लगातार गोवध देखकर घबड़ा उठी। उनके लिये आदिलशाहकी राजधानीमें रहना असम्भव हो गया, उन्होंने आदिलशाहकी राजधानी बीजापुरको सदैवके लिये नमस्कार करने और दरबारमें फिर कभी न जानेकी ठान ली। पिताकी आज्ञा उल्लङ्घन करना भी पाप है, इस बातको शिवाजी जानते थे, अतएव शिवाजीके लिये बड़ी कठिनाई उपस्थित हुई। वे सोचने लगे कि पिताका कहना मानें अथवा धर्मकी रक्षा करें। अन्तमें धर्मने ही उनके हृदयपर विजय प्राप्त की और एक दिन उन्होंने अपने पितासे हाथ जोड़कर विनती की और कहा कि "कृपया मुझे अपने साथ दरबारमें चलनेकी आज्ञा न दिया कीजिये क्योंकि मार्गमें गोमांसकी दूकानें देखकर मुझसे रहा नहीं जाता है। आप बादशाहके नौकर हैं, इसलिये आपको यह सब बातें देखना लाचारी है। जबतक गोवध और गोमांस बन्द न होगा तबतक मैं दरबारमें जानेका विचार नहीं कर सकता हूँ। मार्गमें गोवध और गोमांस बिकता देखकर मैं कुछ कहता हूँ सो आपको बुरा लगता है। अतएव गोवध और गोमांसकी बिक्री बन्द हो जानेके पीछे मैं आपके साथ दरबारमें चल सकता हूँ।" शिवाजीके इस कथनको सुनकर शाहजी बड़ी

दुविधामें पड़े और सोचने लगे कि यदि मैं अकेला ही दरबारमें जाऊं तो बादशाह यह पूछे बिना न रहेंगे कि तुम्हारा लड़का आज दरबारमें क्यों नहीं आया है? इसका उत्तर बादशाहको क्या दिया जायगा? उन्होंने अपनी चिन्ता अपने पुराने मित्र मीरजुमलापर प्रकट की और इस विषयमें क्या करना चाहिये यह परामर्श किया। कुछ देरतक शाहजी और मीरजुमला दोनों विचार करते रहे, अन्तमें यह निश्चय हुआ कि आज शिवाजी घरपर ही रहें दरबारको न चलें। हम दोनों दरबारको चलें और यदि बादशाह प्रसन्नचित्त हों तो उनसे गोवधके निवारणके सम्बन्धमें निवेदन किया जायगा।

शाहजी और मीरजुमला दोनों दरबारमें गये। कुछ सरकारी काम काज करनेके पीछे मीरजुमलाने देखा कि बादशाह सलामत अत्यन्त प्रसन्नचित्त हैं। ऐसा सुयोग देखकर मीरजुमलाने बादशाहसे प्रार्थना की कि "हुजूर हिन्दू मुसल्मान दोनोंके माँ बाप हैं दोनों ही हुजूरकी प्रजा हैं। हुजूरको दोनोंके ऊपर समान दया है। हुजूरके यहां जितने मुसल्मान मुलाजिम हैं उससे कहीं अधिक हिन्दू हैं। हुजूरके राज्यमें दोनों अपने अपने धर्मके अनुसार चलें, इसीमें राज्यकी शोभा है। गोवध और गोमांस भक्षण हिन्दू बुरा समझते हैं। आपके राजमार्गमें और आपके राज्य-दरबारमें सरेआम गोमांसकी दूकानें देखकर हिन्दुओंको गोहत्याका पाप लगता है। हिन्दुओंको इससे स्वाभाविक ही मानसिक कष्ट होता है। राजा शाहजीके समान

प्रतिष्ठित सरदार श्रीमान्‌की सेवामें हैं, उनका भी किसी प्रकार से न पूछे,' यह मैं आपसे कह देना चाहता हूँ। शाहजीकी हिम्मत आपसे यह प्रार्थना करनेकी नहीं हुई है कि उनका पुत्र शिवाजी आज दरबारमें नहीं आया है। उसका कारण मैं आपकी सेवामें निवेदन किये देता हूँ कि शिवाजी मार्गमें गोवध होता और गोमांस बिकता नहीं देख सकता है। यह अपने पिता के ऊपर अत्यन्त क्रोधित हो रहा है। हुजूरको इस परिस्थितिपर स्वयं विचार करना उचित है।" बादशाहने मीरजुमलाकी यह प्रार्थना शान्तिके साथ सुनी और कहा कि "इस सम्बन्धमें अवश्य कुछ प्रबन्ध किया जायगा।" यह कहकर बादशाहने उसी समय शीघ्र यह आज्ञा निकाली कि "शहरमें कोई गोवध न करे, और न गोमांस बेचे। इस आज्ञाको उल्लङ्घन करनेवालेको सख्त सजा दी जावेगी। यह कार्य हिन्दुओंके धर्मके विरुद्ध है, हिन्दुओंके सामने जो कोई गोवध करेगा अथवा गोमांस बेचेगा, और कोई हिन्दू इस कार्यसे उत्तेजित होकर यदि किसीको मार देगा तो उसकी फरयाद नहीं सुनी जावेगी।" बादशाहकी यह आज्ञा उस समय समस्त नगरमें प्रचलित कर दी गयी। शहरकी दक्षिण दिशामें समस्त कसाइयोंको रहनेका हुक्म हुआ। इस प्रबन्धके हो जानेके पीछे शिवाजी महाराज पुनः अपने पिताके साथ दरबारमें नित्यप्रति जाने लगे। उनकी चतुरता और द्रढ़ता देख उनपर बादशाहकी प्रीति उत्पन्न हो गयी। बादशाहने कई बार उनको वस्त्र, आभूषण, मेवा, मिठाई आदि प्रदान की थी।

परन्तु परमात्माको यह मञ्जूर न था कि शिवाजी शान्ति पूर्वक बीजापुरमें रहें, घटनाओंका ऐसा चक्र चलता रहा कि शिवाजीको अन्याय मेटनेके लिये सदैव उद्यत होना पड़ता था। एक दिनकी बात है कि एक कसाई शहरके सदर दरवाजेके पास गोमांस बेचनेके लिये बैठा हुआ था। शिवाजी महाराज अपने कुछ समवयस्क मित्रोंके साथ घोड़ेपर सवार होकर उधरसे निकले। कसाईके ऊपर उनकी नजर पड़ी, कमरमें तलवार लटक रही थी। कसाईके इस कार्यको देखकर वे अपने क्रोधको रोक न सके और अपनी कमरसे तलवार निकालकर कसाई का सिर उड़ा दिया। कसाईकी स्त्री रोती बिलखती बादशाहके सामने शिवाजीके इस कार्यकी फरयाद करने गयी। बादशाहने उत्तर दिया कि "शिवाजीने जो कुछ किया है उचित किया है। जब यह आज्ञा है कि शहरमें गोमांस नहीं बेचना चाहिये तब कसाईने गोमांस बेचनेकी क्यों धृष्टता की। इसलिये यह दण्ड उचित ही है।" बादशाहने ऐसा कहकर उक्त कसाईकी स्त्रीको उसके मृतपतिको दफन करनेके लिये चार रुपये दिये, इसके अतिरिक्त एक सेर रोटी नित्यप्रति भटियारखानेसे देनेका हुक्म दिया।

इस घटनासे समस्त नगरमें हलचल मच गयी। कट्टर मुसलमान, विशेषत गोवधके पक्षपाती मुसलमान, बादशाहकी इस आज्ञासे बड़े बिगड़े। नगरमें जिधर देखो, उधर यही चर्चा सुनाई पड़ती थी। सङ्कीर्ण हृदयके मुसलमान कहने लगे कि

अब इस नगरमें मुसलमानोंकी कोई बात नहीं रही। अब मुस लमानी बादशाहत रसातलको चली गयी। बादशाह किसीकी फरियाद नहीं सुनता है। शिवाजी उच्छृङ्खल स्वभावके हैं। उन्होंने बादशाहकी कोर्निश नहीं की, सब कसाइयोंको शहरसे निकाल बाहर करवाया। उनकी दूकानें शहरसे उठवा दीं। राजा शाहजीका लड़का निरङ्कुश हो गया है और अपनी मनमानी करता है और राह चलते हुए मुसलमानोंको कतल करने लग गया है। अब मुसलमानी राज्यमें मुसलमानोंकी कोई नहीं सुनता है।

मुसलमानोंकी इस हलचलका समाचार जब शाहजीने सुना तब उन्हें बड़ी चिन्ता हुई। वे सोचने लगे कि अब क्या करना चाहिये। शिवाजी बुद्धिमान और गुणवान है पर साथ ही उद्धत भी है। इसके उद्धतपनसे इसकी वीरता और बुद्धिमत्ता नष्ट न हो जाय। मैंने जो वैभव प्राप्त किया है वह भी इसके उद्धतपनसे मिट न जाय। इस प्रकार शाहजी चिन्तासागरमें डूब गये। वे बुद्धिमान और दूरदर्शी थे। इससे यह ताड़ गये कि लानत मलामत, लल्कार दुत्कार फटकारसे शिवाजी जैसे स्वाभिमानी व्यक्तिसे काम लेना कठिन है। इसलिये उन्होंने शिवाजीको प्रेमपूर्वक समझानेकी ठानी। बस यह सोचकर उन्होंने जीजाबाईके सामने शिवाजीको अपने पास बुलाया और कहा—अभी तुम नादान हो, तुम्हें जगतका कुछ अनुभव नहीं है। तुम्हारे जैसे बुद्धिमान लड़कोंको इस प्रकारसे राह चलते

हुए झगड़ा करना शोभा नहीं देता है। बादशाहको मुजरा न करने और गोवधके लिये राह चलते इस प्रकार तलवार उठाने से क्या तुम अपनी जीवनयात्रामें सफलता प्राप्त कर सकते हो? प्यारे शिवा! मुसलमानोंकी सेवा करनेसे ही तुम्हारे पूर्वज एक प्यादेकी हैसियतसे इतने ऊंचे पदपर पहुंचे हैं और यह वैभव प्राप्त किया है। यदि मैं भी तुम्हारी ही तरहसे कार्य करता तो मुझे इस दुनियामें कहीं भी ठिकाना न था। मुझे वर्त्तमान वैभव प्राप्त करनेमें किन किन कठिनाइयों और कष्टोंसे सामना करना पड़ा है तुमसे उन सब बातोंके कहनेकी जरूरत नहीं है। सोचो कि निजामशाही राज्यके उस बुरे समय तुम्हारे पिताको कैसे कष्ट झेलने पड़े थे। उस समय मुझे बड़ी विपत्ति में फंसना पड़ा था। सोच देखो कि उस भयङ्कर विपत्ति और सङ्कटसे मेरा किस प्रकार छुटकारा हुआ। आदिलशाही राज्यकी सेवा करके ही मैंने इतना सम्मान और उच्च पद प्राप्त किया है। मैं यही चाहता हूं कि तुम मेरा अनुसरण करो, जिस तरह मैंने यह सम्मान प्राप्त किया है वैसे ही तुम भी प्राप्त करो। अपने पिताके अनुकरणसे ही तुम्हारा भाग्य चमक सकता है। इस प्रकारकी उद्दतता, अङ्गली कर्म और मूर्खतासे कुछ भी लाभ नहीं है। इस प्रकारके मूर्खतापूर्ण कार्य्योंसे हमारी रक्षा नहीं हो सकती है। जिस प्रकारका काम तुम कर रहे हो, उसका परिणाम यह होगा कि हम अपने सब धन सम्पत्ति और सम्मानसे वञ्चित कर दिये जायंगे और यहांसे निकाल दिये जायंगे। अबतक

तुम्हारे कार्य्यों के बारेमें किसी प्रकारकी कार्यवाही नहीं की गयी है, उसका कारण हमारे मित्रोंका प्रभाव है। जैसे यहा हमारे कुछ मित्र हैं, वैसे ही यहां हमारे शत्रु हैं, ये लोग मौका पाते ही बादशाहका मन हमारी ओरसे फेर देंगे। मौका पाते ही बादशाहके कान भरेंगे। तुम सोच देखो, उस समय आपत्ति का पहाड़ हमारे ऊपर टूट पड़ेगा। बादशाहकी नाराजीका क्या परिणाम होगा? हम सब लोग यहाँसे निकाल दिये जायंगे। इसलिये मैं तुमसे कहता हूँ कि तुम अपने कार्य करनेका ढङ्ग बदल दो। मुझे आशा है कि तुम इन बातोंपर विचार करोगे और आगेसे इस प्रकारके कार्य्य न करोगे।" शिवाजीने अपने पिताका उपर्युक्त कथन ध्यानपूर्वक चुपचाप सुना पर उत्तरमें एक भी शब्द नहीं कहा।

शाहजी केवल शिवाजीको समझा बुझाकर ही शान्त नहीं हुए, उन्होंने जीजाबाईसे एकान्तमें शिवाजीको समझानेके लिये कहा। अतएव अपने पतिके आज्ञानुसार जीजाबाईने एकान्तमें शिवाजीको बड़े मधुर शब्दोंमें इस प्रकार समझाया—"प्यारे बेटे! अब तू बालक नहीं है जो अपने पिताकी इच्छाके विरुद्ध कार्य्य करता है। तेरे जैसे बुद्धिमान पुत्रको अपने पिताकी इच्छाके विरुद्ध कार्य्य करना शोभा नहीं देता है। तुझे ऐसी कोई बात नहीं करनी चाहिये जो तेरे पिताको दुःख देने वाली हो। अपनी तामसिक वृत्तिका परित्याग करके नम्रतापूर्वक कार्य्य कर, जिससे तेरा भला होगा। तेरे पिताने इतने दिन

परिश्रम करके जो धन, सम्पत्ति इकट्ठी की है उसकी तुझे रक्षा करनी चाहिये। अब तेरी उम्र अपने पिताके प्रत्येक कार्य्यमें सहायता देने योग्य हो गयी है। तू वीर और साहसी है। तेरे पिताको किसी प्रकारकी हानि सहन करनी पड़े, ऐसा काम मत कर। पिताकी आज्ञा पालन न करनेसे पुत्रका कुछ भला नहीं होता है। तुझे अपने कुल और शीलका विचार करना चाहिये, ऐसा कार्य्य मत कर जो तेरे कुलकी कीर्त्तिमें बट्टा लगानेवाला हो।" अपनी माताके स्नेहपूर्ण शब्दोंके उत्तरमें शिवाजीने कहा—"मैं आपकी आज्ञानुसार सदैव चलनेको तैयार हूं, आपका कथन शिरोधार्य्य है। परन्तु मुसलमानोंको पृथ्वीसे हाथ लगाकर मुजरा मैं नहीं कर सकता, गोवध तथा अपने धर्मकी विडम्बना मैं सहन नहीं कर सकता। मुझे क्षमा कीजियेगा, जब कभी मैं ऐसे कुकर्मोंको देखता हूं तब मेरे शरीर में आग सी लगने लगती है, क्रोधके मारे मेरा खून उबलने लग जाता है। इसलिये मैं अपने स्वभावसे लाचार हूं। परमात्मा की जो इच्छा होगी वही होगा, पर यह प्रत्यक्ष है कि अब मैं मुसलमानोंका भय नहीं ला सकता। इससे धर्म भ्रष्ट होता है। यदि आपकी यह इच्छा हो कि मेरे हाथसे मुसलमानोंके विरुद्ध कुछ कार्य्य न हो, तो मुझे आप यहा न रखियेगा। मुसलमानोंके राज्यके बाहर मुझे कहीं रहनेके लिये भेज दीजिये। मैं आपसे हाथ जोड़कर स्पष्ट कहता हूं, मैं आपका अपमान अथवा आपकी आज्ञा उल्लंघन नहीं कर रहा हूं। पर जो कुछ मेरे हृदयकी बात

है वह मैंने आपसे कह दी है। मेरी आपसे हाथ जोड़कर यही विनती है कि आप मेरी इस प्रार्थनाको स्वीकार करनेकी कृपा कीजिये।"

जीजाबाईने भी अपने पति शाहजीसे शिवाजीकी इच्छा प्रकट की और कहा कि "पुत्र अत्यन्त नम्र, आज्ञाकारी और बुद्धिमान है। उसको इन कार्य्योंके लिये दण्ड देनेसे कुछ भी फल नहीं हो सकता। मुसलमानोंके प्रति, उसे जो घृणा है, वह उसे पूर्व जन्मसे ही है। यह प्रत्यक्ष है कि वह मुसलमानोंकी सेवा करनेसे न तो प्रसन्न हो सकता है न उसे मुसलमानोंकी सेवामें सफलता प्राप्त हो सकती है। शिवाजीके स्वभाव और विचारों को बदलनेकी चेष्टा करना व्यर्थ है, वर्त्तमान परिस्थितिमें इससे अच्छा और कोई उपाय नहीं है कि उसे मुसलमानोंकी राजधानी से कहीं दूर रखा जाय, यहाँ उसके रहनेसे अपनी सम्पत्ति और वैभवके नष्ट होनेकी सम्भावना है।" जीजाबाईके इस कथनको सुनकर शाहजीको दुःख हुआ और उन्होंने अपने कुछ विश्वास पात्र मित्र और सरदारोंसे जीजाबाईके इस कथनके सम्बन्धमें परामर्श किया। सबने यही सलाह दी कि शिवाजीको मुसल मानोंकी राजधानीसे दूर ही रखना चाहिये। इसी समय पूनासे दादाजी कोंडदेव, जागीरका हिसाब शाहजीको देनेके लिये बीजापुर आये थे। शाहजीने उन्हें आज्ञा दी कि "जीजाबाई और शिवाजीको तुम पूना ले जाओ।"

पूना जानेसे पहले, बीजापुरमें शिवाजीका दूसरा विवाह हुआ था। इस दूसरे विवाहके सम्बन्धमें कहा जाता है कि

यह विवाह आदिलशाहके आग्रहसे हुआ था। एक दिन शाहजी शिवाजीको अपने साथ दरबारमें ले गये थे। उन्हें देखकर आदिलशाहने शाहजीसे पूछा कि क्या आपके पुत्र शिवाजीका विवाह हो गया है? शाहजीने उत्तर दिया—"शिवाजीका विवाह पूनामें हो गया है।" इसपर आदिलशाहने कहा कि वाह! यह कैसा विवाह! मैं और आप विवाहमें उपस्थित न थे। अब मैं इसका दूसरा विवाह ठाट बाटसे यहां करूंगा।" आदिलशाहके इस आग्रहसे शाहजीने शिवाजीका दूसरा विवाह एक मराठे सरदारकी पुत्रीसे किया। यह विवाह बड़ी धूमधामसे हुआ। इस विवाहमें स्वयं आदिलशाह उपस्थित हुए थे। बीजापुर राज्यके समस्त सरदार भी इस विवाहमें सम्मिलित हुए। सब सरदार और स्वयं आदिलशाहने दुलहा और दुलहिनको बहुतसे बहुमूल्य पदार्थ भेंट किये। शाहजीने बड़ी धूमधामसे आदिलशाह और बीजापुरके सब सरदारोंकी दावत की। शिवाजीकी दूसरी स्त्रीका नाम सोयराबाई रखा गया। *

विवाहके पीछे जीजाबाई और शिवाजी पूना चले गये। इसके पीछे शाहजीका जीजाबाई और शिवाजीके साथ पूना अथवा बीजापुरमें रहना नहीं हुआ। शाहजीने अपनी स्त्री जीजाबाई और पुत्र शिवाजीको साथ क्यों नहीं रखा, इस विषयमें इतिहास लेखकोंमें बड़ा मतभेद है। † किसी किसीका कथन है कि शाहजी

* सभासद बखरके मराठी चरित्रसे अनूदित।

† सभासद बखर किंकेडर।

जीजाबाई और शिवाजीको पूना भेजकर कर्नाटककी सूबेदारी पर चले गये थे और उन्हें पूना या बीजापुरमें रहनेका अवसर ही नहीं मिला तब कैसे अपनी स्त्री और पुत्रको साथ रख सकते थे। पर इस मतके समर्थक इतिहास-लेखकोंने यह नहीं सोचा कि जब शाहजीकी दूसरी स्त्री, उसका पुत्र व्यङ्कोजी और जीजा-बाईका ज्येष्ठ पुत्र सम्भाजी उनके साथ थे और सदैव साथ रहे तब जीजाबाई और शिवाजीके साथ रहनेमें क्या अड़चन थी? यदि कोई अड़चन हो सकती है तो वह यही कि शिवाजोको मुसल मानोंसे विद्वेष भाव था। इसके विपरीत * कई इतिहास लेखकोंका यह मत है कि जीजाबाई और शाहजीकी अनबन थी, इसलिये वे अलग रहे। अस्तु जो कुछ हो शिवाजी और जीजाबाई संवत् १७०० वि० सन् १६४३ ई०में पूना चले गये और वहीं दादाजी कोंडदेवकी संरक्षकतामें रहे। सम्भाजी सदैव अपने पिताके पास ही रहे, वे अपने पिताके सुख दुःखके साथी रहे। यह कोई नहीं कह सकता कि शिवाजीके अलग रहनेपर शाहजीका उनके प्रति प्रेम कम हो गया था बल्कि किसी किसी इति हास-लेखकका तो यह मत है कि शिवाजीके स्वराज्य-स्थापनके विचारका शाहजीने अप्रत्यक्ष रूपसे समर्थन किया था और उन्हें अपने उद्देश्यकी सफलता प्राप्तिके निमित्त सहायता भी दी थी। मराठी भाषाकी त्रैमासिक पत्रिका "भारत इतिहास संशोधक

* ग्राण्ट डफ लिखित मराठा इतिहासका तीसरा अध्याय, रानाडे कृत मराठोंके उत्थानका चौथा अध्याय और सर रिसार्ड कृत मराठी रियासत भाग प्रथम पेज १५९।

मएडली" की सन् १९२१ की प्रथम संख्यामें श्रीयुक्त वासुदेव शास्त्री खरेने ऐसा ही मत प्रकट किया है। हम यहां इन ऐतिहासिक वादविवादोंकी आलोचना न करके आगे शिवाजीके उन कार्य्यों का वर्णन करना चाहते हैं, जिनसे आज शिवाजीके नामपर इस देशके मुर्दा मनुष्योंकी सूखी हड्डियोंमें भी बिजली दौड़ने लग जाती है।

चतुर्थ परिच्छेद

तोरणका पतन और स्वराज्यकी स्थापना

"पैदा कर जिस देश जातिने तुमको पाला पोसा,
किये हुए है वह निज हितका तुमसे बड़ा भरोसा।
उससे होना उऋण प्रथम है सत्कर्त्तव्य तुम्हारा,
फिर दे सकते हो वसुधाको शेष स्वजीवन सारा॥"

शिवाजी मावल नामक पहाड़ी प्रदेशके रहनेवाले मावले लोगोंको बहुत चाहते थे। ये लोग देखनेमें सुन्दर न होनेपर भी कार्य करनेमें चतुर, साहसी और दृढ़प्रतिज्ञ थे। जिस प्रकार हिन्दू-सूर्यकुल कमल दिवाकर, मेवाड़के ध्रुव तारा महाराणा प्रतापसिंहने अपने सङ्कटके दिन भीलोंकी सहायतासे बिताये थे उसी प्रकार शिवाजी भी मावले लोगोंकी सहायतासे स्वराज्य स्थापन करनेमें समर्थ हुए थे। शिवाजीकी सैनिक और धार्मिक शिक्षा समाप्त हो जानेके पीछे जब दादाजी कोंड़देवने उनको जागीरके कामोंकी ओर लगाया तब वे अन्य कार्य्योंसे अवकाश पाते ही जङ्गल और पहाड़ोंमें भ्रमण करने चले जाते थे। भ्रमण करनेमें उनका उद्देश्य मनबहलाव और सैर सपाटा

न था। वे भ्रमणके बहाने ही अपनी जागीरकी भीतरी अवस्था जाननेकी चेष्टा करते थे। नित्य प्रति जङ्गल और पहाड़ोंमें घूमनेपर उन्हें पता लगा कि मावले लोग बड़े गरीब हैं और अपने दिन बड़ी कठिनाईसे काटते हैं। इसलिये शिवाजी इन लोगोंकी धनसे सहायता करने लगे और उनके दुःखमें अपनेको दुःखी और उनके सुखमें अपनेको सुखी समझने लगे। इस प्रकार उन्होंने मावलोंको अपने वशमें कर लिया। मावले लोगों में उस समय देशप्रेम जरूर था, पर आपसमें एकता न थी। इसका कारण यह था कि उस समय मावले लोगोंमें मुखिया ओंकी कमी न थी। "नाईकी बारातमें सब ठाकुर ही ठाकुर" यही दशा उस समय मावले लोगोंकी थी, जिसका परिणाम यह हुआ कि स्वतन्त्रता और देशप्रेमी होनेपर भी मावले लोगोंके दुःखकी कमी न थी, संगठनका अभाव था। उनकी इस फूटसे उनके वैरी और विरोधी लोग लाभ उठाते थे। दूरदर्शी शिवाजी महाराज यह बात ताड़ गये थे कि किसी जाति अथवा राष्ट्रका उत्थान केवल बड़े बड़े महलोंमें रहनेवालोंसे नहीं होता है। राष्ट्रका निर्माण कुछ थोड़ेसे बड़े आदमियोंसे नहीं होता है। राष्ट्रकी सच्ची शक्ति झोपड़ोंमें रहती है। बस, शिवाजीने राष्ट्र की इस सच्ची शक्तिको अपनाया।

उस समय शिवाजीके सामने अपनी उन्नतिके लिये कई मार्ग थे। पहली बात तो यह थी कि वे अपने पिता शाहजीकी जागीरकी आमदनीसे ही आराम और ऐश-असरतके साथ अपनी ज़िन्दगी

बिताते। "न ऊधोका लेना न माधोका देना" किसी झगड़े टंटेकी आवश्यकता न थी। "बोतल वासिनी" और "यार विलासिनी" में रत रहते, पर शिवाजीको यह स्वीकार न था कि "यहां तो चैनसे गुजरती है आकबतकी खुदा जाने।" कर्त्तव्य निष्ठ और धर्मनिष्ठ महाराज शिवाजीको भोगविलासका शिकार बनकर अपना जीवन नष्ट करना उचित प्रतीत नहीं हुआ। दूसरा मार्ग शिवाजीको अपनी उन्नतिके लिये बीजापुरका दरबार था। वहां वे मजेसे अपने पिताके अधीन किसी पदपर रहकर अच्छी उन्नति कर सकते थे परन्तु दूरदर्शी शिवाजीको बीजापुर राज्यका भविष्य अन्धकारमय प्रतीत हो गया था। वे यह बात ताड़ गये थे कि एक न एक दिन बीजापुरका पतन हुए बिना नहीं रहेगा। उन्हें यह अनुमान हो गया था कि मुगलोंकी नियन्त्रित, नियमबद्ध और शिक्षित सेनाके सामने बीजापुर राज्यकी कमजोर सेना बहुत दिनतक टिक नहीं सकती है। इन दोनों मार्गोंके अतिरिक्त बिना किसी खटपटके उनके सामने एक और भी प्रशस्त साधन अपनी उन्नतिका था। और वह साधन यह था कि वे मुगल साम्राज्यकी सेवा करते। मुगल साम्राज्यकी सेवामें ऊंचे से ऊंचे पदपर पहुंच सकते थे। शाहजीके पुत्र शिवाजीके लिये यह कोई बड़ी बात न थी। उन्होंने अपनी उन्नतिके इन सब मार्गोंको छोड़कर देशो द्धारका व्रत ग्रहण किया। पराधीन देशोंमें देशसेवाका व्रत कितना कठिन होता है यह पाठकोंको बतलानेकी आवश्यकता

हुआ था। स्वयं दादाजीने यह बात शिवाजीको एक पत्रमें लिखी थी। शिवाजी इस प्रकारकी बातोंसे बिलकुल नहीं घबड़ाये। उन्होंने उक्त पत्रके जवाबमें दादाजीको लिखा कि मुझे बीजापुर-दरबारसे कोई द्रोह नहीं है किन्तु रोहिदेश्वरकी देवी शिवाने मुझे स्वतन्त्र हिन्दू-राज्य-स्थापन करनेमें सहायता देने का वचन दिया है।*

संवत् १७०३ वि० सन् १६४७ ई०में शिवाजीने तोरण किले पर अपना आधिपत्य जमाया। यह किला उनके पिताकी जागीर की दक्षिण सीमामें था। उन्होंने अपने तीनों सहचर यसाजी कंक, तानाजी मालसुरे और बाजी पसलकरको भेजा। इन्होंने किलेदारसे शान्तिके साथ बातचीत करके उसे अपने वशमें कर लिया और किला हस्तगत किया। इस किलेको अपने अधिकारमें शिवाजीने शायद इसलिये लिया हो कि उनकी जागीरपर इस ओरसे ही आक्रमणकी आशङ्का थी। उनकी जागीरके उत्तरमें मुगलराज्यका सूबा अहमदनगर था, पश्चिम की ओर सह्याद्रि पर्वतमाला और घना जङ्गल था। उधरसे भी किसी सेनाके आनेकी आशंका न थी। पूर्व दिशाकी ओरसे भय अवश्य था पर बीजापुरसे पूना पहुँचनेके लिये समय बहुत लगता था इसलिये उधरसे भी आकस्मिक् आक्रमणकी आशंका न थी। शिवाजीको दक्षिण सीमाकी ओरसे खटका था अतएव तोरण का किला लेकर उन्होंने उस खटकेको भी दूर कर दिया।

* राजवाड़े इतिहासाचे साधन पेज—१६७ भाग १५
साथ।

तोरण किलेमें कुछ सेना रहती थी पर वर्षा ऋतुमें सेना किलेसे निकलकर घाटियोंमें चली जाती थी क्योंकि वर्षाऋतुमें पहाड़पर सेना नहीं रह सकती थी। इसलिये वर्षाऋतुमें किसीका खून बहाये बिना ही उन्होंने तोरण दुर्गको हस्तगत कर लिया।

तोरण किलेकी मरम्मत कराते समय शिवाजीको अपने पितामह मालोजीकी भांति गड़ा हुआ कुछ धन मिला। सबने समझा कि यह शुभ शकुन श्रीकुल स्वामिनी तुलजा भवानीकी ही कृपाका फल है। इस घटनासे शिवाजीपर सब लोगोंकी भक्ति बहुत बढ़ गयी और वे विशेष उत्साहसे शिवाजीकी सहायता करने लगे।

शिवाजीने उस द्रव्यसे गोला बारूद आदि लड़ाईका सामान खरीदा और मावले लोगोंको किलेकी रखवारीके लिये नियत किया।

तोरणके किलेदारने शिवाजीके इस कार्य्यकी बीजापुर दरबारमें रिपोर्ट की। शिवाजी समयको चूकनेवाले न थे। उन्होंने भी किलेदारको शिकायत की कि तोरण प्रान्तका ठीक ठीक प्रबन्ध नहीं था इस कारण हमने यह किला ले लिया है और अब तोरण प्रान्तका अच्छा प्रबन्ध करके भूमिकर भी दरबारको खूब भेजा करेंगे। इस खरीतेका दरबारसे बहुत दिनोंतक कोई उत्तर नहीं आया। इससे शिवाजीको अपनी उन्नतिका और भी अच्छा मौका मिल गया। कोई कोई इतिहास-लेखक यह भी कहते हैं कि शिवाजीने बीजापुर राज्यके मन्त्रियोंको

तोरण दुर्गमें जो धन मिला था उसमेंसे कुछ देकर अपने पक्षमें मिला लिया था और बीजापुर दरबारको लिखा कि किलेदार बिना आज्ञाके ही अपना पद छोड़कर चला गया था। शिवाजीकी इस युक्तिके कारण किलेदारकी एक भी बात नहीं सुनी गयी।* अस्तु, जो कुछ हो शिवाजीने उस समय बीजापुर-दरबारसे युद्ध न ठानकर बड़ी युक्तिसे अपना काम निकाला और तोरण किलेका नाम प्रचण्डगढ़ रखा। पर "प्रचण्डगढ़" नाम बहुत दिनोंतक चला नहीं।

तोरण किलेकी छः मीलकी दूरीपर उन्होंने एक और नया किला बनवाया और उसका नाम "राजगढ़" रखा। प्रायः देखा जाता है कि देशहित-सम्बन्धी जितना उत्साह नवयुवकोंको होता है उतना बूढ़े आदमियोंको नहीं होता। संसारके सभी देशोंके इतिहासमें प्रायः यह बात देखनेमें आती है कि अपने देशकी दुर्दशा देखकर नवयुवकोंका खून जितनी जल्दी खौल उठता है उतना वृद्ध व्यक्तियोंका नहीं। यही बात शिवाजी के समयमें हुई। तोरण किलेके हस्तगत होने और राज्यगढ़का

---

* Sllep and Dowson का History of India, told by its histrians vol 7 p 237 में मुसलमान इतिहास-लेखक—खाफीखांकी सम्पत्तिका सारांश। किन्कैडके तोरण किलेके गड़े धनके व सम्बन्धमें कई इतिहास लेखकोंने लिखा है कि शिवाजीने जो प्राप्त हुआ (उस समयका प्रचलित रुपया) सरकारी रुपया-होन लिया था। कारसीके आलमगीर नामामें पृष्ठ १७८ और खाफीखांके "मुनखिब—उल—लुबाब" के दूसरे भागके पेज ११५ में लिखा हुआ है कि शिवाजीने बदलें "मोहन"का किला लिया था। ग्रांटडफने तोरणके किलेके व सम्बन्धमें कुछ भी नहीं लिखा है।

किला बनवानेसे पूना तथा आसपासके नवयुवकोंका शिवाजी की ओर विशेष झुकाव हुआ। उन लोगोंकी शिवाजीमें विशेष भक्ति हो गयी थी। वे लोग शिवाजीके व्रत और देशोद्धारके कार्यमें सहायता देनेको उद्यत हुए। मोरो पिङ्गले, अभाजी दात्तो, निराजी पण्डित, रामजी सोमनाथ, दाताजी गोपीनाथ, रघुनाथपन्त और गङ्गाजी मङ्गाजी आदि नवयुवकोंने शिवाजीके कार्यमें सहायता देनेका प्रण किया। ये सबके सब ब्राह्मण थे और उन कारकुनोंके लड़के थे जिनको दादाजी कोंडदेवने शाहजी की जागीरके प्रबन्ध करनेमें अपनी सहायताके लिये रखा था। दादाजी कोंडदेवकी इच्छा थी कि शिवाजी अपने पिताके समान बीजापुर-दरबारकी सेवामें ही अपनी उन्नति करे। शिवाजीके इस कार्यका उन्होंने प्रबल विरोध किया। दादाजी कोंडदेव शाहजीके राजभक्त सेवक और मुहम्मद आदिलशाहकी राजभक्त प्रजा थे। अतएव उन्हें शिवाजीका यह कार्य पसन्द नहीं आया। उन्होंने कहा कि "शाहजीकी जागीरका प्रबन्धकर्त्ता शिवाजी नहीं है, मैं हूं। बिना मेरी आज्ञाके शिवाजीको यह कार्य नहीं करना चाहिये था। यदि शिवाजी मुरबाद (जिस स्थानपर राज्य-गढ़ किला था) लेनेके लिये एक लिखित प्रार्थना-पत्र भेज देते तो उनके पिता उस स्थानको दिला देते। अब आदिलशाह मुझे और शाहजी दोनोंको इसका दण्ड दिये बिना नहीं रहेंगे। पर शिवाजीने दादाजी कोंडदेवके कथनपर कुछ भी ध्यान नहीं दिया, उन्होंने इन सब बातोंको सोचकर पहले ही यह कार्य

करनेके लिये निश्चय कर लिया ; क्योंकि उन्हें विश्वास था कि मुझे यह पवित्र कार्य करनेके लिये परमात्माकी ओरसे प्रेरणा हुई है। उनकी माता जीजाबाईने भी उनके इस कार्य का समर्थन किया। अतएव उन्होंने दादाजीकी फटकार शान्ति-पूर्वक सहन की और मोरो पिङ्गलेसे कहा कि जितनी जल्दी बन सके उतनी जल्दी राज्यगढ़का किला बनाओ। दादाजी कोंडदेवने देखा कि शिवाजी अपने इरादेसे टससे मस नहीं हुए हैं और राज्यगढ़का किला बनवा ही रहे हैं तब शाहजीकी जागीरमें काम करनेवाले सब कारकुन और कर्मचारियोंको इकट्ठा किया और उनसे शिवाजीको समझानेके लिये कहा। पर शिवाजीने जिस प्रकार दादाजी कोंडदेवकी बात सुनी अन सुनी कर दी थी वैसे ही उन लोगोंके कथनपर कुछ ध्यान न दिया और अपने कार्यको करते रहे। लाचार होकर दादाजी कोंडदेवने शिवाजीके पिता शाहजीको एक पत्र भेजा जिसमें शिवाजीकी शिकायत लिखी थी।

उस समय शाहजी कर्नाटककी ओर युद्धमें थे। युद्धमें व्यस्त होनेके कारण उन्होंने दादाजी कोंडदेवके पत्रकी ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। शिवाजीके इन कार्योंको देखकर बीजापुर दरबार भी चुप नहीं हुआ। उक्त दरबारको भी शिवाजीके उद्देश्यके विषयमें सन्देह हुआ। दरबारने भी शाहजीसे इस विषयमें कैफियत तलब की। शाहजीने दरबारको लिखा कि "इस विषयमें मुझे कुछ भी मालूम नहीं है तथापि मुझे जान पड़ता

है कि शिवाजीका उद्देश्य दरबारके विरुद्ध नहीं है, किन्तु उसके लाभके लिये ही वह ये सब काम कर रहा है। बीजापुर-दरबारको यह चिट्ठी लिखकर उन्होंने दादाजी कोंडदेवको लिखा "शिवाजीको इस प्रकारके कार्योंसे रोके।" इसके अतिरिक्त उन्होंने एक चिट्ठी शिवाजीको भी राज्यगढ़का किला छोड़नेके लिये लिखी। दादाजी कोंडदेवने शाहजीकी चिट्ठी पाकर शिवाजीको बहुत कुछ उपदेश दिया। शिवाजीने जो समयके अनुसार नीति बर्त्तना जानते थे, आदरपूर्वक उस समय दादाजीका उपदेश टाल दिया।

इस घटनाके कुछ दिन पीछे दादाजी कोंडदेव बीमार पड़े। शिवाजीने दादाजीकी बीमारीमें खूब सेवा शुश्रूषा की। उन्होंने अच्छे अच्छे वैद्य और हकीमोंसे दादाजीका इलाज कराया पर प्राण घातक रोगके सामने किसीकी भी न चली। अपना अन्त समय जानकर दादाजी कोंडदेवने शिवाजीको अपने पास बुलाया और उनसे कहा कि मैंने तुमसे समय समयपर जो कुछ भला बुरा कहा था, वह तुम्हारी ही भलाईके लिये नेकनीयतसे कहा था। अब तुम अपना काम सम्भालो। इतना कहकर दादाजी कोंडदेवने अपने अधीनस्थ समस्त प्रधान कर्मचारियोंको बुलाया और उन सबके सामने खजानेकी तालियां शिवाजीको दीं, फिर सब कर्मचारियोंसे शिवाजीकी आज्ञाके अनुसार चलनेका अनुरोध किया और अपने अन्त समयमें दादाजी कोंडदेवने शिवाजीके देशोद्धार-सम्बन्धी कार्योंके प्रति सहानुभूति प्रकट

की ओर अपने परिवारकी रक्षाका भार भी उनपर सौंपा।* अपनी मृत्युके कुछ समय पहले दादाजीने जो उपदेश दिया था उसका सभी उपस्थित सज्जनोंपर विशेष प्रभाव पड़ा। सबने शिवाजीकी अधीनता स्वीकार की। दादाजीकी मृत्युके पीछे जागीरका समस्त प्रबन्ध शिवाजीके हाथमें आया। कुछ दिनके बाद शाहजीने शिवाजीके पास पिछले सालकी वसूली लेनेके लिये आदमी भेजा। इसपर शिवाजीने कहला भेजा कि दादाजी कोण्डदेवकी मृत्युके पीछे इधरका खर्च बहुत बढ़ गया है। यहांकी वसूली (लगानकी आमदनी) से यहांके खर्चका भी पूरा नहीं पड़ता है। इसके उत्तरमें शाहजीने यही कहा कि जो

---

* ग्रांट डफने लिखा है कि दादाजीने शिवाजीको अपनी मृत्युके समयपर स्वतन्त्रता-प्राप्तिकी चेष्टा करने या ब्राह्मण गउओं और हिन्दुओंके धर्ममन्दिर आदि की रक्षा करनेका उपदेश दिया था। पर आधुनिकोंके मतमें इस लेखका कुछ मूल्य नहीं है। किन्तु रानडे महोदय अपनी पुस्तक Rise of the Maratha power, में इस विषयमें लिखा है —of course Dadoji's ambition was of the old school to make Shivaji a partisan leader like his father and grandfather He could not till his last moments rise to the height of the thoughts over which Shivaji's mind was brooding to unite these partisan leaders and effect their common liberation from the Moslem yoke when however he was satisfied that his young Shivaji had the capacity to realise his wild dream the old man yielded and blessed him before he died. (p 65-66)

इसका भावार्थ यह है कि निस्सन्देह दादाजी पुराने विचारके पुरुष थे और

कुछ हो सब सम्पत्ति और धन शिवाजीका ही है। वह चाहे जैसा प्रबन्ध करे। इसके पीछे स्वयं शाहजी बीजापुरसे कुछ दूर जाकर तंजोरमें रहने लगे जिससे शिवाजीके कार्योंके कारण उन्हें कुछ झगड़ा न उठाना पड़े। यह पहले लिखा जा चुका है कि शाहजीने दूसरा विवाह कर लिया था, यह दूसरी स्त्री भी उनके साथ तंजौरमें रहती थी। वहां शाहजीकी बहुतसी जागीर थी। दूसरी स्त्रीसे वङ्कोजी नामक एक पुत्र भी उनके हुआ था। यह भी तञ्जौरमें उनके साथ रहता था।

संसारमें सभी प्रकारके मनुष्य होते हैं और सबके सदैव एकसे विचार नहीं होते हैं। शाहजीकी जागीरमें रहनेवाले भी इस नियमसे बचे नहीं थे। कुछ लोग ऐसे भी थे जिनको शिवाजीका यह कार्य पसन्द नहीं आया। उनमेंसे दो मुख्य थे। एक तो सम्भाजी मोहिते और दूसरा फिरङ्गोजी नरसाला। ये दोनों दादाजी कोंडदेवकी मृत्युके समय भी उपस्थित न थे, न इन दोनोंने शिवाजीकी अधीनता स्वीकार की। पूनासे उत्तरकी ओर चाकन नामक दुर्ग है। फिरङ्गोजी नरसाला उक्त

शिवाजीको उनके बाप दादेकी भांति एक दैनिक सेना बनाना चाहते थे। इस कारण वे शिवाजीके उन विचारोंको नहीं पहचान सके जो नवयुवक शिवाजीके हृदयमें उस समय उठ रहे थे कि छोटे छोटे एक दैनिक महदाके सैनिकोंको एकत्र करके मुसलमानोंके ऊपरसे पारस्परिक मुक्ति प्राप्त करनेमें समर्थ हों। परन्तु जब किसी प्रकारसे उन्हें सन्तोष हो गया कि नौजवान शिवाजी अपने उन्नत विचारोंके स्वामी पूरा करनेका सामर्थ्य रखते हैं तब उन्हें विश्वास हो गया और मरनेसे पहले उन्होंने शिवाजीको आशीर्वाद दिया कि उनकी सब कामनाएं पूर्ण हों।

दुर्गका अध्यक्ष था और सम्भाजी मोहिते पूनाके दक्षिण-पूर्वमें सूपाका अध्यक्ष था। यह शिवाजीका सौतेला मामा था। उसकी बहिन तुकाबाई मोहिते शाहजीको व्याही थी। जब शाहजीकी पहली स्त्री और शिवाजीकी माता जीजाबाईका झगड़ा अपने पति शाहजीसे दूसरा विवाह तुकाबाईसे करनेके कारण हुआ तब सम्भाजी मोहितेने अपनी बहिन तुकाबाईका पक्ष लिया था। इस लिये उसे जीजाबाईके लड़के शिवाजीके प्रति तनिक भी सहानु भूति न थी। दादाजी कोण्डदेवकी मृत्युके पीछे उसने शिवाजीसे कहला भेजा कि इस जागीरके मालिक शाहजी हैं, दादाजी कोण्डदेवकी मृत्युके पीछे उनकी आज्ञाके अनुसार ही कार्य किया जायगा। जबतक उनकी आज्ञा नहीं आती तबतक मैं आपकी अधीनता स्वीकार नहीं कर सकता हूं। इसके अतिरिक्त किसी किसी बखरमें यह भी लिखा हुआ है कि दादाजी कोण्डदेवकी मृत्युके पीछे शिवाजीने सम्भाजी मोहितेके पास एक आदमी द्वारा पत्र भेजा जिसमें लिखा था कि अपनी वसूलीका हिसाब लेकर हमारे पास आओ। इसपर सम्भाजी मोहितेने कहा कि शाहजी मालिक हैं उनकी आज्ञाके बिना आपकी आज्ञा नहीं मानी जा सकती है। शाहजीके रहते हुए शिवाजी किसी प्रकारसे मालिक नहीं हो सकते हैं। मुझको आज्ञा देनेका शिवाजीको क्या अधिकार है? यदि शिवाजी आदिल शाहके राज्यमें उत्पात मचानेके लिये किलेपर अधिकार करेंगे तो उन्हें इसका बुरा फल भोगना पड़ेगा। इस प्रकारके तूफान और उत्पात मचानेमें वे अपने पिताका अप

मान कर रहे हैं। जब पत्र वाहकने आकर शिवाजीसे यह शब्द कहे तब उनके क्रोधकी सीमा न रही। परन्तु शिवाजी सदैव अपनी शक्तिके अनुसार काम करते थे। उन्होंने देखा कि इस समय सम्भाजी मोहितेसे तर्क वितर्क करना व्यर्थ है। अपने तीन सौ आदमियों सहित एक रातको सुपापर अकस्मात् आक्रमण किया। सम्भाजी मोहिते उस समय सो रहा था, उसे शिवाजी के आक्रमणकी कुछ भी खबर नहीं पड़ी। शिवाजीने उसके आदमियोंको कैद करा लिया। उनमेंसे जिन्होंने शिवाजीकी सेवा स्वीकार की उनको उन्होंने अपने पास रख लिया और बाकी लोगोंको सम्भाजी मोहितेके साथ अपने पिताके पास बङ्गलोर भेज दिया जो शाहजीकी कोकण प्रान्तकी जागीरका प्रधान स्थान था। उसका खजाना घुड़सवार आदि अपने पास रख लिये। शिवाजीने सम्भाजी मोहितेको कैद करके उसके साथ बहुत अच्छा व्यवहार किया। उन्होंने चाहा कि किसी प्रकारसे सम्भाजी मोहिते राजी हो जाय और उनके देशोद्धारके कार्यमें सहायक हो पर जब देखा कि वह किसी प्रकारसे राजी नहीं है तब लाचार होकर उनको उसे हराना पड़ा।

इस घटनासे शिवाजीका प्रभाव चारों ओर जम गया। लोग भयभीत हो गये। जिन लोगोंने शिवाजीकी अधीनता स्वीकार करनेमें आनाकानी की थी वे सोचने लगे शिवाजीकी आज्ञाका विरोध करनेमें अपना कुछ भी भला नहीं हो सकता है। उन्होंने शिवाजीकी आज्ञाके सामने सिर झुकानेमें ही मङ्गल समझा।

चाकणके किलेदार फिरङ्गोजी नरसालाने भी शिवाजीकी अधीनता स्वीकार कर ली। शिवाजीने उसे वशमें करके यह किला ले लिया और अपनी ओरसे चाकण किलेका अध्यक्ष नियुक्त कर दिया। फिरङ्गोजी बड़ा स्वामि भक्त था। उसने शिवाजी को स्वराज्य स्थापनमें कई अवसरोंपर अच्छी सहायता दी थी। शिवाजीने भी आसपासके कुछ और गांव भी उसके अधीन कर दिये थे तथा उस प्रान्तकी जमीनका कर उगाहनेका भी कार्य उसको सौंप दिया। इन्द्रपुर और बारामतीके दुर्गाध्यक्षोंने शिवाजीसे झगड़ा मचाना उचित नहीं समझा। उन्होंने भी शिवाजीकी अधीनता स्वीकार कर ली। इस प्रकार शिवाजीने अपने पिताकी समस्त जागीरपर अधिकार जमा लिया और अब वे अपने पहले विचारोंको कार्यमें परिणत करनेकी सोचने लगे कि महाराष्ट्र प्रान्तको विदेशी शासनसे कैसे मुक्त किया जाय और बीजापुर राज्यके आक्रमणसे अपना बचाव किस प्रकार किया जाय। पूनासे दक्षिणकी ओर बारह मीलकी दूरी पर एक दृढ़ दुर्ग कोंडाणाका था। यह किला बीजापुर-दरबारके अधिकारमें था। उसके मुसलमान दुर्गाध्यक्षको धन देकर शिवाजीने अपने अधिकारमें कर लिया। यही किला आगे चलकर सिंहगढ़ किलेके नामसे विख्यात हुआ।

संवत् १७०५ वि० सन् १६४८ ई०में शिवाजीने पुरन्दरका किला ले लिया। यह किला पूनासे बारामतीको जानेवाले मार्ग पर है और सिंहगढ़से दक्षिण-पूर्वकी ओर है। शिवाजीने लोका

कि इस किलेको लेनेसे अपनी जागीरकी दक्षिणी सीमा भी सुरक्षित हो जायगी। बीजापुर राज्यने इस किलेका अध्यक्ष नीलकण्ठ नामक एक ब्राह्मणको बनाया था। यह ब्राह्मण बड़ा क्रोधी था, अपने गुस्सेको रोकना नहीं जानता था। एक बार इसकी स्त्रीने इसके किसी कार्यकी शिकायत की कि इसने गुस्से में आकर उस निरपराध अबलाको तोपके मुंह उड़वा दिया। पहले यह ब्राह्मण शाहजीका भी मित्र था और उसके लड़के शिवाजीको अच्छी तरहसे जानता था। दादाजी कोंडदेवकी मृत्युके समय ही इस क्रोधी ब्राह्मण नीलकण्ठकी भी मृत्यु हुई। उसके बड़े लड़के पीलूने बीजापुर राज्यकी बिना आज्ञाके ही पुरन्दरके किलेका अधिकार अपने हाथमें ले लिया और समस्त जागीर और जमीनकी वसूलीपर कब्जा कर लिया। इससे उसका अपने दोनों छोटे भाइयोंसे झगड़ा हुआ। दोनों छोटे भाई भी पीलूके समान ही अपना अधिकार चाहते थे। उन्होंने इसकी शिकायत बीजापुर-दरबारमें की पर वहां कुछ भी सुनवाई नहीं हुई। तब लाचार होकर उन दोनों छोटे भाइयोंने शिवाजीसे इसकी शिकायत की। शिवाजीने तीनों भाइयोंको कैद करके किलेको अपने राज्यमें मिला लिया। "मराठा इतिहास"के लेखक ग्राण्ट डफने शिवाजीके इस कामको विश्वासघात और धोखेबाजीका ठहराया है। लेकिन इसके साथ ही साथ उक्त साहब बहादुरने यह भी स्वीकार किया है कि तीनों भाइयोंको पुरस्कार स्वरूप जागीरें दी गयी थीं और तीनों भाइयोंने शिवाजीकी सेवामें

बड़ा नाम पैदा किया था। देशी इतिहास-लेखकोंके लेखोंसे प्रतीत होता है कि किलेके भीतर कुछ लोगोंका इन भाइयोंके पारस्परिक झगड़ोंसे नाकमें दम आ गया था। भविष्यमें आपस के झगड़ोंसे अनेक प्रकारकी विपत्तियोंकी सम्भावना थी। इस किलेके बहुतसे आदमियोंने शिवाजी महाराजसे प्रार्थना की कि प्रजा, देश और इन तीन भाइयोंकी भलाईके लिये यही उचित, आवश्यक और युक्ति-सङ्गत है कि यह किला राज्यमें मिला लिया जाय। इसके अतिरिक्त यह भी पता चलता है कि उनमेंसे दो भाई शिवाजीके इस निपटारेसे बिलकुल सहमत थे। इस बातसे स्पष्ट है कि ग्रांट डफका शिवाजीपर दोषारोपण उचित और न्यायसङ्गत नहीं है। क्योंकि शिवाजीने समरकलाके युक्ति-युक्त विचार और दुर्गस्थ सैनिकोंकी इच्छा और सम्मतिसे यह किला अपने अधीन किया था।*

---

* देखो ग्रांट डफकृत— 'Rise of the maratha power' पेज ८१। शिवाजीने यह किला कैसे लिया इस विषयमें कई इतिहास-लेखकोंके पारस्परिक मतभेद हैं। किनकेडने कहा बखरमें लिखा हुआ है कि तीन भाइयोंने शिवाजीको अपने झगड़ेको निपटानेके लिये पत्र लिखा था और उन्होंने तीन भाइयोंको व शक्तिकी जांच करनेके बहानेसे किला छीन लिया। इसके विपरीत 'शिव दिग्विजय' नामक बखरमें लिखा हुआ है कि जब शिवाजीने पुरन्दरके दुर्गाध्यक्षके तीनों पुत्रोंके झगड़ेका समाचार सुना तब उन्होंने चारों ओर यह समाचार फैला दिया कि मैं पावनदके निम्नस्थलोंपर आक्रमण करने जा रहा हूं। और पुरन्दरके व नीचेकी झीलपर आकर नामक स्थानपर अपना डेरा डाला। यह दिवालीका दिन था। तीनों भाइयोंने शिवाजीको दिवालीके मौकेपर सम्मिलित होनेके लिये निमन्त्रण दिया। शिवाजीने यह निमन्त्रण स्वीकार कर लिया।

शिवाजीकी साधारण नीतिका ही यह प्रभाव था कि ये तमाम किले, अतिक्रम और रक्तपात बिना किये ही, उनके हाथ आगये। पुरन्दरके किलेके हस्तगत होजानेसे उनकी जागीरकी दक्षिणकी ओरसे भी रक्षा हुई। बीजापुरका बादशाह मुहम्मद आदिलशाह इस समय महल और मकबरे बनवानेमें लगा हुआ था, इसलिये उसका इस ओर ध्यान नहीं हुआ। इससे शिवाजीको अपने उद्देश्यमें और भी सफलता हुई। पुरन्दर, राज्यगढ़ कोंढाणा, और तोरण किलेपर अधिकार होजानेसे शिवाजीकी जागीरकी दक्षिणकी ओरसे पूर्ण रक्षा हुई। ये समस्त पहाड़ी किले शत्रुओंके आक्रमणसे रक्षा करनेके लिये अच्छे थे। इन ऊपर लिखे हुए किलोंपर अधिकार हुए बिना शिवाजीका उस समय

दूसरे दिन शिवाजीने मढके पास एक नदीमें उन लोगोंके स्नान करनेका प्रस्ताव स्वीकार किया। उन तीनों भाइयोंने भी इस प्रस्तावको स्वीकार किया और सब लोग स्नान करने गये। तब शिवाजीने किला छीन लिया। किसी किसी इतिहास लेखकने यह भी लिखा है कि शिवाजीने तीनों भाइयोंको आपसकी अनबन मिटाने की बहुत चेष्टा की और देखा कि वे लोग किसी प्रकारसे राजी नहीं होते हैं तब उन्होंने किला छीन लिया। ग्रांड इतिहास-लेखकने लिखा है पिलोजी उनके दोनों भाइयोंने विश्वासघात पैदा किया और शिवाजीके पास आये। शिवाजीने तीनों भाइयोंसे किला छीन लिया। जो कुछ हो इसमें सन्देह नहीं है कि पुरन्दर किला शिवाजीने किसी प्रकारसे ले लिया और पुरन्दरके दुर्गाध्यक्षके तीनों पुत्रोंमेंसे बड़े पीछी नीलकण्ठको किलेके नीचे बहुतसी जमीन दी और उसके रहनेके लिये एक बहुत बड़ा मकान बनवा दिया था। और मझले प्रहररावजी नीलकण्ठको तोप खाने, पीलखाने और शुतरखानेका अफसर किया और सबसे छोटा बेटा पीलाजी को शिवाजीने सेनामें रखा। मोरो पिङ्गलेको पुरन्दर दुर्गका अध्यक्ष किया।

बड़ा नाम पैदा किया था। देशी इतिहास-लेखकोंके लेखो
प्रतीत होता है कि किलेके भीतर कुछ लोगोंका इस मारे
पारस्परिक झगड़ोंसे नाकमें दम आ गया था। भविष्यमें भार
के झगड़ोंसे अनेक प्रकारकी विपत्तियोंकी सम्भावना थी। ए
किलेके बहुतसे आदमियोंने शिवाजी महाराजसे प्रार्थना की।
प्रजा, देश और इन तीन भाइयोंकी भलाईके लिये यही उचि
आवश्यक और युक्ति-सङ्गत है कि यह किला राज्यमें मिला लि
जाय। इसके अतिरिक्त यह भी पता चलता है कि उनमेंसे
भाई शिवाजीके इस निपटारेसे बिलकुल सहमत थे। इस बात
स्पष्ट है कि ग्रांट डफका शिवाजीपर दोषारोपण उचित
न्यायसङ्गत नहीं है। क्योंकि शिवाजीने समयकालके युक्ति-यु
विचार और दुर्गस्थ सैनिकोंकी इच्छा और सम्मतिसे यह कि
अपने अधीन किया था।*

कर लिया। उन नौ किलोंमेंसे लोहगढ़, राजमाची और रायरी तीन मुख्य * थे।

आयाजी सोनदेव, शिवाजीके पिता शाहजीके पुराने कार कुनका पुत्र था। उसने अपने साथ कुछ घुड़सवार सेना लेकर कल्याणपर चढ़ाई की और कल्याणके दुर्गाध्यक्ष मौलाना अह मद्को कैद कर लिया। शिवाजी आयाजी सोनदेवके इस कार्यसे बहुत प्रसन्न हुए और उसके साथ कल्याण गये। वहाँ पहुंचकर उन्होंने मुसलमान सूबेदारकी बहुत खातिर की और उसको सम्मानपूर्वक बीजापुर भेज दिया। कल्याणपर अधिकार हो जानेसे समस्त पश्चिमी कोंकण उनके हाथमें आ गया। शिवाजी गुणग्राहक थे, अपने अधीनस्थ आदमियोंकी बड़ी कदर करते थे और उनका उत्साह बराबर बढ़ाते रहते थे। अतएव उन्होंने आयाजी सोनदेवके इस कार्यसे प्रसन्न होकर कल्याण प्रान्तका उसे ही शासक नियुक्त किया।

इसमें सन्देह नहीं कि चरित्रबलका विशेष महत्व होता है। कल्याण विजयके समय शिवाजीके चरित्रबलका भी विकास हुआ। इसके कारण बहुतसे लोग क्या हिन्दू क्या मुसलमान सब ही उनके भक्त और प्रशंसक हो गये। उस समय भारतके, विशेषत दक्षिणी भारतके, निवासी स्वेच्छाचारी शासनके

---

* ग्रांट डफने इन किलोंके यह नाम लिखे हैं कि कासोरी, टोम, टिकोना, भूरप, कारी, लोहगढ़, राजमची ।

अभ्यस्त न थे। कल्याण-युद्धके समय आबाजी सोनदेवने वहांके मुसलमान शासक मौलाना अहमदकी पुत्र-वधूको किसी प्रकार पकड़ लिया और युद्धकी समाप्तिके पीछे उन्होंने शिवाजी महाराजसे कहा कि युद्धके समय एक अति रूपवती और युवती स्त्री मिली है यह महाराजकी सेवामें रहने लायक है। यदि आज्ञा हो तो महाराजकी सेवामें उपस्थित की जावे। शिवाजीने आबाजी सोनदेवकी यह प्रार्थना स्वीकार कर ली और उक्त मुस्लिम महिलाको दरबारमें उपस्थित होनेकी आज्ञा दी। आज्ञाका तुरत ही पालन किया गया। दरबारमें उक्त सुन्दरी लाई गई। दरबारमें उपस्थित सब मनुष्योंकी टकटकी उक्त सुन्दरीकी ओर लगी हुई थी और यह जाननेके लिये उत्सुकता बढ़ी हुई थी कि शिवाजीकी क्या आज्ञा होती है? शिवाजीने उस सुन्दरीको देखते ही कहा —"वाह क्या अच्छा इसका रूप है? यदि मेरी माता भी इतनी ही सुन्दर होती तो मैं भी स्वरूपवान होता। यह मेरी माताके समान है।" शिवाजीके मुखसे यह शब्द निकलते ही सारे दरबारमें सन्नाटा छा गया। पीछे शिवाजी महाराजने आबाजी सोनदेवसे कहा —"इस संसारमें जिन्हें यश प्राप्त करनेकी इच्छा हो उन्हें पर-स्त्रीकी ओर कदापि कुदृष्टि नहीं करनी चाहिये। राजाको दूसरेकी स्त्रीको कभी हरण नहीं करना चाहिये। रावण जैसे शूरवीर और बलवान राजाका राज्य भी परदाराकी अभिलाषाके कारण नष्ट हो गया तो मेरी क्या गिनती है। राजाके लिये समस्त प्रजा उसकी सन्तानके समान

हैं। यह कहकर उन्होंने * मौलाना अहमदकी पुत्रवधूको आभूषण और सुन्दर वस्त्र आदि अर्पण किये और सम्मानपूर्वक उस मौलानाके यहां वापिस भेज दिया। शिवाजीके इस कार्य से सब लोगोंको बड़ी प्रसन्नता हुई। सर्वत्र उनकी कीर्त्ति छा गयी। उनके इस चरित्रबलसे उनका सिक्का और भी जम गया। क्या हिन्दू क्या मुसलमान सब ही शिवाजीके भक्त और प्रशंसक हो गये। आसपासके जो छोटे छोटे हिन्दू मुसलमान सरदार और जागीरदार थे उन्होंने भी शिवाजीकी अधीनता स्वीकार कर ली। इस प्रकार शिवाजीका आतङ्क चारों ओर छा गया।

---

* 'शिवदिग्विजय' नामक ग्रन्थमें पुत्र वधूके स्थानमें लिखा है कि वह स्त्री मुल्लाकी कन्या थी सुतरां मुल्लाने आबाजी सोनदेवको रुपये लेकर उसे भेंट-मेंट लिये दी थी। सब स्त्रियोंके प्रति एक हिन्दूके चरित्रका इस प्रकारके व्यवहार दूसरी जातियोंने बहुत कम किये हैं। मेवाड़को राज्य प्रवासिमें लिखा है कि जब बादशाह अकबर मिर्जाखांको मोगुदामें छोड़ गये थे तब कुँवर अमरसिंह (महाराणा प्रतापसिंहके पुत्र) मिर्जाखांकी बेगमोंको पकड़ लाये थे परन्तु महाराणा ने उन स्त्रियोंको अत्यन्त प्रतिष्ठापूर्वक मिर्जाखांके पास पहुंचा दिया था। उस समय मिर्जाखां—"खानखाना" मुगल सेनाके सेनापति थे। वे महाराणा प्रतापसिंहकी वीरता और उच्च मतिमाने अत्यन्त प्रसन्न हुए उन्होंने निम्न लिखित कविता, महाराणा प्रतापसिंहके पास भेजी थी —

"धरम रहसी रहसी धरा खिस जासी खुरसाण
अमर विसम्भर ऊपरै, रखियो नहचो राण—

इसका भावार्थ यह है—"हे राणाजी! इस अमर विश्वंभरपर विश्वास रखियेगा, आपका धर्म और धरती दोनों ही बनी रहेंगी और बादशाह अस्थिर होगा।" सन् १८०८ ई॰ में दूसरे सिक्ख युद्धके समय जितनी भी अंग्रेज महिलायें सिक्खोंकी कैदमें आ गयी थीं, सिक्खोंने उनके प्रति अत्यन्त उदारता और सभ्यता पूर्ण व्यवहार किया था। हिन्दुओंके इतिहासमें एक नहीं ऐसे अनेक उदाहरण मिलेंगे।

कल्याण प्रान्तके उत्तर भागमें शिवाजीके शासनमें प्रजा सब प्रकारसे सुखी थी। किसी प्रकारका कष्ट न था। पर कल्याण प्रान्तके दक्षिण भागमें यह बात न थी। वहां हवशियों (सिद्दियों) का राज्य था। उस समय भारतमें ही क्या समस्त संसारमें धर्म-सम्बन्धी विद्वेष-भाव फैल रहा था। सिद्दी लोग भी धर्म-सम्बन्धी विद्वेष भावसे बचे हुए न थे। वे अपनी हिन्दू प्रजाको सताते थे। इससे वहांकी हिन्दू प्रजा सन्तुष्ट न थी। हिन्दू ही क्यों मुसलमानोंके दोनों सम्प्रदाय शिया और सुन्नियोंमें भी हिन्दुओंके शैव शाक्त और वैष्णवोंके समान ही परस्पर अनबन रहती थी जो अभीतक दूर नहीं हुई है। शिवाजीका सब धर्म और जातिके प्रति समान व्यवहार था। शासन करनेमें वे धर्मभेद, जाति और रङ्ग-भेद जानते ही न थे। पाठक यह न समझें कि आजकलकी सभ्य जातियोंके समान धर्म-भेद जाति-भेद और रङ्ग-भेद न करनेकी बनावटी दुहाई शिवाजीकी होती थी। जैसा आजकल गोरे और काले रङ्गका पक्षपात किया जाता है वैसा पक्षपात अपनी जाति अथवा धर्मका शिवाजीके शासनमें होना कदापि सम्भव नहीं, शिवाजीमें यह बात न थी। आगे चलकर पाठक देखेंगे कि शिवाजी इस पक्षपातसे बचे हुए थे। कल्याण प्रान्तके उत्तरीय विभागमें शिवाजीका सुशासन देखकर दक्षिणी भागके निवासियोंकी भी शिवाजीके शासनके छत्रतले रहनेकी इच्छा हुई। यहाँ फतहखां नामक एक मुसलमान शासक था। उसके

अधीन दो मराठा सरदार थे जिनका नाम सोडवलेकर और कोड़वलेकर था। यह दोनों मराठे जमादारके पदपर थे। उन्होंने शिवाजीसे कहला भेजा कि हम लोग हबशियोंकी नोकरी छोड़ने को तैयार हैं। यदि आप कोकण प्रान्तमें पधारें तो तला और घोसला नामक दोनों किले आपके हस्तगत करानेकी चेष्टा करें। इन दोनों किलोंके आनेसे आपका समस्त प्रान्तपर अधिकार हो जायगा। अतएव शिवाजीने उक्त दोनों मराठे सरदारोंको मिला कर हबशियोंके तला, घोसला और रायरी नामक तीन किले ले लिये। इन किलोंका प्रबन्ध करके उन्होंने बिरवाड़में एक और नया किला बनवाया। क्योंकि हबशी लोग उन दिनोंमें बड़े प्रबल थे। उनके आक्रमणोंसे बचावके लिये बिरवाड़ी किलेकी अत्यन्त आवश्यकता थी। शिवाजी अपने धर्म-कर्मके बड़े पक्के थे। बिरवाड़ीमें किला बनवाकर उन्होंने हरिहरेश्वर तीर्थकी यात्रा की और देवदर्शन किये। वहांसे लौटते समय गोवलकर सामन्त उनसे मिले। उनकी योग्यता देखकर शिवाजीने उन्हें अपने पास रख लिया।

शिवाजीने गोवलकर सामन्तसे एक बहुमूल्य तलवार खरीदी। उसके मूल्यमें उन्होंने उसे तीन सौ हुण तथा पोशाक दी। इस तलवारका नाम शिवाजीने "भवानी" तलवार रखा। वे प्रति दिन इस तलवारकी पूजा करते थे। नवरात्रिके अव सरपर वे उस तलवारको देवीके घटके आगे रखते थे। उसकी पूजा होती थी। विजयादशमीके दिन वे उस तलवारको

अपने हाथमें लेते थे और उसी दिन वे नवीन स्थानोंपर चढ़ाई करते थे।

सफलता उद्योगकी दासी है। लगातार उद्योग करते शिवाजीको स्वराज्य-स्थापनमें सफलता प्राप्त होने लगी। अब उनकी दृष्टि कोंकण प्रान्तमें समुद्रके किनारे राजापुर नामक नगरकी ओर गयी। उन दिनों राजापुर व्यापारका केन्द्र-स्थल था। यहाँ ऐश्वर्य्यकी कमी न थी। राजापुरका शासन हब्शियोंके हाथमें था। हबशियोंके कठोर शासनसे यहांके निवासी अत्यन्त दुःखी थे और वे हबशियोंके शासनसे मुक्त होना चाहते थे। यह समाचार पाते ही शिवाजीने राजापुरपर चढ़ाई कर दी और चारों ओरसे नगरको घेर लिया। अन्तमें शिवाजीकी जीत हुई। शिवाजीने यहांके कुछ लोगोंको कैद कर लिया। इस युद्धमें शिवाजीको एक अत्यन्त बुद्धिमान पुरुष हाथ लगा। उसका नाम बालाजी आवाजी था। इनके पिता आवाजी हरिचित्र जंजीराके सिद्दियोंका दीवान था। सिद्दियोंने उसे मरवा डाला और अपने खलासी नौकरोंसे उसकी स्त्री-बच्चोंको गुलामोंके रूप बेचनेका हुक्म दिया। आवाजी हरिचित्रकी स्त्री गुल्याबाई बड़ी बुद्धिमान थी। उसने खलासियों से कहा कि "हमें राजापुरमें बेचो तो अच्छे दाम उठ आवेंगे।" गुल्याबाईको इस सलाहसे खलासी उसे और उसके पुत्रोंको राजापुरमें ले आये। राजापुरमें उस गुल्याबाईका एक भाई विसाजी शङ्कर रहता था। वह बड़ा व्यापारी था। उसने खलासियोंको

यह बात मालूम नहीं होने दी कि ये मेरे सगे-सम्बन्धी हैं और उनसे गुलबाईको उसके बच्चों सहित खरीद लिया। गुलबाईके तीन पुत्र थे—बड़ा बालाजी आवाजी, जिसका ज़िक्र अभी ऊपर आया है। इसके अतिरिक्त दो और छोटे थे जिनका नाम, चिमणाजी और शामजी था। शिवाजीने गुलबाईके तीनों पुत्रोंको अच्छी शिक्षा दी थी। जिस समय शिवाजीने राजापुरपर चढ़ाई की थी उस समय बालाजी आवाजी वहाँ किसी रईसके यहां कारकुन था। जब उसे शिवाजीके आगमनका पता लगा तब उसने शिवाजीकी सेवामें एक प्रार्थनापत्र भेजा, जिसमें उसने अपनी दीन अवस्थाका हाल लिखा। शिवाजी बालाजीके अक्षर देखकर बहुत प्रसन्न हुए और बालाजीको लिखा कि तुमको हमारे यहां कारकुनका काम मिल सकता है। बालाजीने उत्तरमें लिखा कि "मैं अपने मामाके सिवा और किसीकी नौकरी नहीं कर सकता हूं।" जब शिवाजी राजापुर पहुँचे तब उन्होंने वहां पूछा कि "यहाँ बालाजी आवाजी नामका कोई मनुष्य हो तो हमारे पास लाओ।" बालाजी यह सुनते ही शिवाजीके पास पहुँचा पर उसकी माता गुलबाई यह सुनते ही बहुत घबड़ायी कि उसके बेटेको शिवाजी महाराजने बुलवाया और वह भी अपने बेटेके साथ ही शिवाजी महाराजके पास पहुँची। उसने शिवाजीके सामने अपने सब दुःखोंका वर्णन किया। इसपर शिवाजीने उसके दोनों छोटे पुत्रोंको भी अपने पास बुला लिया और कहा कि ये तुम्हारे तीनों पुत्र हैं और मुझे भी अपना चौथा

पुत्र समझो। मेरे साथ चलो तुम्हें कुछ कष्ट नहीं होगा। तुम्हारे सब दुःख दूर हो जायंगे। शिवाजीमें यह एक बड़ा भारी गुण था कि वे किसी आदमीको देखते ही ताड़ जाते थे कि यह मनुष्य कैसा है। पहले बालाजीके अक्षर देखकर वे प्रसन्न हुए, पीछे उनको उससे मिलकर और भी प्रसन्नता हुई। उन्होंने उसे अपना चिटणीस या चिटनीस अर्थात् लेखक नियत किया। यह शिवाजीके मुख्य मन्त्रियोंमेंसे था। मन्त्रियोंका पद इस घरानेमें अन्त तक रहा। मराठा इतिहासके अनेक बखर (ऐतिहासिक डायरी) इसी घरानेके लिखे हुए हैं। बालाजीका मंझला भाई चिमणाजी हिसाब किताब, बही खातेके काममें बड़ा हुशियार था, उसे शिवाजीने दफ्तरदार नियत किया और उसके सबसे छोटे भाई शामजीको रायगढ़के किलेका प्रबन्धकर्ता नियत किया, इस प्रकार तीनों भाइयोंको महाराज शिवाजीने अपने यहाँ नौकरी दी।

महाराज शिवाजीकी बालाजी आवाजीके ऊपर विशेष कृपा रही थी। प्रत्येक गुप्त कार्यमें वे उससे सलाह लेते थे। यदि उन्हें कोई गोपनीय कार्य कराना होता था तो पहले बालाजीसे ही कराते थे। उनका इसपर पूरा विश्वास था। यह भी बड़ा सच्चा, ईमानदार और स्वामिनिष्ठ था। प्रायः शिवाजी कोई तहरीर अथवा कोई आवश्यक एवं महत्वपूर्ण पत्र बालाजीसे ही लिखाते थे। क्योंकि यह अच्छा लेखक था। उसमें यह स्वाभाविक बात थी कि उसे अपने विचारोंका कुछ आभास

बतला दीजिये वह उन्हें क्रमवद्ध, सिलसिलेवार अच्छी तरहसे लिख देता था। कहा जाता है कि एक समय शिवाजीने किसी स्थानपर चढ़ाई करते समय बालाजीको एक खरीता लिखनेकी आज्ञा दी पर उसे दिनभर खरीता लिखनेका अवकाश ही न मिला। रातके समय महाराज शिवाजीने उसे अपने पास बुलवाया और खरीता लिखनेके सम्बन्धमें पूछा। बालाजी, महाराजकी आज्ञा पालन न हो सकनेसे बहुत घबड़ाया और डरा पर धैर्य्यच्युत नहीं हुआ। उसने शिवाजीके उत्तरमें कह दिया कि "हाँ, मैंने लिख लिया है।" शिवाजीने आज्ञा दी कि "अच्छा खरीता सुनाओ, तुमने उसमें क्या लिखा है?" बालाजी यह आज्ञा सुनकर धैर्य्यच्युत नहीं हुआ। उसने एक कोरा कागज अपने बस्तेमेंसे निकालकर महाराज शिवाजीके सामने इस तरह से पढ़ दिया कि मानों खरीता लिखा हुआ ही तैयार है। महाराज खरीतेकी पांडुलिपि (मसविदा) सुनकर बहुत प्रसन्न हुए और उसको साफ करनेकी आज्ञा दी। बालाजी शिवाजीके सामनेसे अपने स्थानपर खरीतेकी पांडुलिपिको साफ करनेके लिये चलने लगा कि उसके साथी नौकरको उसकी यह चालाकी देखकर हँसी आगयी। नौकरको हँसते हुए देखकर महाराजने हँसीका कारण पूछा, तो उसने सब सच्ची बात कह दी। नौकरकी बात सुनकर उन्होंने इस सम्बन्धमें बालाजीसे पूछा तो बालाजीने उत्तरमें दिनभर अवकाश न मिलनेका कारण कह दिया। ये सब बातें सुनकर शिवाजी बालाजीसे बहुत प्रसन्न

हुए और उसकी समयोचित बुद्धिकी बहुत प्रशंसा की। पाठक! इस घटनासे ही समझ लें कि शिवाजीका अपने सेवकोंके प्रति कैसा व्यवहार होता था।

राजापुर नामक नगरके हाथ आ जानेसे शिवाजीने कल्याण से लेकर कोकणतक मुख्य मुख्य स्थान और बड़े बड़े किले जीत कर एक छोटासा राज्य स्थापन कर लिया। चारों ओर शिवाजी की धाक बैठ गयी। उन्होंने खूब धन इकट्ठा करके अपनी सेना बढ़ायी। सह्याद्रिकी श्रेणी एक विकट पहाड़ी प्रदेश है। मावल लोग और कोकण प्रदेशके निवासी इस पहाड़ी प्रदेशकी भूमिके एक एक चप्पुलसे परिचित थे। जिस समय मूसलाधार वर्षा होती थी, वर्षाके कारण पानीमें पैर फिसलनेका डर रहता था, उस समय भी वे विकट पहाड़ियोंपर चढ़ने और झाड़ियोंमें छिपनेमें खूब अभ्यस्त थे। इसलिये शिवाजीने पहले उन्हीं लोगोंको अपने यहाँ रखा था। उन्होंने अपने यहाँ अनेक शूर वीर योद्धा और चतुर मनुष्योंको रखा था। शिवाजीका यह भी नियम था कि जितना और जहाँतक हो सके बिना रक्तपात किये और प्राणहानिके अपने राज्यका विस्तार किया जाय। इसके लिये वे राजनीतिके कूटनियम और भेदनीतिसे भी काम लेते थे। योग्य पुरुषोंका सदैव आदर करते थे। बस यही नीति उनके स्वराज्य-स्थापनकी कुञ्जी थी। राजनीतिके विकट दांव पेचोंमें शिवाजी अपने किसी समकालीनसे कम न थे। शिवाजीका स्वराज्य-स्थापनका उद्देश्य गुप्तरूपसे समस्त महाराष्ट्रमें फैल

गया। अनेक उच्चाभिलाषी लोग उनके दलमें सम्मिलित हुए जिनके कारण शिवाजीको अपने अत्युच्च उद्देश्यमें सफलता प्राप्त हुई। शिवाजीके स्वराज्य प्राप्तिके साधनमें बीजापुर दरबारकी ओरसे किस प्रकारकी रुकावटें उपस्थित हुई सो आगेके परिच्छेदमें पढ़िये।

पांचवाँ परिच्छेद।

पितृ-सङ्कट-निवारण

"डरकी नाव कुठौरमें परी भँवर बिच आय
दीनबन्धु अब तोहि बिन को करि सकै सहाय"

+ + + × + + + +

"ठौर देखिके झुकिये, कुटिल सरल गति आप
बाहर टेढ़ो फिरत है, बांबी सूधो सांप"

शिवाजीकी बढ़ती हुई शक्ति देखकर बीजापुर-दरबारको बड़ा खटका हुआ। कुछ दिनोंमें ही शिवाजीने बीजापुर राज्यके कई किले ले लिये थे। उन्होंने बीजापुर राज्यका खजाना लूट लिया और कल्याण प्रान्तके सूबेदार, मौलाना अहमदको कैद करके बीजापुर-दरबारमें भेज दिया। शिवाजीके इन कार्य्योंसे बीजापुरके बादशाह मुहम्मद आदिलशाहके क्रोधका ठिकाना नहीं रहा। मौलाना अहमदने शिवाजीकी बढ़ती हुई शक्तिका बीजापुरके बादशाहके सामने जिस प्रकार वर्णन किया उससे बीजापुर-दरबारको यह बात अच्छी तरहसे जंच गयी कि शिवाजी के दमन किये बिना बीजापुर राज्यकी रक्षा नहीं हो सकती है। पर शिवाजीका दमन करना भी तो कुछ खिलवाड़ न था।

क्योंकि शिवाजीकी बढ़ती हुई शक्तिको रोकना वैसा ही असम्भव था जैसा हिमालयसे निकली हुई गङ्गाजीको हिमालयके ऊपर फिर ले जाना। उधर कर्णाटकमें शिवाजीके पिता शाहजीका भी कुछ कम प्रभाव न था। इन सब बातोंको देखकर आदिल शाहने सोचा कि शिवाजी जो इतना उत्पात मचा रहे हैं उसमें उनके पिता शाहजीका हाथ अवश्य है। बिना शाहजीकी आज्ञा और सलाहके नवयुवक शिवाजीका इतना भारी साहस नहीं हो सकता है कि वे बीजापुर राज्यके किलोंपर अधिकार जमावें। शाहजी अपने पुत्र शिवाजीको गुप्तरूपसे इन कार्य्योंके करनेकी उत्तेजना दे रहे हैं। यह सोचकर आदिलशाहने शिवाजी के पिता शाहजीका दमन करनेकी ठानी। उन्होंने सोचा कि शिवाजीको दमन न करके, यदि शाहजीको ही दण्ड दिया जाय तो शिवाजी आगे उत्पात न मचा सकेंगे और बीजापुर-दरबारकी कुछ हानि न होगी। पर शाहजीका पकड़ना भी कुछ खिल वाड़ न था। इसलिये आदिलशाहने शिवाजीको एक पत्र भेजा* जिसमें उनके स्वराज्य-स्थापनके कार्यकी निन्दा करते हुए लिखा कि जिसके बापने बीजापुर-दरबारमें रहकर अपनी अच्छी उन्नति की है उसके लड़केको ऐसे कार्य नहीं करने चाहिये जिनसे बीजापुर-दरबारसे वैमनस्य हो। साथ ही शिवाजीको बीजापुर दरबारमें आनेकी आज्ञा दी। आदिलशाहने शिवाजीके पिता शाहजीको भी लिखा कि "तुम अपने पुत्रको इस प्रकारके कार्य

* देखा शिवदिग्विजय बखर।

करनेसे रोको।" शिवाजीने उत्तरमें बीजापुरके बादशाहको लिखा कि "मैं बीजापुर आनेको तैयार हूँ यदि दरबार मेरे हाथमें आये हुए दुर्ग और प्रदेशोंको मुझे जागीरस्वरूप प्रदान करनेकी कृपा करे।" शिवाजीने अपने पिता शाहजीको भी लिखा — "अब मैं बच्चा नहीं रहा हूं। अब मैं अपने भाग्यका आप मालिक हूँ। आपकी पूनाकी जागीर तथा बीजापुरसे नये जीते हुए प्रदेशोंपर मैं अपना ही स्वत्व समझता हूँ।"

मुहम्मद् आदिल्शाहने शिवाजीकी इस शर्तको स्वीकार नहीं किया। शिवाजीके पत्रको पढ़कर आदिलशाहका क्रोध और भी बढ़ गया। उनको यह विश्वास हो गया कि अपने पिताकी आज्ञासे ही शिवाजी ये सब काम कर रहे हैं। बीजापुर-दरबारमें शाहजीके दुश्मनोंकी कमी न थी। बहुतसे दरबारी शाहजीसे पहले ही उनकी उन्नति देखकर कुढ़ रहे थे। उन्होंने अपने वैरभावका शाहजीसे इस अवसरपर बदला लेना अच्छा समझा। उन्होंने मुहम्मद आदिलशाहके कान भरने शुरू किये कि "किसी प्रकारसे शाहजीको कैद कर लेना ही अच्छा होगा।" मुहम्मद आदिलशाहने सोचा कि शाही आदमी शाहजीको कैद करने आयेंगे तो अच्छा न होगा। शायद शाहजी हाथ आवें या न आवें। इसलिये उन्होंने शाहजीको धोखेसे पकड़नेकी युक्ति निकाली। उस समय मुहम्मद आदिलशाहके यहाँ बाजी घोर पड़े नामक एक मराठा सरदार था। "विषस्य विषमौषधम्" विषका दवा विष ही है, "लोहा लोहेसे ही काटा जाता है।" यह

सोचकर मुहम्मद आदिलशाहने शाहजीके पकड़नेका भार बाजी घोर पांडेपर ही रखा। बाजी घोर पांडेके हृदयमें भी अपनी उन्नतिकी सुखाभिलाषाएं थीं पर देश-दुर्दशाके दूर करनेकी ओर उसका तनिक भी ध्यान न था। शाहजीकी उन्नति देखकर वह उनसे मन ही मन कुढ़ता था। उसने सोचा कि आदिल-शाहके कृपा-पात्र बननेका इससे बढ़कर और कौनसा अच्छा अवसर आवेगा। बस वह शाहजीको पकड़नेके लिये तैयार हो गया। भारतवर्षमें देशद्रोहियोंकी कमी कभी नहीं रही है। सोने चांदीकी जगमगाहटके लालचमें अपने देशकी स्वतन्त्रता बेचनेवालोंकी भारतवर्षमें न तो आजकल कमी है न पहले किसी समयमें थी। ऐसे ही देशद्रोहियोंमेंसे बाजी*घोर पांडे था। वह शाहजीके पकड़नेके लिये राजी हो गया। थोड़े दिन पहले ही आदिलशाहने उसे मुधोलकी जागीर दी थी, अब वह अपनी उन्नतिका और भी अधिक स्वप्न देखने लगा। वह आदिलशाहके इस प्रस्तावसे केवल सहमत ही नहीं हुआ कि शाहजीको पकड़ना चाहिये, किन्तु शाहजीके पकड़नेका भार भी अपने ऊपर लिया। कुछ दिनों पीछे उसने शाहजीसे भेंट की और उनसे अपने यहां एक भोज्यमें सम्मिलित होनेके लिये प्रार्थना की। शाहजीने

---

*—घोर पांडे नाम पड़नेका कारण यह है कि घोरपाड़ा मराठीमें कमन्दको कहते हैं। कमन्द एक प्रकारका जानवर होता है जिसकी पकड़ छिपकलीके समान होती है। कमन्दको जहां कहीं फेंकोगे वहां वह चिपट जाता है। कमन्द व इसको भी कहते हैं। बाजी घोर पांडेका एक पूर्वज भाग इसी सहारे पहले ही पहल एक किले पर चढ़ा था, तबसे वह और उसके वंशधर घोर पांडे कहलाये जाने लगे।

निमन्त्रण स्वीकार कर लिया और नियत समयपर उसके यहाँ पहुँच गये। क्योंकि उस समय उन्हें इस बातका तनिक भी विचार नहीं हुआ कि इस निमन्त्रणमें किसी भावी विपत्तिकी सम्भावना है। पर जब वे घोर पाडे के भवनके बाहरी दरवाजे पर पहुँचे तब उसके नौकरोंने उनसे तलवार और ढाल वहीं रखनेके लिये और उनके साथी नौकरोंको वहांसे चले जानेके लिये कहा। यह सुनते ही शाहजीको वहम हुआ कि इस निमन्त्रणके भीतर दालमें कुछ काला है। सम्भवतः वे घोर पांडे के नौकरोंके कहनेके अनुसार कार्य्य करनेको तैयार न थे कि इतनेमें ही स्वयं घोर पांडे आ गया और उसने अत्यन्त नम्रता और विनीतभावसे शाहजीसे अपने घरके भीतरी भागको देखनेके लिये कहा। शाहजी बिना कुछ सोचे विचारे उसके साथ हो लिये। जब शाहजी उसके साथ घरमें कुछ आगे बढ़ गये तब उसने झट बाहरका दरवाजा बन्द कर दिया, जिससे उनके साथके नौकर और शरीररक्षक बाहर छूट गये। और उसी समय घोर पांडेके आदमियों (जिन्हें पहलेसे उसने अपने मकानमें छिपा रखे थे) ने शाहजीको घेर लिया और उन्हें कैद कर लिया। उनके हाथोंमें हथकड़ी डाल दी गयी और उन्हें बीजापुरके बादशाह मुहम्मद आदिलशाहके पास भेज दिया।

यहां यह कह देना भी आवश्यक है कि शाहजीके कैद किये जानेके सम्बन्धमें कई इतिहास-लेखकोंका परस्पर मतभेद है। संवत् १७०५ वि० (६ अगस्त सन् १६४८ ई०) को शाहजी

कैद किये गये थे। उस समयके फारसी भाषाके कुछ इतिहास लेखकोंने लिखा है कि सिपहसालार (सेनापति) मुस्तफा खांकी अधीनता स्वीकार न करनेके कारण शाहजी कैद किये गये थे। सभासद्के बखरसे इस विषयका कुछ पता नहीं लगता है। चिटनीसका बखर इस घटनाके १६० वर्ष पीछे लिखा गया था। उसमें लिखा गया है कि जब शिवाजीने बीजापुर राज्यके किले और स्थानोंपर अधिकार करना प्रारम्भ किया तब आदिलशाहने समझा, शिवाजी यह कार्य अपने पिताके इशारेसे कर रहे हैं, इसलिये उन्हें कैद कर लिया। जहुरीके लड़के जहुरने मुहम्मद आदिलशाहके हुक्मसे "मुहम्मद-नामा" लिखा था। उसमें इस घटनाका उल्लेख इस प्रकार है कि "जब नवाब मुस्तफाखां जींजीको घेरे हुए था और युद्ध चल रहा था तब शाहजीने अपना वकील उक्त नवाबके पास भेजा और वकील द्वारा अपनी जागीरपर जानेकी आज्ञा मांगी। इसपर नवाबने उत्तर दिया कि यहांसे चला जाना घेरेके काममें बाधा पहुंचानेके बराबर है। इसके प्रत्युत्तरमें शाहजीने कहला भेजा कि यहां अनाज बहुत मँहगा है और अब सैनिक विशेष कष्ट और सङ्कट सहन नहीं कर सकते हैं। मैं आपकी बिना आज्ञाके ही अपनी जागीरपर चला जाऊंगा। इसपर नवाबको यह विश्वास हो गया था कि शाहजी कुछ उत्पात मचाये बिना नहीं रहेंगे और गिरफ्तार कर लिया। उनकी कुछ भी सम्पत्ति लूटी नहीं गई थी पर सब राज्यके लिये जप्त कर ली गयी।"

बीजापुरकी तारीख "बसातीन-ए सलातीन" में लिखा हुआ है कि शाहजीने नवाब मुस्तफा खांको आज्ञा न मानकर उसके विरुद्ध बलवा शुरू कर दिया था जिससे अन्तमें नवाबने उन्हें गिरफ्तार करनेकी ठान ली। एक दिन प्रातः समय नवाबने बाजी घोर पांडे और जसवन्तराव असद्‌खानीको अपने सैन्यदल सहित शाहजीके डेरेमें जानेकी आज्ञा दी जिस दिन की यह बात है उस दिनकी पहली रातको वे बहुत देरसे सोये थे इसलिये जिस समय ये उनके डेरेपर पहुंचे उस समय वे सो रहे थे। ज्योंही उन्हें घोर पांडे और जसवन्तरावके पहुंचनेका समाचार मिला त्योंही वे अकेले ही घोड़ेपर सवार होकर अपने डेरेसे भागे परन्तु बाजी घोर पांडेको यह बात मालूम पड़ गयी और उसने शाहजीका पीछा करके उन्हें पकड़ लिया और नवाबके सामने लाया। नवाबने उन्हें कैद कर दिया और उनकी तीन हजार घुड़सवार सेनाको हटा दिया। नवाबकी आज्ञासे शाहजीका शिविर लूट लिया गया। जब आदिलशाह ने यह समाचार सुना तब उन्होंने अफजलखांको दरबारमें शाह जीके लानेके लिये भेजा और एक खोजा उनकी सम्पत्तिकी देखभाल करनेके लिये रख दिया। मोडर्न इतिहासमें भी शाहजीके पकड़नेकी घटना, बीजापुरकी तारीख "बसातीन-ए सलातीन" से ही मिलती जुलती है †।

---

†—डॉ० यदुनाथ सरकार कृत—[illegible] १९२९ [illegible]

जिद्दे शाकावलीके पृष्ठ १७४ में लिखा हुआ है कि मुस्तफा-खांने मायली देशमुख कन्नोजी नामक जिद्दे के साथ गिरफ्तार किया था।*

अस्तु, जो कुछ हो बीजापुर पहुंचकर शाहजीने मुहम्मद आदिलशाहके सामने अपनी बहुत कुछ निर्दोषिता प्रकट की पर उनकी एक न चली। आदिलशाहने उनकी बातपर विश्वास नहीं किया और उन्हें दोषी समझा। एक दीवालमें उन्हें चुननेकी आज्ञा दे दी। आदिलशाहने शाहजीसे कहा "शाहजी तुम अच्छी तरह जानते हो कि तुम्हारा पुत्र हमारे विरुद्ध कार्य कर रहा है और हमारे राज्यको नष्ट करना चाहता है। इस समय तुम्हारी इसीमें भलाई है कि तुम शिवाजीको रोक दो और हमारे राज्यका जितना भाग और किले शिवाजीके हाथ लगे हैं उन्हें लौटा दो, नहीं तो तुम्हारे लिये अच्छा न होगा। यह सब उत्पात तुम्हारा ही मचाया हुआ है। यदि तुम अपने पुत्रको नहीं रोकोगे तो मैं तुम्हारी बहुत दुर्दशा करूंगा।" शाहजीने अत्यन्त नम्रतापूर्वक कहा—"शिवाजी मेरी पहली स्त्रीका लड़का है। मेरा उससे कोई सम्बन्ध नहीं है। वह मुझसे अलग रहता है। आप जिस तरह चाहें उसका दमन कीजिये।" पर आदिलशाहने उनके इस कथनको स्वीकार नहीं किया और उन्हें एक अन्धकारपूर्ण किलेमें कैद कर दिया।

*—देखो N S Takakhav का Life of Shivaji Maharaj P 1-11

जिस अन्धकारपूर्ण गढ़ेमें शाहजी कैद किये गये थे उसका दर वाजा भी ईंटोंसे चुनवा दिया। उसमें सिर्फ एक आदमीके भीतर आने और बाहर आने लायक जगह रखी। जब ईंटें चुना जा रही थीं तब आदिलशाह शाहजीसे चिल्ला चिल्लाकर कहता जा रहा था कि "तुम अपना गुनाह मंजूर कर लो और अपनी जिन्दगी बचा लो।" अन्तमें ईंटें शाहजीकी ठोढ़ी तक चुन दी गयीं, दीवालमेंसे केवल उनका चेहरा ही दिखलायी पड़ता था। ऐसी दशामें भी शाहजीने यही कहा कि मेरा लड़का मेरी इच्छा के विरुद्ध यह कार्य कर रहा है। यह मेरे कहनेमें नहीं है। पर आदिलशाहने उनके कथनपर विश्वास नहीं किया और उनके मुखकी ठोढ़ीतक दीवाल चुन जानेके पीछे और ईंटें न चुनानेका हुक्म दिया। आदिलशाहने शाहजीसे कहा कि "अगर तुम्हारा बेटा तुम्हारे कहनेके मुताबिक काम नहीं कर रहा है तो उसको यहाँ दरबारमें आनेके लिये चिट्ठी लिख दो।" साथ ही यह धमकी दी कि अगर तुम्हारा लड़का यहां न आयेगा तो दीवालका बाकी हिस्सा भी चुनवा दिया जायगा। शाहजीने आदिलशाहके कहनेके मुताबिक शिवाजीको पत्र भेज दिया।

शिवाजी अपने पिताके पत्रको पाकर बड़े सङ्कटमें पड़े। यह समय उनके धैर्यकी परीक्षाके लिये बड़ा कठिन था। एक ओर पितृ-सङ्कट और दूसरी ओर देश-सङ्कट था। यदि वे पितृ-सङ्कट मोचन करनेके लिये बीजापुर-दरबारके सामने सिर झुका देते तो उनके देशोद्धार व्रतमें बड़ी भारी बाधा पहुंचती। उन्होंने ज

व्रत उठाया था वह कभी पूरा नहीं होता। स्वराज्य स्थापनकी उच्च अभिलाषा उनके मनमें ही रह जाती, क्योंकि यदि वे उस समय बीजापुर जाते तो उन्हें अपने प्राणोंसे हाथ धोने पड़ते। उस समय बीजापुर-दरबार उनके प्राणोंका गाहक बना हुआ था। उनकी उस समय इतनी शक्ति भी न थी कि वे बीजापुर-दरबारका सामना करके सकुशल अपने पिताको छुड़ा लाते और आप भी बच जाते। दूसरी ओर वे अपने स्वराज्य-स्थापनके व्रतमें ही लगे रहते तो उन्हें पितृ वियोगकी असहनीय वेदना सहन करनी पड़ती। शिवाजी पूर्ण मातृपितृ भक्त थे। इसलिये शाहजीके कैद होनेपर उनके सामने बड़ी जटिल समस्या उपस्थित हुई। परीक्षाकी इस कसौटीसे पार पानेका उपाय सोच ही रहे थे कि उनकी हृदयेश्वरी, प्राणवल्लभा सुईबाईने शाहजीके सङ्कट-मोचनके लिये और ही तीसरा उपाय बतलाया। उस वीराङ्गनाने शिवाजीको वीरोचित कर्त्तव्य सुझाया। उसने शिवाजीको सलाह दी कि बीजापुरके बादशाहसे क्षमा प्रार्थना करनेकी अपेक्षा स्वतन्त्रतासे शाहजीको छुड़ानेके लिये जो कार्य किया जायगा, वह अत्यन्त महत्वका होगा। शिवाजी भी अपनी स्त्रीके इस विचारसे सहमत हुए। उन्होंने इस कार्यमें मुगल सम्राट् शाहजहांकी सहायता ग्रहण करना उचित समझा। अभीतक शिवाजीने बीजापुरके किले और स्थानोंको हस्तगत करनेके अतिरिक्त मुगल राज्यके किसी दुर्ग अथवा स्थानपर आक्रमण नहीं किया था। इसलिये उन्होंने मुगल सम्राट् शाह-

जहांके पास दादाजीके पुराने कारकुनोंमेंसे एक मनुष्य रघुनाथ पन्तको शाहजहांसे सहायता प्राप्त करनेके लिये दिल्ली भेजा। दूसरे शिवाजीने यह भी सोचा कि मुगल राज्यसे इस समय मित्रता हो जाय तो आगे बीजापुर राज्यसे झगड़ा होनेपर इस मित्रताका उपयोग किया जायगा।

सम्राट् शाहजहांकी शाहजीसे कुछ मित्रता न थी। क्योंकि पाठक पीछे पढ़ चुके हैं कि जिस समय शाहजहां अहमदनगर पर विजय प्राप्त करना चाहता था उस समय शाहजीने उसके सङ्कल्पमें बाधा डाली थी। परन्तु संसारमें स्वार्थ सब कुछ करा देता है। शाहजहां भी दक्षिणके मुसलमानी राज्योंका मटियामेट करना चाहता था, कारण मुगल साम्राज्यके विस्तार में दक्षिणके मुसलमानी राज्य बड़े बाधक थे। शाहजहांने दक्षिणकी निजामशाही रियासत तो डुबा ही दी थी और शेष आदिलशाही तथा और भी मुसलमानी रियासतोंको मुगल सम्राट् डुबाना चाहते थे और शिवाजीकी कीर्त्ति भी उनके कानोंतक पहुंच चुकी थी। उन्होंने सोचा कि इस अवसरको चूकना न चाहिये। यदि शाहजी हमारे हाथ आ गये तो फिर बीजापुर राज्यका सहजमें ही समूल नाश हो जायगा। यह सोचकर उन्होंने संवत् १७०६ वि० सन् १६४९ ई० की ३० नवम्बरको शाहजीके पास एक पत्र भेजा जिसमें लिखा था कि हम पिछली बातोंको भूल गये हैं और अपना राजदूत तुम्हें कैदसे छुड़ानेके लिए बद्ध दिया है और तुम मुगल साम्राज्यके

सरदार नियत किये गये हों। इस पत्रके अतिरिक्त मुगल-सम्राट्ने शाहजीको खिलअत भी भेजी और उनके बड़े पुत्र सम्भाजीको अपने यहाँ नौकरी देनेके लिये भी लिखा। शाहजहांके इस पत्रके पहुँचते ही मुहम्मद आदिलशाहको बड़ी चिन्ता उपस्थित हुई। "चिन्तामें दोऊ गये, माया मिली न राम" "सांप छछून्दर की सी गति" हुई। आदिलशाह सोचने लगे कि, यदि शाहजी को मार डालें तो शिवाजी अपने नये विजित स्थानोंके लिये शाहजहांकी अधीनता स्वीकार कर लेगा और शाहजहां शाहजीकी मृत्युके बहानेसे तङ्ग किये बिना न रहेगा।* अब

*—प्रोफेसर यदुनाथ सरकार लिखते हैं कि शिवाजीने न तो कोई अपना वकील दिल्लीमें सम्राट् शाहजहांके पास भेजा था और न कोई पत्र ही। उन्होंने शाहजीके छुड़ानेके सम्बन्धमें शाहजहांके पुत्र मुरादबख्शको लिखा था जो उस समय दक्षिणका सूबेदार था। इसके प्रमाण स्वरूप सरकार महोदय कहते हैं कि सितारेके रावबहादुर दत्तात्रेय बलवन्त पारसनीसके पास मुरादके फारसी भाषाके असली चार पत्र मौजूद हैं। राजवाड़ेने भी यह लिखा है कि शाहजहांके हस्तक्षेप करनेसे शाहजी छूटे थे, गलत है। उक्त सरकार महोदय लिखते हैं—"पहले शिवाजीने दक्षिणके सूबेदार मुरादबख्शसे प्रार्थना की कि वह बादशाहसे शाहजीके पिछले अपराधोंको क्षमा करा दें और भविष्यमें सम्राट् शाहजी और उसके पुत्रोंकी रक्षा करें। शिवाजीने यह भी लिखा था कि इस प्रार्थनाकी लिखित स्वीकृति मिली तो मैं मुगलोंकी सेवामें उपस्थित हो जाऊंगा। मुरादने सन १६४९ ई० की १४ वीं मार्चको शिवाजीके पास उत्तर भेजा कि पहले तुम अपनी शर्तोंके लिये अपने किसी विश्वासपात्र वकीलको भेजो। शिवाजीने वैसा ही किया। मुरादने इन सब बातोंकी खबर शाहजहांको पहुंचायी और जब उसे अपने बापकी इच्छाका पता लगा तब उसने १४ वीं अगस्तको शिवाजीको लिखा कि दरबारमें अपने पिता और भाई बन्धुओं सहित आओ। बादमें तुम्हें पंचहजारीका मनसब मिल जायगा और शाहजी मुगल सरदारोंमें उसी स्थान पायेंगे जिसपर वे पहले थे। ३० वीं नवम्बरको मुरादने शाहजीको सीधा पत्र भेजा कि शिवाजीने तुम्हारे छोड़नेके लिये बादशाहसे जो प्रार्थना की थी वह

रही। इसलिये उन्होंने इस विषयमें बिलकुल ढील डाल कर दी और अहमदनगर तथा जुन्नारके इलाकोंसे देशमुखी उगाहनेकी प्रार्थना की। बादशाहने उत्तर दिया कि दरबारमें इस विषयपर विचार किया जायगा। शिवाजीको इस विषयमें जो कुछ कहना हो वह अपने वकील द्वारा कहला भेजे।

इस समय शिवाजी और बीजापुर-दरबार दोनोंकी कठिन परिस्थिति थी। बीजापुरके आदिलशाह शाहजीका वध नहीं करवा सकते थे क्योंकि ऐसा करनेसे शिवाजी अपने पितृ-वधका बदला लेनेके लिये मुगल सम्राट् शाहजहांकी शरण लेते। इस लिये बीजापुर-दरबारने शाहजीको केवल नजरबन्द रखनेमें ही अपनी कुशल समझी। जब उधर बीजापुर-दरबारके सामने यह जटिल समस्या थी तब शिवाजीके राज्यविस्तारकी भी बाढ रुक गयी। क्योंकि यदि अब वे अपने राज्य विस्तारकी चेष्टा करते और बीजापुर राज्यके प्रान्तोंपर धावा मारते तो आदिलशाह उनके पिताका वध किये बिना कदापि नहीं रहता। ऐसी दशामें शिवाजीको चुपचाप बैठे रहनेके सिवाय और कुछ चारा ही न था पर उन्होंने बनावटी शान्तिका पाठ पढा ही न था। वे सच्ची शान्तिके उत्सुक थे। उनके चरित्रसे ज्ञात होता है कि वे ऐसी शान्ति कदापि नहीं चाहते थे जो देश और जातिको अकर्मण्य बना दे, जिससे राष्ट्र और समाज अपना स्वरूप भूल जाय, जिससे एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्रका गुलाम बन जाय, शान्तिके बहाने कोई जाति अथवा देश अपनी खोयी हुई स्वतन्त्रताको प्राप्त

करनेकी चेष्टा न करे, शान्तिकी पिपासामें सदैव गुलामीका बाना पहने रहे और सदैव परतन्त्रताकी बेड़ीमें ही जकड़ा रहे। ऐसी शान्ति अत्यन्त हानिकारक सिद्ध हुई है। यह शान्ति नहीं, मृत्यु होती है। ऐसी बनावटी शान्ति अनेक राष्ट्र और देशोंके लिये, समाधिस्थलका काम देती है। न मालूम ऐसी शान्तिकी मिथ्या मृगतृष्णामें प्रभुकी इस मङ्गल सृष्टिमें कितनेही राष्ट्र और देश मृत्युके गढ़ेमें गिर चुके हैं जो फिर कभी नहीं निकले। शिवाजी मृत्युके गढ़ेमें गिरानेवाली शान्तिसे सदैव कोसों भागते थे। अतएव शिवाजीके समान क्रियाशील मनुष्य कभी ठाला बैठने वाला नहीं होता है। जिस मन्त्रके साधनमें शिवाजी लगे हुए थे उसका साधन उन्होंने कभी नहीं छोड़ा। वे जानते थे कि स्वराज्य-स्थापनामें उन्हें अपनी प्रतिद्वन्द्वी प्रबल शक्तिसे सामना करना पड़ेगा। इसलिये उन्होंने अपने पिताकी नजरबन्दीकी दशामें भी अपनी शक्ति बढ़ायी। बीजापुर-दरबार भी शाहजीको नजरबन्द करके ही चुप नहीं रहा। उसने कुछ मराठे सरदारों और जागीरदारोंको अपने हाथमें कर रखा था। उन्हींके द्वारा अब उसने शिवाजीकी बढ़ती हुई शक्तिको रोकना चाहा। आदिलशाह चाहता था कि शिवाजीको किसी प्रकारसे पकड़ लिया जाय अथवा मरवा दिया जाय जिससे सदैवके लिये यह बखेड़ा दूर हो जाय। परन्तु शिवाजीको पकड़ना कुछ हंसी खेल न था क्योंकि परमात्मा उनके हाथसे बड़े बड़े कार्य्य कराने थे।

आदिलशाहने बाजी श्यामराज नामक एक सरदारको शिवा

ओंके पकड़नेके लिये बीजापुरसे भेजा। सितारेकी पश्चिम ओरसे जावलीके जागीरदार चन्द्रराव मोरेकी सहायतासे यह शिवाजी पर अचानक छापा मारनेके लिये पारघाटकी पहाड़ोंकी तलहटीमें आ जमा।

प्राय शिवाजी यहां आते रहते थे। यह बात बीजापुर-दरबारको मालूम थी। इसलिये बीजापुर-दरबारने बाजी श्यामराजको आज्ञा दे दी थी कि जीता या मरा शिवाजीको किसी तरह पकड़के लाओ और उसके साथ दस हजार सेना भी इस कार्यके लिये भेजी थी। शिवाजीके यहा भी गुप्तचरोंकी कमी न थी। उनके गुप्तचर बीजापुर राज्य और मुगल साम्राज्यके जासूसोंसे कम न थे। उनके गुप्तचरोंने बीजापुरके इस षड्यन्त्रकी खबर पहुँचायी। यह खबर पाते ही उन्होंने एक दिन अपने थोड़ेसे साथियोंको साथ लेकर अचानक बाजी श्यामराजपर धावा कर दिया और उसे भगाया।*

संवत् १७१० वि०सन् १६५३ ई०में बीजापुरमें चार वर्षतक नजरबन्द रहनेके पीछे शाहजीका छुटकारा हुआ। इसका कारण यह था कि आदिलशाहके कर्नाटक प्रान्तमें शाहजीकी अनुपस्थिति में गड़बड़ी मच गयी थी। आदिलशाहका कोई कर्मचारी ऐसा न

*—किसी किसी इतिहास-लेखकने यह भी लिखा है कि "रत्नपुरका रणदुल्लाखां और बाबवी बाजी और पाँचे पाच हजार सेना सहित शिवाजीको पकड़नेके लिये भेजे गये थे और वे वाईमें ठहरे थे। यहां शिवाजी और नारायणोंने अपनी दस हजार सेना लेकर उनपर दोनों ओरसे आक्रमण किया। परन्तु बहुमत इसके विरुद्ध है।

था जो उक्त प्रान्तका भली भाँति शासन करता, अतएव उसने शाहजीको बङ्गलोर जानेकी आज्ञा दी। जब वे कैदसे छूटकर बङ्गलोर पहुंचे तब उन्हें ज्ञात हुआ कि उनकी अनुपस्थितिमें जागीरका सब काम बिगड़ गया है। उनके पीछे बहुतसे सरदारोंने बलवा मचाया था और एक युद्धमें उनके ज्येष्ठ पुत्र सम्भाजी मारे गये थे। बीजापुर-दरबारने शाहजीको कांजेरीका किला और जागीर दी थी पर उनकी नजरबन्दीके समयमें एक मुसलमान, मुस्तफाखांने कांजेरीके किलेको बीजापुर-दरबारके सरदार अफजलखांकी सहायतासे दबा लिया और उसपर अपना स्वत्व बताया। जब शाहजीके ज्येष्ठ पुत्र सम्भाजीको यह खबर मिली तब वे उसका सामना करनेके लिये वहां गये। मुस्तफाखां भी लड़नेको तैयार हुआ। सम्भाजीने मुस्तफाखांको एक पत्र भेजा, जिसमें लिखा था कि इस झगड़े का निपटारा बीजापुर-दरबारसे करा लिया जाय। जब इस प्रकारसे सन्धिकी शर्तें हो रही थीं तब मुस्तफाखांने अपने तोपखानेके आदमियोंसे शाहजीकी सेनापर तोपें दागने और सम्भाजीको मारनेका इशारा कर दिया। इससे सम्भाजी मारे गये। कोई कोई इतिहास-लेखक यह भी कहते हैं कि इस युद्धमें अफजलखां उपस्थित था, उसकी आज्ञासे एक सैनिकने ताककर सम्भाजीपर गोली छोड़ी थी, जिससे उनका प्राणान्त हुआ। और जो कुछ हो, सम्भाजीके मरते ही समस्त सेनामें हलचल मच गयी। सेनाके पैर उखड़ गये

और वह रणस्थलसे भाग गयी। इससे मुस्तफाखांको क्षणिक विजय और लाभ प्राप्त हुए पर शीघ्र ही उसे अपनी इस विजय का फल भोगना पड़ा। जब शाहजी बङ्गलोर पहुंचे तब उन्होंने कांकेरीके दुर्गपर फिर आक्रमण किया। इस बार मुस्तफाखांसे विजय-लक्ष्मी रूठ गयी। उसकी हार हुई और कांकेरीका किला शाहजीके हाथ आया।

पाठक यह पहले ही सुन चुके हैं कि मधोलके बाजी घोर पाड़ेने शाहजीको पकड़वाया था। शाहजीके हृदयसे घोर पांडेकी यह करतूत दूर नहीं हुई। उनकी प्रबल इच्छा थी कि घोर पांडे को उसके नीच कर्मका मजा अवश्य कुछ न कुछ चखाया जाय। अतएव आदिलशाहकी नजरबन्दीसे छूटनेके पीछे उन्होंने अपने वीर पुत्र शिवाजीको लिखा—"जिस कामका तुमने बीड़ा उठाया है, उसको पूरा करनेके लिये सदा सावधान और तत् पर रहो। परमपिता परमेश्वरकी कृपासे तुम्हारे वैरियोंकी स्त्रियां सदैव रोवें और वे अपनी आखोंके गरम आंसुओंसे अपने हृदय तर करें। परमात्मा तुम्हारी मनोकामना पूर्ण करे और दिन दूनी और रात चौगुनी तुम्हारी उन्नति हो। शिवा, अगर तू मेरा पुत्र है तो बाजी घोर पांडेसे बदला लेनेमें मत चूकना। तुम जानते ही हो कि उसके कारण मुझे कितना कष्ट भोगना पड़ा है।"*

शिवाजी अपने पिताका यह पत्र पाकर अत्यन्त प्रसन्न हुए।

*—शिव दिग्विजय बखर।

उन्होंने बाजी घोर पांडेसे मौका मिलते ही अपने पिताके अपमानका बदला लेनेकी ठान ली। आदिलशाह भी यह अच्छे तरहसे जानता था कि शाहजी अपने अपमानका बाजी घोरपोर से बदला लिये बिना नहीं रहेंगे। इसलिये उसने भी बाजी घर पांडेकी रक्षाका प्रबन्ध कर दिया। जिस प्रकार अर्जुन-नन्द अभिमन्युके मारे जानेपर पाण्डववीर अर्जुनकी प्रतिज्ञासे भयभीत होकर दुर्योधनने जयद्रथकी रक्षाकी चेष्टा की थी वैसे ही आदिलशाहने भी शाहजीके स्वभावसे परिचित होनेके कारण बाजी घोर पांडेकी भी रक्षा की थी। पर शिवाजीने अपने पिताके अपमानका किस प्रकार बदला लिया था आगे चलकर पाठकोंको यह ज्ञात होगा।

छठा परिच्छेद

जावली और प्रतापगढ़ ।

"अरि छोटो गनिये नहीं, जासों होत बिगार ।
तृन समूहको छिनकमें, जारत तनक अगार ॥"

मालूम होता है कि शाहजीके कैदसे छूटनेके पीछे शिवाजी का उद्देश्य यही था कि वे नीराके दक्षिण और कृष्णाके उत्तरमें रहनेवाले जागीरदारोंको उसी प्रकार मिला लें जिस प्रकार उन्होंने आसपासके जागीरदारोंको सङ्गठित कर अपना अनुयायी बना लिया था। लेकिन शिवाजीका यह प्रस्ताव जागीरदारोंको स्वीकृत नहीं था। इन जागीरदारोंमें सबसे अधिक सबल चन्द्रराव मोरे था। पाठक पीछे पढ़ चुके हैं कि चन्द्रराव मोरेने बीजापुर-दरबारके भेजे हुए बाजी श्यामराज और उनकी अधीनस्थ सेनाको अपने यहां छिपाया था, जिसका उद्देश्य शिवाजीके वध करनेका था। अन्तको यह तमाम भेद शिवाजीपर खुल गया। शिवाजीने देखा कि मुधोलके बाजी घोर पांडेने शाहजीको धोखेसे कैद किया था और चन्द्रराव मोरेने उनके घातक बाजी श्यामराजको अपने यहां स्थान दिया था। इसलिये उन्होंने इन मराठा सरदारोंको अपना अनुयायी बनानेकी चेष्टा की। सबसे पहले उन्होंने चन्द्रराव मोरेके इस क्रियात्मक अनवरत वैरकी

अवहेलना करनेमें अधिक भलाई नहीं समझी। क्योंकि शिवाजी-की उन्नतिके मार्गमें चन्द्रराव मोरे बहुत भारी कण्टक था।

सितारा जिलेके उत्तर-पश्चिममें जावली नामक एक गांव है। ईसाकी सोलहवीं शताब्दीमें बीजापुर राज्यके संस्थापक यूसुफ आदिलशाहने पारसोजी बाजीराव मोरेको जावली जागीर स्वरूप दिया था, इसके साथ ही वंशपरम्परागतके लिये उक्त मोरे सरदारको "चन्द्रराव"की उपाधि दी थी। बाजीराव मोरेसे लेकर आठ पीढ़ीतक उसके वंशधरोंके पास जावली रहा था। उसकी आठवीं पीढ़ीमें कृष्णाजी बाजी मोरे संवत् १७०६ वि० सन् १६५२ ई० में हुआ। यह शिवाजीका समकालीन था। वंशपरम्परागत "चन्द्रराव" उपाधिके कारण यह भी चन्द्रराव मोरे कहलाता था। मोरे सरदारोंकी सेना भी शिवाजीके मावलेसैनिकोंकी ही भांति थी। उनकी सेनामें भी बारह हजार पहाड़ी वीर योद्धा थे। कृष्णा और वारण नदियोंके मध्य भागके ऊपरके प्रान्त उसके अधीन थे। कितने ही पहाड़ी किलोंपर उसका आधिपत्य था जिनमेंसे रायगढ़ मुख्य था। यह बीजापुर राज्यके अधीन जागीरदार था। शिवाजीने कई बार चेष्टा की कि मोरे सरदार बीजापुर राज्यको जो कर देता है वह बीजापुर राज्यको न देकर हमें दे अथवा बीजापुर राज्यको न देकर समस्त कर अपने पास रखे और जब कभी हमपर आपत्ति आवे तब हमें पांच हजार सैन्य दलकी सहायता दे। पर मोरे सरदारने यह स्वीकार नहीं किया।* शिवाजीने

*—देखो पारसनीस इतिहास संग्रह ऐ० प० फुट० भाग १—पृष्ठ ९९।

चाहा था कि मोरे सरदारसे झगड़ा न करके, सीधी तरह से ही काम निकाला जाय, इसलिये वे स्वयं उक्त सरदारके पास गये। उन्होंने उससे धर्म और देशके लिये बीजापुर-दरबारसे अलग होने तथा स्वराज्य-स्थापनमें सहायता देनेके लिये अपील की। पर शिवाजीकी यह अपील उसके बहरे कानोंपर पड़ी। उसने शिवाजीसे भेंट करते समय इस बातकी चेष्टा की कि "जिस तरह बाजी घोर पांड़ेने शाहजीको पकड़ा था वैसे ही शिवाजीको पकड़कर आदिलशाहके हाथमें दे दिया जाय।" शिवाजी, शाहजी की भांति असावधान न थे, वे किसी न किसी तरहसे मोरे सरदार के चङ्गुलमेंसे बच आये। उन्होंने देखा कि "लातोंके देव, बातों से नहीं मानते हैं" इसलिये उन्होंने अपने दो सरदार एक ब्राह्मण राघो बल्लाल अत्रे और एक मराठा, सम्भाजी कावजीको उसके पास भेजा। उक्त दोनों सरदारोंने उससे शिवाजीके साथमें सम्मिलित होने तथा अपनी लड़की*का शिवाजीसे विवाह कर देनेके लिये कहा। इसके साथ ही दोनों सरदारोंने उसे यह भी चेतावनी दी थी कि "यदि तुम शिवाजीकी इन बातोंको न मानोगे तो इसका फल तुम्हें भोगना पड़ेगा।" मोरे सरदार शिवाजीके

---

*—इस घटनाके पहले जब शिवाजी छोटी अवस्थामें अपनी माता जीजाबाईके साथ महाबालेश्वर गये थे तब जीजाबाईने मोरे सरदारकी तीन खूबसूरत लड़कियोंको देखा और उससे एक लड़कीका शिवाजीके साथ विवाह करनेके लिये कहा। मोरे सरदार अपने वंशको भोंसले वंशसे ऊंचा समझता था। इसलिये जीजाबाईके इस प्रस्तावको अंगीकार नहीं किया। देखो रावबहादुर दत्तात्रेय बलवन्त कृत महाबालेश्वर।

दूतोंको बातोंसे टालता रहा और कुछ भी ठीक जवाब न दिया। जब शिवाजीको मोरेकी टालबाजीका समाचार मिला तो वे अपनी सेना लेकर पुरन्दर जानेके बहानेसे महाबालेश्वर पहुंच गये। अब राघो बल्लाल अत्रेने मोरे सरदारसे एक बार और भेंट करनेके लिये प्रार्थना की। उसने भी शिवाजीके दूतोंसे मिलना स्वीकार कर लिया। भेंटके समय राघो बल्लाल और मोरे सरदारमें परस्पर कुछ कहासुनी हो गयी। इसपर दोनोंने अपनी अपनी तलवारें निकाल लीं और राघोजी बल्लाल अत्रे तथा सम्भाजी कावजीने मोरे और उसके भाई सूर्यरावको मार डाला। मोरे सरदारको मारकर ये लोग जङ्गलमें भाग गये और शिवाजीके पास पहुंचे। शिवाजीने अपने सरदारोंके इस कार्य्यको पसन्द नहीं किया। मोरे सरदारके मारे जानेके विषयमें कई इतिहास-लेखकोंमें मतभेद है। सभासद चिटनीस आदिके बखर शिवदिग्विजय आदिमें लिखा हुआ है कि शिवाजीने अपने ब्राह्मण दूत रघुनाथ बल्लालके साथ अपनी सेनाके चुने हुए सबा सौ आदमी भेजे थे। कृष्णाजी अनन्त सभासदने सन् १६६४ ई० में शिवाजीका इतिहास लिखा था। उसमें लिखा है कि शिवाजीने रघुनाथ बल्लालसे कहा था कि "जबतक चन्द्रराव नहीं मारा जायगा, तबतक राज्यकी प्राप्ति नहीं हो सकती है, सिवाय तुम्हारे इस कामको और कोई नहीं कर सकता है।" इस वाक्यका उल्लेख करके प्रोफेसर यदुनाथ सरकारने लिखा है कि यह पुस्तक शिवाजीके दरबारीने शिवाजीके प्यारे पुत्रकी

आज्ञासे लिखी थी, उसको सचाईका पता दूसरोंसे अधिक था। इस घटनाके पीछे मलहार रामरावने, जो शिवाजीके वंश धरोंका वंशपरम्परागत मन्त्री था, सभासदके समान ही इस विषयका उल्लेख किया है। रायगढ़ किलेके बखरमें लिखा है कि रघुनाथने हनमन्तरावको धोखेसे मार डाला और शिवाजी रघुनाथके इस कार्य्यसे अत्यन्त प्रसन्न हुए। लगभग बीस वर्ष हुए कि रायबहादुर पारसनीस महोदयको सितारेके वर्त्तमान राजघरानेके कागजपत्रोंमें "महाबालेश्वर" नामक बखर मिला था। उसमें मोरे सरदारकी हत्याका उल्लेख करते हुए लिखा है कि शिवाजीसे भेंटके समय मोरे सरदारने अच्छा व्यव हार नहीं किया था। प्रोफेसर सरकारने मिस्टर किनकेडके इस मतका खण्डन किया है कि मोरे शिवाजीको कैद करना चाहता था और शिवाजी मोरेकी मृत्युके सम्बन्धमें निर्दोष थे। श्रीयुक्त रानडे महोदयने "मराठोंका उत्थान" "Rise of the Maratha Power में इस विषयमें लिखा है -

"The vengeance was swift and sure but the deed was none the less to be censured, seeing that it was open and avowed treachery in return for what had only been a suspected connivance at treachery The Maharatha chroniclers themselves attempt no defence of murder of Chandra Rao and the only exterminating feature of the incident is that

Shivaji's agents planned and carried it out on their own responsibility though afterwards Shivaji accepted the result without much misgiving"
इसका भावार्थ यह है कि चन्द्रराव मोरेका वध करके जो बदला लिया गया था, वह शीघ्रगामी और निश्चित था। किंतु इसमें सन्देह नहीं कि यह कार्य निन्दायोग्य था। क्योंकि चन्द्रराव मोरेपर केवल यह सन्देह था कि उसने विश्वासघातकी अवहेलना की और इस अवहेलनाके बदलेमें पूर्व प्रस्तावित विश्वासघात खुल्लमखुल्ला किया गया। मराठा इतिहास लेखकों ने भी शिवाजीके इस कार्यका अर्थात् चन्द्ररावके इस वधका समर्थन नहीं किया है। केवल इस कलङ्कको दूर करनेवाला एक कारण मिलता है कि शिवाजीके सरदारोंने अपने उत्तरदायित्व पर चन्द्रराव मोरेको मार डाला था, किन्तु पीछे शिवाजीने बिना किसी सङ्कोचके इस कार्यको स्वीकार कर लिया था।"

जिहेद शाकावलीमें मोरे-वधके सम्बन्धमें लिखा हुआ है कि शिवाजीका मोरोंसे बहुत दिनोंतक युद्ध हुआ था। चन्द्रराव मोरेके मारे जानेपर ही मोरे लोग शान्त नहीं हुए थे। इस शाकावलीमें इस विषयका कुछ भी उल्लेख नहीं है कि शिवाजीने विश्वासघातसे मोरोंपर विजय प्राप्त की थी। इसमें केवल इतना ही वर्णन है कि शिवाजीका मोरोंसे युद्ध हुआ था। दिसम्बर १६५५ अर्थात् पौष शाकाब्द १५७७ से सन् १६५६ ई० के अप्रैल या मई अर्थात् वैशाख शाकाब्द १५७८ तक यह युद्ध रहा था।

पौष शाकाब्द १५७७ में शिवाजीने जिद्दे व देशमुख बयडल और शिलम्पकर तथा अन्य मावले सरदारोंकी सहायतासे जावलीपर विजय प्राप्त की थी। यदि इसके आगे इस शाकावलीमें इतिहास संग्रह सूप लेख १,२६ संख्यामें वर्णित वृत्तान्तसे मिलता जुलता ही वृत्तान्त दिया हुआ है कि शिवाजीने चन्द्ररावके पास अन्तिम सूचना भेजी और महाबालेश्वरसे निस्सान घाटकी ओर शिवाजी गये थे। वहांसे उन्होंने जावलीपर एक मास तक घेरा डाला था। आगे उक्त शाकावलीमें लिखा हुआ है कि जावली-पतनके पीछे चन्द्रराव मोरे रायरीको भाग गये थे। मोरेने रायरी शिवाजीके आदमियोंसे छीन ली थी और उन्होंने शिवाजीसे तीन महीने तक युद्ध किया था। अन्तमें मोरे सरदार शिवाजीके अधीन हुए। इस प्रकार इतिहास-लेखकोंका चन्द्रराव मोरेके वधके सम्बन्धमें मतभेद है। पर अन्तमें सबका निचोड़ यही है कि मोरे सरदार मारा गया। चाहे शिवाजीने उसका विश्वास घातसे वध किया हो, चाहे वह युद्धमें मारा गया हो।*

मोरे-वधके सम्बन्धमें प्रोफेसर यदुनाथ सरकारने लिखा है कि पहले दिन शिवाजीके दूतने मोरे सरदारसे विवाह-सम्बन्धी कई शर्तें पेश कीं और शिवाजीके दूत रघुनाथने यह देखकर कि चन्द्रराव मोरे शराब पीनेका आदी है और बहुत असावधान रहता है, शिवाजीको सेना सहित वहां आने और चन्द्ररावके मारे

*—N S. Tekakhave कृत The life of Shivaji maharaj के आधारपर।

आने तक कहीं आसपासके स्थानमें छिपे रहनेके लिये लिख दिया। इसके उपरान्त दूसरी बार रघुनाथ बल्लालने चन्द्रराव मोरेसे उसके निजू कमरेमें भेंट की और वहीं अकस्मात् उसके पेटमें कटारी घुसेड़ दी और छोटे भाई सूर्यरावको भी घायल कर दिया, जिसको एक मराठा सिपाहीने वहां भेजा था। घातक लोग भयभीत और घबड़ाये हुए पहरेदारोंके बीचमेंसे चले गये। मोरे सरदारके द्वाररक्षकोंने उनका पीछा भी किया पर वे जङ्गल में आ छिपे। शिवाजी पहलेसे ही अपनी सेना सहित तीर्थयात्रा के बहाने महाबालेश्वर आ पहुंचे थे। मोरेके मारे जानेका समाचार सुनकर वहां वे पहुंच गये और जावलीपर आक्रमण किया। मोरेकी सेनापतिविहीन सेनाने छ घण्टेतक जावलीके लिये शिवाजीकी सेनाका सामना किया, परन्तु अन्तमें परास्त हुई। चन्द्रराव मोरेके दो पुत्र तथा परिवारके समस्त व्यक्ति उनकी कैदमें आ गये; पर उसके मन्त्री हनमन्तराव मोरेने पड़ोसके एक गांवमें कुछ सेना रखकर शिवाजीकी नवीन विजयमें रुकावट उपस्थित की। शिवाजीने देखा कि जबतक हनमन्तराव नहीं मारा जायगा तबतक जावलीसे कांटा नहीं हट सकेगा। बस यह सोचकर उन्होंने सम्भाजी कावजी नामक अपने एक कर्मचारीको हनमन्तरावके पास अपना सन्देश कहलानेके लिये भेजा जिसने संवत् १७१२ वि० सन् १६५५ ई० के मयदूयर मासमें हनमन्तरावको मार डाला और जावलीका समस्त राज्य शिवाजीके हाथमें आ गया। "तारीखे शिवाजी" में लिखा हुआ है

कि चन्द्रराव मोरेके दोनों लड़कोंको शिवाजीने पूनामें पहुंचाया और वहीं मरवा डाला। चिटनीसने भी यही बात लिखी है। "शिवदिग्विजय" का भी ऐसा ही मत है। सभासद्ने अपने बखरमें चन्द्रराव मोरेके पुत्रोंके मारे जानेके विषयमें कुछ नहीं लिखा है।

शिवाजीके जावली आक्रमणके विषयमें किसी किसी इतिहास-लेखकका यह भी मत है कि "घरका भेदी लङ्का ढावे"। अर्थात् चन्द्रराव मोरेके कुछ भाईबन्द भी शिवाजीसे मिल गये थे। वे लोग मोरे सरदारसे प्रसन्न न थे। इनका कारण यह था कि उक्त सरदारने अपने भाइयोंकी जागीरके गांव किसी बातसे अप्रसन्न होकर ज़ब्त कर लिये थे। घरकी फूट बुरी होती है। लङ्काधिपति महाशक्तिशाली रावणके भ्राता विभीषणने और वानरपति बालिके भ्राता सुग्रीवने रघुकुल शिरोमणि भगवान श्रीरामचन्द्रजीकी शरण ली थी, इसी प्रकार मोरे सरदारके भाइयोंने अपने अपमानका बदला लेनेकी ठानी। इन्होंने विभीषण-नीति ग्रहण करना उचित समझा। विभीषणकी भांति वे लोग भी, शिवाजीकी सेनामें जावलीपर आक्रमण करनेके लिये सम्मिलित हो गये। घरकी फूट बहुत बुरी होती है। मोरे सरदारके मन्त्री हनमन्तराव और लड़कोंने जावलीकी रक्षाके लिये बहुत कुछ प्रयत्न किया। उन्होंने शिवाजीकी सेनाका सामना करनेमें अच्छी वीरता प्रकट की पर अन्तमें वे हार गये। जैसा ऊपर लिखा जा चुका है कि मन्त्री हनमन्तराव युद्धमें मारा

गया।* मोरे सरदारके दोनों पुत्र बाजीराव और कृष्णराव शिवाजीकी कैदमें आये। मोरे घरानेके जो मनुष्य पकड़े गये थे, वे बाजीराव और कृष्णराव सहित पुरन्दर भेज दिये गये। शिवाजीकी इच्छा मोरेके दोनों पुत्रोंको जीवन निर्वाहके लिये जागीर देनेकी थी। वे इस विषयकी व्यवस्था करना ही चाहते थे कि उन्हें पता लगा कि बाजीराव और कृष्णराव बीजापुर-दरबारसे गुप्तरूपसे शिवाजीसे बदला लेनेके लिये पत्र-व्यवहार करते हैं। पीछे उनकी चिट्ठी-पत्री पकड़ी गयी, दोनों भाई शिवाजीके सामने लाये गये। शिवाजीने उनको मरवा दिया।

शिवाजीमें एक विशेष गुण था कि वे पराजित शत्रु और उसकी सेनाके साथ जहाँतक हो सकता था वहाँतक बहुत अच्छा व्यवहार करते थे। उनके इस व्यवहारको देखकर मोरे सरदारकी सेनाके बहुतसे आदमी शिवाजीकी सेनामें चले आये जिनकी सहायतासे उन्होंने समस्त जावली राज्यको हस्तगत कर लिया। इस विजयमें वसोटाका दुर्ग भी उनके हाथ लगा। जावलीमें उन्हें मोरे सरदारोंके समयका बहुतसा गड़ा हुआ धन भी मिला जिससे उन्होंने पुराने महाबालेश्वरके मन्दिरका जीर्णोद्धार किया और बाकीके धनसे उन्होंने जावलीसे दो मीलकी दूरीपर प्रतापगढ़ किला बनवाया और उस किलेमें

* ग्रांटडफने लिखा है कि कृष्णराव चन्द्ररावका भाई था। वह बड़ा दगाखोर था। उसको शिवाजीने उसी चौकीमें मार डाला था। प्रोफेसर सरकारने लिखा है कि मोरे बंधुके [illegible] बीजापुर [illegible] महाराज सर्वसंहारी शिवाजीपर चढ़ाई की थी। [illegible] १६५६ [illegible] शिवाजीने युद्ध किया था।

बहुतसा धन लगाकर अपनी इष्टदेवी भवानीका मन्दिर बनवाया। क्योंकि तुलजापुरकी भवानीका मन्दिर उन्हें बहुत दूर पड़ता था।

प्रतापगढ़में शिवाजीने भवानीका मन्दिर क्यों बनवाया, इस विषयमें एक दन्तकथा प्रसिद्ध है। उस समय भोंसले परिवारमें यह नियम सदासे चला आता था कि वे लोग प्रति वर्ष तुलजापुरमें भवानीके दर्शनार्थ आया करते थे।

इस समय शिवाजीके शत्रु और प्रतिद्वन्द्वियोंकी कमी न थी और तुलजापुरकी भवानीका मन्दिर उनके निवासस्थानसे बहुत दूर था। तुलजापुर जानेमें व्यर्थ ही शत्रुओंसे झगड़े उठाने पड़ते अतएव यह सोचकर उन्होंने रायरीमें भवानीका मन्दिर बनवाना चाहा था और समस्त भारतवर्षमें उन्होंने भवानीकी सङ्गमर-मरकी प्रतिमा ढूंढनेके लिये आदमी भेजे थे कि इसी बीचमें शिवाजीको स्वप्न हुआ कि जिसमें भवानीने उनसे रायरीमें मन्दिर न बनाकर महाबालेश्वरके निकट मन्दिर बनानेकी इच्छा प्रकट की थी। इस स्वप्नमें शिवाजीको ऐसा प्रतीत हुआ कि भवानीने उन्हें भोराप्पा नामक पहाड़ीके ढूंढनेकी आज्ञा दी थी और कहा कि वहीं मेरे लिये मन्दिर बनवाओ और अपने लिये एक किला बनवाओ। स्वप्न देखनेके दूसरे दिन उन्होंने उक्त पहाड़ी स्थान ढूंढनेकी चेष्टा की तो एक ग्वालेने महाबालेश्वरके पश्चिम-में १२ मीलकी दूरीपर उक्त पहाड़ी स्थान बतलाया। अतएव वहां वे गये और उन्हें वहां एक शिवलिङ्ग मिला। बस वहीं, शिवाजीने भवानीका मन्दिर बनवाया और रायरीके लिये जो,

संगमरमरकी प्रतिमा बनवाई थी वही प्रतिमा उसमें स्थापित की। मन्दिरके निकट ही शिवाजीकी आज्ञासे उनके सेवक मोरो पिङ्गलेने एक दुर्ग बनवाया जो प्रतापगढ दुर्गके नामसे प्रसिद्ध हुआ। इस किलेसे शिवाजीका अत्यन्त उपकार हुआ। किसी किसी इतिहास-लेखकका यह भी मत है कि शिवाजीने अफजलखांके वधके पीछे यह किला बनवाया और भवानीकी मूर्त्ति स्थापित की जिसके विषयमें आगे लिखा जायगा।

यहां प्रसङ्गवश मोरो त्रिम्बक पिङ्गलेके विषयमें भी कुछ लिखना अनुचित न होगा। मोरो पिङ्गले भी एक वीर योद्धा था। जिस समय प्रथम बार शिवाजीके पिता, राजा शाहजीने कर्नाटकपर चढ़ाई की थी उस समय मोरो पिङ्गले भी उनके साथ कर्नाटक गया था। वहां उसने अत्यन्त वीरता प्रकट की थी। उसने अपने पिताके निरीक्षणमें सम्पत्तिशास्त्र और युद्ध शास्त्र दोनोंमें शिक्षा प्राप्त की थी। शाहजीकी विपत्तिके समयमें उसने शाहजीकी अच्छी सेवा की थी। संवत् १७१० वि० सन् १६५३ ई० में वह कर्नाटकसे महाराष्ट्रको लौटा और शिवाजीकी अधीनतामें काम करने लगा और थोड़े ही दिनोंमें उसने अपनी क्रियाशीलता और कार्यकुशलतासे शिवाजीके हृदयमें उच्च स्थान प्राप्त कर लिया।

आपली हस्तगत होने तथा प्रतापगढ़के किलेके निर्माण होनेसे शिवाजीका राज्य और भी सुदृढ हुआ। अब शिवाजीकी विजयपताका समस्त पहाड़ी दुर्गोंपर फहराने लगी। शिवतर

घाटीमें मोरेके आश्रयमें एक ब्राह्मण बाबाजी कोइदेव * रहता था। शिवतरघाटीमें उक्त ब्राह्मणने अपनी स्वतन्त्र सत्ता स्थापित कर ली और शिवाजीकी अधीनता स्वीकार नहीं की। आसपासके गाँवोंमें लूटमार मचाकर उत्पात मचाना आरम्भ कर दिया। शिवाजीकी आज्ञासे यह पकड़ा गया। यह ब्राह्मण था, इसलिये शिवाजीने उसका वध तो नहीं करवाया, पर इस अपराधमें उसकी आखें निकलवा लीं। इस कार्यसे शिवाजीका समस्त आवली प्रान्तमें आतङ्क छा गया।

उन्होंने आवली जागीरके पड़ोसमें जो छोटे छोटे मराठा सरदार थे उनको अपने अधीन कर लिया पर "रोहिड़ा" किलेका दुर्गाध्यक्ष देशमुख नामक सरदार उनके विरुद्ध था। वह बीजापुरसे मिला हुआ था। शिवाजीने "रोहिड़ा" दुर्गपर रातके समय अचानक धावा किया। दुर्गवासी प्राणपणसे गढ़की रक्षा करने लगे। दुर्गमें सैनिकोंको उत्तेजना देनेवाला बाजी प्रभु देश पांडे नामक एक सरदार था। दोनों ओरसे विजय लक्ष्मीको प्राप्त करनेके लिये भरपूर चेष्टा होने लगी। अन्तमें दुर्गाध्यक्ष देशमुख मारा गया। दुर्गाध्यक्षके मारे जानेसे सेनामें हलचल मच गयी परन्तु वीर बाजीप्रभु तनिक भी विचलित नहीं हुआ। वह अपने स्थानपर अटल पर्वतके समान डटा रहा और अपने साथियोंको शिवाजीकी सेनासे लड़नेके लिये उत्साहित

---

* सभासदने इस व्यक्तिका नाम बाबी बीडबीराव लिखा है। एक बखरमें दादाजी महादेव नाम मिलता है।

करता रहा जिससे दुर्गाध्यक्षकी सेना, शिवाजीकी सेनाके आगे बढ़नेसे रोकने लगी। शिवाजीकी सेनाको रोकते रोकते उसका शरीर क्षत विक्षत हो गया परन्तु वह हताश न हुआ। शिवाजीकी सेना समुद्रके समान उमड़ी हुई चली आ रही थी और बाजीप्रभु पर्वतके समान, शिवाजीकी समुद्रवत् सेनाकी टक्करें झेल रहा था। उसके अनेक योद्धा भूतलशायी हो गये पर वह पहलेके समान ही अपनी सेनाको उत्तेजित करता रहा। बिना विराम और विश्रामके स्वामीभक्त बाजीप्रभु शिवाजी जैसे पराक्रमीकी प्रबल सेनाके सामनेसे पीछे नहीं हटा। "हतोवा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महिम्" इस सिद्धान्तके अनुसार वह अपने स्थानपर डटा रहा।

दूरसे खड़े हुए शिवाजी यह सब दृश्य देख रहे थे। वे उसके विलक्षण धैर्य और प्रभुभक्तिको देखकर चकित स्तम्भित हुए। दूरदर्शी और गुणग्राहक शिवाजीने सोचा कि यदि ऐसा साहसी और वीर पुरुष हमको मिल जाय तो बड़ा काम निकलेगा। शिवाजी वीर थे, इसलिये वे वीरताका आदर करना जानते थे। उन्होंने सोचा कि ऐसे वीर पुरुषके प्राण-हरण करनेकी अपेक्षा उसको अपनाने, उससे मित्रता करनेमें विशेष लाभ है। यह विचारकर शिवाजीने एक दूतको बाजीप्रभुके पास भेजा। दूतने जाकर उसे समझाया कि अब आत्मसमर्पण करनेमें ही लाभ है। दुर्गकी रक्षा होती नहीं दिखलायी पड़ती है। बाजीप्रभुने भी शिवाजीकी उदारता देखकर आत्मसमर्पण कर दिया। आगे

चलकर पाठक देखेंगे कि बाजीप्रभु देशपांडेने आजीवन शिवाजी की अत्यन्त धीरतापूर्वक सेवा की थी। अस्तु, जब शिवाजी इस प्रकारसे कई मराठे सरदारोंको पराजित कर चुके तब फिर आगे किसी मराठे सरदारको उनके विरुद्ध उठनेका साहस नहीं हुआ। किसीने भी उनसे प्रतिद्वन्द्विता और वैर विरोध करनेमें अपना मङ्गल नहीं समझा। इन विषयोंसे शिवाजीकी शक्ति प्रतापगढ़के दक्षिण भागसे लेकर पन्हालतक विस्तृत हो गयी थी। कोंकणका दक्षिणीय भाग जिसमें पालविस् तथा सुर्वो वंशीय जागीरदार थे, शिवाजीके अधिकारमें आ गया था। सुर्वो सरदारकी जागीरका प्रबन्ध उसका मन्त्री शिरके करता था। जब शिवाजीने उसकी जागीरपर आक्रमण किया तब सुर्वो सरदार भाग गया पर उसके मन्त्रीने आत्मसमर्पण कर दिया। शिवाजीने उस मन्त्रीको अपने यहां रख लिया। रत्नगिरिका आधा पूर्वीय भाग शिवाजीके हस्तगत हो गया पर राजापुर और कुछ बन्दरगाह, संवत् १७१७ वि० सन् १६६० ई० तक बीजापुर-दरबारके हाथमें रहे थे।

शिवाजी जैसे अद्वितीय वीर और योद्धा थे वैसे ही सङ्गठन कर्त्ता थे। जावली विजयके पीछे उन्होंने अपने राज्यका प्रबंध-सम्बन्धी संगठन किया। उन्होंने मोरो त्र्यम्बक पिङ्गलेको पेशवा नियत किया। इससे पहले पेशवापदपर श्यामराज नीलकण्ठ रजेकर था। बालकृष्ण पन्तके स्थानपर नीलोसोन देवको मजुमदार अर्थात् एकाउन्टेण्ट जनरल किया। नेताजी

पालकरकोसराय-ए-नौबत अर्थात् शस्त्रशालाके निरीक्षक पद पर नियुक्त किया। इसके अतिरिक्त दो और भी नये सुरनीस (पत्र-व्यवहाराध्यक्ष) तथा वकाय नवीस (सम्वाददाता) की सृष्टि की। इन दोनों पदोंमेंसे पहलेपर आयजी सोनदेवको और दूसरेपर गङ्गाजी मङ्गाजीको नियुक्त किया। इस समय उनकी सेनामें दस हजार घुड़सवार थे जिनमेंसे सात हजार सवारों को राज्यकी ओरसे घोड़े मिले थे और बाकीके घुड़सवार अपने पाससे घोड़े रखते थे। पैदल सेनामें दस हजार मावले थे जिन का सेनाध्यक्ष यसाजी कङ्क था। इस समय शिवाजीके पास नये और पुराने सब मिलाकर चालीस किले थे। संवत् १७१४ वि० सन् १६५७ ई०में उनके ज्येष्ठ पुत्र सम्भाजीका जन्म हुआ।

एक ओर मुगल साम्राज्य और दूसरी ओर बीजापुर राज्य था। इनके बीचमें रहकर शिवाजी अपनी शक्ति बढ़ा रहे थे। शिवाजीकी नयी नयी विजयोंको देखकर बीजापुर-दरबारको इस का अच्छी तरहसे पता लग गया कि उनकी उच्च और महत्वा कांक्षाओं और इच्छाओंमें शाहजीका कुछ भी हाथ नहीं है

अपनी शक्तिको और भी दृढ़ किया। पहाड़ी किलोंके हस्तगत होनेसे उनकी शक्ति और भी सुदृढ़ हो गयी थी। प्रताप गढ़के किले बनवानेसे बीजापुर राज्यके अधिपति आदिलशाह तथा अन्य दरबारियोंके पेटमें और भी चूहे कूदने लगे। और बीजापुर दरबारने यह बात ठान ली थी कि किसी न किसी प्रकारसे शिवाजीको नेस्तनाबूद किये बिना अपनी भलाई नहीं है। अतएव शिवाजीको मटियामेट करनेके लिये बीजापुर-दरबारने कौन कौनसे उपाय किये सो आगे यथास्थान पाठक पढ़ेंगे।

सातवां परिच्छेद

मुगलोंसे सबन्ध।

" चतुरता सिखला मत व्यर्थ तू
रसिक हैं रणके हम जन्मसे
रुक नहीं सकते सुनके कभी
वचन-वत्सल वत्स ! लड़े बिना "

शिवाजी सामयिक राजनीतिके पूरे जानकार थे, सदैव अपनी शक्तिके अनुसार कार्य्य करते थे। उन्होंने अपने प्रारम्भिक उद्योगके समय बीजापुर-दरबार और मुगल साम्राज्य दोनोंसे एक साथ मुठभेड़ करना उचित नहीं समझा था। उन्हें इस बातका पूरा पता था कि मुगल साम्राज्यसे टक्कर लेने योग्य उनकी शक्ति नहीं हुई है। वे यह भी जानते थे कि मुगल साम्राज्य और बीजापुर-दरबार दोनोंके मिलनेसे उनको सफलता प्राप्त होनी कठिन थी। साथ ही उन्हें इसका भी पता था कि दिल्लीके मुसल्मान बादशाह सदैवसे दक्षिणके मुसल्मानी राज्योंको मटियामेट करनेकी चिन्तामें हैं। क्योंकि दिल्लीके सिंहासनका महत्व स्थिर रखनेके लिये यह आवश्यक था कि गोलकुण्डा और बीजापुर दोनों राज्यकर देते रहें।

चूंकि शाहजहांने इन राज्योंपर कई बार चढ़ाई की थी और उन्हें किसी कदर हानि भी पहुंचायी थी कुछ दिनोंतक तो ये राज्य एकत्रित होकर मुगल साम्राज्यके मुकाबिलेमें डटे रहे, किन्तु बहुत दिनोंतक वे अपनी स्वाधीनताकी रक्षा करनेमें समर्थ न हो सके। क्योंकि संवत् १६९३ वि० सन् १६३६ ई०के मई मासमें शाहजहांके तीसरा पुत्र, औरङ्गजेब प्रथम बार दक्षिण के सूबेदार हुए। उस समय औरङ्गजेबकी अवस्था लगभग १८ वर्षकी थी, उन्होंने दक्षिणमें आते ही शक्तिहीन निजामशाहीका मटियामेट किया। संवत् १६८० वि० सन् १६४३ ई० में औरङ्गजेब अपना पद त्यागकर चले गये। अपने प्रथम शासनमें उन्होंने केवल बागलाना प्रदेशको जीता था। इस समय दक्षिण में मुगल साम्राज्य, दौलताबाद, तेलिङ्गाना, खानदेश और बरार तक पहुंच गया था। पश्चिमीय घाटका भी कुछ भाग मुगलोंने हथिया लिया था।

संवत १७१२ वि० सन् १६५५ ई०में कन्दहारपर विजय प्राप्त करनेके पीछे औरङ्गजेब दूसरी बार दक्षिणका सूबेदार हुए। उनकी यह बड़ी इच्छा थी कि दक्षिणके दोनों मुसलमानी राज्य मुगल साम्राज्यके सूबे किये जायें। औरङ्गजेबकी इस इच्छा का एक कारण यह भी प्रतीत होता है कि इस समय उक्त दोनों राज्योंमें हिन्दुओंका बड़ा जोर था। केवल ऊंचे ऊंचे पदपर ही हिन्दू न थे बल्कि यह कहना चाहिये कि दक्षिणके मुसलमानी राज्योंकी बागडोर हिन्दुओंके हाथमें थी। औरङ्गजेबको हिन्दुओंसे

सातवां परिच्छेद

मुगलोंसे सम्बन्ध।

" चतुरता सिखला मत व्यर्थ तू
रसिक हैं रणके हम जन्मसे
रुक नहीं सकते सुनके कभी
वचन सत्सख अस्त्र लड़े बिना "

शिवाजी सामयिक राजनीतिके पूरे जानकार थे, सदैव अपनी शक्तिके अनुसार कार्य्य करते थे। उन्होंने अपने प्रारम्भिक उद्योगके समय बीजापुर-दरबार और मुगल साम्राज्य दोनोंसे एक साथ मुठभेड़ करना उचित नहीं समझा था। उन्हें इस बातका पूरा पता था कि मुगल साम्राज्यसे टक्कर लेने योग्य उनकी शक्ति नहीं हुई है। वे यह भी जानते थे कि मुगल साम्राज्य और बीजापुर दरबार दोनोंके मिलनसे उनको सफलता प्राप्त होनी कठिन थी। साथ ही उन्हें इसका भी पता था कि दिल्लीके मुसल्मान बादशाह सदैवसे दक्षिणके मुसल्मानी राज्योंको मटियामेट करनेकी चिन्तामें हैं। क्योंकि दिल्लीके सिंहासनका महत्व स्थिर रखनेके लिये यह आवश्यक था कि गोलकुण्डा और बीजापुर दोनों राज्यकर देते रहें।

उसने अपने बेटे शाहजादा मुहम्मद सुलतानके अधीन सेनाका एक भाग गोलकुण्डापर धावा करनेके लिये पहले ही भेज दिया था जो ७ वीं जनवरीको मादेर पहुंच गया। वहांसे शाहजादा मुहम्मद सुलतान १० वीं जनवरीको चला और हैदराबाद पर आक्रमण किया। * स्वयं औरंगजेब दौलताबादमें अपनी सेना सहित १५ दिनतक रहे थे, क्योंकि उन्हें भय था कि कहीं बीजापुरका आदिलशाह भी गोलकुण्डासे मिल न जाय। वास्तवमें पहले बीजापुर-दरबारने अफजलखांके अधीन कुछ सेना दक्षिणमें मुगल साम्राज्यकी सीमापर भेजी थी पर पीछे सम्राट् शाहजहांके कोपके कारण उन्होंने अपनी सेनाको वापिस बुला लिया। औरङ्गजेब ३० वीं जनवरीतक दौलताबादमें रहा था और वहांसे शीघ्र चलकर अपने बेटेकी सेनामें सम्मिलित हो गया। इस समय शिवाजीने भी दक्षिणमें मुगल साम्राज्यकी सीमापर कुछ बखेड़ा मचाया था, पर औरंगजबने इस समय उस ओर कुछ ध्यान नहीं दिया। क्योंकि इस समय उसको गोलकुण्डापर विजय प्राप्त करनेकी धुन थी। दूसरा कारण उसका शिवाजीकी ओर ध्यान न देनेका यह भी हो सकता था कि कहीं शिवाजी

*—किसी किसी इतिहास-लेखकने यह भी लिखा है कि औरङ्गजेबकी गोलकुण्डापर धोखेसे चढ़ाई की थी। चढ़ाई करनेसे पहले कुतुबशाहको यह लिखा था कि शाहजादा मुहम्मद सुलतान अपनी शादी करनेके लिये अपने चाचा बङ्गालके सूबेदार शुजाके पास जाता है। मैंने यहांपर प्रोफेसर यदुनाथ सरकार लिखित औरंगजेब नामक पुस्तकके प्रथम भाग पेज २२८ से २३१ तकके आधारपर गोलकुण्डाकी चढ़ाईका हाल लिखा है।

मीरजुमलाकी सम्पत्तिका कुछ भी अंश जप्त मत करो। १८ वीं दिसम्बरको औरङ्गजेबके पास ये चिट्ठियां पहुंच गयीं। उन्होंने शीघ्र ही कुतुबशाहको मीरजुमलाके परिवारके लोगोंको छोड़नेके लिये लिखा। साथ ही यह भी लिख दिया कि इनके पास जो कुछ सम्पत्ति हो वह भी उनके साथ मुगल दरबारमें इस पत्रवाहकके साथ भेज दो। कुतुबशाहने औरङ्गजेब और शाहजहांकी इन चिट्ठियोंपर कुछ ध्यान नहीं दिया। १२ वीं दिसम्बरको शाहजहांने मीरजुमलाके लड़के मुहम्मद अमीनके कैद किये जानेका समाचार सुनकर फिर एक चिट्ठी कुतुबशाहको मीरजुमलाके परिवारके लोगोंको छुड़ानेके लिये भजी। शाहजहांने समझा था कि उसके पत्रको पाते ही कुतुबशाह मीरजुमलाके परिवारके लोगोंको छोड़ देगा। पर साथ ही उन्होंने औरङ्गजेबको २४ वीं दिसम्बरको एक और चिट्ठी भेजी जिसमें लिखा था कि यदि कुतुबशाहने मीरजुमलाके परिवारके लोगोंको अमीतक न छोड़ा हो तो गोलकुण्डापर चढ़ाई कर देना। ये दोनों चिट्ठियां ७ वीं जनवरी सन् १६५६ ई० को औरङ्गजेबके पास पहुंचीं। बस फिर क्या था, औरंगजेबने गोलकुण्डापर चढ़ाई कर दी। उन्होंने सम्राट् शाहजहांका २४ वीं दिसम्बरवाला पत्र कुतुबशाहके पास भेजना ठीक नहीं समझा। कुतुबशाहने सम्राट्के ता० ३ दिसम्बरवाले पहले पत्रकी अमीतक अवज्ञा की है और मीरजुमलाके परिवारको नहीं छोड़ा है, इस बहाने औरंगजेबने गोलकुण्डापर आक्रमण करनेका विचार किया।

उसने अपने बेटे शाहजादा मुहम्मद सुलतानके अधीन सेनाका एक भाग गोलकुण्डापर धावा करनेके लिये पहले ही भेज दिया था जो ७ वीं जनवरीको नादेर पहुंच गया। वहांसे शाहजादा मुहम्मद सुलतान १० वीं जनवरीको चला और हैदराबाद पर आक्रमण किया।* स्वयं औरंगजेब दौलताबादमें अपनी सेना सहित १५ दिनतक रहे थे, क्योंकि उन्हें भय था कि कहीं बीजापुरका आदिलशाह भी गोलकुण्डासे मिल न जाय। वास्तवमें पहले बीजापुर-दरबारने अफजलखांके अधीन कुछ सेना दक्षिणमें मुगल साम्राज्यकी सीमापर भेजी थी पर पीछे सम्राट् शाहजहांके कोपके कारण उन्होंने अपनी सेनाको वापिस बुला लिया। औरङ्गजेब ३० वीं जनवरीतक दौलताबादमें रहा था और वहांसे शीघ्र चलकर अपने बेटेकी सेनामें सम्मिलित हो गया। इस समय शिवाजीने भी दक्षिणमें मुगल साम्राज्यकी सीमापर कुछ बखेड़ा मचाया था, पर औरंगजेबने इस समय उस ओर कुछ ध्यान नहीं दिया। क्योंकि इस समय उसको गोलकुण्डापर विजय प्राप्त करनेकी धुन थी। दूसरा कारण उसका शिवाजीकी ओर ध्यान न देनेका यह भी हो सकता था कि कहीं शिवाजी

---

*—किसी किसी इतिहास-लेखकने यह भी लिखा है कि औरङ्गजेबने गोलकुण्डापर धोखेसे चढ़ाई की थी। चढ़ाई करनेसे पहले कुतुबशाहको यह लिखा था कि शाहजादा मुहम्मद सुलतान अपनी शादी करनेके लिये अपने चाचा बङ्गालके सूबेदार शुजाके पास जाता है। मैंने यहांपर प्रोफेसर यदुनाथ सरकार लिखित औरङ्गजेब नामक पुस्तकके प्रथम भाग पेज २२८ से २२९ तकके आधारपर गोलकुण्डाकी चढ़ाईका हाल लिखा है।

उससे बिगड़कर कुतुबशाहसे न मिल जायँ। अस्तु जो कुछ हो औरंगजेबने इस समय शिवाजीके कार्योंकी ओर ध्यान नहीं दिया।

जब मुहम्मद सुल्तान गोलकुण्डाके राज्यमें पहुँच गया तब कुतुबशाहके पास सम्राट् शाहजहाँका २४ वीं दिसम्बर वाला दूसरा पत्र भी पहुँच गया। इस पत्रके पाते ही उसने मीरजुमला के लड़के मुहम्मद अमीन और उसके परिवारके सब लोगों को छोड़ दिया। साथ ही सम्राट्की सेवामें एक पत्र क्षमा प्रार्थना विषयक भेजा। परन्तु औरङ्गज़ेबने कुतुबशाहकी क्षमा प्रार्थनापर कुछ ध्यान नहीं दिया। हैदराबादसे २४ मीलकी दूरीपर मुहम्मद अमीन औरंगज़ेबसे मिला। परन्तु औरंगज़ेबकी तो कोपदृष्टि गोलकुण्डा राज्यपर लगी हुई थी। उन्होंने कहा कि कुतुबशाहने मुहम्मद अमीनको छोड़ दिया है तो इससे क्या, अमीतक उसकी सम्पत्ति नहीं लौटायी है। इस बहानेसे ही गोलकुँडा राज्यकी राजधानी हैदराबादपर आक्रमण किया। कुतुबशाह सब तरहसे निराश होकर राजधानी हैदराबादसे अपने बालबच्चे और कुछ बहुमूल्य सम्पत्ति साथ लेकर गोलकुण्डाके किलेमें चला गया और वह अपने तीन उच्च कर्मचारियों के अधीन १० हजार सैनिक मुगल सेनाका सामना करनेके लिये छोड़ गया। कुतुबशाहकी सेना मुगल सेनाके सामने ठहर न सकी और न इसकी सेनामें इतना दम था कि कुछ दिनोंतक मुगल सेनासे लड़ती।

कुतुबशाहकी सेनाका कुछ अच्छा प्रबन्ध भी न था। बिना किसी विघ्न-बाधाके मुगल सेनाने हैदराबादमें प्रवेश किया। कुतुबशाहका एक मन्त्री मुहम्मद सुल्तानके पास पहुंचा और उसे अनेक बहुमूल्य मणिमाणिक्य भेंट किये, सन्धिके लिये प्रार्थना की पर कुछ फल न हुआ। औरंगजेबने गोलकुण्डाके किलेको घेरा जहां कुतुबशाह अपने बालबच्चों सहित छिपा हुआ था, अन्तमें किसी प्रकारसे अपना वश चलता न देखकर कुतुबशाह सन्धि करनेके लिये लाचार हुआ। पर औरंगजेबकी इच्छा सन्धि करनेकी न थी, उन्होंने अपने बाप सम्राट् शाहजहांको लिखा—"हैदराबाद जैसे खूबसूरत शहरकी मैं क्या तारीफ करूं? यहां पानी और आबादीकी कमी नहीं है। यहांकी हवा भी अच्छी है। यहां खेती कसरतसे होती है जो मैंने यहां आते समय रास्ते में देखी थी। हरएक मुकामकी हद पार करनेके पीछे मैंने बड़े बड़े तालाब, मीठे पानीके झरने और चश्मे बहते हुए देखे। हरएक गांवमें खेती लहरा रही थी जमीनका एक टुकड़ा भी ऐसा न था जहां कुछ बोया हुआ न हो, ऐसे जरखेज मुल्कको इस कमबख्तके हाथमें छोड़ना ठीक नहीं है। इसके आगे उन्होंने लिखा कि गोलकुण्डाकी बादशाहत बहुत फैली हुई है। उसमें खूब उपज होती है, उसमें जवाहरातकी खानें हैं।" इस प्रकार औरंगजेबने अपनी चिट्ठीमें गोलकुण्डाकी दौलतकी तसवीर खींचकर अन्तमें अपने पिता सम्राट् शाहजहांसे प्रार्थना की कि गोलकुण्डाका राज्य मुगल साम्राज्यमें मिला लिया जाय। गोल

उससे बिगड़कर कुतुबशाहसे न मिल जायँ। अस्तु जो कुछ हो औरंगजेबने इस समय शिवाजीके कार्योंकी ओर ध्यान नहीं दिया।

जब मुहम्मद सुल्तान गोलकुण्डाके राज्यमें पहुँच गया तब कुतुबशाहके पास सम्राट् शाहजहांका २४ वीं दिसम्बर वाला दूसरा पत्र भी पहुँच गया। इस पत्रके पाते ही उसने मीरजुमला-के लड़के मुहम्मद अमीन और उसके परिवारके सब लोगों को छोड़ दिया। साथ ही सम्राट्की सेवामें एक पत्र क्षमा प्रार्थना विषयक भेजा। परन्तु औरङ्गजेबने कुतुबशाहकी क्षमा प्रार्थनापर कुछ ध्यान नहीं दिया। हैदराबादसे २४ मीलकी दूरीपर मुहम्मद अमीन औरंगजेबसे मिला। परन्तु औरंगजेबकी तो कोपदृष्टि गोलकुण्डा राज्यपर लगी हुई थी। उन्होंने कहा कि कुतुबशाहने मुहम्मद अमीनको छोड़ दिया है तो इससे क्या, अभीतक उसको सम्पत्ति नहीं लौटायी है। इस बहानेसे ही गोलकुंडा राज्यकी राजधानी हैदराबादपर आक्रमण किया। कुतुबशाह सब तरहसे निराश होकर राजधानी हैदराबादसे अपने बाल्यच्चे और कुछ बहुमूल्य सम्पत्ति साथ लेकर गोलकुण्डाके किलेमें चला गया और वह अपने तीन उच्च कर्मचारियों के अधीन १० हजार सैनिक मुगल सेनाका सामना करनेके लिये छोड़ गया। कुतुबशाहकी सेना मुगल सेनाके सामने ठहर न सकी और न इसकी सेनामें इतना दम था कि कुछ दिनोंतक मुगल सेनासे लड़ती।

की बिना स्वीकृतिके नहीं बैठ सकता है और न उसका बीजापुर राज्यपर पैत्रिक अधिकार है और न उसने मुगल सम्राट्की स्वीकृति ली है। इसलिये उसे एकदम गद्दीसे उतार दिया जाय।" शाहजहाने औरङ्गजेबके इस कथनको स्वीकार कर लिया और उसे बीजापुरपर आक्रमण करनेकी आज्ञा दे दी। बीजापुरका नवयुवक आदिलशाह औरङ्गजेबकी कोपदृष्टि देख कर बहुत घबड़ाया और उसने अत्यन्त नम्रतापूर्वक सन्धिके लिये प्रार्थना की और साथ ही एक करोड़ रुपया भी क्षतिपूर्त्ति के लिये देनेको भी उसने स्वीकार किया पर औरङ्गजेबका असली मतलब तो बीजापुर राज्यको मटियामेट करना था फिर भला वे अली आदिलशाहकी सन्धिकी शर्तें कब स्वीकार करते। उन्होंने बीजापुरपर चढ़ाई कर दी। बीजापुर राज्यका भाग्य बिलकुल मेघाच्छन्न हो गया। अली आदिलशाहको अपना भविष्य अन्धकारमय प्रतीत होने लगा। क्योंकि मुगल सेनाके सामने बीजापुर राज्यकी सेना युद्ध-क्षेत्रमें टिक नहीं सकती थी। इतनेमें ही कुछ महीनोंके बाद संवत् १७१४ वि० (८ वीं सितम्बर सन् १६५७ ई०) में मुगल सम्राट् शाहजहाकी बीमारीने आदिलशाहके भाग्यको पलट दिया। बीजापुर राज्यपर इस समय विपत्तिकी जो घनघोर घटाएँ छा रही थीं वह कुछ कालके लिये दूर हुईं।

इतिहासप्रेमी पाठकोंसे यह बात छिपी नहीं है कि मुगल सम्राट् शाहजहांकी बीमारीके समयमें उनके चारों पुत्र-दाराशि

सम्राट्को भेंट किया। इस प्रकारसे उस समय गोलकुण्डेके बादशाहको औरङ्गज़ेबसे अपना पीछा छुड़ाना पड़ा।*

गोलकुण्डाका दमन करके औरङ्गज़ेबकी वक्रदृष्टि बीजापुर पर पड़ी क्योंकि गोलकुण्डा और बीजापुर दोनों ही राज्य उनकी आंखोंमें कांटेके समान खटकते थे। उस समय बीजापुरका बादशाह मुहम्मद आदिलशाह था, औरङ्गज़ेबको उससे बड़ी घृणा थी। उसका कारण यह था कि मुहम्मद आदिलशाहकी औरङ्गज़ेबके बड़े भाई दारासे मित्रता थी। दारा और औरङ्गज़ेब एक दूसरेके प्रतिद्वन्दी थे। नवम्बर सन् १६५८ ई० में मुहम्मद आदिलशाह मर गया, उसका उत्तराधिकारी उसका बेटा अली आदिलशाह हुआ। आदिलशाहकी अवस्था उस समय केवल उन्नीस वर्षकी थी। बीजापुरकी मसनद पर अली आदिलशाहके बैठते ही औरङ्गज़ेबकी मुहम्मद आदिलशाहसे जो पुरानी दुश्मनी थी उसका बदला औरङ्गज़ेबने उसके बेटे अली आदिलशाहसे लेनेकी ठानी। अलीआदिलके विषयमें उन्होंने अपने बाप शाहजहांको लिखा कि बीजापुर करद राज्य है। अली आदिलशाह मुहम्मद आदिलशाहका असली बेटा नहीं है। बीजापुरकी मसनदपर वह मुगल सम्राट

---

* कई इतिहास लेखकोंने लिखा है कि औरङ्गज़ेबने कुतुबशाहसे यह लिखा हुआ वचन ले लिया था कि वह औरङ्गज़ेबके लड़के अर्थात् अपने दामाद मुहम्मद सुलतानको अपना उत्तराधिकारी नियत करेगा। औरङ्गज़ेबने इस वचनको छिपा रखा था पीछे किसी प्रकारसे शाहजहांको इसका पता लग गया जिससे औरङ्गज़ेबकी दाल न गल सकी।

उन्हें बीजापुर राज्यके जीते हुए स्थानोंका स्वामी स्वीकार किया।* औरंगजेब नित्य प्रति शिवाजीको लिखा करते थे "कि हमारी नित्य ही जीत हो रही है। देखो, बेदार दुर्ग पहले कभी नहीं जीता गया था और कल्याणीपर किसी आदमीने स्वप्नमें फतेह हासिल नहीं की थी, एक दिनमें ही इनपर फतेह हासिल हो गयी है। और लोग इन मुकामोंको लेनेकी मुद्दततक कोशिश करते तो भी शायद कामयाबी नसीब न होती।" इस प्रकार औरंगजेब अपनी सफलताओंपर हर्षके मारे फूले नहीं समाते थे पर शिवाजीको इससे कुछ भी प्रसन्नता नहीं होती थी। क्योंकि उनका उद्देश्य अपने देशको

*—कई इतिहास-लेखकोंने लिखा है कि औरङ्गजेबने अपने पिता शाहजहांको तख्तसे उतारनेमें शिवाजीसे सहायता मांगी थी पर पितृभक्त शिवाजीने जिनका यह सिद्धान्त था कि "पिता स्वर्गः पिता धर्मः पिता हि परमं तपः" औरङ्गजेबको सहायता देना स्वीकार नहीं किया। ग्रान्ट डफ साहबने तो यहांतक लिखा है कि औरङ्गजेबने शिवाजीसे अपने पिता शाहजहांको तख्तसे उतारनेमें सहायतार्थ जो पत्र भेजा था, उसे कुत्तेकी पूंछमें बंधवा दिया था और पूनाके निवासियोंमें और ङ्गजेबको फजीहत करनेके लिये, उस कुत्तेको समस्त नगरमें घुमाया। औरङ्गजेब अपने इस अपमानको भूले नहीं और उन्होंने शिवाजीसे इसका बदला लेनेकी ठान ली थी, किन्तु राजसिंहासनके प्राप्त हो जानेपर भी बादशाह औरङ्गजेब अपनी इस प्रतिज्ञा अर्थात् शिवाजीसे अपने अपमानका बदला लेनेमें असमर्थ रहे। ऊपर ग्रान्ट डफके शब्दोंका भावार्थ दिया गया है, उसके असली शब्द ये हैं :—
Shivaji treated this letter with contempt. It was tied to the tail of a dog and exposed to the derision and laughter of the inhabitants of Poona. Aurangzeb did not forget the insult and declared that he would have his vengeance But although he succeeded in gaining the throne he was unable to carryout his vow

कोह, शाहशुजा, औरङ्गजेब और मुरादने भारतके राजसिंहासनके लिये आपसमें कैसे बखेड़े मचाये थे। अन्तमें औरङ्गजेब सबसे बड़े भाई दाराशिकोहको निष्ठुरतापूर्वक हत्या कराके, शुजाको पराजित करके अपने छोटे भाई मुरादबख्शको धोखेसे कैद करके और अपने पिता शाहजहांको तख्तसे उतार भारत राजसिंहासनपर विराजा। जैसा कि प्राकृतिक नियम है कि आपसके घरेलू झगड़ोंमें अड़ोसी पड़ोसियोंकी बन आती है वैसे ही उस समय सम्राट् शाहजहांके चारों पुत्रोंकी कृपासे दक्षिणके मुसलमानी राज्योंकी बन आयी। कुतुबशाह और आदिलशाह दोनोंने दारा और औरंगजेब आदिकी कलहसे बहुत लाभ उठाया और अपने राज्यका खोया हुआ कुछ हिस्सा भी प्राप्त करनेकी चेष्टा की।

शिवाजी जैसे चतुर और राजनीतिज्ञ व्यक्तिके लिये यह अवसर चुपचाप बैठनेका न था। उन्होंने औरंगजेबको उसी समय एक चिट्ठी भेजी, जिस समय औरंगजेबने पहली बार ही चढ़ाई की थी। महाराज शिवाजीने संवत् १७१४ वि० सन् १६५७ ई० में औरंगजेबको लिखा कि यदि मेरी प्रार्थनाएं स्वीकार की जावें तो मैं मुगल सेनाके साथ बीजापुरकी चढ़ाईपर चलनेको तैयार हूं, और मैंने बीजापुरके जो किले और स्थान जीत लिये हैं उन पर मेरा अधिकार समझा जाय। औरंगजेब भी जो अपने मतलबके पूरे ऐसे समयको चूकनेवाले न थे उन्होंने शिवाजीके पत्रका उत्तर बड़े ही उदार शब्दोंमें दिया, जिसमें

उनके हाथ लगे। कई मुसलमान इतिहास-लेखकोंने लिखा है कि शिवाजीका इस सफलताके कारण स्थानीय मुगल अफसरों की कमजोरी थी। जब औरंगजेबने इन सब उत्पातोंकी खबर सुनी तब तो वे बहुत नाराज हुए, उन्होंने वहांके थानेदारोंकी बहुत निन्दा की। नसीरीखां, इराजखां तथा और भी कई फौजी अफसरोंको तीन हजार घुड़सवारोंके सहित जानेकी आज्ञा दी। राव करण औरङ्गाबादसे बिदर जा रहा था, उसे भी वहीं लौट आनेकी आज्ञा दी। शाइस्ताखाको अपनी सेनामेंसे एक हजार आदमी वहां भेजनेका हुक्म मिला। औरंगजेबने शिवाजी के राज्यको लूटने तथा अहमदनगरसे मराठोंको निकालनेका हुक्म दिया था। इसी बीचमें अहमदनगर किलेसे मुल्तफतखांने चामरगुण्डामें मीनाजीको पराजित किया। इसपर भी कुछ दिनों तक मराठे लोग परगनामें इधर उधर गश्त लगाते रहे और फिर चामरगुण्डासे चल दिये।

यह ऊपर लिखा जा चुका है कि शिवाजीने जुन्नार जिलेमें लूटमार मचायी थी। मुगल सेना जुन्नार जिलेमें देरीसे पहुंची, इसलिये शिवाजीको वहां मैदान साफ मिला। राव करण शाइस्ताखांके वहां पहुंचनेसे पहले ही वे जो कुछ माल हाथ लगा, लेकर चल दिये। मुगल सेना न तो उनका दमन ही कर सकी और न उन्हें पकड़ सकी। इसपर मजा यह कि वे जुन्नार शहरके आसपासके स्थानोंमें ही घूमते रहे और जब उन्होंने देखा कि मुगल सेना पीछा कर रही है तब वे अहमदनगर पहुंचे और

पराधीनताकी बेड़ीसे छुड़ाना था। विदेशियोंके चङ्गुलमें अपनी मातृभूमिको छुड़ानेकी उन्हें प्रबल इच्छा थी। इस समय उनके लिये बीजापुर और मुगल दरबार दोनों एकसे ही थे। शिवाजी सामयिक परिस्थितिको देखकर चलते थे। उन्होंने सोचा कि बीजापुर-दरबार और मुगल दरबारके पारस्परिक युद्धका कहीं यह परिणाम न हो कि अन्तमें ये दोनों शक्तियां मिल बैठें। इसलिये उन्होंने मुगल साम्राज्यका जो भाग दक्षिणमें था, उसकी दक्षिण पश्चिम सीमापर आक्रमण कर दिया। उन्होंने इस कार्यके लिये दो मरहट्टा सरदार भेजे, जिनमें एकका नाम मिनाजी भोंसले था, उसकी अधीनतामें तीन हजार घोड़े थे। दूसरे सरदारका नाम काशी था, इन दोनों सरदारोंने भीमा नदीको पार किया और चामरगुण्डा और रैसीन जिलेमें मुगलोंके जो गांव थे, उन्हें लूटना शुरू कर दिया। इन्होंने अहमदनगर तक लूट मार की। उन दिनों अहमदनगर दक्षिणमें मुगल साम्राज्यका विशेष विख्यात स्थान था।

जब मिनाजी अहमदनगरपर चढ़ाई कर रहे थे तब शिवाजीने भी उत्तरमें जुन्नारपर आक्रमण किया। एक रातको रस्सेकी सीढ़ियां लगाकर, जुन्नारकी शहरपनाह फलांग कर जुन्नार शहरमें दाखिल हुए। शहरके पहरेपर जो रखवारे थे उन्होंने उनका सामना किया, वे सबके सब मारे गये। इस चढ़ाईमें शिवाजीके हाथ तीन लाख हुण लगे, इतना नकद धन प्राप्त होनेके अतिरिक्त दो सौ घोड़े तथा कुछ जवाहरात और कपड़े आदि भी

थी और कहीं कहीं वर्षा बड़े जोरसे प्रारम्भ हो गयी थी इसलिये शिवाजी अपने स्थानपर लौट आये और मुगल कर्मचारी अपने स्थानपर लौटकर वहींसे सीमाकी रखवारी करने लगे। मुगल और मराठोंके अपने अपने स्थानपर लौट जानेपर अहमद् नगरने फिर कुछ दिनोंके लिये शान्ति ग्रहण की। जैसा ऊपर लिखा जा चुका है जब इस घटनाके पीछे मुगल सम्राट् शाहजहां बीमार पड़े थे और उनके चारों पुत्रोंमें राज्यसिंहासनके लिये युद्ध मचा, उस समय औरङ्गजेबने बीजापुर-दरबारसे सन्धि कर ली। जिस समय औरङ्गजेब राज्यसिंहासनके लिये अपने भाइ योंसे युद्ध कर रहे थे उस समय उन्होंने दक्षिण पश्चिमकी सीमा की पूरी चौकसी करनेके लिये अपने सरदारोंको लिखा था। बीजापुर-दरबारकी औरङ्गजेबसे सन्धि हो जानेपर शिवाजीने मुगल सेनासे लड़ना व्यर्थ समझा। उन्होंने नसीरीखांको सन्धिके लिये लिखा। जिसके उत्तरमें नसीरीखांने लिखा — "सन्धिमें तुम क्या चाहते हो, अपना कोई विश्वासपात्र कारकुन भेज दो।" इसपर शिवाजीने रघुनाथ बल्लाल करडेको खांके पास अपनी शर्तोंके सम्बन्धमें भेजा। उसने स्वयं औरङ्गजेबसे सन्धि विषयक बातचीत की। यह वह समय था कि जब औरङ्गजेब उत्तर भारतकी ओर अपने भाइयोंसे लड़नेके लिये दक्षिणसे चलनेकी तैयारी कर रहे थे। इतने दिनोंमें वह शिवाजी की शक्तिसे भलीभांति परिचित हो गये थे। उन्होंने भी ऐसे विकट समयमें शिवाजी जैसे साहसी व्यक्तिसे मेल करनेमें ही

उसपर धावा कर दिया। मुगल सेना भी पीछा करती हुई वहां पहुंच गयी। मुगल और मराठोंकी मुठभेड़ हुई जिसमें स्वल्प मराठे मारे गये और घायल हुए, बाकी भाग गये। मुगल सैनिक भागते हुए मराठोंका पीछा नहीं कर सके क्योंकि मुगल सैनिकोंके घोड़े थके हुए थे।

इस अवसरपर औरङ्गजेबने मसीरीखां और दूसरे कर्मचारियोंको जो चिट्ठियां भेजी थीं उनसे ज्ञात होता है कि बादशाह औरङ्गजेब मराठोंकी इस करतूतपर आग बबूला हो गए थे। उनके क्रोधका पाठक केवल इतनेसे ही अनुमान करें कि उन्होंने अपने कर्मचारियोंको शिवाजीके समस्त राज्यको मटियामेट करनेके लिये लिखा था। उन्होंने लिखा था कि शिवाजीके दोनों स्थान पूना और चाकणको मटियामेट कर दिया जाय। इन स्थानोंके रहनेवाले आदमियोंको मारने अथवा गुलाम बनानेमें कुछ भी दया न दिखलायी जाय। जिन पटेल और किसानोंने दुश्मनसे पोशीदा साजिशकी हो उन्हें बिना किसी रहमके कत्ल किया जाय।" इतना लिखकर ही औरङ्गजेब चुप नहीं हुए, उन्होंने दक्षिण पश्चिमकी सीमापर मराठोंको रोकनेके लिये अच्छा प्रबन्ध किया। ऊपर लिखा जा चुका है कि मुगलोंने अहमदनगरमें मराठोंको पराजित भी किया था। औरङ्गजेबने अपने सैनिक कर्मचारियोंको मराठोंको पकड़ने और पीछा करनेके लिये भी लिखा पर किसी मुगल सैनिकने ऐसा नहीं किया। इसका कारण यह था कि वर्षा ऋतु आगयी

थी और कहीं कहीं वर्षा बड़े जोरसे प्रारम्भ हो गयी थी इसलिये शिवाजी अपने स्थानपर लौट आये और मुगल कर्मचारी अपने स्थानपर लौटकर वहाँसे सीमाकी रखवारी करने लगे। मुगल और मराठोंके अपने अपने स्थानपर लौट जानेपर अहमद नगरने फिर कुछ दिनोंके लिये शान्ति ग्रहण की। जैसा ऊपर लिखा जा चुका है जब इस घटनाके पीछे मुगल सम्राट् शाहजहाँ बीमार पड़े थे और उनके चारों पुत्रोंमें राज्यसिंहासनके लिये युद्ध मचा, उस समय औरङ्गजेबने बीजापुर-दरबारसे सन्धि कर ली। जिस समय औरङ्गजेब राज्यसिंहासनके लिये अपने भाइयोंसे युद्ध कर रहे थे उस समय उन्होंने दक्षिण पश्चिमकी सीमा की पूरी चौकसी करनेके लिये अपने सरदारोंको लिखा था। बीजापुर-दरबारकी औरङ्गजेबसे सन्धि हो जानेपर शिवाजीने मुगल सेनासे लड़ना व्यर्थ समझा। उन्होंने नसीरीखांको सन्धिके लिये लिखा। जिसके उत्तरमें नसीरीखांने लिखा — "सन्धिमें तुम क्या चाहते हो, अपना कोई विश्वासपात्र कारकुन भेज दो।" इसपर शिवाजीने रघुनाथ बल्लाल करडेको उसके पास अपनी शर्तोंके सम्बन्धमें भेजा। उसने स्वयं औरङ्गजेबसे सन्धि विषयक बातचीत की। यह वह समय था कि जब औरङ्गजेब उत्तर भारतकी ओर अपने भाइयोंसे लड़नेके लिये दक्षिणसे चलनेको तैयारी कर रहे थे। इतने दिनोंमें वह शिवाजी की शक्तिसे भलीभांति परिचित हो गये थे। उन्होंने भी ऐसे विकट समयमें शिवाजी जैसे साहसी व्यक्तिसे मेल करनेमें ही

अपना मङ्गल समझा। उन्होंने उत्तरमें शिवाजीको लिखा—"अगरचे तुम्हारे कसूर मुआफी लायक नहीं हैं मगर उनके लिये अब तुम अफसोस जाहिर करते हो और पछताते हो, इसलिये मैं तुम्हें मुआफ करता हूँ। तुमने यह तजवीज पेश की है कि अगर तुम्हारी पुरानी जागीर मय कोंकणकी रियासत और किलोंके तुम्हें लौटा दी जाय तो तुम, अपने दूत सोना पण्डित को मेरे दरबारमें रहनेके लिये भेज दोगे और साथ ही अपने किसी कर्मचारीके अधीन पांच सौ घुड़सवार मेरी खिदमत करने और शाही हद्दकी रखवारी करनेके लिये भेज दोगे। इसलिए तुम्हें सोनाजीके भेजनेके लिये हुक्म दिया जाता है, तुम्हारी दरखास्त मञ्जूर हो जायगी।"

औरङ्गजेबकी यह चालाकी थी, शिवाजीके सन्धि विषयक प्रस्तावपर बनावटी तौरसे प्रसन्न हुए पर उनकी भीतरी इच्छा कुछ और ही थी। उन्हें शिवाजीकी ओरसे बड़ा भारी वहम और डर था कि कहीं ऐसे समयमें शिवाजी दक्षिणमें मुगल साम्राज्यके जो स्थान हैं, उनपर आक्रमण न कर बैठे। उन्होंने दिसम्बर सन् १६५७ ई० में मीरजुमलाको लिखा था कि नसीरीखांके चले जानेसे यह जिला (अहमदनगर) बिल्कुल खाली पड़ा हुआ है, उसकी ओर तवज्जह रखो, क्योंकि कुत्तेका बच्चा* अपना मौका ढूंढ़ रहा है। औरङ्गजेबने आदिल शाहको भी एक चिट्ठी निम्नलिखित आशयकी भेजी थी कि

* [illegible]

इस मुल्ककी हिफाजत करो, शिवाजीको निकाल बाहर करो, जिसने इस मुल्कके कुछ किलोंको धोखेसे अपने कब्जेमें कर लिया है। अगर तुम्हें उसकी कुछ खिदमतें मञ्जूर हों तो उसे कर्णाटकमें कुछ जागीर दे दो, जिससे वह शाही अमलदारीसे दूर रहे और कुछ गड़बड़ न मचावे। पाठकोंने औरङ्गजेबकी इस चिट्ठीको पढ़कर सोच लिया होगा कि शिवाजी और औरङ्गजेब दोनों एक दूसरेके हृदयको भलीभांति पहचानते थे। इस समय दोनोंकी मित्रता और सन्धि अपना अपना मतलब गांठनेकी थी। उस समय समस्त भारतमें औरँगजेबका यदि कोई उपयुक्त प्रतिद्वन्द्वी था तो केवल एक शिवाजी थे। औरँगजेब और शिवाजी दोनों ही अपने उद्देश्य और स्वार्थ सिद्धिके लिये शतरञ्जकी चाल चल रहे थे। औरङ्गजेब समझते थे कि मैंने अबतक इस प्रकारकी चालोंसे अनेक लोगोंको वशमें कर लिया अथवा अपने प्रतिनिधियोंका दमन कर दिया है, वैसे ही शिवाजीको कर दूंगा। पर शिवाजी भी औरङ्गजेबकी चालोंसे अच्छी तरह परिचित थे। शिवाजी भी राजनीतिक शतरञ्जकी चालें अच्छी तरहसे जानते थे।

औरङ्गजेब दक्षिणसे चल दिये न तो उन्होंने चलते समय शिवाजीसे सन्धि की और न उन्हें क्षमा प्रदान की। इसके अतिरिक्त मुगलोंने पेडगांवमें एक पुराने और टूटे फूटे किलेकी मरम्मत की। उसमें कुछ सेना भी रखी, क्योंकि पूनापर आक्रमण करनेमें उस किलेसे सुविधा थी। पर शिवाजीको इसकी

कुछ भी चिन्ता नहीं हुई क्योंकि वे जानते थे कि जबतक औरङ्गजेब राज्यसिंहासनके लिये युद्धमें व्यस्त है तबतक इधर कुछ होनेका नहीं है।

"विनाशकाले विपरीत बुद्धि"—इस समय बीजापुर सरकारने एक और भी मूर्खताका काम किया। उसने अपने यहांसे सातसौ सैनिकोंको अलग कर दिया, जो पठान थे। इन पठान सैनिकोंने शिवाजीके यहां पहुंचकर उनके यहां नौकरी करनेकी प्रार्थना की। जब ये पठान सैनिक शिवाजीके यहां पहुंचे तब यहां इस बातपर बहुत विचार हुआ। इन सैनिकोंको अपने यहां रखना चाहिये या नहीं। एक दल तो पठान सैनिकोंके रखनेके पक्षमें था, दूसरा दल इसके विरुद्ध था, उसका कहना था कि बीजापुरसे पठान सैनिक किसी प्रकारका गुप्त भेद लेने अथवा धोखा देने न आये हों। न मालूम ये लोग किस समय विश्वासघात कर बैठें, बिना जांच किये हुए इनको नौकरी नहीं देना चाहिये। उस समय शिवाजीके यहां एक हवलदार था, उसका नाम था गोमाजी नायक पानसंबल। यह हवलदार शिवाजीके ननिहालसे जादवजीके यहां आया था। जिस समय शिवाजीकी माता जीजाबाईका विवाह हुआ था और वे पीहरसे अपना ससुराल आयी थीं। उस समयसे ही यह हवलदार उनके साथ था। उस हवलदारने जीजाबाईका अनेक दुःखसुखके समयमें साथ दिया था। यह अत्यन्त बुद्धिमान और स्वामीभक्त था। उसने शिवाजी महाराजसे हाथ जोड़कर पठानोंके बारेमें

सम्बन्धमें यह प्रार्थना की कि श्रीमान मालिक हैं, पठानोंको भरती करना न करना श्रीमान्‌की इच्छापर निर्भर हैं। पर ये पठान श्रीमान्‌की कीर्त्ति सुनकर यहां आये हैं। सो मेरी समझ में इन लोगोंको निराश करके पीछे लौटाना अच्छा नहीं है। महाराज! आपने स्वराज्य स्थापनका वृहत् कार्य आरम्भ किया है। श्रीमान् सोचिये कि बिना सब प्रकारके मनुष्योंकी सहायताके आप इस कामको कैसे पूरा कर सकते हैं? आपके अधीन सब जातियोंके मनुष्य रहने चाहिये। आपकी कृपादृष्टि सब जातियोंपर एकसी रहनी चाहिये। आपके राज्यमें किसी विशेष जाति और धर्मका पक्षपात नहीं होना चाहिये। यदि किसी जातिका कोई गुणी और विद्वान मनुष्य आवे तो उसे अवश्य अपने यहां रखना चाहिये। मेरी प्रार्थना है कि महाराज इस विषयमें पूरा विचारकर जो उचित समझें निर्णय करें।" हवलदारका यह कथन सुनकर उन्होंने पठानोंको अपने सामने बुलाया और उनसे कई प्रश्न पूछे तब उन्हें यह सन्तोष हुआ कि ये लोग विश्वासघात नहीं करेंगे। उन्हें अपने एक मराठा सरदार राघो बल्लाल अत्रेके अधीन रख दिया। आगे चलकर उनमेंसे कई मुसलमानोंने अत्यन्त योग्यतापूर्वक शिवाजी महाराजकी सेवा की थी।

आठवां परिच्छेद

अफजलखांका वध

"बोलो कृष्ण मुकुन्द मुरारे
त्रिभुवन विदित सब काम सारे
जरासन्ध फसदि प्रभु मारा
त्रिभुवन विदित काम सब सारा"

दक्षिणसे औरङ्गजेबके चले आनेके पीछे शिवाजीने समस्त कोकण प्रदेशपर अधिकार करनेकी ठानी। उस समय उन्हें जञ्जीराकी ओरसे विशेष खटका था, क्योंकि जञ्जीराके सिद्दी समय समयपर बड़ा उत्पात मचाते थे। जञ्जीरा राजगढ़से पश्चिमकी ओर बीस मीलकी दूरीपर था। मालिक अम्बरके समयमें जञ्जीरा, अहमदनगर राज्यके अधीन था। उसने वहां हबशियोंको रखा था। हबशी अपनेको पैगम्बरके वंशधर बतलाते थे और अपनेको सैयद् कहते थे, सैयद शब्द बिगड़ते बिगड़ते हो सिद्दी हो गया है। अहमदनगर राज्यके बरबाद होनेपर जञ्जीरा बीजापुर दरबारकी अधीनतामें आया। अरबी भाषामें जञ्जीरा टापूको कहते हैं। मराठे लोग जञ्जीराको जञ्जीरा कहने लगे, जो आजतक कहलाता है। बीजापुर दरबारने यहां पहलेके समान ही हबशी मल्लाह ही रखे थे पर उनकी देखरेख

और निरीक्षणके लिये अपने यहांके अफसरोंको नियुक्त किया। शिवाजीके समयमें वहां एक अफगान सूबेदार था जिसका नाम फतेह खाँ था। शिवाजीने पहले शाला, गोशाला और रायरी आदि कई किले फतेहखांके अधीनस्थ कर्मचारियोंसे ही छीने थे। उस समयसे ही फतेहखां बहुत चौकन्ना रहता था और उसके जासूस उस समयसे ही शिवाजीके कार्योंकी खबर रखते थे। शिवाजी भी फतेहखांकी ओरसे असावधान न थे। उन्होंने जो आठ सौ पठान सैनिक रखे थे उसकी बात ऊपर लिखी ही जा चुकी है, पर इसके अतिरिक्त उन्होंने और भी अपनी सेनाको चुस्त, दुरुस्त किया। जुन्नार और अहमदनगर की लूटसे उन्होंने अपनी घुड़सवार सेना और भी बढ़ायी। उन्होंने नेताजी पालकरके अधीन अपनी नयी सेना रखी। उन्होंने श्यामराज नीलकण्ठ राजेकरको फतेहखांसे लड़नेके लिये भेजा। श्यामराज, फतेहखांके सामने युद्धक्षेत्रमें टिक नहीं सका और पराजित हुआ। शिवाजी इससे निराश नहीं हुए। उन्होंने एक बहुत बड़ी सेना राघो बल्लाल अत्रेके अधीन जञ्जीरापर चढ़ाई करनेको भेजी और श्यामराज नीलकण्ठ राजेकरको पेशवाके पदसे हटा दिया और मोरो त्रिम्बल पिङ्गलेको पेशवा नियुक्त किया और और भी कई मनुष्योंको नये पदपर नियुक्त किया, जिनके विषयमें पीछे लिखा जा चुका है। फतेहखां भी जञ्जीराकी रक्षाके लिये लाचार हुआ। स्वयं शिवाजी महाराज, पिङ्गले और नेताजी पालकरने संवत् १७१६ वि० सन् १६६२ ई०में अपनी

ऋतु फतेहखांसे लड़ने योग्य सेना इकट्ठी करनेमें बिताये। इसी वर्षे शरदऋतुमें जञ्जीरापर चढ़ाई की और फतेहखांसे [illegible] छीन लिया।

दक्षिणसे औरङ्गजेबके चले जानेपर बीजापुरके नवयुवक बादशाह अली आदिलशाहके मनसे कुछ कालके लिये मुगलोंकी ओरसे खटका दूर हुआ और फतेहखांसे श्यामराजके पराजित होनेपर आदिलशाहकी ओर भी हिम्मत बढ़ी। उन्होंने एक बार ही शिवाजीको सदैवके लिये पीस डालनेकी सोची। उस समय बीजापुर दरबारने अपने पुराने मन्त्री खां मुहम्मदको केवल इस मिथ्या भ्रममें पड़कर मरवा डाला कि वह औरङ्गजेबसे मिला हुआ है। उसके पीछे खवासखां नामक जो मन्त्री हुआ, वह एक योग्य शासक था। उस समय अली आदिलशाहकी अवस्था केवल २०,२२ वर्षकी थी। उनकी माता बड़ी साहिबा उन दिनों बीजापुर राज्यकी बागडोर अपने हाथमें थामे हुए थीं। बड़ी साहिबा बड़ी चतुर महिला थीं, उन्होंने बीजापुर राज्यका शासन मक्का जानेके पश्च संवत् १७१७ वि० सन् १६६० ई० तक सम्भाले था। दक्षिणसे मुगलोंके चले जाने और फतेहखांसे [illegible] शिवाजीसे हार जानेसे बड़ी साहिबाने अपने पुत्र अली आ[illegible] होकर बीजापुर दरबारके सब सरदारोंकी एक सभा करके [illegible] दी, जिसमें शिवाजीके मटियामेट करनेके लिये [illegible] अली आदिलशाहने प्रत्येक सरदारसे इस कार्यको [illegible] कहा और बीजापुरके समस्त सरदारोंने सहर्ष इस [illegible]

देनेके लिये वचन दिया। पर यह कहनेकी किसीकी हिम्मत नहीं हुई कि हम शिवाजीको जीता अथवा मरा हुआ पकड़कर ला सकते हैं। क्योंकि शिवाजीके नामसे ही सबके होश ठिकाने हो जाते थे। शिवाजीको दण्ड देनेसे पहले बीजापुर दरबारने एक बार फिर शाहजीसे अपने "बागी पुत्र" शिवाजीको समझानेकी आज्ञा दी। शाहजीने इसका यही उत्तर दिया कि मेरा बेटा, मेरे कहनेमें नहीं है। दरबार जो उचित समझे वह करे। अत एव बीजापुर दरबारने ही शिवाजीको दण्ड देनेकी सोची और इस कामका भार अफजलखांने अपने ऊपर लिया।

अफजलखां बीजापुरके आदिलशाहके मामाके पुत्र और बीजापुर दरबारमें प्रथम श्रेणीके सरदार थे। पाठक पहले पढ़ चुके हैं कि शिवाजीके पिता शाहजीकी जागीरमें इसी अफजलखांकी बातोंमें आकर मुस्तफाखांने उत्पात मचाया था जिसमें शिवाजी के बड़े भाई सम्भाजी मारे गये थे। अफजलखां, वाईके भी सूबेदार थे और जावली प्रदेशके चारों ओरसे परिचित थे।*

---

* अफजलखांके साथ कितनी सेना थी इस विषयमें इतिहास-लेखकोंका पारस्परिक मतभेद है। ग्रांटडफ साहबने पांच हजार घुड़सवार और सात हजार पैदल
फजलखांसे मे लिखी है "तारीख—ए—शिवाजी"में दस हजार लिखी है। समस्त हिन्दू
बारह हजार लिखी है। अफजलखांका नाम अबदुल्ला भी था। किसी २
पत्रसे इस इतिहास-लेखकने यह भी लिखा है कि बीजापुर बादशाहकी राजमाताने ही अफ
किया और जलखांसे [illegible] शिवाजीको पकड़नेको [illegible] की थी। किसी
इतिहास लेखकने यह भी लिखा है कि अफजलखां जातिका भटियारा था
जिनके लिये पुरुषार्थसे ही उसने इतनी उन्नति की थी कि वह बीजापुर दरबारमें
रक्षाके लिये ऊंचे अमीरोंमें पहुंच गया था। चिटनीसके लिखनेके अनुसार शिवाजी
और नवाजी न तो अफजलखांकी सेनाकी संख्या तीस हजारतक पहुंचती है, चिमगुप

आदिलशाहने खुशीसे शिवाजीके दमन करनेके लिये, अफजल खांकी सेवा स्वीकार की और बारह हजार घुड़सवार* सेना उसकी सहायताके लिये दी। गोला, बारूद और रसद आदि सब प्रकारसे सेना सुसज्जित कर दी और अफजलखांसे कहा कि जैसे बने वैसे शिवाजीको जीता हुआ अथवा मरा हुआ लाना। चलते समय भरे दरबारमें अफजलखांने अत्यन्त गर्वके साथ प्रतिज्ञा की कि "मैं शिवाजीको न सिर्फ ज़िन्दा ही गिरफ्तार करके लाऊंगा बल्कि उसे उसके घोड़ेपर ही बीजापुर चलनेके लिये मजबूर करूंगा।"

अफजलखांकी यह प्रतिज्ञा सुनकर समस्त दरबार प्रसन्न हुआ। पर उनके चलते समय बड़े अपशकुन हुए। बीजापुरसे चलनेसे पहले उन्होंने अपनी सेनाका निरीक्षण किया। उस समय बीजापुरकी सेनामें फतेहलश्कर नामका एक बहुत बढ़िया हाथी था वह मर गया। चलनेसे पहले अफजलखां अपने किसी मुल्लासे आखिरी सलाम करनेके लिये पहुंचे थे कि

* बारह हजार [illegible] लिखी है। महाराष्ट्र भाषाकी बखरों (किन्हीं [illegible]) में बारह हजार पैदल लिखा है जो ठीक [illegible] है। किसी किसीने यह भी लिखा है कि अफजलखांको पैदल तीन हजार मावले [illegible] थे। किसी किसी [illegible] यह भी लिखा है कि अफजलखांने चलते समय अपनी ६३ स्त्रियोंको इस [illegible] मार डाला था कि कहीं मेरे मरनेके पीछे [illegible] न हों। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

सामने ही कोई ऐसी चीज दिखलायी पड़ी जिससे और भी अधिक अपशकुन हुआ। और भी कई प्रकारके अपशकुन हुए पर इनकी परवा न करके, संवत् १७१६ वि० (सितम्बर, सन् १६५९ ई०) में अफजलखां, शिवाजीको पकड़नेके लिये चल दिये। अफजलखांने बीजापुरके ठीक उत्तरकी ओरका रास्ता पकड़ा। बीजापुरके उत्तरमें तुलजापुर है। तुलजापुरमें भोंसले परिवारकी कुलदेवी भवानीका मन्दिर था और अब भी है। अफजलखां इस बातको अच्छी तरहसे जानते थे, उन्होंने भोंसलोंकी कुल देवीको नष्ट भ्रष्ट करनेकी ठान ली थी। भवानीके मन्दिरके पुजारियोंको भी अफजलखांके आनेका समाचार सुनते ही यह भय और अनुमान हो गया था कि बीजापुरकी सेना भवानीकी मूर्त्तिको नष्ट भ्रष्ट किये बिना नहीं रहेगी। अतएव उन्होंने अफजलखांके पहुंचनेसे पहले ही भवानीकी मूर्त्ति कहीं छिपा दी। तुलजापुर पहुंचनेपर अफजलखांने देखा कि कहीं भवानीकी मूर्त्ति छिपा दी है, उन्होंने एक गो मारकर मन्दिरके भीतर फेंक दी और उसके खूनको मन्दिरमें छिड़क दिया। शिवाजीके जासूसोंने ये सब समाचार शिवाजीके कानोंमें पहुंचाये।

अफजलखांके आनेका समाचार सुनते ही शिवाजी राजगढ़से जावलीको सेना सहित चल दिये। प्रतापगढ़के किलेमें उन्होंने अपना डेरा लगाया और वहीं सेना रखी। अफजलखांके पास भी शिवाजीके जावली आनेका समाचार पहुंचा। उन्होंने भी

अपना मार्ग बदल दिया। भीमा नदीको पार करके वे पण्ढरपुर पहुँचे। अफजलखांने पण्ढरपुरमें भी कितने ही मन्दिरोंको तोड़ दिया, पुण्डलिककी मूर्त्तिको एक तालाबमें फेंक दिया। यहां श्रीकृष्णकी मूर्त्ति थी, उसको किसी प्रकारसे ब्राह्मणोंने बचा लिया। मानकेश्वर और महादेवकी मूर्त्तियोंको नष्ट भ्रष्ट कर दिया और ब्राह्मणोंको सताया। पण्ढरपुरसे रहीमतपुर होते हुए अफजलखां वाई पहुँचे, यहां उन्होंने एक लोहेका पिञ्जड़ा बनवाया, जिसमें शिवाजीको कैद करके ले आनेका विचार था और शिवाजीको कैद करनेके उपाय ढूंढने लगे, यहांके सरदारों द्वारा शिवाजीको अपने जालमें फंसाना चाहा। अफजलखांने गज्जन मावलदेशमुख परोजी हैवतरावको अपनी सेना सहित वाई आने और बीजापुरकी सेनामें सम्मिलित होनेके लिये लिखा। एक मराठा सरदार जिसका नाम कान्हजी जोपडे था और जो रोहिड़खोर की देशमुखीके लिये कान्होजी जिदेका प्रतिद्वन्द्वी था, अफजलखांके पास वाई पहुँचा। उसने अफजलखांको यह लिखित वचन दे दिया कि "यदि मुझे देशमुखी उगाहनेका अधिकार दे दिया जाय तो मैं शिवाजीको पकड़ लाऊँगा।" पाठक इससे अनुमान कर लें कि उस समय देशद्रोही और स्वार्थी मराठे सरदारोंकी भी कमी न थी।

अफजलखांने वाईसे शिवाजीके पास एक दूत भेजा, जिसके द्वारा शिवाजीसे वाईमें होनेवाली एक विचार-सभा (कानफ्रेंस) में आनेके लिये कहा। पर शिवाजीको भी इस समय बीजापुरकी

बहुतसी बातोंका अनुभव हो गया था। उन्होंने विश्वासराव नाना प्रभु नामक अपने एक दूतको वाई भेजा। यह गुप्तचर जातिका प्रभु था और शिवाजीके खुफिया विभागका प्रधान था। गुप्त समाचारोंके पता लगानेमें बड़ा दक्ष था। वह मुसलमान फकीरोंके समान अपना वेश बदलकर अफजलखांके डेरेपर पहुँच गया और रात दिन मुसलमानी फकीरके वेशमें वह अफजलखांके डेरेमें घूमता रहा, किसी न किसी तरहसे पता लगा लिया कि अफजलखां शिवाजीको अपने जालमें फंसा कर कैद करके बीजापुर ले जाना चाहता है। विश्वासरावने यह समाचार बहुत जल्दी शिवाजीके पास भेज दिया। शिवाजी अपने दूतसे अफजलखांके विचारका समाचार सुनकर और भी सावधान हुए।

वाईके कुल कर्णी, कृष्णाजी भास्कर अफजलखांके दीवान थे। अफजलखांने उक्त कृष्णाजी भास्करको शिवाजीके पास प्रतापगढ भेजा। कृष्णाजी भास्कर दौत्यकर्ममें अत्यन्त दक्ष थे। खांने उन्हें शिवाजीको हर तरहसे समझाने बुझानेके लिये कहा और अपना सन्देश भी उनके द्वारा शिवाजीके पास भेजा। चलती समय खांने कृष्णाजी भास्करसे कहा कि जैसे बने वैसे शिवाजीको मुझसे मिलनेके लिये राजी करना।

जब शिवाजीने खांके दूतके आगमनका समाचार सुना तब वे भी दूतकी अभ्यर्थनाके लिये अपने स्थानसे आधी दूरतक पहुंचे और बड़ी धूमसे दूतका स्वागत किया और उन्हें अपने

किलेमें ले आये। शीघ्र ही खांके दूत कृष्णाजी भास्करके सम्मानार्थ एक बड़ा भारी दरबार किया गया जिसमें दूत महोदय शिवाजीको खांका निम्नलिखित सन्देश दिया कि "तुम्हारे बाप मेरे बड़े दोस्त हैं, इसलिये तुम कुछ अजनबी नहीं हो। मैं तुम्हें बखूबी जानता हूं। आओ और मुझसे मिलो। मैं आदिलशाहसे कहकर तुम्हें कोंकणका प्रान्त दिलवा दूंगा और जिन किलोंपर तुमने अधिकार प्राप्त कर लिया है वे किले भी तुम्हारे पास रहें इसकी भी सिफारिश करूंगा। इसके अतिरिक्त तुम्हारे लिये कुछ फौजी इमदाद भी करा दूंगा। अगर तुम खुद दरबारमें आना चाहते हो तो चलो वहां तुम्हारा तुम्हारा इस्तकबाल किया जायगा और तुम खुद वहां न जाना चाहते हो तो इससे भी तुम्हारा छुटकारा हो जायेगा।" शिवाजी कूटनीतिके पुतले थे, उन्होंने खांके सन्देशके उत्तरमें कृष्णाजी भास्करसे कहा कि "मैं खांको इस कृपाके लिये बहुत अहसानमन्द हूँ, इस समय मेरे अधिकारमें जो किले हैं वे मुझे जागीर स्वरूप मिल जायंगे, इससे अच्छी और क्या बात हो सकती है। मैं इस छोटीसी जागीरको पाकर परम सन्तुष्ट होऊँगा। चाहे जो कुछ हो आखिर तो मैं सुलतानका ताबेदार ही हूं। मुझे इसमें कुछ आपत्ति नहीं है। मैंने इस प्रान्तसे उद्दण्ड, अभिमानी सरदार और अमीरोंको हटा दिया है। इस प्रान्तसे चोर लुटेरे और डाकुओंको भगा दिया है। समस्त प्रान्तमें शान्ति और सुशासनकी नींव रख दी है। पुराने किलोंकी मरम्मत

करायी है और नये किले बनवाये हैं, सेनामें अनेक शूरवीर योद्धा रखे हैं। राज्यकी सर्व प्रकारसे उन्नति की है। इससे अच्छी और मैं आदिलशाहकी क्या सेवा कर सकता हूँ कि ये सब चीजें मैं आदिलशाहको अर्पण कर दूँ और वे इसे स्वीकार करें। खां साहबको तो मैं अपने पिताके समान समझता हूं। उनसे मिलनेमें मैं अपना परम सौभाग्य समझता हूँ। उनके दर्शन करनेकी मुझे उत्कट लालसा है। उनके प्रति उचित सम्मान प्रदर्शन करनेकी मुझे अत्यन्त अभिलाषा है। ये सब बातें शिवाजी ने सार्वजनिक दरबारमें कृष्णाजी भास्करसे कहीं। दरबारकी समाप्तिके पीछे कृष्णाजी भास्करके सब ही साथी अपने ठहरनेके नियत स्थानोंमें चले गये।

दौत्य दलमें जितने आदमी आये थे, उन सबसे अलग अपने पासके एक स्थानमें शिवाजीने कृष्णाजी भास्करके ठहरानेका प्रबन्ध किया था। ऐसा करनेमें शिवाजीकी आन्तरिक इच्छा दौत्य दलके प्रधान कृष्णाजी भास्करसे सबसे अलग एकान्तमें बातें करके उसे अपनी ओर मिलानेकी थी। दरबारकी समाप्ति के पीछे जब सब लोग निद्रादेवीकी गोदमें बेसुध पड़े हुए थे, चारों ओर शान्ति छा रही थी। उस समय अकेले शिवाजी अपने घरमेंसे निकले और चुपचाप कृष्णाजी भास्करके डेरेपर पहुंचे। कृष्णाजी भास्कर भी उस समय निद्रादेवीके वशीभूत हो रहे थे। शिवाजीने उन्हें जगाया और अत्यन्त प्रभावशाली शब्दोंमें उनसे प्रार्थना की कि "मैं जो कार्य कर रहा हूँ, वह केवल

अपने स्वार्थके लिये नहीं कर रहा हूं, देश और धर्मकी प्रेरणासे प्रेरित होकर मैंने इस कार्यका बीड़ा उठाया है। आप सर्वश्रेष्ठ ब्राह्मण जातिके हैं। अबतक जो कुछ मैंने प्रयत्न किया है वह हिन्दू धर्म और हिन्दुओंकी रक्षाके लिये ही किया है। साक्षात् भवानी देवीने मुझे इस कार्यके करनेके लिये आज्ञा दी है कि गो ब्राह्मण की रक्षा कर, हिन्दू देवालयके तोड़ने और हिन्दू देवताओंकी मूर्त्ति खण्डन करनेका बदला ले। हिन्दू धर्मसे जिन लोगोंका विद्वेष है उनका संहार कर। जगदम्बाकी इस आज्ञासे ही मैं इस कार्यमें प्रवृत्त हुआ हूं। आप जैसे सर्वश्रेष्ठ ब्राह्मणोंकी सहायताकी इस कार्यमें अत्यन्त आवश्यकता है। अपना धर्म डूब रहा है। देवमूर्त्तियां पैरोंसे ठुकरायी जा रही हैं। इस समय देव ब्राह्मण घोर सङ्कटमें हैं। समस्त भारतमें म्लेच्छोंका प्रबल प्रताप छा रहा है। प्रभो! धर्मकी ऐसी दुर्गति देखकर आपके हृदयमें अवश्य कष्ट उत्पन्न होता होगा। मैंने इस दुरवस्थाको दूर करनेके लिये ही यह प्रयत्न आरम्भ किया है। पर आप जैसे महापुरुषोंकी सहायतासे ही इस कार्यमें सफलता प्राप्त हो सकती है। यदि आप मुझे इस कार्यमें सहायता प्रदान करें तो मैं आपको पारितोषिक स्वरूप हिवरा गांव भेंट कर दूंगा। आगे आपकी जैसी इच्छा।" शिवाजीने अपने मधुर और प्रभावशाली शब्दोंसे कृष्णाजी भास्करको अपने वशमें कर लिया। यह बात कृष्णाजी भास्करके हृदयमें बैठ गयी कि महाराष्ट्र भूमिका उद्धार अवश्य शिवाजीके हाथों ही होगा। दूसरे वे हिवरा

गांवका लोभ सम्वरण नहीं कर सके। उन्होंने बिना किसी सङ्कोच और प्रतिवादके शिवाजीके कथनको स्वीकार कर लिया। वे शिवाजीकी प्रभावशालिनी वक्तृता सुनकर सोचने लगे कि सचमुच शिवाजीमें महापुरुषोंके सब ही गुण विद्यमान हैं। ये संसारके सुखकी अपेक्षा धर्म और देशकी भलाईमें तत्पर हैं। स्वधर्मकी रक्षा और स्वराज्य स्थापन करनेकी अत्युग्र चेष्टा कर रहे हैं। इनके इस स्तुत्य कार्यमें अवश्य सहायता देनी चाहिये। धैर्य, शौर्य, वीर्य आदि उत्तम गुण इनमें विद्यमान हैं। महाराष्ट्र का एक एक बालक इनका नाम जानता है और इनके गुणों का बखान करता है। आजतक इन्होंने जो पराक्रम प्रकट किया है, वह प्रशंसनीय है, इनकी सहायता करके स्वराज्य स्थापनके उद्योगमें यशका भागी होना चाहिये। इस तरह सोच विचार कर कृष्णाजी भास्करने शिवाजीके सामने यह प्रतिज्ञा की कि "मैं अवसर आपकी सेवा करूंगा। आपकी आज्ञाके विमुख नहीं होऊँगा। ऐसा मैंने निश्चय कर लिया है।" यह प्रतिज्ञा करके कृष्णाजी भास्करने शिवाजीसे अफजलखांका यह भीतरी भेद खोल दिया कि "अफजलखां भेंट करनेके बहाने आपको पकड़कर बीजापुर ले जाना चाहता है। वह आपको हथकड़ी बेड़ी पहना कर आदिलशाहकी राजधानी बीजापुरकी गलियोंमें घुमाकर सर्वसाधारणमें अपनी विजयका सिक्का जमाना चाहता है।" इस वार्तालापके पीछे शिवाजी और कृष्णाजी भास्कर दोनोंमें बहुत देरतक यह परामर्श होता रहा कि खाँसे किस प्रकार

मिला जाय ? अन्तमें निश्चय हुआ कि "कृष्णाजी भास्कर, खाँके हृदयमें इस प्रकारका विश्वास उत्पन्न करें कि प्रतापगढ़में वह आसानीसे शिवाजीको गिरफ्तार कर सकेगा और जब खाँ वहां आ जाय तो उसपर अकस्मात् आक्रमण किया जाय और उसकी अव्यवस्थित सेनापर भी धावा किया जाय।" यह सब तय करके शिवाजी रातको अपने घर लौट आये।

शिवाजीने कृष्णाजी भास्करसे ऊपर लिखी हुई गुप्त मन्त्रणा की पर जितने दिन कृष्णाजी भास्कर उनके यहां रहे, उतने दिन तक शिवाजी प्रत्यक्षमें कृष्णाजी भास्करसे ऐसा व्यवहार करते थे, कि जिससे सर्वसाधारणको यह प्रतीत होता था कि शिवाजी अफजलखांकी अधीनता स्वीकार करनेके लिये तैयार हैं। एक दिन उन्होंने दरबारमें कृष्णाजी भास्करसे कहा —"अगर खान मुअज्जमकी मेरे ऊपर इतनी मेहरबानी है और वे मुझे पुत्रके समान समझते हैं तो मैं खुशी खुशी उनसे जावलीमें मिलूंगा। पर मैं बहुत दूर वाई जानेमें डरता हूं। यहां मैं उनके स्वागतकी हर तरहसे तैयारी करूंगा।"

एक ओर तो शिवाजीने कृष्णाजी भास्करसे रातके विषयमें उपर्युक्त परामर्श किया दूसरी ओर भी वे चुप न थे।

तारीख-ए-अमीरीसे ज्ञात होता है कि अफजलखांके आगमनका समाचार सुनकर शिवाजीके बहुतसे साथी और अनुयायी डर गये थे। क्योंकि इससे पहले वे लोग छोटे छोटे जागीरदारोंकी सेनामें लड़े थे अथवा दुश्मनोंपर छिपकर छापा

मारा करते थे। अफजलखांके साथ बहुत भारी सेना थी, ऐसी भारी सेनाके साथ शिवाजीके अनुयायियोंने कभी सामना नहीं किया था। बीजापुरसे वाईतक अफजलखां बिना किसी रुकावटके पहुंच गया। मार्गमें किसीने भी उसका सामना नहीं किया। किसी मराठे सरदारकी उसका सामना करनेकी हिम्मत नहीं हुई। शिवाजीके राज्यमेंसे जहां कहींसे वह निकला वहीं उसने लूट मार मचायी और शिवाजीके राज्यके स्थानोंको उजाड़ डाला। अफजलखांके अत्याचारोंका समाचार शिवाजी के शिविरमें बराबर पहुँचा। शिवाजीके कर्मचारियोंने अफजलखां-का सामना न करनेकी सलाह दी। सभासद् और चिटनीस दोनों लिखते हैं कि अफजलखांके सम्बन्धमें शिवाजीके सरदारों-की जो सभा बैठी थी, उसमें समस्त सरदारोंने सन्धि करनेको ही सलाह दी, उन लोगोंने कहा कि शत्रु प्रबल है, इससे अपनी ओरकी ही विशेष क्षति होनेकी सम्भावना है।

स्वयं शिवाजी इस समय बड़ी विकट परिस्थितिमें थे। यदि वे अफजलखांके कहनेके अनुसार आत्मसमर्पण कर देते तो उन्हें स्वतन्त्रताकी जो भविष्य आशाएं थीं, उन सबपर पानी फिर जाता और अपना जीवन बीजापुर राज्यके अधीन एक कठपुतलीके समान व्यतीत करना पड़ता और यह भी बहुत सम्भव था कि उन्हें अपने पिछले कामोंके कारण आदिलशाहकी कोपाग्निमें अपने जीवनसे ही हाथ धोने पड़ते। और खुल्लमखुल्ला विरोध करनेसे भी कुछ काम बनता न था। यदि उस समय

की भविष्यद्वाणीपर विचार करके युद्ध ठानना निश्चय हुआ। इस कार्यमें उन्होंने अपनी माताको सलाह ली। माताने आशीर्वाद दिया कि "जा बेटा! तेरी विजय होगी।" *

*—यद्यपि सिक्ख समाजमें गुरु गोविन्दसिंहके समयमें एक परमात्माके अतिरिक्त और किसी देवी देवताको पूजा करनेका आदेश नहीं था और अब भी नहीं है तथापि उस समय सिक्ख लोग देवीको सत्तामें कुछ न कुछ श्रद्धा अवश्य रखते थे। गुरु गोविन्दसिंह इको एक ईश्वरके अतिरिक्त और किसी देवी देवतामें विश्वास न था। परन्तु (जैसा कि सब इतिहास-लेखक लिखते हैं) इसमें कुछ सन्देह नहीं कि गुरुने देवीको साक्षात करनेके लिए छह मासी ऐसा प्रतीत होता है कि बड़ा यज्ञ रचवाया था। कहते हैं कि एक बार एक यज्ञमें उन्हें एक वर्ष लग गया। एक वर्षके अन्तमें जब फिर जन्म दुर्गाष्टमी आयी तो गुरुने प्रधान पण्डितसे पूछा कि देवी अब तक न दिखी? पण्डितने उत्तर दिया कि देवी केवल तब ही अपने आपको प्रकट करेगी जब कोई कुलीन धर्मात्मा तथा पवित्र मनुष्य अपने आपको उसकी वेदीपर बलि देगा और अपना सिर अग्निमें चढ़ावेगा। गुरु इस बातपर प्रसन्न होते हुए दिखायी दिये तथा सम्पूर्ण बातके साथ पण्डितसे कहा:—'पूज्यवर हमें आपसे बढ़कर धर्मात्मा पुरुष और कहां मिलेगा? जिसका सिर देवीकी भेंटके लिये अधिक उपयोगी हो।' पण्डित सुनकर चुप रह गया और कुछ बहाना करके खेमेसे भाग निकला। गुरुने समस्त बची हुई सामग्री अग्निमें डाल दी और परदोंके पीछेसे हाथमें नङ्गी तलवार चमकाते हुए बाहर आये। इतनी इतनी अधिक सामग्री एक एकही अग्निमें डाली गयी तो ज्वाला भड़क उठी और उस पहाड़ीपर होनेके कारण चारों ओर कोसोंतक दिखायी दी जिससे लोगोंने समझा कि देवी प्रसन्न हो प्रकट हो गयी है। यह खड्ग जो गुरु दिखाते हुए हाथमें लेकर निकले थे, गुरुके लिये देवीका प्रसाद समझी गयी और इस प्रसादका यह अर्थ समझा गया कि इसको अपने आततायी मनुष्योंके साथ युद्ध करनेमें अवश्य विजय प्राप्त होगी।' (देवी—सिक्खोंका परिवर्तन पेज १६२—१६६)—शिवाजीके समान गुरु गोविन्दसिंहने भी खड्गका नाम देवी अर्थात् भवानी रखा था। गुरुगोविन्दसिंह को भी महाभारत, रामायण, महात्माओं दुर्गा आदिकी कथाओंसे विशेष उत्साहित किया था।

उनकी शक्ति विशेष रूपसे अफजलखाँसे लड़नेमें खोत जाती तो पीछे मुगल साम्राज्य और बीजापुर दरबारसे टक्कर लेनेका दम उनमें न रहता। उनके कुछ मन्त्री और सरदारोंने भी इस समय हिम्मत हार दी और अफजलखाँसे सन्धि करनेकी ही सलाह दी। निस्सन्देह इस युद्धका परिणाम बड़े ही महत्वका था। विजेता और पराजित दोनोंके लिये यह जीवन-मरणका प्रश्न था। अतएव शिवाजीने इस परिस्थितिके गौरव और महत्वको भली भाँति समझ लिया था। इसलिये वे इस आक्रमणसे अपनी रक्षा करनेके लिये बिलकुल तैयार हो गये। लेकिन किसी अन्तिम और निश्चित योजनाका आश्रय लेनेके पहले शिवाजीने अपनी इष्ट देवी भवानीका आह्वान किया। उन्होंने अपने विश्वासी अर्थात् लेखकोंको आज्ञा दी कि "दैविक प्रभावके वश होकर जब कुछ शब्द मेरे मुहसे निकलें तब उन्हें तुम लोग तुरन्त लिख लेना।" प्रायः ऐसे समयमें शिवाजी देवीका ध्यान करते समय अचेत हो जाते थे, बेहोशीमें जो बातें वे किया करते थे वे सब लिख ली जाया करती थीं।

शिवाजीको भवानीके ध्यान करनेसे यह दृढ़ विश्वास हो गया कि अफजलखाँसे युद्ध करनेमें स्वयं भवानी उनकी रक्षा करेंगी। उन्होंने एक दिन स्वप्नमें भी देखा कि तुलजापुरमें अफजलखाँने भवानीका जो मन्दिर तोड़ दिया है उसका बदला लेनेके लिए भवानीने उन्हें आदेश दिया है। उपर्युक्त घटनाके दूसरे दिन मराठे सरदारोंकी एक पञ्चायत फिर बैठी जिसमें देशी अपने

की भविष्यद्वाणीपर विचार करके युद्ध ठानना निश्चय हुआ। इस कार्यमें उन्होंने अपनी माताकी सलाह ली। माताने आशीर्वाद दिया कि "जा बेटा! तेरी विजय होगी।" *

*—यद्यपि सिक्ख-समाजमें गुरु गोविन्दसिंहके समयमें एक परमात्माके अतिरिक्त और किसी देवी देवताकी पूजा करनेका आदेश नहीं था और अब भी नहीं है तथापि उस समय सिक्ख लोग देवीकी सत्तामें कुछ न कुछ श्रद्धा अवश्य रखते थे। गुरु गोविन्दसिंहको एक ईश्वरके अतिरिक्त और किसी देवी देवतामें विश्वास न था। परन्तु (जैसा कि सब इतिहास-लेखक लिखते हैं) इसमें कुछ सन्देह नहीं कि गुरुने देवीको साक्षात करनेके स्पष्ट रूपसे ऐसा प्रतीत होता है कि बड़ा यज्ञ रचवाया था। कहते हैं कि एक बार एक यज्ञमें उन्हें एक वर्ष लग गया। एक वर्षके अन्तमें जब फिर अष्टम दुर्गाष्टमी आयी तो गुरुने प्रधान याज्ञिकसे पूछा कि देवी कब दर्शन देगी? पण्डितने उत्तर दिया कि देवी केवल तब ही अपने आपको प्रकट करेगी जब कोई कुलीन धर्मात्मा तथा पवित्र मनुष्य अपने आपको उसके पैरोंपर बलि देगा और अपना सिर अग्निमें चढ़ावेगा। गुरु इस बातपर प्रसन्न होते हुए दिखायी दिये तथा मन्द हास्यके साथ पण्डितसे कहा:—"पूज्यवर इसे आपसे बढ़कर धर्मात्मा पुरुष और कहां मिलेगा? जिसका सिर देवीको भेंटके लिये अधिक उपयोगी हो।" पण्डित सुनकर चुप रह गया और कुछ बहाना करके खेमेसे भाग निकला। गुरुने समस्त बची हुई सामग्री अग्निमें डाल दी और परदोंके पीछेसे हाथमें नङ्गी तलवार चमकाते हुए बाहर आये। इतनी अधिक सामग्री जब एकही अग्निमें डाली गयी तो ज्वाला भड़क उठी और उस ऊंची पहाड़ीपर होनेके कारण चारों ओर कोसोंतक दिखायी दी जिससे लोगोंने समझा कि देवी प्रसन्न हो प्रकट हो गयी है। यह खड्ग भी गुरु दिखाते हुए हाथमें लेकर निकले थे, गुरुके लिये देवीका प्रसाद समझी गयी और इस प्रसादका यह अर्थ समझा गया कि गुरुजी अपने जातीय शत्रुओंके साथ युद्ध करनेमें अवश्य विजय प्राप्त होंगे। (देखो—सिक्खोंका परिवर्तन पेज ११९—१२१)—शिवाजीके समान गुरु गोविन्दसिंहने भी खड्गका नाम देवी अर्थात् भवानी रक्खा था। गुरुगोविन्दसिंहको भी महाभारत, रामायण, भागवत दुर्गा आदिकी कथाओंमें विशेष उत्साहित किया था।

माताके आशीर्वादको ग्रहण करके माताके पाससे शिवाजी विदा हुए और अपने समस्त राजकर्मचारियोंको इकट्ठा करके उन्हें समझाया कि यदि मैं अफजलखांके हाथ मारा जाऊं तो तुम कार्य ठीक तरहसे चलाते रहियेगा। उन्होंने मोरो त्र्यम्बक पिंगले तथा नेताजी पालकरकी अधीनस्थ सेना कोंकण और घाटसे बुलवा ली और प्रतापगढ़के आसपास उक्त दोनों सेना दलोंके रखनेकी आज्ञा दी। इतना प्रबन्ध करनेके पीछे उन्होंने अपने दूत गोपीनाथ पन्तको कृष्णाजी भास्करके साथ अफजलखांके पास, प्रतापगढ़ आनेका निमन्त्रण देनेके लिये भेजा। साथ ही शिवाजीने कहला भेजा कि "मुनासिब तो यही था कि मैं खां साहबकी खिदमतमें खुद ही पहुंचता पर वहां जानेमें मुझे डर लगता है। अगर हुजूर यहां तशरीफ लावें तो मैं हर तरहसे खिदमत करनेको तैयार हूं। यदि अफजलखां यह वचन दें कि किसी समय भी मुझे कुछ हानि न पहुंचायेंगे तो मुझे उनसे मिलनेमें कुछ आपत्ति नहीं है।" शिवाजीका गोपीनाथपन्तको अफजलखांके पास भेजनेमें एक यह भी उद्देश्य था कि पन्तजी इस बातका भी पता लगा आवें कि अफजलखांकी सेना कितनी है और उसकी कितनी शक्ति है तथा गुप्त रूपसे इसका भी पता लगावें कि अफजलखांका असली उद्देश्य क्या है और उसकी नीयत कैसी है। उन्होंने अपने वकील कृष्णाजी भास्करको विदा करते समय पांच हजार हुण, मोतियोंकी एक माला, सोनेका कण्ठा, सोनेका पदक और एक अरबी घोड़ा भेंट किया।

शिवाजीके गुप्तचर जर्मन जासूसोंसे कुछ कम न थे। गुप्तसे गुप्त बातोंका पता लगाना, शिवाजीके गुप्तचरोंके बायें हाथका खेल था। गोपीनाथपन्तने अफजलखांके शिविरमें पहुंचकर उसके आदमियोंको खूब रिश्वत दी और यह पता लगाया कि खांकी नीयत अच्छी नहीं है, उसने ऐसा प्रबन्ध किया है कि वह शिवाजीको भेंट करते समय पकड़ लेगा। क्योंकि शिवाजी इतने चालाक हैं कि खुल्लमखुल्ला युद्ध करके उन्हें पकड़ना कठिन है। अफजलखांके पाससे लौटकर गोपीनाथपन्तने शिवाजीसे समस्त वृत्तान्त कहा और साथ ही उनसे अनुरोध किया कि खांके आक्रमण करनेसे पहले आप ही मिलते समय उसको खतम कर डालिये जिससे उसकी सेना घबड़ाकर चलती बने। पन्त जीसे ये सब बातें सुनकर शिवाजीने वाईमें अफजलखांसे न न मिलनेका दृढ़ निश्चय कर लिया।

कृष्णाजी भास्करने शिवाजीके यहांसे लौटकर अफजलखांसे कहा कि शिवाजी बीजापुर-दरबारकी अधीनता स्वीकार करने के लिये तैयार है पर वह वाई आनेमें डरता है। यहां आनेमें उसे वहम है कि किसी तरहकी उसके साथ कहीं दगाबाजी न की जाय। वह डरपोक भी है। उसकी हिम्मत यहां आकर हुजूर से मिलनेकी नहीं होती है। अगर हुजूर जावली तशरीफ ले चलें और उसकी हिफाजत करनेका उसको इतमिनान करा दें तो हुजूर उसे आसानीसे बीजापुर ले चलेंगे, उसने अपना एक

दूत * गोपीनाथपन्तको भी हुजूरकी खिदमतमें भेजा है और उसके द्वारा हुजूरको जावली चलनेके लिये निमन्त्रण भेजा है। अगर हुजूरकी मंशा हो तो हुजूर उससे मिल सकते हैं।" खांने कृष्णाजी भास्करके इस कथनको स्वीकार कर लिया और गोपीनाथपन्तसे भेंट की। गोपीनाथपन्तने शिवाजीके इस प्रस्तावको अत्यन्त उत्तमतापूर्वक खांके सामने उपस्थित किया कि जावलीमें शिवाजीसे भेंट करना सब तरहसे अच्छा होगा। कृष्णाजी भास्करने गोपीनाथपन्तके प्रस्तावका समर्थन करते हुए खांको जावलीमें भेंट करनेके लिये समझाया और कहा कि जावलीमें शिवाजीसे भेंट करनेमें सफलताकी पूरी आशा है। शिवाजीकी इस प्रार्थना स्वीकार करनेसे शिवाजीके समस्त वहम दूर हो जायंगे। खांने इस प्रस्तावपर आपत्ति की और कहा कि "जावली भयङ्कर प्रांत है, यहां सेनाके ले जानेमें बड़ी तकलीफ होगी। और फिर इसके लिये क्या गारण्टी है कि शिवाजी यहां हमें किसी प्रकारकी क्षति न पहुंचावेंगे।" इसपर कृष्णाजी भास्करने खांको य

*—[illegible] गोपीनाथपन्तको [illegible] लिखा है [illegible] जावलीका [illegible] है। [illegible] स्पष्ट लिखा [illegible] शिवाजीके दूत थे। [illegible] है और [illegible] [illegible] भास्कर थे। इस भांति [illegible]

विश्वास दिलाया कि "जहांतक मुझे पता लगा है मैं कह सकता हूं कि शिवाजीकी यहां भेंट करनेमें कोई बुरी नीयत नहीं दिख लायी पड़ती है। आप शिवाजीके इस प्रस्तावके विषयमें किसी प्रकारका सन्देह न करें। इस अवसरको किसी तरह चूकना न चाहिये। जावलीमें सेनाके ठहरनेके लिये भी बहुत सा स्थान है। वहां खाना, पानी और रसद वगैरह किसी चीजकी तक लीफ नहीं होगी।"

अफजलखांको अपनी सेना और शक्तिपर पूरा भरोसा था और जो कुछ उनके मनमें शिवाजीकी ओरसे खटका था, वह भी कृष्णाजी भास्करकी बातोंसे दूर हो गया। उन्होंने कृष्णाजी भास्करकी बात सुनकर सोचा कि "सचमुच शिवाजी डर गये हैं और बिना किसी खूनखराबीके ही मैं उन्हें पकड़कर बीजापुर ले आऊंगा।" खां साहबको उस समय यह ज्ञात न हुआ कि शिवाजीको पकड़ना कुछ आसान नहीं है। शेरके पकड़नेसे भी शिवाजीका पकड़ना कठिन है। उन्होंने वाईसे चलनेसे पूर्व शिवाजीको भी एक पत्र द्वारा जावली पहुंचनेका समाचार भेज दिया।

पन्द्रह दिन पीछे अफजलखां वाईसे प्रतापगढ़को चले। शिवाजीने वाईसे प्रतापगढ़तक जो घना जङ्गल पड़ता था उस को कटवाकर एक सीधी सड़क बनवा दी और सेनाके ठहरने के प्रत्येक मुकामपर पानी और रसद आदिका अच्छा प्रबन्ध कर दिया। अफजलखां पोवाड़ा (गीत) में कहा गया है कि

आशीर्वाद दिया और कहा—"जाओ! प्यारे बेटे !! जाओ !!! पर उस खांसे सावधान रहना और अपने भाई सम्भाजीकी मृत्युका बदला भी लेना। जैसे कुन्तीके पुत्र भीम और अर्जुन वीर हुए थे, वैसा ही वीर तू मेरे हुआ है। तेरे कारण आज मैं कुन्तीके समान वीरमाता हूं।"

माताले मिलनेके पीछे शिवाजीने चलनेकी तैयारी की। उन्होंने जिरहबख्तर पहना, उसके ऊपर एक सुनहला अङ्गरखा धारण किया। सिरपर एक लोहेका शिरस्त्राण धारण किया उसके चारों ओर साफा बांधा। अस्त्रशस्त्रोंमेंसे उन्होंने अपने बायें हाथमें * "बाघनख" लिया और अपने अङ्गरखाकी दाहिनी भुजामें एक छोटीसी कटार "बिच्छू" नामक छिपा ली। और अपने साथ केवल दो आदमी लिये, पर ये दोनों आदमी अत्यन्त विचित्र शक्ति और हिम्मत रखते थे * जिनके नाम जीवामहाला और सम्भूजी कावजी था। तलवार चलानेमें उक्त दोनों आदमी बड़े दक्ष और चतुर थे। चलते समय जीजाबाईने शिवाजीके

---

*—सी० ए किनकेडने "बखरनवीस पीवाजे" के आधारपर तीन आदमी लिखे हैं। पर तीसरे आदमीके नामका पता नहीं लगता है। मि० डफ़ने भी दो आदमी लिखे हैं। "पीवाजे" के अनुसार शिवाजीने अपनी तलवार जीवाजीको दी थी और आप बिना हथियारके थे, जीवाजी महाला उनके साथ था। भारत इतिहास संशोधक मण्डल [illegible] १८ में लिखा हुआ है कि जीवाजी [illegible] नाई (नापित) था।

—बाघनखके सम्बन्धमें सुना जाता था कि बाघके नखोंके समान एक शस्त्र होता है जिसमें [illegible] निकल आते हैं जो बड़े तेज और पैने होते हैं। ठीक इसी प्रकार बिच्छू नामक कटारको बिच्छूके आकारकी समझना चाहिये।

साथियोंको शिवाजीकी रक्षा करनेके लिये सावधान किया। इस प्रकार शिवाजी और उनके साथी तैयार होकर अफजलखां से मिलनेके लिये चले। उसी समय अफजलखां भी खेमेसे शिवाजीसे मिलनेके लिये रवाना हुए। उन्होंने अपने साथ एक हजार हथियारबन्द आदमी लिये और पालकीमें सवार होकर शिवाजीसे मिलनेके लिये चले। चलते समय * कृष्णाजी

*—प्रोफेसर यदुनाथ सरकारने लिखा है कि गोपीनाथपन्तने अफजलखांसे कहा था कि आप अपने साथ इतने आदमियोंको मत ले चलिये। क्योंकि इतने आदमियोंके साथ मिलनेसे शिवाजीसे मिलना कठिन हो जायगा। और जिस प्रकार शिवाजीने अपने साथ दो शरीररक्षक रखे हैं वैसे ही आप भी अपने साथ दो शरीर-रक्षक रखिये। इसपर खांने अपने पीछे कुछ दूरीपर सेना रखी और अपने साथ दो ब्राह्मण गोपीनाथ और कृष्णाजीको लिया। इसके अतिरिक्त सय्यद बांदाको भी अपने साथ लिया। शामियानेमें पहुंचते ही अफजलखांने बड़े गुस्सेसे कहा कि इस जागीरदारके लड़केने यह राजसी ठाट बाट और साज सौमानका प्रबन्ध किया है। इसपर गोपीनाथने कहा कि शिवाजीके अधीनता स्वीकार करनेपर यह सब दौलत बीजापुरके खजानेमें चली जायगी। केलुस्कर कृत शिवाजीका चरित्र जो मराठी भाषामें है, उसमें लिखा हुआ है कि खांने अपने साथ बीजापुरी सेनाके चुने हुए पन्द्रह सौ जवान लिये थे। यह देखकर कृष्णाजी भास्करने कहा कि आप जैसे शक्तिशाली अपने साथ इतनी बड़ी सेना क्यों ले जा रहे हैं? शिवाजी इतनी बड़ी सेना देखकर डर जायेंगे और न मालूम उन्हें क्या सन्देह हो? आप बीजापुर राज्यके एक स्तम्भ हैं और आपके मुकाबिलेमें शिवाजी कुछ भी नहीं हैं। खां कृष्णाजी भास्करके इस प्रस्तावसे सहमत हुए। पोवाड़ा (गीत) से ज्ञात होता है कि शिवाजीके मंत्री गोपीनाथ और कृष्णाजी पन्तने अफजलखांसे साथ विशेष सेनादल न ले जानेका अनुरोध किया था। उस गीतमें यह भी कहा गया है कि खां अपने साथ चार हजार घुड़सवार सेना सहित पालकीमें सवार होकर चला था। उस समय नक्कीबोंने खांसे प्रार्थना की कि आप अपनी पालकी और सेनाको शामियानेसे दूर रखिये। सभासदसे ज्ञात होता है कि पन्तजी (गोपीनाथपन्त) ने खांसे अपने साथ विशेष सेना न ले जानेका अनुरोध किया था न कि खांके दूत कृष्णाजी भास्करने।

भास्करने अफजलखांसे कहा कि अगर आप शिवाजीको धोखे-से पकड़ना चाहते हैं तो यही अच्छा होगा कि आप अपने सैनिकोंको पीछेसे छोड़ चलें और जितने आदमी शिवाजीने अपने साथ लिये हैं, उतने ही आप भी अपने साथ लीजिए। खाने कृष्णाजीका यह कथन स्वीकार कर लिया। अफजलखांके साथ सय्यद बांदा नामक एक और भी आदमी था, जो तलवार चलानेमें बड़ा चतुर था। शिवाजीने उस आदमीको अफजलखांके साथ आता हुआ देखकर अपने एक दूत द्वारा अफजलखांके पास कहला भेजा कि "इस आदमीके आनेसे मुझे डर मालूम होता है। यदि खां अपने साथ इस व्यक्तिको न लायें तो अच्छा हो।" खांने शिवाजीका कथन स्वीकार कर लिया और सय्यद बांदाको वहीं छोड़ दिया। खांके आनेपर शिवाजी अपने दोनों साथियों सहित, उनके स्वागतार्थ आगे बढ़े। देखनेमें शिवाजी बिना हथियारके ही प्रतीत होते थे और अफजलखांके पास एक तलवार थी, शिवाजीको देखते ही अफजलखांने समझा कि शिवाजीके पकड़नेका समय आ गया है। उन्होंने शिवाजीको ताना मारते हुए कहा कि "तुम्हारे जैसे मामूली किसानके पास इस शानके साथ शामियाना सजानेका सामान कहांसे आया?" इसपर शिवाजीने भी बड़ी तेजीके साथ यह उत्तर दिया कि "यह काम मेरा है न कि तुम्हारा, क्योंकि तुम भटियारेके लड़के हो।" यह सुनते ही खां गुस्सेमें आ गया और बायें हाथसे शिवाजीकी गर्दन पकड़कर अपनी बगलमें दबायी और उसी समय खांने उनके पेटमें

अपनी तलवार घुसेड़नी चाही। पर शिवाजी जिरहबख्तर पहने हुए थे इसलिये खांकी तलवार कुछ काम न कर सकी।*

इस समय शिवाजी बड़ी कठिनाईमें पड़े। खां एक पहलवानके समान उनको अपनी बगलमें दबाये हुए था। स्वयं शिवाजीने इस घटनाके सम्बंधमें अपने एक मित्रसे कहा था कि मैं मूर्च्छित होनेवाला ही था कि मैंने उस समय स्वामी रामदासका ध्यान किया और मुझमें उस समय एक नया बल आ गया। उन्होंने अपने हाथको खांकी मुट्ठीमेंसे छुड़ाया और बाघनख उसके पेटमें घुसेड़ दिया और बिच्छू कटारी खांकी पीठमें घुसेड़ दी। अफजलखांने शिवाजीके सिरपर तलवारका आघात

* डाफ साहबने लिखा है कि मिलते समय पहले शिवाजीने खांके पेटमें "बाघ नख" घुसेड़ा था। बखरोंमें लिखा है कि पहले खांने आक्रमण किया था। ओरम ने—"फारिगमारी मालाम" के इतिहासमें और जो कुछ लिखा हुआ है कि जब शिवाजीने देखा कि अफजलखांकी सेना प्रबल है तब उन्होंने खांसे मित्रता की और एक दिन मित्रताके बहानेसे वे खांके खेमेमें गए थे और वहीं उन्होंने अत्यन्त नम्रतापूर्वक प्रतापगढ़ आने और वहां भोजन करनेका निमन्त्रण दिया। खांने बिना किसी सन्देहके निमन्त्रण स्वीकार कर लिया और अवसर पाकर एक दर्जन साथियोंके साथ नियत समयपर वहां वह पहुंच गया। शिवाजीके आदमियोंने अचानक खांपर धावा किया और उसे मार डाला। मालूम होता है कि ओरमने यह वृत्तान्त "फतूहात-ए-आलमगीरी" के आधारपर लिखा है। उस इतिहासमें ऐसा ही वृत्तान्त है।" देखो—"The rise of Shivaji Maharaj by N S. Takakhav M A उसमें और चिटणीसमें यह भी लिखा है कि अफजलखां अपनी मसनदसे नीचे उतर आये थे और वह पुकारने लगे दगा दगा।" खांकी यह आवाज सुनते ही, उसके साथी उसकी सहायताके लिये दौड़े और उन्हें पालकीमें रख लिया। पालकी उठानेवाले ले चलना ही चाहते थे कि शिवाजीके साथियोंने उनपर आक्रमण किया।

किया, जो उनके शिरस्त्राणपर लगी, जिससे उनके सिरमें कुछ चोट आ गयी। शिवाजीका साथी जीवामहाला जो तलवार ले गया था, उन्होंने झटपट उसके हाथमेंसे एक तलवार खींचकर खाँके कन्धेपर जोरसे जमायी। खाँने अपने साथियोंको सहायता करनेके लिये पुकारा, आवाज सुनते ही सय्यद बांदा तथा अन्य लोग दौड़े चले आये। सय्यद बांदा तथा उसके साथियोंने अफजलखाँको पालकीमें रख लिया और चाहा * कि उसे गांवको ले चलें परन्तु शिवाजी और जीवामहाला सय्यदपर टूट पड़े और सम्भाजी कावजीने पालकी ले जानेवालोंके पैरोंमें इतने जोरसे चोट पहुंचायी कि उन्होंने लाचार होकर पालकी पटक दी। संभाजी कावजीने खाँका सिर काट लिया और शिवाजीको भेंट किया। खाँके साथ एक और ब्राह्मण कृष्णाजी नामका था। उसने शिवाजीपर आक्रमण किया। शिवाजीने उसे दो तीन घाव देकर कहा —"जाओ मैं अपने पिताके आज्ञानुसार तुम्हारा वध नहीं करता।" यह कहकर उन्होंने उसे छोड़

* प्रो० यदुनाथ सरकारने लिखा है कि शिवाजी और उनके साथियोंने दर असलमें अपनेको रक्षित देखकर, प्रतापगढ़की पहाड़ी चोटीपर नगाड़ा बजा और बन्दूकें तोप चलायी, जिनके सुनते ही शिवाजीकी सेनाने कोंकणी सेनापर आक्रमण किया। यहाँ चोरमें हजारों आदमियोंमें कोंकणी सेनाको घेर लिया। चिटनीस कहता है कि [illegible] बड़ी साहस [illegible] किया था। [illegible] लिखा है कि खाँकी [illegible] तथा दूसरे भागोंने [illegible] खाँका सिर काटा था। [illegible] और सभासद दोनोंने लिखा है कि शिवाजीको [illegible] [illegible]ने खाँका सिर काटा था। [illegible] कहा गया है कि [illegible] पालकी में अफजलखाँपर आक्रमण किया था, [illegible] शिवाजीने खाँका सिर काटा था।

दिया। इसपर शिवाजीने अपनी सीसका डङ्का बजवा दिया। बस फिर क्या था विजयदुन्दुभी सुनते ही शिवाजीकी समस्त सेना बीजापुर-दरबारकी सेनापर टूट पड़ी। मणिहीन होनेपर सर्पकी जो दशा होती है, पतिव्रता स्त्रीके पतिविहीन होनेपर जो हालत हो जाती है, ठीक वैसी ही दशा खांकी सेनाकी हुई। कुछ सेकंडोंमें ही बीजापुरी सेना और शिवाजीकी सेनाका संग्राम समाप्त हो गया। नेताजी पालकरने बीजापुरी घुड़ सवारोंका अच्छी तरहसे सामना करके पराजित किया। जिन्होंने पैदल भागना चाहा, उन्हें पैदल सेनाने काट डाला। बीजापुरी सेनाके बहुतसे मनुष्य मारे गये, परन्तु जिन्होंने आत्मसमर्पण कर दिया वे नहीं मारे गये। बीजापुरी सेनामें जो मराठे थे, उन्होंने शिवाजीकी उदारता देखकर शिवाजीसे उनके आश्रयमें रहनेकी प्रार्थना की, शिवाजीने खुशीसे अपने यहां उन मराठोंको आश्रय दिया। मराठोंमें झुंजारराव घाटगे नामक एक सरदार था, घाटगेके पिता और शिवाजीके पिता राजा शाहजीमें बड़ी मित्रता थी। इसलिये शिवाजीने बहुत चाहा था कि घाटगे उनके यहां रहे, पर घाटगेने यह बात मंजूर नहीं की, स्वतन्त्रताके निमित्त वह बीजापुर-दरबार छोड़ नेको तैयार नहीं हुआ। शिवाजीने बड़े दुःखसे घाटगेको अपने यहांसे विदा किया। उन्होंने घाटगेको विदा करते समय उसे खिलअत दी और सम्मानस्वरूप कुछ जवाहरात भी उसको भेंट किये। अफजलखांके बेटे फजलमहम्मदने तीन

खाँ सवारोंके साथ कान्होजी जाधवकी सहायतासे भाग कर कराड़ नामक स्थानमें आकर शरण ली। किन्तु बीजापुर सेनाका समस्त सामान तम्बूखेमे, तोपें, रसद, घोड़े हाथी आदि शिवाजीके हाथ लगे। उन्होंने लूटका बहुतसा भाग अपने सैनिकोंमें बाँट दिया। उन्होंने * पन्तजी गोपीनाथको हिवरा नामक एक गाँव प्रदान किया। जिस विश्वासराव गुप्त चरने उन्हें सबसे पहले खाँके विश्वासघातक विचारकी सूचना दी थी उन्होंने उसे बहुतसा सुवर्ण पारितोषिक स्वरूप दिया।

शिवाजी और बीजापुरी सेनाके पारस्परिक संग्रामके सम्बन्धमें जो कुछ ऊपर लिखा है, उसके अतिरिक्त किसी किसी इतिहास लेखकने इस युद्धका वृत्तान्त इस प्रकार भी लिखा है, कि बीजापुरी लश्करके ऊपर चारों ओरसे मोरो त्र्यम्बक और नेताजी पालकरकी सेनाएँ और हजारों मावली टूट पड़े। अफज़लके समस्त सैनिक—क्या साधारण सिपाही क्या अफसर—अपने सरदारकी मृत्युके कारण भयभीत हो गये थे और आकस्मिक आक्रमणके कारण उन्हें उस जंगल प्रदेशमें प्रत्येक झाड़ी दुश्मनोंसे भरी हुई प्रतीत होने लगी थी। भागनेकी जो राह थी, वह रोक दी गयी थी, इसलिये उन्हें लड़नेके लिये विवश होना पड़ा। विपद्-जालमें फँसे हुए सैनिकोंको लगभग तीन घंटे तक अपने बचावके लिये बिना किसी साधारण सरदारके और बिना किसी

* [illegible] हिवरा गाँव [illegible] दिया होगा। क्योंकि [illegible] हिवरा [illegible]

पथप्रदर्शकके छितरे हुए दलोंमें लड़ना पड़ा था। मराठे लोग अपने मैदानमें ही, विजय कामनाकी पूर्ण आशासे लड़ रहे थे। उन्हें यह भी विश्वास था कि समय आनेपर उन्हें पीछेसे विपद्में सहायता मिल सकती है। मराठी सेना अपने योग्य सरदारों द्वारा परिचालित हो रही थी। बीजापुरी सेनाकी बड़ी भयङ्कर परिस्थिति थी। बीजापुरी सेनामेंसे जिन्होंने अपने दाँतों तले घास दबाकर प्राणभिक्षाके लिये प्रार्थना की थी उन्हें शरण दी गयी और नहीं तो बाकीके लोग तलवारके सहारे दूसरी दुनियांमें पहुँचाये गये। शिवाजीके मावली पैदल सैनिकोंने इस युद्धमें अत्यन्त वीरता प्रकट की थी। उन्होंने भागते हुए हाथियोंकी पूँछें काट डालीं, उनके दाँत काट डाले, उनके पैर काट डाले। यहांतक कि आक्रमणकारियोंके बीचमेंसे जो ऊंट निकले थे, वे भी काट डाले गये थे *।

इस युद्धमें विजेताओंके हाथ लूट भी पूरी लगी, समस्त तोपखाना, रसद ढोनेवाली गाड़ियां, खजाना, खेमे, असबाब ढोनेवाले जानवर आदि सभी पूरा सामान विजेताओंके हाथ लगा। जिसमें ६५ हाथी, चार हजार घोड़े, बारह सौ ऊँट, कपड़ोंकी दो हजार गांठें और दस लाख रुपये नकद थे। इसके अतिरिक्त बहुतसे जवाहरात भी प्राप्त हुए। कैदियोंमें बीजा

* उन दिनों राजापुरमें अङ्गरेजोंकी एक फैक्टरी थी। वहीं इस घटनाके थोड़े दिनों पीछे जो रिपोर्ट मिली, उसमें लिखा हुआ था कि इस युद्धमें तीन हजार आदमी मारे गये थे।

पुरी दरबारके एक उच्च पदका सरदार, अफज़लखांके दो सगे, दो मराठा सरदार—झम्बाजी भोंसले, कृष्णाजी घाटे भी थे। शिवाजीने कैदियोंमेंसे समस्त बच्चे, ब्राह्मण और लेने भाड़े व आनेवाले नौकरोंको उसी समय छोड़ दिया। पराजित सेनाका एक दल जिसमें अफजलखांकी स्त्रियां और सबसे बड़ा लड़का अफजलखां था * काम्होजी आपड़े और उनके तीन सौ मावलियोंकी सहायतासे कोहना पहुँचे।

युद्ध समाप्त होनेके पीछे शिवाजीने प्रतापगढ़के नीचे अपनी सेनाका, लूटके सामानका तथा कैदियोंका निरीक्षण किया। शत्रुपक्षके बड़े बड़े सैनिक और सिपाही जो उनकी कैदमें आ गये थे उन्हें दयालुहृदय शिवाजीने छोड़ दिया और रुपया पैसा, खुराक तथा अन्य आवश्यक पदार्थ देकर उन्हें उनके घर बिदा किया। जो मराठे वीरतापूर्वक लड़े, उन्हें पारितोषिक मिला, जो मराठे शिवाजीकी ओरसे बीजापुर सेनासे युद्धमें मारे गये थे, उन मृत मराठोंके जो पुत्र अपने पिताओंके काम सम्हालने योग्य थे, उन्हें उनके पिताके पदपर नियुक्त किया, जिन विधवाओंके कोई नहीं था उनको उनके पतिके वेतनमेंसे आधा वेतन सहायतार्थ पेन्शनके रूपमें दिया गया। घायलोंको २५ हुणसे दो सौ हुणतक, जैसी जिसके चोट आयी थी, उसके अनुसार सहायतार्थ दिये गये। इसके अतिरिक्त शिवाजीने अपने

---

* किसी किसी इतिहास लेखकने लिखा है कि शिवाजीने [illegible] फिर उसकी [illegible] दिया था।

सैनिक अफसरोंको भी जागीर, खिलमत, जवाहरात, हाथी घोड़े, आदि दिये।

इसके पीछे अपने एक हाथमें अफजलखांका सिर लेकर शिवाजी अपनी माता जीजाबाईके पास पहुंचे। जीजाबाई पहाड़ परसे खड़ी हुई अफजलखां और शिवाजीका मल्ल युद्ध बीजापुरी और मराठी सेनाका संग्राम, देख रही थीं। जिस समय शिवाजी उनके पास पहुंचे वे अफजलखांका सिर देखकर बहुत प्रसन्न हुईं। उन्होंने शिवाजीको आशीर्वाद दिया और अपने ज्येष्ठ पुत्र अर्थात् शिवाजीके बड़े भाई सम्भाजीकी मृत्युका बदला लेनेके लिये शाबासी दी। शिवाजीने अफजलखांका सिर, भवानीके भेंटस्वरूप पहाड़पर गड़वा दिया और वहांपर एक बुर्ज बनवायी जो मराठा अफजल बुर्ज अर्थात् अफजलखांकी बुर्जी कहलाती है। अभीतक शिवाजीके वंशधरोंके पास अफजलखांकी तलवार विजयचिह्नके स्वरूपमें है। अफजलखांके खेमेके ऊपर जो सोनाका गुम्बज (शिखर) था, उसे उन्होंने महाबालेश्वरके मन्दिरपर चढ़वा दिया जो अबतक उक्त मन्दिरकी शोभा बढ़ा रहा है। उन्होंने अफजलखांकी जो समाधि बनायी थी, वह अबतक मौजूद है। शिवाजीके राज्यमें अफजलखांपर विजय प्राप्त होने पर बड़ा भारी हर्ष मनाया गया। प्रतापगढ़ तथा अन्य स्थानोंमें बड़ी धूमधामसे आनन्दोत्सव मनाया गया। गाना बाद्य हुआ। प्रत्येक घरके दरवाजेपर ध्वजा, पताका और विजयतोरण बांधे गये। राज्यकी ओरसे हाथियोंपर लादकर शक्कर और मिठाई

सर्वसाधारणमें बांटी गयी। साधु और गुसाइयोंको देवपूजार्थ बहुतसा धन दिया गया। ब्राह्मणोंको दक्षिणास्वरूप बहुत धन दिया गया। भूखोंको भी अन्न, वस्त्र दिये गये। अफजलखांके पराजित होने और मारे जानेका समाचार शिवाजीने समस्त मित्र, बन्धु और हितैषियोंको भेजा। अपने पिता, राजा शाहजीके पास कर्नाटकमें उन्होंने एक विशेष दूत द्वारा अफजलखांकी मृत्यु का समाचार भेजा। अफजलखांको पराजयका उत्सव समस्त राज्यमें राष्ट्रीय विजय समझा गया। वास्तवमें शिवाजीकी यह विजय अद्भुत थी। इस विजयसे उन्हें स्वराज्य स्थापनाकी कामनामें बहुत कुछ सफलता प्राप्त हुई थी। समस्त महाराष्ट्र प्रान्तमें इस विजयपर आनन्द मनाया गया। कहा जाता है कि जीजाबाईकी आज्ञासे शिवाजीके दरबारके कवियोंने अफजलखांकी पराजय और मृत्युके सम्बन्ध कवितायें रची थीं जिन्हें पोवाड़ा कहते हैं और जिन्हें इतने दिन बीत जानेपर भी, महाराष्ट्र लोग बड़े चावसे गाते हैं।

अफजलखांकी मृत्युके सम्बन्धमें हिन्दू, मुसलमान इतिहास लेखकोंमें परस्पर मतभेद है। मराठा इतिहास-लेखक ग्राण्ट डफने भी बिना कुछ सोचे विचारे आंखें मीचकर, अफजलखांके वधकी घटनाके सम्बन्धमें खाफीखांका अनुवाद किया है और मिस्टर एच० जी० राविन्सन साहबका अङ्गरेजीमें लिखा हुआ शिवाजीका चरित्र जो सन् १९१५ ई० में प्रकाशित हुआ है, उसमें भी शिवाजीपर ही इस घटनाके सम्बन्धमें दोष

रोपण किया गया है। अतएव इस विषयमें यहां विचार करना अत्यावश्यक है। पाठकोंको यह स्मरण रखना चाहिये कि जिस समयकी यह घटना लिखी जा रही है, उस समय हिन्दू मुसलमानोंका आपसमें इतना प्रेम न था जितना कि अब है। मुसलमान और हिन्दुओंका उस समय विजेता और विजितका सम्बन्ध था। दूरदर्शी पाठकोंसे यह छिपा हुआ नहीं है कि विजित जाति और विजेता जातिका आपसमें कैसा सम्बन्ध रहता है। इसके उदाहरणके लिये, यहां इतिहासकी बड़ी बड़ी घटनाओंके उल्लेख करनेकी आवश्यकता प्रतीत नहीं होती है। विजित और विजेताओंके आपसके व्यवहारके उदाहरण संसार में प्रत्येक देशमें और प्रत्येक समयपर मिलते हैं। अतएव जिस समय अफजलखां और शिवाजीका यह द्वन्द्व युद्ध हुआ था, उस समय हिन्दू और मुसलमानोंका विजित और विजेताका ही सम्बन्ध था। पर साथ ही ऐसे स्वार्थी हिन्दू, मुसलमानोंकी भी कमी न थी जो अपनी जातिके हानि-लाभकी ओर न देखकर अपना मतलब गांठते थे। ऐसे बहुतसे मुसलमान थे जो हिन्दू राजाओंके अधीन रहकर अपने मुसलमान भाइयोंसे लड़ते थे और ऐसे हिन्दुओंकी संख्या तो बहुत ही थी, जो अपने हिन्दूधर्म और जातिके स्वार्थका तनिक भी ध्यान न करके अपना मतलब गांठनेके लिये मुसलमानोंके अधीन रहकर हिन्दुओंको सताते थे। इसलिये इतिहासकी घटनाओंको लेकर हिन्दू और मुसल मान, अथवा अन्य किसी जातिपर दोषारोपण करना ठीक

नहीं जंचता है, न इतिहासकी घटनाओंको लेकर कभी किसी जातिपर आक्षेप करना उचित है। इससे यह तात्पर्य नहीं कि ऐतिहासिक घटनाओंपर विचार ही न किया जाय अथवा ऐतिहासिक घटनाओंकी सचाईकी खोज ही न की जाय। पर ऐतिहासिक घटनाओंकी आलोचना करते समय यह ध्यानमें अवश्य रखना चाहिये कि किस कालकी घटना है और उस समय कैसी परिस्थिति थी।

ऊपर अफजलखांके वधके सम्बन्धमें जो कुछ लिखा गया है वह किनकेड साहबकी अङ्गरेजी पुस्तक और वेलुस्करकी मराठी पुस्तकके आधारपर कुछ परिवर्तित करके लिखा गया है। मराठीमें गीतोंको पोवाडा कहते हैं। शिवाजीके सम्बन्धमें मराठी भाषामें ऐसे पोवाड़े बहुतसे प्रचलित हैं। उनमेंसे अफजलखांके वधके सम्बन्धमें भी एक पोवाड़ा प्रचलित है। किनकेड साहबने उक्त पोवाड़ेके आधारपर ही अफजलखांके वधका वृत्तान्त लिखा है। हो सकता है कि उक्त पोवाड़ेमें शिवाजीका पक्ष किया गया हो पर इससे यह तात्पर्य्य नहीं निकलता है कि गीतोंमें खाली गपोड़ेबाजी भरी होती है। नहीं, गीतोंमें बहुतसा तथ्य होता है। भारतके इतिहासकी बहुतसी सामग्री गीतोंमें मिलेगी। कर्नेल टाड साहबने अपना प्रसिद्ध ग्रन्थ राजस्थान (राजपूतानेका इतिहास) चारण और भाटोंके पुस्तकोंके आधार पर ही लिखा था। आज भी राजपूतानेमें ऐसे चारण और भाटोंकी कमी नहीं है कि जिनके यहां खोजनेसे इतिहासकी

सामग्री न मिल सके। फायर्स (Fobers) साहबने "रास माला" नामक एक पुस्तक अङ्गरेजीमें लिखी थी। यह भी "राजस्थान" के समान ही लिखी गयी है, इसमें गुजरातका इतिहास है। अतएव यह दावा कोई नहीं कर सकता है कि गीतोंमें खाली गपोड़ियाओ ही भरी होती है और उनमें कुछ भी ऐतिहासिक तत्त्व नहीं होता है।

अफजलखांके वधके सम्बन्धमें अबतक इतिहास-लेखकोंमें जो मतभेद चला आता है वह यह है कि शिवाजीने अफजलखां की धोखेसे हत्या की थी, दूसरी ओरसे कहा जाता है कि पहले अफजलखांने शिवाजीपर वार किया था, तब शिवाजीने अपनी रक्षाके निमित्त अफजलखांका वध कर दिया था। बस, इस मतभेदको लेकर बड़े बड़े पोथे बन गये हैं पर कोई भी अपने पक्षसे नहीं टलता है। मालूम होता है कि यह मतभेद शिवाजी और अफजलखांके समयसे ही चला आ रहा है। उस समयके मुसलमान इतिहास-लेखकोंने शिवाजीको सग (कुत्ता) और काफिरतक लिखनेमें सङ्कोच नहीं किया है तब यह कैसे कहा जा सकता है कि उन्होंने अफजलखांके वधकी घटनाका बिना किसी पक्षपातके उल्लेख किया होगा। पर साथ ही हिन्दू इतिहास लेखकोंके सम्बन्धमें भी बिना किसी सङ्कोचके यह कहा जा सकता है कि "छोटे मियां तो छोटे मियां, पर बड़े मियां सुबान अल्लाह।" उन्होंने भी शिवाजीका पक्षपात किया होगा और अफजलखांके वधके सम्बन्धमें शिवाजीको कलङ्कसे मुक्त

करने और अफज़लखांको दोषी ठहरानेके लिये चेष्टा की होगा। अतएव हिन्दू और मुसलमान इतिहास-लेखकोंमेंसे कौन झूठा और सच्चा है इस विषयमें कुछ कहना कठिन है। पर हां यह प्रत्येक हिन्दू और मुसलमानको मानना पड़ेगा कि उस समय ही नहीं, आजकल भी सभ्यताका दम भरनेवाले राष्ट्र अपने देश हितके लिये अनेक काम जो न करनेके होते हैं, उन्हें भी कर डालते हैं। साधारणतः जिन कार्यों को निकृष्ट समझा जाता है, घृणाकी दृष्टिसे देखा जाता है, उन कार्योंको भी सभ्यताकी डींग हांकनेवाली जातियां राष्ट्र और देशहितकी दुहाई देकर कर डालती हैं। इतिहास पुकार पुकार कर कह रहा है कि पलासीके मैदानमें बङ्गालके अन्तिम नवाब सिराजुद्दौलाके सेनापति मीरजाफरको कुटिलनीतिके कुचक्रमें न फाँस लिया जाता तो विजय-लक्ष्मी लार्ड क्लाइवसे कदापि प्रसन्न न होती, यदि प्रथम सिक्ख युद्धके समय सिक्ख सेनापतियोंको सोने चांदीके लोभमें न फंसाया होता तो कदापि पञ्जाबकी स्वाधीनता हरण न होती। सच बात तो यह है कि संसारमें ऐसी बहुत कम जातियां मिलेंगी, जिन्होंने शुद्ध व्यवहारसे ही राजनीतिमें काम लिया हो। हाँ, ऐसे बहुतसे उदाहरण मिलते हैं जिन्होंने युद्धमें, राजनीतिमें सीधेसादे नियमोंका पालन किया है, और उन्हें अनेक बार अपने प्रतिपक्षियोंके सामने नीचा देखना पड़ा है।

शिवाजी और अफज़लखांके द्वन्द्वयुद्धके सम्बन्धमें हमें भी स्वर्गीय स्वनामधन्य रावबहादुर श्रीयुक्त महादेव गोविन्द रानाडे

के शब्दोंमें कहना पड़ता है कि शिवाजी और अफजलखांकी भेंटके समय जो घटना हुई थी, उसे विविध लेखकोंने भिन्न भिन्न प्रकारसे वर्णन किया है। ग्राण्ट डफने मुसलमान इतिहास-लेखकों-के आधारपर जो अपना इतिहास लिखा है, उसमें शिवाजीपर विश्वासघात करनेका दोषारोपण किया है। कहा है कि उन्होंने पहले प्राणलेवा वाघनख और भवानी तलवारसे अफजलखांपर आक्रमण किया था।* इसके विपरीत मराठा इतिहास

"What happened at the interview has been variously described The Mahomedan historians whom Grant Duff follows charge Shivaji with treachery in the first attack he made with the fatal Wagaha nakha (tiger claws) and the Bhawani sword; while the Maratha chroniclers both Sabhasada and Chitnis state that the stalwart khan first seized Shivaji's neck by the left hand and drawing him towards himself, caught him under his left arm, and it was not till the khan's treachery was thus manifested that Shivaji dealt the fatal blow In those times the practice of treachery on such occasions was a very common occurence and it may be presumed that both Afzal Khan and Shivaji were prepared for such a risk Shivaji had on his side strong motives he had his brother's death and the desecration of the Tuljapur and Pandharpur temples to avange He knew he was then unequal to face the enemy in the open field The success of all that he had achieved and planned during the past twelve years depended on the result. He had therefore stronger motives to effect his purpose by stra-

लेखक समासद् और चिटनीस दोनों लिखते हैं कि इस विश्वास घातक खाँने पहले शिवाजीकी गर्दन बायें हाथसे पकड़ ली और अपनी ओर खींच कर उन्हें अपनी बाईं बगलमें दबा लिया। इस प्रकार जब शिवाजीको खाँकी दगाबाजीका पता लगा तब उन्होंने उसपर वार किया। उन दिनोंमें इस प्रकारसे विश्वास घात करना एक साधारण बात थी, यह कहा जा सकता है कि अफजलखाँ और शिवाजी दोनों ही ऐसे खतरेसे खाली न थे। इसके अतिरिक्त शिवाजीके लिये तो पर्य्याप्त कारण भी मौजूद थे। उन्हें अपने भाईकी मृत्युका और तुलजापुर तथा पंढरपुरके देवस्थानोंके विध्वंसका बदला लेना था। वे या

tagem than his enemy The personal character of the two men must also be considered The one was apparently vain and reckless while the other was supremely sellpossessed and never beside his guard The arrangements that Shivaji had made for a surprise of the Mahomedan army as soon as Afzalkhan was disposed of and the perfect confusion which followed the attack made by the Marathas also showed that while Shivaji was prepared to follow up the result of the personal interview Afzalkhan s people were wholly unprepared to meet such an attack These considerations certainly lend support to the view to which Mr Grant Duff has given the weight of his authority The fact may well be that where both parties are mutually suspicious of each other each may have misjudged the most innocent motions of the other and he who had taken the least precautions nat

भी अच्छी तरह जानते थे कि वैरीसे खुले मैदानमें लड़नेके लिये वे उस समय सर्वथा समर्थ नहीं थे। पिछले बारह वर्षों में जो कुछ उनके हाथ लगा और जो जो विचार उन्होंने बांधे थे, उन सबकी सफलता केवल इसी लड़ाईके परिणाम पर निर्भर थी। अतएव अपने लक्ष्य और अभिप्रायको युद्धकलाकी पटुतासे प्राप्त करनेके लिये उनके वैरियोंकी अपेक्षा, उनके कारण अधिक प्रबल थे। दोनों मनुष्योंके वैयक्तिक चरित्र और आचरणपर भी विचार करना आवश्यक है। उनमें एक तो (अफजलखां) स्पष्टतः प्रमत्त और अभिमानी था। लेकिन इसके प्रतिकूल दूसरे (शिवाजी) बड़े भारी आत्मविश्वासी और आत्मावलम्बी थे। वे सदा अपनी रक्षाके लिये दत्तचित्त होकर उपाय करते

urally suffered for his folly The will to do mischief might havn been equally operative on both sides though one was aot prepared to take full advantage of the situ ation as it developed itself to the same extent as the other was—"Ranade s Rise of the Maratha Power p p 97 98, 99—रानाडे महोदयके इन वाक्योंका भावार्थ ऊपर लिखा गया है। जिनसे भी चरित्र लेखकोंको यह शंका रहती है कि हिन्दू मुसलमान आपसमें लड़ते रहें और वे कभी मेल मिलापसे न रहें। इसके लिये वे प्रायः अफजलखांके वधका समय समयपर उल्लेख करके हिन्दू मुसलमानोंके मनमें भावना उत्पन्न किया करते हैं। "स्टेट्समैन"में स्वर्गीय लोकमान्य तिलककी मृत्यु हो जानेके पीछे उनके सम्बन्धमें जो एक लेख प्रकाशित किया था, उसमें लिखा था कि तिलकने उन शिवाजीके जन्मोत्सव की नींव डाली, जिन्होंने धोखेपूर्वक अफजलखांको मारा था। "साथ ही स्टेट्समैन" ने रानाडे महोदयके नामकी दुहाई देकर लिखा था कि तिलकने रानाडेके वाक्योंका विरोध किया था। पर वह लिखना उस समय भूल गया कि रानाडे और तिलक दोनोंका अफजलखांके वधके सम्बन्धमें एक सा ही मत था।

थे और इसमें कभी वे लापरवाही नहीं करते थे। शिवजीने अफजलखांके मारे जानेके बाद मुसलमानी सेनापर तुरन्त छापा मारनेके लिये जो प्रबन्ध कर रखा था और इसके साथ ही साथ मराठोंके धावा करनेसे मुसलमान सेनामें जो हलचल मच गयी थी, इन सब बातोंपर विचार करनेसे यही पता लगता है कि एक ओर शिवाजीकी सेनाने तो परस्पर सम्मिलनके आशङ्कित परिणामकी बन्दिश पहलेसे ही बांध रखी थी, किन्तु दूसरी ओर अफजलखांके आदमी इसको रोकनेके लिये बिल्कुल तैयार न थे। इन विचारोंसे ग्राण्ट डफ साहबके कथन और प्रमाणका समर्थन होता है। यह सर्वथा सम्भव है कि इन दोनों दलोंको परस्पर एक दूसरेपर सन्देह था तब एकने दूसरे की साधारण चालोंको ठीक ठीक अनुमान करनेमें भूल की हो, पर जिसने इन बातोंपर ध्यान कम दिया, उसे स्वभावतः अपनी भूलके लिये हानि उठानी पड़ी। सम्भव है कि दुरंदेशात दोनों ओर एक समान ही अपना काम किया हो और अपनी समान परिस्थितिसे पूरा लाभ उठानेके लिये एक तो सर्वथा तैयार हो और दूसरेकी तैयारीमें कुछ कमी हो। स्थिति दोनोंके लिये समान थी। बात यह थी कि अफजलखां अपनी प्रभुत सेनाके घमण्डमें चूर थे, किन्तु शिवाजी अपनी रक्षाके लिये पूर्ण सावधान थे।" स्वर्गीय श्रीयुक्त रानाडे महोदयकी उपर्युक्त सम्मतिको कोई भी विवेकी पाठक अस्वीकार करनेके लिए तैयार न होगा। प्राय सब ही रानाडे महोदयकी उपर्युक्त सम्मतिसे सहमत होंगे।

प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता प्रोफेसर यदुनाथ सरकारने अङ्गरेजी भाषामें शिवाजीके चरित्रके सम्बन्धमें "Shivaji and his times" नामक पुस्तक लिखी है। उक्त पुस्तक बड़ी है और अत्यन्त खोज करके लिखी गयी है। कोई भी सहृदय व्यक्ति प्रोफेसर सरकार पर शिवाजीके किसी प्रकारसे पक्षपाती होनेका दोषारोपण नहीं कर सकता है। क्योंकि वे शिवाजीके चरित्रके लिखनेसे पहले शिवाजीके प्रतिद्वन्दी औरङ्गजेबका भी शिवाजीके चरित्रसे कहीं बड़ा चार भागोंमें चरित्र लिख चुके हैं। अफजलखांके वधके सम्बन्धमें प्रोफेसर यदुनाथ सरकारने भी विशेष रूपसे विचार किया है, वे लिखते हैं:—

"Was the slaying of Afzal khan a treacherous murder or an act of self defence on the part of Shivaji? No careful student of the soures can deny that Afzal khan intended to arrest or kill Shivaji by treachery at the interview. The absolutely contemporary and inpartial English factory record (Rajapur letter 10 act-1659) tells us that Afzal khan was instrutcted by his Government to secure Shivaji by "pretending friendship with him" as he could not be resisted by armed strength, and that the latter learning of the design made the intended treachery recoil on the Khan's

head. This exactly supports the Marathi Chronicles on the point that Shivaji's spies learnt from Afzal's officers of the khan's plan to arrest him by treachery at the pretended interview, and that Afzal's envoy Krishnaji Bhasker was also induced to divulge this secret of his master."

इसका भावार्थ यह है कि यह प्रश्न स्वभावतः ही उठता है कि शिवाजीने अफजलखांका जो वध किया था, वह उनका विश्वासघातक वार था, अथवा उन्होंने अपनी रक्षाके लिये ऐसा किया था? इसके सम्बन्धमें समस्त मूलाधार विषयोंको देख कर कोई भी मननशील विद्यार्थी यह कहे बिना नहीं रह सकता है कि भेंट करते समय अफजलखांका विचार धोखेसे शिवाजीको मारने अथवा कैद करनेका था। उस समय राजापुरमें अंग्रेजोंकी फैक्टरी थी, जिसका किसीसे भी सम्बन्ध न था। उस फैक्टरीके कागजपत्रोंमें १० वीं अक्टूबर सन् १६५९ ई०की एक चिट्ठी है, जिसमें लिखा हुआ है कि बीजापुर सरकारने "मित्रताके बहाने"से शिवाजीको पकड़नेके लिये अफजलखांको नियत किया था। क्योंकि युद्धस्थलसे शिवाजीको रोका नहीं जा सकता था। शिवाजीको जब इनकी चालोंका पता लग गया तो उन्होंने इसके बदलेमें धोखेसे उसका सिर उड़ानेकी ही ठान ली थी। ठीक यही बात मराठी इतिहास-लेखकोंने लिखी है कि शिवाजीके गुप्तचरोंको अफजलखांके कर्मचारियोंसे खांके इस विचारका

पता लग गया था कि उक्त खाँ भेंट करते समय धोखेसे शिवाजी को पकड़ना चाहता है। और शिवाजीके दूत कृष्णाजी भास्करको अपने स्वामीके गुप्त विचारको प्रकट करनेके लिये विवश किया गया।" इसके आगे सरकार महोदयने इस विषयका विवेचन किया है कि पहले किसने वार किया था ? इस विषयमें सरकार महोदयने सबसे जबरदस्त दलील यह पेश की है कि "पुराने मराठा इतिहास लेखक बीसवीं शताब्दीके अङ्गरेजी पढ़े लिखे व्यक्तियोंके समान अपने राष्ट्रीय नेताके प्रशंसावादी न थे, उन सब इतिहास-लेखकोंने लिखा है कि पहले अफजल खाँने ही शिवाजी पर वार किया था। मराठा इतिहास लेखक सच्चे और पुराने थे जब कभी शिवाजीने विश्वासघात किया था अथवा किसीकी हत्या की थी तो उसका भी बिना सङ्कोचके इन पुराने और सच्चे इतिहास-लेखकोंने उल्लेख किया है। इन मराठा इतिहास लेखकोंने ग्राण्ट-डफकी पुस्तकके बहुत पहले ही अपनी पुस्तकें लिखी थीं। इसलिये मराठा-बखरके लेखकोंपर यह आरोपण नहीं किया जा सकता है कि अङ्गरेजी शिक्षा प्राप्त करके इन मराठा बखरके लेखकोंको यह बात सूझी कि अफजलखाँने शिवाजीपर पहले वार किया था। कमसे कम सभासद और चिटनीसके सम्बन्धमें यह नहीं कहा जा सकता है कि उन्होंने अपने नायकके सभी दोषोंको मिथ्या इतिहास लिखकर मिटा दिया है। क्योंकि सभासदने सन् १६९४ ई०में और चिटनीसने सन् १८१० ई०में अपने बखर लिखे थे। उन्होंने यह लिखकर कि

अफजलखाँने पहले शिवाजीपर वार किया था एक सच्ची ऐतिहासिक घटनाका उल्लेख किया है न कि वर्तमान राष्ट्रीय दलका यह आविष्कार है।"

इस स्थानपर एक और शङ्का उत्पन्न होती है कि शिवाजीने अफजलखाँसे भेंट करने जाते समय अपनी रक्षाके लिये जिरहबख्तर और शिरस्त्राण आदि क्यों पहने और अफजलखाँकी सेनाके पीछे अपनी सेना क्यों रखी? क्या इससे उनके विश्वासघातका पता नहीं लगता है? इसका उत्तर यही है कि बड़े बड़े राज्योंने गुप्त वध कराके अपने शत्रुओंको इस संसारसे उड़ा दिया है। शिवाजीसे पहले दक्षिणमें भी अनेक शक्तिशाली व्यक्तियोंके गुप्त वध हो चुके थे, इसलिये अवश्य ही शिवाजीने अपने बचावके लिये जिरहबख्तर और शिरस्त्राण धारण किये थे। किसी किसीको यह भी शङ्का है कि अफजलखाँ विश्वासघात और दगाबाजी ही करना चाहते तो उन्होंने अपनी सेना क्यों नहीं तैयार रखी? इसका सीधा उत्तर यह है कि अफजलखाँका विश्वास था कि शिवाजीकी मृत्यु होनेसे ही उनकी शक्तिका मटियामेट हो जायगा और सेनापतिविहीन मराठी सेना पर फिर आक्रमण करनेकी आवश्यकता नहीं रहेगी। अफजलखाँको यह मालूम ही न था कि शिवाजीकी सेना भी छिप छिपकर वहां पहुंच गयी है। इन सब बातोंके अतिरिक्त स्वयं शिवाजीने* भी अपने गुरु स्वामी रामदासको एक पत्रमें लिखा था—"जब अफजलखाँने मुझे दबा लिया था तब मैं अपनी सब शक्ति

भूल गया पर ज्योंही मैंने अपने गुरुका स्मरण किया त्योंही मुझे फिर नयी शक्ति प्राप्त हुई। यद्यपि प्रो॰ यदुनाथ सरकार तथा अन्य कई इतिहास लेखकोंका इस पत्रकी सच्चाईमें विश्वास नहीं है, परन्तु उन लोगोंने भी अपना यही मत प्रकट किया है कि अफजलखांने ही पहले शिवाजीपर वार किया था पीछे फिर शिवाजीने अपनी रक्षाके लिये अफजलखांका वध किया।*
प्रायः सब ही पाठक जानते हैं कि हिन्दी भाषाके प्रसिद्ध कवि भूषण शिवाजीके दरबारमें थे, उन्होंने भी अफजलखांके वधके विषयमें निम्न लिखित कवित्त लिखा है —

"वैर कियो सिव चाहत हो,
तब लौं अरि बाह्यो कटार कठ्ठो।

* "The weight of recorded evidence as well as the probabilities of the case supports the view that Afzal Khan struck the first blow and that Shivaji only committed what Burke calls a "preventive murder,"— Shivaji and His Times page 81 by Prof Jodu Nath Sarkar —इसका भावार्थ यह है कि अबतक जो लिखित प्रमाण मिलते हैं और उस समयको जैसी परिस्थितिका पता चलता है उससे यो यही प्रतीत होता है कि पहले अफजलखांने वार किया था, शिवाजीने इसके बदलेमें ही वार किया था वह ठीक वैसा ही था जिसको बर्क अपरोधात्मकघात ही कहता था।" प्रोफेसर सरकारके समान ही लगभग तीस वर्ष हुए कि मत मिस्टर पार सी कारर्केटियाने भी मराठा बखरोंके कथनका समर्थन किया था। लगभग एक सौ तेरह वर्ष हुए अर्थात् सन् १८१ ई॰ में स्काट वेरिंग (Scott Waring) ने अपनी —"मराठोंका इतिहास" लिखा था, उसमें भी, मराठा बखरोंके इस कथनका समर्थन किया है कि पहले अफजलखांने शिवाजीपर वार किया था।"

यों ही मलिच्छहि छाँडै नहीं
सरजा मन तापर रोसमें पैठे
भूषन क्यों अफजल्ल बचै,,
अरयाम कै सिंहको पायँ उमैठो
बीछूके घाय धुक्याई धरक है,
सो सग घाय धराधर बैठो"

अफजलखांके वधके विषयमें भूषण कवि इतना ही वर्णन करके चुप नहीं हुए हैं। उन्होंने अफजलखांकी विराटके राजाके साले कीचकसे उपमा दी है, जिसने द्रौपदीका सतीत्व भङ्ग करना चाहा था और भीमसेनने उसे मार डाला था। उस कवित्तका एक वाक्य है—

"हिंदुवान द्रुपदीकी ईजति बचैवे काज
झपटि बिराटपुर बाहर प्रमान कै
बहै हैं सियानी जेहि भीम है अकेले मार्यो
अफजल कीचकको कीच घमसान कै"

क्षणभरके लिये मान ले कि शिवाजीने * विश्वासघातक

*—भूषणने अपनी कवितामें कई स्थानोंमें अफजलखांके मारनेका वर्णन किया है। अफजलखां और शिवाजीके युद्धके सम्बन्धमें भूषणका यह कवित्त भी देखने योग्य है—

"[illegible],
[illegible]।
[illegible]
[illegible]।

ही अफजलखांका वध किया तो इसमें इतनी विडम्बनाकी आवश्यकता ही क्या है ? क्या इतिहासमें ऐसे उदाहरण नहीं मिलते हैं कि राज्यके लोभमें बापने बेटोंका और बेटोंने बापका वध कर डाला है ? हमारी समझमें, शिवाजी अथवा अफजलखां दोनोंमेंसे किसीने एक दूसरेके प्रति क्यों न विश्वासघात किया हो, केवल इस घटनाको लेकर आजकलके इतिहास लेखक धरती और आकाशको एक करनेकी व्यर्थ ही चेष्टा करते हैं। हिन्दू और मुसलमान दोनोंको इतिहासकी एक सामान्य घटनाको लेकर आपसमें वैमनस्य नहीं बढ़ाना चाहिये। इतिहासकी घटना इतिहासमें ही रहने योग्य है, वर्त्तमान समयसे उसका कुछ भी सम्बन्ध नहीं है।

फौजें सेख सैयद मुगल औ पठाननकी,
मिलि इखलास काहू मार न सम्हारे हैं।
हद हिन्दुवानकी बिहद तरवारि राखि,
कैयो बार दिल्लीके गुमान झारि डारे हैं।"

नवां परिच्छेद

बीजापुर राज्यसे युद्ध तथा पितृ-दर्शन।

"कोटगढ़ ढाहियतु एकै बादशाहन के
एकै बादशाहन के देश दाहियतु है।
भूषन भनत महाराज शिवराज एकै
शाहनकी सैन पर खग्ग बाहियतु है।
क्यों न होहिं बैरिन बधूवर बौरीनसी
दौरत तिहारे कहूँ क्यों निबाहियतु है।
राव्रे नगारे सुने बैर बारे नगरन,
नैनवारे नदन निवारे चाहियतु है"

अफजलखांकी मृत्यु तथा बीजापुरी सेनाके पराजित होनेसे बीजापुर-दरबारमें एकदम शोक छा गया। आदिलशाहकी माता बड़ी साहिबाको अपने भतीजेके इस प्रकारसे मारे जाने का अत्यन्त दुःख हुआ। वे इतनी दुःखित हुईं कि उन्होंने तीन दिनतक कुछ खाया पिया नहीं। न केवल बड़ी साहिबाने ही किन्तु आदिलशाह और समस्त दरबारियोंने कितने ही दिनोंतक अफजलखांकी मृत्युके कारण शोकचिह्न धारण किया। तीन

दिनतक बीजापुर राज्यमें शोकके कारण राज्यकी नौबत बन्द रही। आदिलशाहकी राजधानी बीजापुरमें कई दिनोंतक यह अफवाह फैली रही कि शिवाजी राजधानीपर आक्रमण करनेवाले हैं। इधर जब बीजापुर राज्य इस प्रकार शोक-सागरमें डूबा हुआ था तब उधर शिवाजी भी शान्त, चुपचाप अपनी विजयकी खुशीसे फूलकर कुप्पा होकर बैठे नहीं रहे। उन्हें जय और पराजय समस्त अवसरोंपर अपने कर्त्तव्य कर्मका विशेष ध्यान रहता था। अफजलखांके अधीनस्थ बीजापुरी सेनाके पराजित होनेपर बहुतसे हिन्दू सैनिक शिवाजीकी सेनामें सम्मिलित हो गये थे। ये सैनिक जावली और दक्षिण कोकणके पड़ोसमें बीजापुर राज्यके जिलोंतकमें रहते थे। इससे शिवाजीका बल और भी बढ़ गया। उन्होंने शिङ्गारपुरसे मराठोंके एक पुराने घराने (जो बीजापुर-दरबारकी सेवामें था) को हटा दिया। शिवाजीके एक सरदार अण्णाजीदत्तने बिना घेरेके ही पन्हाला*

---

* पन्हाला दुर्गके हस्तगत करनेके विषयमें कई दन्तकथाएं प्रचलित हैं। कहते हैं कि शिवाजीने अपने कुछ सिपाहियोंसे बनावटी विवाद किया और आठ सौ सिपाहियोंके साथ वे सिपाहीगण शिवाजीके दलसे निकल गये और पन्हाला दुर्गके किलेदारसे जा मिले और नौकरी देनेकी प्रार्थना की। किलेदारने बिना समझे बूझे उन्हें अपने यहां नौकर रख लिया। पीछे शिवाजीने गढ़पर चढ़ाई की। गढ़के एक ओर युद्ध हो रहे थे। शिवाजीकी सेनासे अलग होकर जिन सिपाहियोंने गढ़में नौकरी कर ली थी उन्होंने मदद की। रातके समय शिवाजीके योद्धा पेड़ोंपर चढ़कर किलेमें कूद गये और किलेवालोंसे अत्यन्त वीरतापूर्वक युद्ध कर किलेके द्वारको खोल दिया। कुछ देर तक तो घोर युद्ध हुआ अन्तमें किला शिवाजीके हाथ आया पर मिस्टर किनकेड और प्रोफेसर यदुनाथ सरकार दोनोंने इस प्रकार लिखा है कि

दुर्गको ले लिया जो कि कोल्हापुरके पास है। इसके अतिरि
और भी कई स्थानोंपर शिवाजीकी सेनाने अधिकार कर लिया
थोड़े दिनों पीछे ही पावनगढ़ और वासन्तगढ़ भी उनके हा
आ गये। रांगणा और खेलनापर भी उन्हें विजय प्राप्त हुई
शिवाजीने खेलनाका नाम बदलकर विशालगढ़ रखा। क
अफजलखांकी मृत्युके कुछ दिनों पीछे शिवाजीको अपने उत्त
स्वराज्य स्थापनमें और भी सफलता प्राप्त हुई। कोंकण
राज्यके आसपासके बहुतसे किले उनके अधीन हो गये।

बीजापुर-दरबारमें अफजलखांकी मृत्युसे पहले ही मार

छा रहा था कि अब शिवाजीकी लगातार सफलताओंने बीजा पुर-दरबारके शोकको और भी बढ़ा दिया। बीजापुर-दरबारने शिवाजीकी सेनाको रोकनेके लिये मीराजके फौजदार रुस्तम खांको नियुक्त किया और उसे शीघ्र ही कोल्हापुर जाने और शिवाजीको जावलीसे खदेड़नेकी आज्ञा दी। रुस्तमखां, अफजल खांके वधका समाचार सुनकर अत्यन्त भयभीत हुआ। उसकी शिवाजीपर आक्रमण करनेकी हिम्मत नहीं हुई, पर बीजापुर-दरबारकी आज्ञासे वह अपने तीन हजार सैनिकोंको लेकर शिवा जीका सामना करनेके लिये आ पहुंचा। शिवाजीने रुस्तमखां को पन्हालातक आनेका अवसर दिया फिर अपनी बहुतसी सेना लेकर उसकी सेनापर टूट पड़े। इससे रुस्तमकी विशेष क्षति हुई, उसकी सेना मैदानमें ठहर न सकी। उसको अपने स्थान मेराजतक लौटनेमें भी बड़ी कठिनाई उपस्थित हुई। शिवाजी ी सेनाने रुस्तमखांको कृष्णानदीके पार खदेड़ दिया और कई ासक रुस्तमखां और उसकी सेनाका पीछा किया। पीछा रती हुई शिवाजीकी सेना बीजापुरके फाटकतक पहुंच गयी। चढ़ाईमें उनके हाथ जो लूट लगी, वह उन्होंने विशालगढ़में रक्खी।

विशालगढ़ पहुंचकर उन्होंने आणाजीदत्ताके अधीन एक बल सैन्यदल तैयार किया। इसमें उनका उद्देश्य राजापुर और कोंकण प्रान्तके उन नगरोंपर जो समुद्र किनारे बसे हुए थे आक्रमण करनेका था। पहली बार राजापुरकी उनके आक्र

मणसे रक्षा हुई क्योंकि उस समय राजापुर फैक्टरीमें जो अंग्रेज सौदागर थे, उन्होंने लिखा कि यह बन्दर रुस्तम जमाके अधीन है जिससे शिवाजीका गुप्तरूपसे समझौता हो चुका है। यह पत्र पाकर शिवाजीने राजापुरपर आक्रमण नहीं किया। पर शिवाजी खाली हाथ लौटनेवाले न थे, उन्होंने दाभोलेके किलेपर आक्रमण किया। दाभोलेका किला शिवाजीके हस्तगत हुआ। दाभोलेसे शिवाजी राजगढ़ लौट आये, यहां उन्होंने फिर चेउलपर चढ़ाई की। चेउल उन दिनों प्रधान नगरोंमेंसे था। लगातार तीन दिनतक चेउलमें लूट होती रही। चेउलका सैनिक शासक जिसका नाम खोजाजी था पकड़ा गया, नगरपर शिवाजीका झण्डा फहराया। जो लूट हाथ लगी, वह राजगढ़के किलेमें भेज दी गयी। कोकणके बन्दरगाहोंसे आदिलशाहके जो आदमी भागे थे उन्होंने राजगढ़में शरण ली। पन्हालामें शिवाजीने रुस्तमजमांपर जो विजय प्राप्त की थी उससे आदिलशाहके आदमी डर गये। वे सुन चुके थे कि शिवाजीने बीजापुरके आसपास और खास बीजापुरके फाटकतक चढ़ाई करके लूट मार मचाई थी। इन सब समाचारोंने उन्हें और भी भयभीत कर दिया था। चेउलके शासकने रुस्तम जमाके एक जहाजमें बैठकर भागनेकी चेष्टा की, मराठोंने उसे रोकना चाहा तो उस शासकने यह उत्तर दिया कि यह जहाज ईस्ट इण्डिया कम्पनीका है। पर वास्तवमें यह बात न थी। कम्पनीका प्रेसिडेंट रेविंगटन, आस्मिकतासे

मीर ...सकसे मिल गया था। उसने मराठोंको जहाज सौंपनेसे ...कार किया। इसपर मराठोंने कम्पनीके दो दलाल और ...अङ्गरेजोंके एक प्रतिनिधि (इङ्गलिश पैक्टर) फिलिप गायफोर्ड (Phillip Gyfford) को पकड़ लिया और उन्हें कारेपत्तनको ... भेज दिया। उस समय शिवाजी राजापुरमें थे। जब उन्होंने यह समाचार सुना तब उन्होंने दोनों दलाल और फिलिप गायफोर्डको छोड़नेकी आज्ञा दी। उनकी आज्ञाके अनुसार वे लोग छोड़ दिये गये।

इस प्रकार शिवाजीको आगे बढ़ते हुए देखकर ... मारे ...पापकी बड़े सोचमें पड़े। वे शिवाजीका दमन करनेका ...७ ई० सन् ...की। अन्तमें बहुत सोच विचारके पीछे अपना मङ्गल समझा। पहुँचे कि वंशपरम्परागत जो ...पाधि देकर समस्त दक्षिण-कोकण ...लको शिवाजीका साम..., पर लाखम सावन्तकी मित्रता अपने ... को सेमना चाहिये ... गिरगिटकी भाँति रङ्ग पलटती थी। जब ... कारण बीरत...ने शिवाजीके सरदार श्यामराजको पराजित इस कार्यके ... उक्त लाखमकी मित्रता शिवाजीसे मिट गयी।

* ...के पीछे जब उसने देखा कि अब शिवाजीसे झगड़ा ...नेकी विपत्ति मोल लेनी है तब फिर नये सिरेसे ...से मित्रता कर ली और शिवाजीको दक्षिणी कोकण ...अन्तवाड़ीका आधा कर देना स्वीकार किया, इसके ...शिवाजीको सहायता देनेके लिये तीन हजार पैदल ...की प्रतिज्ञा की। परन्तु लाखम सावन्त शिवाजीका

मुखाम दरबार ... विरुद्ध ... में बीजा... यह ... के ... दिया ...

तसिद्दी जौहरकी सेनाने कई बार आक्रमण किया परन्तु सिद्दी जौहरने पन्हालाके दुर्गको घेरा। नेताजी पालकरने उसकी सेनाका मार्ग रोक दिया। उसने मावलोंके चुने हुए पैदल सैनिक पन्हालाके चारों ओर पहाड़ियोंपर तैनात कर दिये थे। मावले पैदल रातके समय घेरा डालनेवालेको तङ्ग करते थे जिससे सिद्दी जौहरकी सेनाकी बहुत क्षति हुई। किन्तु घेरा डालनेवाली सेना बड़ी थी और सिद्दी जौहर भी वीर सेना नायक था। इसलिये वह किसी न किसी प्रकारसे मावलोंके

पेश की। जौहर जो मूर्ख और विश्वासघाती था लालचमें आ गया। उसने शिवाजीको बिना किसी विघ्न बाधाके मिलने और मदद देनेका वचन दिया। उसने ऐसा करनेमें सोचा कि 'शिवाजीके साथ मिलता ही कामसे मैं अपना स्वतन्त्र राज्य आदिलशाहसे अलग स्थापित कर लूंगा।" दूसरे दिन आधी रातके समय शिवाजी अपने दो तीन साथियोंको लेकर जौहरके पास गये और दरबारमें उससे मिले। दोनों ओर आपसमें मेल मिलाप और सहायता देनेके लिये शपथ ग्रहण की गयी। इसके पीछे शिवाजी बहुत जल्दी अपने किलेमें लौट आये और बनावटी घेरा जारी रखा गया और जब आदिलशाहको जौहरके इस विश्वासघात विचार और मनमौजिली बातोंका पता लगा तब वे अत्यन्त क्रोधित हुए और दोनों स्वामियोंको दण्ड देनेके लिये १ ली अगस्तको राजधानीसे चल पड़े। एक दूत जौहरके पास ठीक रास्ते पर लानेके लिये अर्थात् जिस कामको वह करने गया है उसको करनेके लिये भेजा भी पर जौहरको अक्ल ठिकाने नहीं आयी। जब किसी तरहसे अभी आदिलशाह सिराज पहुंच न गये और उनकी सेनाका मुख्य भाग पन्हालाकी ओर बढ़ा तब एक रातको शिवाजी अपने परिवार और पांच छः हजार सैनिकोंके साथ किलेमेंसे चल दिये। स सन् १०७० हि २२ वीं अगस्त सन् १६६० ई० को पन्हाला आदिलशाहके कब्जेमें आया। जैसा कि बीजापुर राज्यके दरबारी कविने नुसरती मारे जोशमें कहा था कि "अलीने एक पलमें सहायतासे पन्हाला ले लिया। देखो, प्रोफेसर यदुनाथ सरकारकी शिवाजी चरित्र जोडक खत बीजापुरके इतिहासमें भी सिद्दी जौहर और शिवाजीकी परस्पर भेंटके सम्बन्धमें ऊपर लिखी हुई घटनाके समान ही उल्लेख है।

आक्रमणको रोकता ही रहा। फतेहखांको भी [illegible] प्रति कुछ सफलता प्राप्त हुई। लखम सावन्तके एक रिश्तेदार सावन्त काया और बाजी फसलकर दोनोंका युद्ध हुआ, जिसमें उक्त दोनों सेनापति मारे गये। इतनेमें वर्षाऋतु भी आ गई पर सिद्दी जौहरने पन्हालाका घेरा नहीं उठाया, उसने वर्षाऋतु-की कुछ परवा न करके युद्ध बराबर जारी रखा, जिससे शिवाजीको बड़ी कठिनता उपस्थित हुई। अकाल भी पड़ने लग गया था। पन्हालापतनकी पूरी सम्भावना प्रतीत होने लगी थी, पन्हालापतनके साथ ही साथ शिवाजीका पतन है अवश्य था जिससे उनकी समस्त आशा-लताओंपर पाला पड़ जाता। किसी किसी इतिहास-लेखकने लिखा है कि शिवाजीने पन्हालागढ़में रहकर दो वर्षतक लड़नेके लिये तैयारी कर ली थी पर किलेके भीतर बन्द रहकर उन्हें बाहरके समाचार नहीं मिलते थे और न वे किलेमें रहकर बाहरके किसी कर्मचारी को आज्ञा दे सकते थे इसलिये शिवाजीके बहुतसे काम रुक गये। पन्हाला दुर्गके पतनकी बिल्कुल आशा न थी। परन्तु जो कुछ हो इस समय शिवाजीकी परिस्थिति बड़ी भयानक थी। उन्होंने एक चाल चली और अपना एक दूत सिद्दी जौहरके पास भेजा। जिसके द्वारा उन्होंने सिद्दी जौहरसे भेंट करनेके लिये कहला भेजा। सिद्दी जौहरने शिवाजीसे मिलना स्वीकार कर लिया। शिवाजी ठीक समयपर सिद्दी जौहरसे मिले। उन दोनोंकी दिनभर पन्हाला दुर्गके समर्पण करनेके

सम्बन्धमें बातें होती रहीं कि किन किन शर्तोंपर पन्हाला दुर्ग समर्पण किया जाय ? करीब करीब सब शर्तें तय हो चुकी थीं, थोड़ी सी बाकी रही थीं जिनके विषयमें यह सोचा गया था कि दूसरे दिन सवेरे तय किया जायगा। बिना किसी विघ्न बाधाके शिवाजी पन्हाला दुर्गमें लौट आये। सिद्दी जौहर और उसके सैनिकोंने समझा था कि चार मासके पीछे पन्हाला दुर्गका पतन कल हो जावेगा, इस आशाके वशीभूत होकर पहरेदारोंने निद्रादेवीकी शरण ली। बीजापुरी सेनाके अफसरोंने उस दिन पन्हाला दुर्गके पतनकी आशासे भोजनके अच्छे अच्छे पदार्थ बनवाये और खाये। जब इस प्रकार बीजापुरी सेनामें सर्वत्र आनन्द छा रहा था तब आधी रातके समय शिवाजी अपने कुछ साथियोंको लेकर पन्हाला दुर्गसे बाहर निकल आये। वे मुख्य रास्तेसे न होकर दूसरे मार्गसे गये जो "शिवाजीकी खिड़की" नामसे विख्यात था। * उन्होंने विशालगढ़ दुर्गका रास्ता पकड़ा। उस समय शत्रुसैन्यमें सन्नाटा छा रहा था।

---

* ग्रांट डफ और रानाडे दोनोंने पन्हाला दुर्ग लिखा है परन्तु किनकेड साहबने कई प्रमाणोंके आधारपर विशालगढ़ लिखा है जो ठीक प्रतीत होता है क्योंकि उस समय शिवाजीने विशालगढ़में बहुतसा माल रखा था जिसकी रक्षा करना भी उन्हें जरूरी था। श्री यदुनाथ सरकारने भी अपनी पुस्तकमें विशालगढ़ ही लिखा है। शिवदिग्विजयमें भी लिखा हुआ है कि शिवाजी खेलना गये थे, जो विशालगढ़के पास है। पन्हालासे खेलना ४१ मील है। विशालगढ़ निकट है। रायरी बखरमें लिखा हुआ है कि शिवाजी अपने बीस हजार साथियों सहित किलेसे निकले और अचानक मुसलमानों सेनापर टूट पड़े और लड़ते भिड़ते विशालगढ़ किलेमें पहुंचे थे। मुसलमानोंने उनका पीछा किया था। इस बखरमें यह कुछ भी नहीं लिखा है कि उन्होंने सन्धिके विषयमें बातचीत की थी।

किन्तु इतनी बड़ी सेनाको लेकर चुपचाप बिना किसी झगड़े और शान्ति भङ्ग किये चलना असम्भव था। बीजापुरी सेनाको शिवाजीके भागनेका पता लग गया, अफजलखांके लड़के फजल मुहम्मदने अपनी घुड़सवार सेना सहित सिद्दी जौहरसे शिवाजी का पीछा करनेकी आज्ञा मांगी। सिद्दी जौहरने उसे पीछा करनेकी आज्ञा दी और स्वयं भी पैदल सेना लेकर शिवाजीका पीछे करनेका संकल्प किया। उस पहाड़ी प्रदेशमें शिवाजीके सैनिक जितनी जल्दी घोड़ेपर चल सकते थे उतने ही पैदल भी चल सकते थे। फजल मुहम्मद अपने पिता अफजलखांके वधका बदला लेनेकी धुनमें था, अतः उसने शिवाजीका पीछा बड़ी तेजीसे किया। लगभग दोपहरके समय फजल मुहम्मदके आदमियोंको शिवाजीके पैदल सिपाही दिखलायी पड़े। जिस तरहसे भूखा बाज मुर्गोंपर टूटता है, उसी तरहसे बीजापुरी सेनाने मराठोंका पीछा किया। उस समय शिवाजी बड़ी विपत्तिमें फंसे।।

पन्हाला दुर्गमें शिवाजीके साथ बाजीप्रभु देशपांडे भी थे। पाठक भूले न होंगे कि यह वे ही बाजीप्रभु देशपांडे थे जो पहले चन्द्रराव मोरेके यहां थे और जिन्होंने अपने स्वामी चन्द्रराव मोरके मारे जानेपर भी शिवाजीका बहुत देरतक सामना किया था। इस युद्धमें बाजीप्रभुकी स्वामि-भक्ति और वीरता देखकर शिवाजी बहुत प्रसन्न हुए थे। उन्होंने उक्त बाजीप्रभुकी प्राण-रक्षा की और अपने यहां रख लिया था। इस पन्हाला युद्धमें उन्हीं बाजीप्रभु देशपांडेने असीम प्रभुभक्ति और वीरताका परिचय दिया।

जिस समय बीजापुर सेना शिवाजीको पकड़नेके लिये पीछा करती हुई चली आ रही थी उस समय बाजीप्रभुने शिवाजीसे चले जानेका आग्रह किया पर पहले शिवाजी बाजीप्रभुके आग्रहको टालते रहे पर अन्तमें वे बाजीप्रभुकी सम्मतिसे सहमत हुए। ठीक ही है —

"कमलनको रवि एक है, रविको कमल अनेक,
हम से तुमको बहुत हैं, तुम से हमको एक"

अन्तमें लाचार होकर बाजीप्रभुके अत्यन्त आग्रह करनेपर शिवाजीने उनका कथन स्वीकार किया और उदास होकर आगेकी ओर किलेपर चढ़ने लगे। शिवाजीके चलते समय बाजीप्रभुने यह भी कह दिया कि "आप किलेपर पहुंचकर पांच तोपोंकी आवाजके द्वारा अपने सकुशल पहुंच जानेकी सूचना मुझे दे दें।"

इधर तो शिवाजी किलेपर आगे बढ़े और उधर पीछेसे बीजापुरी सेना "शिकार भागा, पकड़ो छोड़ो, नहीं" चिल्लाती हुई किलेके पास आ पहुँची। वीर योद्धा बाजीप्रभुने घाटीमें खड़े होकर अपनी सेनाके साथ बीजापुरी सेनाको रोका। दोनों ओरसे घनघोर युद्ध शुरू हुआ। एक बार बाजीप्रभुने ऐसे भीषण वेगसे आक्रमण किया कि बीजापुरी सेना सहन नहीं कर सकी और पीछे हट गयी। किन्तु फाजिलखाँ दूसरी बार सैनिकोंके साथ बाजीप्रभुपर टूट पड़ा। बाजीप्रभुके शरीरमें अनेक घाव आए, परन्तु वे पीछे नहीं हटे, अटल पर्वतके समान समुद्रकी भाँति उमड़ी हुई बीजापुरी सेनाको रोकनेके लिये डटे रहे। उनके पहुतसे वीर मावले रणक्षेत्रमें गिर गये परन्तु वीरवर बाजीप्रभु अत्यन्त साहस और धीरतासे लड़ते रहे। अन्तमें उनके मर्म स्थलमें एक गोली लगी जिससे वे भूमिपर गिर पड़े। यद्यपि अब उनमें उठनेकी शक्ति नहीं रही तथापि भूमिपर पड़े ही पड़े वे अपने वीरोंको उत्साहित करते रहे। अन्त समयतक उनका समस्त ध्यान तोपोंकी आवाजकी ओर था, इतनेमें ही शिवाजीके विशाल गढ़ दुर्गपर सुरक्षित पहुंचनेकी सूचना पांच तोपोंकी आवाजने बाजीप्रभुको मिली। इससे उनको बड़ा आनन्द हुआ और अन्तमें उन्होंने अपने प्राण छोड़ दिये। बाजीप्रभुके साथ सात सौ आदमी और मारे गये। धन्य हैं बाजीप्रभु! आप जैसे वीरपुत्रोंके कारण ही आज भी भारतमाता अपना मस्तक ऊँचा उठाये हुए है। जबतक संसार है तबतक आपकी अजर कीर्ति

रहेगी। कवियोंकी रसमयी कवितामें तुम्हारी कीर्त्ति अनन्त कालतक गूंजी रहेगी। इतिहास लिखनेवालोंकी पक्षपात रहित प्रभावशाली लेखनीसे तुम्हारी कीर्त्ति-कथा अनेकों बार लिखी जायगी। अनन्तकालतक वीरेन्द्र समाजमें तुम्हारा नाम आदर पावेगा। तुम्हारे यशकी विमल पताका सदैव फहराती रहेगी और तुम्हारे यशकी माला सदैव जपी जायगी। तुम सरीखे उन्नत हृदयोंके लिये ही कवि कहता है —*

"दूजेके हित प्राण दे, करै धर्म प्रति पाल
को ऐसो शिवके बिना, दूजो है या काल।"

बाजीप्रभुके साथियोंने बाजीप्रभुकी लाशको युद्धक्षेत्रमें पड़ी हुई नहीं रहने दी। वे उसको विशालगढ़ उठा लाये, वहां उन्होंने

---

* भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र—

† राजा शिविने एक शरणागत कबूतरके लिये अपने प्राण देकर उसकी रक्षा की थी।

‡ भारतके इतिहासमें और भी इस प्रकारके अनेक उदाहरण मिलते हैं। हल्दीघाटीके युद्धमें जब मेवाड़के प्रतापी, राजस्थानकेसरी महाराणा प्रतापसिंह अकबरकी सेनासे घिर गये थे तब सादड़ीके झाला सरदार मन्नाने महाराणा प्रतापसिंहके ऊपरसे राजछत्र हटाकर अपने ऊपर धारण किया था। मुगल-सेनाने झाला सरदार मन्नाको ही महाराणा प्रतापसिंह समझकर घेर लिया। झाला सरदार मुगल-सेनासे लड़कर मारे गये और महाराणा प्रतापसिंहके जीवनकी रक्षा हुई। तराईनके युद्धमें पश्चिम हिंदू सम्राट् महाराज पृथ्वीराज घायल होकर पड़े हुए थे तब गिद्धनी उनकी आंखें निकालनेके लिये उनकी ओर झपटी, उस समय उनके एक दरबारी सामन्तने अपने शरीरका मांस काटकर गिद्धनीकी ओर फेंक दिया जिससे पृथ्वीराजकी आंखें गिद्धनी नहीं निकाल सकी। मेवाड़के भावी महाराणा उदयसिंहकी रक्षाके लिये, पन्ना धायने अपने पुत्रको कटवा दिया था। ऐसे बहुतसे उदाहरण मिल सकते हैं।

बाजीप्रभुके मृत शरीरकी अत्यन्त सम्मानपूर्वक अन्त्येष्टि क्रिया की। शिवाजी बाजीप्रभुके इस उपकारको भूले नहीं। उन्होंने बाजीप्रभुके ज्येष्ठ पुत्र बालाजीबाजीको उसके पिताके पदपर नियुक्त किया। बाजीप्रभुके अधीन जो किला था, वही उनके पुत्रको दिया। इसके अतिरिक्त उन्होंने उसे कुछ जागीर भी दी। बालाजी सात भाई थे अर्थात् बाजीप्रभुके सात बेटे थे। शिवाजीने सातों भाइयोंको बुलाया और उन सबको पालकी दी। सबकी धार्मिक सहायता नियत कर दी और उन सबको मावली सेनाका सबनिशी अर्थात् तनख्वाह बाँटनेवाले नियत किये। रघुनाथ बल्लालको भी शिवाजी भूले नहीं, उसने पन्हाला दुर्गकी रक्षा की थी। शिवाजीने उसे पन्हाला दुर्गका अध्यक्ष नियत किया। उसने पन्हालाका बहुत अच्छा प्रबन्ध किया। जो किसान युद्धके समय अपने घरों और खेतोंको छोड़कर भाग गये थे उसने उन सबको इकट्ठा किया। उसने जमीनपर लगान और कर वसूलीके ऐसे नियम बनाये जिससे किसानोंको बहुत सुविधा हुई। रघुनाथ बल्लालने जैसी सैनिक कार्योंमें योग्यता प्रकट की थी, वैसी ही योग्यता प्रबन्ध करनेमें प्रकट की।

विशालगढ़में शिवाजीके पहुँचनेके पीछे बीजापुरी सेनाकी भी हिम्मत टूट गयी। उसने विशालगढ़पर चढ़ना उचित नहीं समझा। उसने विशालगढ़के पास गजपुरी नामक एक गाँवमें डेरा डाला। सिद्दी जौहर तथा उसके साथी कुछ दिनोंतक यही सोचते रहे कि अब क्या करना चाहिये। पश्चिमकी ओरसे

विशालगढ़पर चढ़ाई करना असम्भवसा था। सिद्दी जौहरने पूर्वकी ओरसे सुरङ्ग खोदकर किलेको उड़ाना चाहा। शिवाजीको सिद्दी जौहरके इस विचारका पता लग गया। उन्होंने बीजापुरी सेनाकी सुरङ्गोंको उड़ा दिया जिससे बीजापुरकी ओरसे जो सुरङ्ग खोदनेवाले थे वे भी मारे गये। अली आदिलशाह सिद्दी जौहरके सफलता प्राप्त न करनेपर बड़े नाराज हुए और उन्होंने सिद्दी जौहरको सेनापतिके पदसे हटा दिया। स्वयं अपनी सेनाके सञ्चालनका भार लिया। बीजापुरी सेना अपने बादशाह अली आदिलशाहको सेनापतिका कार्य्य करते हुए देखकर विशेष उत्साहित हुई। इस बार बीजापुरी सेनाको कुछ सफलता भी प्राप्त हुई। उसने पन्हाला दुर्गपर फिर चढ़ाई की। केवल विशालगढ़ और राङ्गणा छोड़कर, बीजापुरी सेनाके हाथमें शिवाजीके अधिकृत नवीन किलोंमेंसे पन्हाला, पवनगढ़ आदि सब किले आ गये। इसी बीचमें वर्षा आरम्भ हो गयी। अली आदिलशाह कृष्णा नदीके किनारे चीमुलगी नामक कसबेमें अपनी सेनाको ले आये। शिवाजी भी, जो किले उनके हाथसे निकल गये थे, उनकी क्षतिपूर्ण करनेकी चेष्टा करने लगे। उन्होंने जञ्जीराके उत्तर-पश्चिममें दण्डा राजपुरी नामक बन्दर गाहपर आक्रमण किया। दण्डा राजपुरीपर आक्रमण करनेमें उनके दो उद्देश्य थे, पहली बात तो यह थी कि दण्डा राजपुरीमें उस समय अच्छा धन था, जिसके कारण बहुतसा द्रव्य शिवाजीके हाथ लगा। दूसरा कारण यह था कि वहां कुछ अङ्ग-

रेजी फैकृरी खुल गयी थीं, जिनके सम्बन्धमें शिवाजीको य सन्देह था कि इन फैकृरियोंने पहली बार जिस समय शिवाजीने जञ्जीरापर आक्रमण किया था उस समय, फतेहखांको सहायता दी थी। उस समय शिवाजीको क्या मालूम था कि यही ये अङ्गरेजी व्यापारी समस्त भारतवर्षके कर्त्ता धर्त्ता विधाता बन जायंगे* और शिवाजीके वंशधरोंको उनके अधीन एक कर देनेवाले साधारण मण्डलेसे अधिक हैसियतकी न होगी। उस समय शिवाजीको यह पता ही न था कि मुगल साम्राज्यके पतनके पीछे एक और ही शक्ति अधिकार जमायेगी। शिवाजीको जिस बातका स्वप्नमें भी अनुमान न हुआ था, वही पीछे हुआ। कवि ठीक कहता है —

> "हमेशा बदलता है ऐसा जमाना
> कि है आज इसका कल उसका जमाना
> दिखाता है नैरङ्ग क्या क्या जमाना
> बहुत याद आता है पिछला जमाना।"

शिवाजी दण्डा राजपुरीसे कुछ आदमियोंको कैद भी कर लाये थे जिनमें चार अङ्गरेज व्यापारी अङ्गरेजोंके एजेण्ट रेवो रेविङ्गटनके साथ गिरफ्तार हुए थे, शिवाजीने पहले इनको तीन वर्षतक वासोतीके किलेमें कैद रखा, पीछे रायगढ़के किलेमें।

* [illegible]

इन अङ्गरेजोंको पकड़नेका कारण यह था कि इन्होंने सिद्दी जौहरको पन्हाला दुर्गके घेरेके समय युद्धके सामानसे सहायता दी थी। बीजापुर राज्यके कुछ अधिकारियोंने भी पन्हाला दुर्गके घेरेमें सहायता देनेके लिये राजपुरी फैक्टरीके कर्मचारियोंको रिश्वत दी थी जिसका बदला शिवाजीने लिया। इन कैदियोंसे उन्होंने दण्डस्वरूप बहुतसा रुपया लेकर छोड़ा था। राजपुरके पतन के पीछे शिवाजीने शृङ्गारपुरपर आक्रमण किया। उस समय शृङ्गारपुर सुरवे नामक एक मराठा सरदारके अधीन था। इसने अपना स्वतन्त्र राज्य शिवाजीसे अलग स्थापित कर लिया था। उसके अधीन दस हज़ार सेना थी। उसे अपनी सेनाका बहुत भरोसा था। वह आसपासके गांवोंमें उपद्रव मचाया करता था। उसके दो मराठा सरदार शिरके वंशके पीलाजी और नेताजी थे। पीलाजी शिवाजीके डेरेपर सुरवेकी ओरसे दूतकी हैसियतसे पहुँचा था। शिवाजीने सुरवेसे बदला लेनेकी इच्छासे पीलाजीको कैद कर दिया और शृङ्गारपुरपर अकस्मात् आक्रमण किया। शृङ्गारपुर शिवाजीके हाथ आया। यद्यपि सुरवेने अपना प्रधान स्थान खो दिया पर हार नहीं मानी। उसने अपने आदमियोंको इकट्ठा किया और युद्ध रचा। अन्तमें सुरवे युद्धमें हार गया और मारा गया। पर नानाजी शिरके युद्धसे भाग गया। सुरवेके पतन होनेके पीछे उसके बहुत साथी भाग गये और जंजीराके हबशियोंके यहां शरण ली। ये लोग जंजीराके हबशियोंकी सहायतासे शिवाजीसे युद्ध ठानना

चाहते थे। दूरदर्शी शिवाजीने देखा कि इससे दक्षिणियोंका मन और भी घटेगा, तो उन्होंने नानाजी शिरकेसे सन्धि कर ली और पीलाजी शिरकेको भी कैदमेंसे छोड़ दिया। नानाजीको उन्होंने श्टङ्गारपुर तथा दूसरे जिले पारितोषक स्वरूप दे दिये। सुरवेके दूसरे साथियोंको भी उन्होंने कुछ जमीन दी। जिन लोगोंकी पैत्रिक जागीर थी उन्हें उनकी पैत्रिक जागीर रहने दी। इस प्रकारसे सुरवेके साथी शान्त हुए। कुछ दिनों पीछे शिवाजीके ज्येष्ठ पुत्र सम्भाजीका शिरकेकी एक पुत्रीके साथ विवाह हुआ। इसके पीछे वर्षाऋतुमें उन्होंने जंजीरापर फिर आक्रमण किया। उन्हें इस बार भी जंजीराआक्रमणमें कुछ सफलता प्राप्त नहीं हुई। फतेहखांके जहाज समुद्रमें थे और शिवाजीके तोपखानेसे जंजीरा टापू बहुत दूर था, इसलिये शिवाजीके तोपखानेके गोलोंका कुछ भी असर नहीं हुआ।

कहा जाता है कि जिन दिनों शिवाजी जंजीरा टापूकी चढ़ाईमें व्यस्त थे, उन दिनों उन्हें एक स्वप्न दिखलायी पड़ा, जिसमें उन्होंने देखा कि वरुण देवता उनसे कह रहा है कि जंजीरा कभी तुम्हारे हाथ नहीं लगेगा, इसको हस्तगत करना तुम्हारी शक्तिके बाहर है। मैं तुम्हें एक दूसरा टापू दूंगा, जिस पर तुम जंजीराके समान ही एक किला बनवा सकते हो। स्वप्न देखनेके पीछे शिवाजीकी नींद टूट गयी, उन्होंने जंजीरासे घेरा उठानेकी ठान ली। उन्होंने समझा कि वरुण देवताने दूसरा टापू मालवान बतलाया है। यह सोचकर उन्होंने

अङ्गीरासे अपनी सेना हटा ली और मालवान टापूपर, जिसको सिन्धु दुर्ग भी कहते हैं, किला बनवाया और अपनी जल शक्ति का यहीं प्रबन्ध किया।

ऊपर लिखे हुए कारणके अतिरिक्त शिवाजीका अङ्गीरासे घेरा उठानेका एक कारण यह भी प्रतीत होता है कि उस समय सावन्तवाड़ीके सावन्तोंने बीजापुर दरबारसे शिवाजीपर पुन चढ़ाई करनेका प्रस्ताव किया था। उन्होंने बीजापुर-दरबारसे प्रार्थना की कि यदि बीजापुर राज्यकी सेना और मघोलके बाजी घोर पाड़े सहायता दें तो हमलोग शिवाजीपर चढ़ाई करें। बीजापुरके तत्कालीन बादशाह अली आदिलशाहने यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया और बहलोलखांके अधीन, सावन्त और बाजी घोर पांडेको सहायता देनेके लिये एक सैन्य दल भेजा। शिवाजी रणनीतिमें बड़े कुशल थे, उनका सिद्धान्त सदैव यही रहता था कि :—

"काल करै सो आज कर, आज करै सो अब
पलमें परलय होयगी, बहुरि करोगे कब"

अतएव शिवाजीको जब इस बातका पता लगा तो वे विशालगढ़ चले आये। विशालगढ़में उन्हें अपने पिताका एक पत्र संवत् १७१८ वि० (सन् १६६१ ६२) के शरदकालमें मिला कि बाजी घोर पांडे मघोलमें थोड़ीसी सेना सहित है। पाठक भूले न होंगे कि मघोलके बाजी घोर पांडेने ही शिवाजीके पिता शाहजी को कैद कराया था। शाहजीने उसी समय अपने पुत्र शिवाजी

को लिखा था कि घोर पांडेने मेरे साथ बड़ा विश्वासघात किया है। इस दुष्टसे अब तुम बदला निकालोगे तब हम तुमपर खुश प्रसन्न होंगे।" शिवाजी अपने तीन हजार घुड़सवारों सहित मधोलपर चढ़ धाये। बाजी घोर पांडे भी वीरतापूर्वक लड़ा, वह अपने समस्त साथी और पुत्र सहित मारा गया। शिवाजी ने उसकी जागीरमें लूट मार मचायी, उसके गांवमें आग लगा दी, इस प्रकार उन्होंने अपने पितृ-वैरका बदला बाजी घोर पांडेसे लिया। बीजापुरके बादशाहने खवासखांके अधीन एक सेना बाजी घोर पांडेके स्थानमें शिवाजीका सामना करनेके लिये भेजा, परन्तु शिवाजीके मुकाबिलेमें बीजापुरी सेना ठहर न सकी।

बीजापुर-दरबार इस समय एक और आपत्तिमें फंस गया। सिद्दी जौहरने भी बगावतका झण्डा बीजापुर राज्यके विरुद्ध उठाया। पहले तो वह अपनी जागीरमें चला गया था पर पीछे उसने दुआबके हिन्दू सरदारोंसे मिलकर बीजापुर-दरबारके विरुद्ध षड्यन्त्र रचा। हिन्दू सरदार शिवाजीकी देखादेखी बीजापुर-दरबारके विरुद्ध हो गये थे, क्योंकि "खरबूजा, खरबूजे को देखकर रङ्ग पलटता है"। आदिलशाहको उस समयतक सिद्दी जौहरकी मक्कारीका पता न था और उसे एक सैन्य दलका अध्यक्ष नियत किया। इससे सिद्दी जौहरको और भी अपना मतलब गांठनेका अवसर मिल गया। उसने दुआबके हिन्दू सरदारोंपर चढ़ाई की और बनावटी रङ्गढङ्ग ऐसा दिखलाया कि बीजापुर-दरबारको यह प्रतीत हो कि वह उन्हें

दमन करने आ रहा है पर वस्तुतः ऐसी बात न थी। वह भीतर ही भीतर हिन्दू सरदारोंसे मिल गया था और उन्हें उत्तेजना और सहायता दी थी। उसने शिवाजीसे भी चिट्ठी-पत्री आरम्भ कर दी। उसने बीजापुरके एक सैन्यदलपर भी आक्रमण किया परन्तु उसे विजय प्राप्त नहीं हुई। उसके सैनिकोंने ही उसे मार डाला। सिद्दी जौहरके मारे जानेपर भी दुआबके हिन्दू सरदारोंके यहां शान्तिका राज्य स्थापित नहीं हुआ। अशान्तिकी प्रचण्ड ज्वाला उठने लगी। बीजापुर राज्यके कई किले शत्रुओंके हाथ लगे। आदिलशाहने अपनी सेना वापिस बुला ली और सावन्तवाड़ीके सावन्तोंकी सहायताके लिये उसे भेजा। अब शिवाजीकी कोपदृष्टि सावन्तोंपर पड़ी। उन्होंने शीघ्र ही सावन्तोंके स्थानोंपर आक्रमण किया। उन्होंने शीघ्र ही सावन्तोंके कुडाल आदि स्थानोंपर अधिकार जमा लिया। सावन्तोंने अपना वश चलता न देखकर पोर्तुगीजोंके यहां गोवामें शरण ली।

शिवाजीने देखा कि पोर्तुगीजोंने सावन्तोंको अपने यहां शरण दी है तब उन्होंने पोर्तुगीजोंको शीघ्र ही यह फटकार बतलायी कि 'तुम सावन्तोंको अपने यहां शरण देकर नया झगड़ा मोल रहे हो।' पोर्तुगीजोंकी शरण लेनेपर भी सावन्तोंसे भाग्यदेवता प्रसन्न न हुआ। शिवाजीके मुकाबिलेमें सावन्त ठहर न सके। किसी राजा अथवा जागीरदारने शिवाजी-के भयसे सावन्तोंको सहायता नहीं दी। युद्धमें पराजित होने

तथा कहीं भी शरण न मिलनेपर सावन्तोंने पीताम्बर नामक अपना एक दूत शिवाजीके पास भेजा और उसके द्वारा निम्न लिखित प्रार्थना की कि आप जैसे भोंसले हैं उसी समान हम भी हैं, इसलिये हमें भी आप अपनी शरणमें लीजिये। आधा कर आप लीजिये और आधा कर हमारे लिये छोड़ दीजिये। यदि हमारी इस प्रार्थनाको स्वीकार करेंगे तो हम तीन हजार सेना रखेंगे और सदैव इस मित्रताके बदलेमें हम आपकी सेवा करेंगे। * पहले हमसे जो कुछ भूल हो गयी है, उसे क्षमा कीजिये और भूल जाइये।" शिवाजी सावन्तोंको इस प्रकार अधीनता स्वीकार करते हुए देखकर प्रसन्न हुए और उन्हें अपने यहां बुलाया और यह तय हुआ कि वे वाड़ीका कर (देशमुखी) हमेशा उगाहें।† सावन्तोंकी पैदल सेना, शिवाजी की सेनामें सम्मिलित कर दी गयी और दूसरे स्थानोंमें युद्ध करनेके लिये भेजी गयी। सावन्तोंकी जागीरकी रक्षाके लिये उन्होंने अपनी सेनाके कुछ आदमी रख दिये।

सावन्त सरदारोंके यहां दो बड़े वीर योद्धा थे। जिनका नाम लखम ‡ सावन्त और रामदलवी था। शिवाजी उन लोगों की वीरतासे इतने प्रसन्न हुए कि उन्हें अपने यहां सेनामें रख

* किनकेड

† सभासद लिखता है कि, शिवाजीने यह आज्ञा दी थी कि सावन्त कुडालमें रहें और ३ हजार प्यादा चाकर बन्दूकची ही मिला करें। मकान, चौकी बगल दर न बनावें और न ऊँचा रखें।

‡ सभासदने तानाजी सावन्त नाम लिखा है।

लिया। शिवाजीने रामदलवीको एक बड़ी भारी सेना सहित कोंकणकी बाहरी सीमापर आक्रमण करनेके लिये भेजा। इसमें उसने अच्छी वीरता प्रकट की। इस प्रकार शिवाजीने सावन्तोंका सदैवके लिये बल घटा दिया। सावन्तोंसे अन्य शर्तोंके साथ शिवाजीने एक शर्त यह भी की कि वे पोंद किला उनको समर्पण कर दें। सावन्तोंने बिना किसी सङ्कोचके शिवाजीकी सब ही शर्तें स्वीकार कर लीं। इसके पीछे सावन्त शिवाजीके अधीन रहे।

सावन्तोंके झगड़ेमें शिवाजीकी पहले ही पहल पोर्तगीजोंसे मुठभेड़ हुई। शिवाजीने शीघ्र ही पोर्तगीजोंके कुछ किले पञ्चमहाल मर्दनगढ़ बारदेश आदिपर अपना अधिकार जमा लिया और गोवापर धावा करनेकी तैयार की। शिवाजीकी गोवापर कोपदृष्टि देखकर पोर्तगीज बहुत घबड़ाये। उन्होंने अनन्त शेणवी नामक एक मनुष्य द्वारा शिवाजीसे सन्धिका प्रस्ताव किया। अनन्त शेणवी, कुदौलके सरदार देसाईके यहां सेनामें वेतन बांटनेवाला अर्थात् सबनीस था। अनन्त शेणवी शिवाजीसे ऊपरसे मिला हुआ था, यह शिवाजीके प्रति विश्वासघात करना चाहता था। उसने पोर्तगीजोंको सलाह दी कि शिवाजीसे सन्धि विषयक बातें तो होती रहें, प्रत्यक्षमें युद्ध न ठाना जाय; पर आधी रातको अचानक शिवाजीके शिविर पर आक्रमण कर दिया जाय और उन्हें पकड़ लिया जाय।" पोर्तगीज भी अनन्त शेणवीके इस प्रस्तावसे सहमत हुए और

उसके कथनके अनुसार ही कार्य करनेका विचार किया। एक जहाजके स्वामी और व्यापारीने जिसका नाम कान्होजी टंडल था, शेणवीकी इस दगाबाजी और पोर्तगीजोंके इस विचारका समाचार शिवाजीको पहुंचाया। शिवाजीने इस समाचारको पाते ही पोर्तगीजोंके आक्रमणको रोकनेकी तैयारी कर ली थी। रातके समय चुपचाप अनन्त शेणवीने दस हजार पोर्तगीज सेना सहित शिवाजीके शिविरपर आक्रमण किया। पर उसे शिवाजीका कुछ पता नहीं लगा। क्योंकि शिवाजीने एक मीलकी दूरीपर अपनी सेनाको युद्धके लिये तैयार रखा था। पोर्तगीज सेनाने गोले, ओलोंकी भांति बरसाने शुरू कर दिये, पर सब व्यर्थ। पोर्तगीज सेना जिस उद्देश्यसे आयी थी, उसमें उसे सफलता प्राप्त नहीं हुई। शिवाजीने रातके समय अपनी सेनाको लड़नेकी आज्ञा नहीं दी। दिन निकलते ही शिवाजीकी घुड़सवार सेना, पोर्तगीजोंकी सेनापर ठीक वैसे ही टूट पड़ी जैसे मृगोंके झुण्डपर शेर टूट पड़ता है। पोर्तगीजोंकी सेना, रणक्षेत्रमें शिवाजीकी सेनाके सामने ठहर न सकी। पोर्तगीज सेनामेंसे एक हजार आदमी भाग गये, कुछ खाइयोंमें डूबकर मर गये, बहुतसे घायल हुए, और अनेक योद्धा रणक्षेत्रमें मृत्युशय्यापर सदैवके लिये सो गये। युद्धके इस परिणामको देखकर पोर्तगीज गवर्मेण्ट बहुत भयभीत हुई। शिवाजीने पोर्तगीजोंके परदेश स्थानपर छापा मारा और उसमें आग लगा दी। पोर्तगीज सेनाके जो आदमी कैदमें आये वे गलवारके सहारे

घाट किनारे पहुंचाये गये। उन्होंने पोर्त्तगीज व्यापारियोंको गिरफ्तार किया और उनसे युद्धकी क्षतिपूर्त्तिके निमित्त बहुत सा रुपया दण्डस्वरूप वसूल किया। कुडौल, बांदे, साखली (संखेली अथवा संखेल), मानेरी आदि ग्रामोंके अनेक भागोंमें महाराष्ट्र सेना रखी गयी। थोड़ेसे शब्दोंमें इस युद्धका परिणाम यों कहा जा सकता है कि उस समय ऐसी परिस्थिति उपस्थित हो गयी थी कि पोर्त्तगीजोंको गोवासे सदैवके लिये हाथ धोने का भय हो गया था। अनन्त दोणवीकी बातोंमें आकर शिवा जीसे युद्ध ठाननेमें उन्होंने भयङ्कर भूल की। इसके लिये उन्हें बड़ा पश्चात्ताप हुआ। उन्होंने अपने दूत शिवाजीके पास भेजे और क्षमा मांगी। उन्होंने अपने दूत द्वारा शिवाजीके पास बीस हजार क्राउन (पांच शिलिङ्गका एक क्राउन होता है) और बहु-मूल्य वस्त्र भेजे। संवत् १७१६ वि०सन् १६६२ ई०में शिवाजीकी पोर्त्तगीजोंसे सन्धि हुई। पोर्त्तगीजोंने शिवाजीको युद्धका सामान तोप, बन्दूक, बारूद आदि देना स्वीकार कर लिया। किसी किसीने यह भी लिखा है कि पोर्त्तगीजोंने शिवाजीसे यह भी सन्धि की थी कि वे पोर्त्तगीजोंके राज्यमें भविष्यमें कुछ उप द्रव न करें। शिवाजीकी इस सन्धिसे यह भी प्रकट होता है कि विदेशी लोगोंसे अपने देशकी रक्षा करनेकी बात भी उनके ध्यानमें आ चुकी थी और इसलिये उन्होंने उनसे राजनीतिक सम्बन्ध जोड़ना आरम्भ कर दिया था।

शिवाजीको उपर्युक्त लिखित युद्धोंमें किस प्रकार सफलता

प्राप्त हुई थी इसका वृत्तान्त शिवाजीके शब्दोंमें ही सुनिये। पोर्तगीजोंपर विजय प्राप्त होनेके पीछे शिवाजीने अपने पिताको पत्र भेजा था, उसमें उन्होंने लिखा था —

"श्रीमान्‌ने अपने अन्तिम पत्रमें मुझे लिखा था कि मर्य्यादाका पालन करना तो अलग रहा, उलटा मधौलका सरदार बाजी घोर पांडे मुसलमान और तुर्कोंसे मिल बैठा है और उनके कार्योंमें सहायता दे रहा है। धोखे और विश्वासघातसे यह हमें बीजापुर ले आया है। हमको वहां किस प्रकारकी विपत्तिसे सामना करना पड़ा है इसको तुम अच्छी तरह जानते हो? यह परमात्माकी मर्जी दिखलायी पड़ती है कि महाराष्ट्र राज्यके स्थापन करने और हिन्दूधर्मकी रक्षा करनेकी तुम्हारी सदिच्छा पूरी होगी। इसी कारण यह संकट टल गया।"

इन दिनों विद्वेषभावसे प्रेरित होकर खवासखां तुम्हारे ऊपर चढ़ाई करनेके लिये चला है। मधौलके बाजी घोर पांडे और लखम सावन्त और खेमसावन्त भी उसके साथ हैं। भगवान शिवशङ्कर और माता भवानी तुम्हें सफलता प्रदान करें यही प्रार्थना है।

अब हमारी यही इच्छा है कि इन लोगोंसे पूरा बदला लिया जाय। परमात्माकी कृपासे हमारे तुम जैसे आज्ञाकारी पुत्र हो जो सदैव हमारे कहनेके मुताबिक काम करनेको तैयार रहते हो, इसलिये हम तुम्हें इस कामके करनेकी आज्ञा देते हैं। बाजी घोर पांडे सीधा मधौलको अपने आदमियोंके साथ गया है।*

---

* पाठकोंको स्मरण रखना चाहिये कि शिवाजीने ये सब अपने पिताके उद्धृत किये हैं जो उनके पिताने कभी एक पत्रमें लिखे थे।

"आपसे यह समाचार सुनकर हम अपनी सेना सहित मधोल में पहुंचे। उसकी जागीरको तहस नहस कर दिया, उसके थानोंपर अधिकार जमा लिया। जब बाजी घोर पांडेको यह समाचार मिला तब उसने हमसे युद्ध ठाना। वह और उसके सभी नामी आदमी मारे गये। यह बड़ी भारी लड़ाई हुई। हम उसके देश (प्रान्त) में आगे बढ़े और उसे लूटा। इस अवसर-पर हमें लूटमें अच्छी प्राप्ति हुई। इसके बाद हमने शान्तिकी घोषणा की और उसकी समस्त जागीर अपने अधीन कर ली। इस समय खवासखां हमारी ओर बढ़ रहा था। हम अपनी सेना सहित उसपर टूट पड़े। उसको पराजित किया और उसे युद्धक्षेत्रसे खदेड़ दिया। वह निराश होकर बीजापुर लौट गया। फिर इसके पीछे हमारा काम सावन्तोंको दमन करनेका था। उनके एक एक करके सब किले हमारे हाथमें आ गये। हमने उनके राज्यको भी पूरी तरहसे तहस नहस कर दिया। गोवासे भी सहायता मिलनी बन्द हो गयी थी। पर पौन्दका किलेदार उनकी ओरसे हमसे लड़ा। हमने बारूदसे उस किलेका एक परकोटा उड़ा दिया। इस प्रकारसे उनका राज्य हमारे आधीन हुआ।

फिर हमने पोर्चगीजोंसे युद्ध ठाना और उनके राज्यके कुछ हिस्सेपर दखल कर लिया। उन्होंने हमसे सन्धिकी प्रार्थना की और उन्होंने हमें बन्दूकें भेंट कीं। इससे सावन्तोंने अपने लिये पोर्चगीजोंकी शरणमें भी रक्षित नहीं समझा। अतएव

उन्होंने पीताम्बर नामक अपना एक वकील हमारे पास भेजा। सावन्तोंने प्रार्थना की कि हम भी भोंसलोंके घराके हैं। आपको हमारी भलाई और रक्षा करनी चाहिये। आपको हम अपने राज्यका आधा कर देंगे और आधेसे हम अपनी सेनाका खर्च चलावेंगे। यह सेना आपकी सेवा करेगी। हमने उनकी यह प्रार्थना स्वीकार कर ली। इस प्रकार आपके आशीर्वादसे हमने आपकी इच्छाके अनुसार सब काम कर दिये और अब अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक हम आपकी सेवामें यह सब समाचार भेजते हैं।" इसमें सन्देह नहीं कि शिवाजीकी यह विजय, महाराष्ट्र राज्यकी जड़ मजबूत करनेमें बहुत कुछ समर्थ हुई। उपर्युक्त विजयप्राप्तिके पीछे उनका समस्त दक्षिण प्रान्तमें सिक्का जम गया। दक्षिण प्रान्तके प्रायः सब ही नामी सरदारोंने उनके सामने अपना मस्तक नवा दिया। दक्षिणमें चारों ओर शिवाजीका रोब छा गया।

इसके बाद बीजापुरके अली आदिलशाहने दुआबके हिन्दू सरदारोंसे फिर युद्ध नहीं छेड़ा। क्योंकि उनका मित्र और भक्त मधौलका बाजी घोर पांडे मारा जा चुका था और सावंत वाड़ीके सामन्तोंने शिवाजीकी अधीनता स्वीकार कर ली थी। अब किसके बल-भरोसेपर अली आदिलशाह दुआबके हिन्दू सरदारोंसे युद्ध ठानते। अब उनकी इच्छा शिवाजीसे भी युद्ध ठाननेकी न थी। शिवाजीका भी अपने समस्त जीवनमें एक ही उद्देश्य था और वह उद्देश्य यह था कि वे महाराष्ट्र प्रांतको

स्वतन्त्र देखना चाहते थे। उनकी इच्छा यही थी कि महाराष्ट्र प्रांत किसी विदेशी सत्ताके अधीन न रहे। संवत् १७१६ वि० सन् १६६९ ई०तक बीजापुरकी सत्ता बिलकुल नष्ट हो चुकी थी। अब उन्होंने गोलकुण्डा और बीजापुरसे मिलकर, त्रिगुण संगठन (Triple alliance) करना चाहा और उनकी इच्छा थी कि महाराष्ट्रके हिन्दू मुसलमान * मिलकर मुगलोंके जुआसे महाराष्ट्रको स्वतन्त्र करें। जब दोनों ओरसे युद्धकी आकांक्षा न रही तब शान्ति होनेमें देरी ही क्या थी? पिछले युद्धोंमें आदिलशाहको भी शिवाजीकी शक्तिका पूर्ण परिचय मिल चुका था। शिवाजीके पिता शाहजीका भी उस समय तक बीजापुर दरबारसे सम्बन्धविच्छेद नहीं हुआ था। यद्यपि शाहजीने अपनी स्त्री जीजाबाई और अपने पुत्र शिवाजीको

*—श्रीयुत चिन्तामणि वासुदेव वैद्यने अपने मराठी भाषामें शिवाजीका बहुत चरित्र प्रकाशित किया है। उसमें उन्होंने यह दिखलाया है कि चांदबीबी, मालिक अम्बर प्रभृति मुसलमानोंने दक्षिणमें मुगलोंको पैर न जमने पावे, इसके लिये अथक प्रयत्न किया था, उसी भांति शिवाजी भी चाहते थे कि दक्षिणमें मुगल घुसने न पावें। दक्षिणके हिन्दू और मुसलमान दोनों आपसमें प्रेमपूर्वक रहते थे, बीजापुर और गोलकुण्डाके मुसलमान बादशाह बिलकुल हिन्दुस्तानी ही बने थे। शिवाजी दक्षिणके मुसलमानोंको अपना भाई समझते थे पर मुगलोंको वे विदेशी समझते थे। दक्षिणके मुसलमानोंको भी मुगलोंसे वैसी घृणा थी जैसी हिन्दुओंको थी और मुगल लोग भी जब किसी स्थानपर विजयी होते थे तो हिन्दुओंके समान मुसलमानोंको भी अपना गुलाम बनाकर बेच डालते थे। इस विषयमें स्वर्गीय रावबहादुर श्री महादेव गोविन्द रानाडेका मत भी श्रीचिन्तामणि वासुदेव वैद्यके मतसे मिलता जुलता ही है। देखो, (Rise of the Maratha Power p 86 87 अथवा उसका अनुवाद पृष्ठ ८६—८७) पर किनकेड साहब रानाडे महोदयके इस मतसे सहमत नहीं हैं।

पहलेसे ही अलग रखा था, एक प्रकारसे उनसे अपना संबंध परित्याग कर दिया था। परन्तु अब वे शिवाजी जैसे सुयोग्य वीर पुत्रके लिये अपनेको गौरवान्वित समझते थे। उनको इच्छा भी अपने पुत्रसे मिलनेकी थी और जब शिवाजीने घोर पांडेका वध करके पितृवैरका प्रतिशोध लिया था तबसे इनकी उनसे मिलनेकी लालसा और भी बढ़ गयी थी। बीजापुरके अली आदिलशाहने शाहजीको ही अपनी ओरसे सन्धिविषयक प्रस्ताव करनेके लिये दूत नियुक्त किया और उन्हें शिवाजीके पास भेजा। शाहजीने प्रसन्नतापूर्वक यह दौत्यकर्म स्वीकार कर लिया। इसके विपरीत किन्हीं किसी लेखकने यह भी लिखा है कि बीजापुर-दरबार और शिवाजीकी सन्धि हो चुकी थी, जब शाहजीने बीजापुर-दरबारसे महाराष्ट्रमें आनेकी आज्ञा मांगी। महाराष्ट्र जानेका अपना उद्देश्य यह बतलाया कि वहां पुराने मन्दिर तथा देवतामोंके दर्शन और कुछ धार्मिक कृत्य करने हैं। शाहजीने अपनी इस प्रार्थनाकी स्वीकृतिके लिये गुप्तरूपसे भी बहुत चेष्टा की। बीजापुर-दरबारने शाहजीकी यह प्रार्थना स्वीकार करते समय लिखा कि "आप जाते तो हैं, अपने स्वेच्छाचारी पुत्रको भी समझाते आइये कि यदि [illegible]

राजी कीजिये। इसके उत्तरमें शाहजीने लिखा कि दरबार से यह बात छिपी नहीं है कि मेरा बेटा मेरे कहनेमें नहीं है। मैं अपनी कुलदेवीके दर्शन करनेके पीछे अपने बेटेसे मिलूंगा। और उसे ऐसी ही सलाह दूंगा कि जिसमें दरबारका भला हो। इसके उत्तरमें बीजापुर दरबारने लिखा कि "यदि आपकी सम्मतिके अनुसार आपका बेटा चलनेको तैयार न हो तो आप यहां चले आइयेगा, ऐसा न हो कि पुत्र प्रेमके कारण आप भी वहीं रह जायं।"

चलते समय शाहजीने अली आदिलशाहसे कहा कि "देखिये, जाता तो हूं पर लड़का अपने वशका नहीं है, तथापि प्रयत्न करूंगा।" शाहजीने भी बड़ी धूमधामसे यात्राकी तैयारी की। उन्होंने ज्योतिषियोंको बुलाकर यात्राका मुहूर्त पूछा। शुभ मुहूर्तमें वे शिवाजीसे मिलनेके लिये चले। उन्होंने साथमें अपनी दूसरी स्त्री तुकाबाई और उसके पुत्र व्यङ्कोजीको भी लिया। पहले शाहजी तुलजापुरको गये, यहां उन्होंने देवी भवानीके दर्शन किये जिनकी कृपासे उनका पुत्र प्रतापी हुआ। कहते हैं कि शाहजीने यह मिन्नत मांगी थी कि यदि मेरे पुत्र शिवाजीको हिन्दू धर्मकी रक्षा करने तथा स्वराज्य स्थापन करनेमें सफलता प्राप्त होगी तो मैं अपने पुत्रकी एक लाख रुपयेकी सोनेकी मूर्त्ति तुलजापुर की भवानीके मन्दिरमें चढ़ाऊंगा। अतएव उन्होंने अपनी इस प्रतिज्ञाके अनुसार कर्नाटकके कारीगरोंसे सोनेकी मूर्त्ति निर्माण करायी और भवानीके मन्दिरमें चढ़ायी। इसके अतिरिक्त

उन्होंने वहां बहुतसा दान पुण्य किया। वहांसे वे शिङ्गणापुर गये, वहां उन्होंने महादेवजीकी उपासना और अपने पिता मालोजी भोंसलेकी समाधिकी पूजा की। वहांसे दूसरे दिन वे पंढरपुर गये। पंढरपुरमें उन्होंने विठोबाके दर्शन किये। पाठकोंको स्मरण रखना चाहिये कि विठोबाकी यह वही मूर्त्ति थी जिसको अफजलखांके पहुंचनेपर वहांके पुजारियोंने छिपा दिया था। विठोबाके दर्शन करके वे जेजुरी गये। उन्होंने खण्डोबाके दर्शन किये। इस यात्रामें जहां कहीं शाहजी गये वहीं उन्होंने बहुत दान पुण्य किया।

जब शिवाजीने सुना कि आदिलशाहने उनके पिताको दूत नियुक्त करके उनके पास भेजा है तब उनकी प्रसन्नताका ठिकाना न रहा। वे अपने पिताके स्वागतके लिये जेजुरी पहले ही पहुंच गये। अपने पिता शाहजीके जेजुरीके निकट आनेका समाचार सुनकर उन्होंने अपने पेशवा मोरो पिङ्गलेको शाहजीसे मिलनेके लिये भेजा। थोड़ी देर पीछे स्वयं शिवाजी अपनी माता जीजाबाई और अपनी दो स्त्रियोंको लेकर पितृदर्शनके लिये चले। मार्गमें वे अपनी माता और स्त्रियों सहित एक मन्दिरमें ठहर गये जहां शाहजीके घुड़सवार ठहरे हुए थे। मन्दिरमें पहुंचकर शिवाजीने देवी देवताओंकी उपासना और प्रार्थना की कि इतनेमें ही उनके पिता आ पहुंचे। वहां ब्राह्मणोंकी बतलायी हुई विधिके अनुसार एक कांसेकी थालीमें घी रखा गया, शिवाजी उनके पिता शाहजी तथा शिवाजीकी

माता आदिने अपने चेहरोंकी परछाईं घीमें देखी। पीछे सब लोग आपसमें मिले। शिवाजीने अपने पिताके दर्शन करते ही उनके चरण कमलोंमें अपना शीश नवाया और साष्टाङ्ग प्रणाम किया। शिवाजीकी दोनों स्त्रियोंने भी शाहजीको प्रणाम किया और जीजाबाईने भी पति-दर्शन करके अपनेको कृतार्थ किया। मेल मिलाप और दण्डवत् प्रणामके पीछे शाहजी पालकीमें विराजे, पितृभक्त शिवाजी न तो पालकीमें बैठे और न घोड़ेपर सवार हुए। वे पालकीका एक पाया पकड़ कर पिताके जूते हाथमें लेकर पैदल नङ्गे पैर पिताके प्रति सम्मान प्रकट करते हुए चले। धन्य! शिवाजी धन्य!! आपकी पितृभक्ति!!! औरङ्गज़ेब आपका ही समकालीन था जिसने अपने बूढ़े बाप शाहजहांको राज्यके लोभमें कैद कर दिया था।

थोड़ी देरके पीछे पिता पुत्र दोनों उस खेमेमें पहुँचे जो शाहजीके स्वागतके लिये बनवाया गया था। यहां शिवाजीने अपने पिता शाहजीको गद्दीपर बिठलाया और आप पिताके सामने गद्दीपर नहीं बैठे। वे पिताको जूतियोंको लिये और हाथ जोड़कर पिताके सामने खड़े रहे। उन्होंने अपने पिता शाहजीसे उनकी आज्ञाके प्रतिकूल बीजापुर-दरबारसे बैर ठानने के लिये क्षमा मांगी और कहा कि मैंने आपकी आज्ञा न मान कर बीजापुर-दरबारसे युद्ध किया था, जिससे आपको बहुत कष्ट हुआ। अब आपका यह नाफर्मांबरदार बेटा अपना दोष स्वीकार करता है और आपके सामने मौजूद है। अब आप जो

उचित समझ इसे सजा दीजिये।" धन्य है शिवाजी आपकी वीरता और पितृभक्ति! जो मनुष्य निश्चल निष्कपट हृदयसे पितृ देवकी भक्ति करते हैं, उन्हींका इस लोकमें जन्म सफल होता है। शाहजी अपने पुत्रके इस व्यवहारसे अत्यन्त प्रसन्न हुए। उनके नेत्र प्रेमाश्रुसे भर आये। उन्होंने अपने पुत्र शिवाजीको प्रेमालिङ्गन किया, अपने हृदयसे लगाया और कहा—"जो मनुष्य अपने देशवासियोंको स्वतन्त्र करना चाहता है, उसके ये अपराध कुछ भी नहीं हैं। तुमने कोई नयी बात नहीं की है, तुमने जो कुछ किया है, सीसोदिया कुलके अनुकूल ही किया है। तुम हमारे कुलमें नये शक (संवत्) चलानेवाले हुए हो। तुमने हिन्दूधर्म और हिन्दूजातिकी रक्षा की है। मुझे तुम्हारी वीरताका अभिमान है। तुम्हारे जैसे पुत्रके होनेसे मैं अपनेको इस लोक और परलोक दोनोंमें धन्य समझता हूँ। तुम मेरे पुत्र हो, यह मेरा सौभाग्य है। तुम्हारे जैसे पुत्र होनेसे मैं बहुत सुखी हूँ।" इसके आगे उन्होंने शिवाजीको अपने उद्देश्यकी पूर्त्तिके लिये निरन्तर प्रयत्न करनेका आदेश किया। साथ ही यह भी उन्होंने शिवाजीसे कहा—"मेरी मृत्युके पीछे अपने भाई व्यङ्कोजीसे प्रेम करना और उसकी रक्षा करना।" जेजुरीसे शाहजी और शिवाजी पूना गये। यहां बीजापुर-दरबार और शिवाजीके बीचमें सन्धिकी शर्त्तें तय हुईं।

बीजापुर-दरबारने शिवाजीकी समस्त प्रार्थनाएँ स्वीकार कर लीं। संवत् १७१८ वि० सन् १६६२ ई० में बीजापुर-दर

बार और शिवाजीकी सन्धि हुई। यह सन्धि शिवाजीके मनके मुताबिक हुई। इस सन्धिके अनुसार कल्याणसे गोवा तकका कोंकण प्रदेश शिवाजीके अधिकारमें आगया। इस समय शिवाजीके पास समस्त कोंकण प्रदेश, (कल्याणसे गोवा तक) तथा भीमासे वर्धा तकका घाटमाला प्रदेश था। इसमें चाकण से मीरा तक, पुरन्दरसे कल्याण तककी जागीर भी सम्मिलित थी। अब शिवाजीके पास पचास हजार पैदल सेना तथा सात हजार सवार थे। अब बीजापुर-दरबारने शिवाजीकी पूर्ण स्वतन्त्रता स्वीकार की और शिवाजीको कुछ जिले दिये। इसके अतिरिक्त वार्षिक कर सात लाख हुण अर्थात् ३५,००,००० रुपये देना स्वीकार कर लिया। शिवाजीका दूत, श्यामजी नायक पांडेको शिवाजीकी ओरसे बीजापुर-राज्यमें रहनेकी आज्ञा हुई।

वर्षाऋतुमें शाहजी पूनामें ही लगभग दो मास तक रहे। शिवाजीने जबतक उनके पिता रहे, तबतक उनका खूब आदर सत्कार किया।* जबतक शाहजी शिवाजीके राज्यमें रहे, तबतक

---

* इसमें संदेह है कि शाहजी दो मासतक पूनामें रहे थे अथवा शिवाजीके राज्यके और किसी स्थानमें रहे थे। क्योंकि ग्रिड्डे के बखरोंसे प्रतीत होता है कि उस समय शाहजी कर्णाटकपर आक्रमण ही किया था और नवम्बर सन् १६६ ई में उसने पूनापर अधिकार कर लिया था। प्रोफेसर सरकारने मुगल इतिहास लेखकोंके आधारपर लिखा है कि मुगलोंने सन् १६६ ई० के अगस्त मासमें आक्रमण ही किया था और इसके थोड़े दिनों पीछे ही आदिलखां पूना लौट आया था। ग्रिड्डे बखरोंके अनुसार अप्रिल सन् १६६१ ई० तक पूना मुगलोंके अधिकारमें रहा था। इससे यही अनुमान किया जा सकता है कि या तो शाहजी

शिवाजी उनके बिना परामर्शके कोई काम नहीं करते थे। शाहजी शिवाजीका राजकोष देखकर बड़े प्रसन्न और विस्मित हुए। क्योंकि शिवाजीके कोषमें अटूट सम्पत्ति और बहुमूल्य पदार्थ थे। वर्षाऋतुके बीत आनेपर शिवाजी शाहजीको अपने साथ राजगढ़, पुरन्दर, लोहगढ़ और रायरी तथा अन्य स्थानोंमें ले गये। प्रत्येक स्थान और किलेमें पहुंचनेपर शिवाजी अपने पितासे निवेदन करते कि यह स्थान और किला, किस प्रकार से मेरे हाथ लगे हैं। जहां कहीं शाहजीने अपने पुराने अनुभवके अनुसार प्रबन्ध सम्बन्धी कुछ नयी बात सुझाई तो वहीं शिवाजीने उनके कथनके अनुसार प्रबन्ध किया। प्रतापगढ़में पहुंचने पर शिवाजीने उनको प्रतापगढ़का दुर्ग, भवानीका मन्दिर तथा अफज़लखांबुर्ज दिखलाया और अफ़ज़लखांके वधका समस्त वृत्तान्त सुनाया जिसको सुनकर उन्हें अत्यन्त हर्ष हुआ। प्रत्येक स्थान और किलेके अध्यक्ष और सरदारोंका उन्होंने अपने पितासे परिचय कराया। रायरी पहुंचकर शाहजी अपने बेटेके वैभव और राज्यको देखकर बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने देखा,

पूनामें न रह कर और कहीं रहे होंगे क्योंकि जब शाहजीने सन् १६६१ ई० के मध्यमें पूनाकी यात्रा की था तब वे शिवाजीसे मिलने नहीं आये। परन्तु इस विषयमें अब इतिहासवेत्ताओंका एक मत है कि शाहजीके पूना पहुंचनेके समय ही शाहजी शिवाजीके यहां नहीं थे। पर प्रोफेसर सरकारने [illegible] शाहजी और [illegible] आदिके आधारपर लिखा है कि शाहजीने यहीं समय [illegible] किया था, किन्तु उस समय [illegible] था। सरदेसाईने शाहजीके पूना पहुंचनेकी कोई तिथि नहीं लिखी है। किन्तु यह अवश्य लिखा है कि शाहजीने सन् १६६० ई० के [illegible] मासमें बीजापुरसे पूना और [illegible] ओर बढ़े थे। (हिन्दी-[illegible] इतिहास भाग २ [illegible])

कि रायरी पश्चिम ओर सह्याद्रि पर्वतमालासे घिरी हुई है। इस ओरसे आक्रमण करना असम्भव था। अतएव शाहजीने शिवाजीको यह सलाह दी कि अगर तुम राजगढ़से अपने रहने का मुख्य किला रायरीमें बदल लो तो अच्छा हो। इसपर शिवाजीने रायरीका नाम रायगढ रखा और आबाजी सोनदेव को वहां किला, महल तथा अन्य सरकारी इमारतें बनानेकी आज्ञा दी। वहींपर उन्होंने अपनी माता जीजाबाईके रहनेके लिये एक महल बनवाया। जब किले आदि बन चुके तब शिवाजीने सर्वसाधारणमें यह घोषणा प्रकट की कि जो कोई मनुष्य किलेके मुख्य मार्गोंको छोड़कर अन्य मार्गसे किलेमें प्रवेश करेगा, उसको सोनेकी एक थैली और सौ पागोड़ेके सोने का एक कड़ा पारितोषक दिया जायगा। यह घोषणा सुनकर महार जातिका एक आदमी शिवाजीके पास आया और किले पर चढ़नेकी आज्ञा मांगी। उसने शिवाजीसे प्रार्थना की कि "यदि मैं किलेपर चढ़ जाऊंगा तो मैं वहां अपना झण्डा गाड़ दूंगा।" शिवाजी इसपर मुस्कराये और उसे किलेपर चढ़नेकी आज्ञा दे दी। उक्त महारको किलेपर जानेका एक मार्ग बाल्या वस्थासे ही मालूम था, वह शीघ्र ही शिवाजीकी आंखोंसे गायब होगया और किसीको यह पता नहीं लगा कि महार कहां गया। परन्तु थोड़ी देरमें ही देखते क्या हैं कि उस महारने किलेकी चोटीपर अपना झण्डा फहरा दिया। उक्त महारका यह काम देखकर सब लोग चकित स्तम्भित हुए। शिवाजीने

महारको अपने पास बुलाया, वह शिवाजीके पैरोंपर गिर पड़ा। शिवाजीने अपनी घोषणामें जो पारितोषक नियत किया था, वह उसे दिया और उस दरवाजेको बन्द करवा दिया जो अब तक "चोर दरवाजे" के नामसे विख्यात है। इसके थोड़े दिनों पीछे एक और घटना हुई, जिससे शिवाजीको ज्ञात हुआ कि आबाजी सोनदेवका कार्य्य पूरा नहीं हुआ है। एक दिन एक ग्वालिन जिसका नाम हीराकनी था, रायगढ़की सेनामें दूध बेचने गयी। वहां वह कार्यमें ऐसी व्यस्त हो गयी कि उसको अपने घर जानेकी सुध ही नहीं रही और रात हो गयी। जब वह लौटने लगी तब दरवाजा बन्द हो गया और पहरेदारोंने उसे बाहर नहीं जाने दिया। वह अपने घरमें अपनी सास और छोटे बच्चेको छोड़ गयी थी इससे उसे और भी चिन्ता हुई। उसने अपने जीवनकी कुछ परवा नहीं की और पहाड़ीकी चोटीपर चढ़कर किसी प्रकारसे दूसरी ओर उतर गयी। जब शिवाजीको इस बातका पता लग गया तब उन्होंने वहां एक बुर्ज बनवाकर उस मार्गको बन्द करवा दिया। वह बुर्ज आजतक हीराकनी कहलाता है। जब रायगढ़का किला सब प्रकारसे ठीक हो गया तब शिवाजीने अपने राज्यके समस्त कागज पत्र, कोष तथा राजधानीको रायगढ़ हटा लिया। भूषण कवि कहता है।

"दच्छिनके सब दुग्ग जिति दुग्ग सहार बिलास
सिव सेवक सिवगढ़पती किया रायगढ़ वास"

भूषणने रायगढ़की शोभा वर्णन करनेमें और भी कई कवित्त

लिखे हैं। उन्होंने रायगढ़की प्राकृतिक शोभाका वर्णन बहुत बढ़िया किया है। उनका एक कवित्त पाठकोंके विनोदार्थ यहां उद्धृत किया जाता है —

''जापर साहि तनै सिवराज,
सुरेसकी ऐसी सभा सुभ साजै।
यों कवि भूषन जम्पत है,
लखि सम्पतिको अलकापति लाजै।
जा मधि तीनहु लोककी दीपति,
ऐसे बड़ो गढ़राज बिराजै।
वारि पतालसी माची मही,
अमरावतिकी छवि ऊपर छाजै।''

इसी बीचमें शाहजी अपने प्रिय पुत्र शिवाजीके साथ पन्हाला पहुँचे। पन्हाला-दुर्गमें पहुँचकर शाहजीने शिवाजीसे कर्नाटक जानेका विचार प्रकट किया। इसको सुनकर शिवाजी बड़े उदास हुए। उन्होंने अपने पितासे प्रार्थना की कि अब आप कर्नाटक न जाइये और यहीं अपनी जन्मभूमिमें रहकर राज्यका प्रबन्ध कीजिये।" शाहजीने उत्तर दिया कि "यदि मैं यहां रहूँगा तो कर्नाटकमें मेरी सञ्चित सब सम्पत्ति मुसलमानों के हाथ चली जायगी। दूसरी बात यह भी है कि मेरा कर्नाटकमें रहना तुम्हारे उद्देश्यकी सफलतामें और भी सहायक होगा। तुम्हारे राज्यका और भी विस्तार होगा।" शिवाजी

अपने पिताकी इन अकाट्य युक्तियोंको काट न सके। उन्होंने अपने पिताकी विदाई की तैयारी की। पन्हाला दुर्गमें उन्होंने बड़ी धूमधामसे विदा होनेवाले मेहमानोंके सम्मानार्थ एक बड़ा भारी भोज दिया। उन्होंने शाहजीको अनेक बहुमूल्य पदार्थ भेंट किये। उन्होंने शाहजीके प्रत्येक साथी और कर्मचारीको उसके पदके अनुसार वस्त्र और आभूषण प्रदान किये। शाहजीके प्रधान कर्मचारी वम्बक नारायण हनमन्तेको भी उन्होंने बहुमूल्य कारचोबी किये हुए वस्त्र, रत्न जटित आभूषण, एक तलवार और ढाल दी। उन्होंने अपनी विमाता और वैमात्रेय भ्राता व्यङ्कोजीको भी उनके पद, मान-मर्यादाके अनुसार अनेक बहुमूल्य आभूषण और पदार्थ भेंट किये। बहुतसे हाथी और घुड़सवार शाहजीके साथ इसलिये कर दिये कि उन्हें मार्गमें किसी प्रकारका कष्ट न हो।

शुश्रूषा अच्छी तरहसे करना। जब मैं पिताजीके दर्शन करने आऊँगा तब तुम लोगोंको पारितोषक दूँगा।"

कहा जाता है कि शिवाजीका अपने पितासे यह समझौता हो गया था कि पिताजीके जीवित कालमें अब वे बीजापुर-दरबारसे युद्ध न ठानेंगे। शिवाजीसे विदा होकर शाहजी बीजापुर पहुंचे और आदिलशाहसे भेंट की और शिवाजीसे जो समझौता हुआ, वह कह दिया। शिवाजीने जो जवाहरात, हाथी, घोड़े आदि शाहजीको भेंट किये थे, वे उन्होंने आदिलशाहकी भेंट कर दिये और कहा कि "शिवाजीने यह नजर भेजी है।" पर वस्तुतः शिवाजीने आदिलशाहको नजर नहीं भेजी थी। ये सब पदार्थ उन्होंने अपने पिताकी भेंट किये थे। बीजापुरसे शाहजी अपनी जागीर कर्नाटकको चले गये। पन्हालेमें शाहजीने समर्थ श्रीरामदास स्वामीके दर्शन किये। शाहजी कर्नाटकसे कई बढ़िया तलवारें लाये थे, उन्होंने समस्त तलवारें शिवाजीको दीं और शिवाजीने अपने पिताकी दी हुई तलवारें प्रसन्नतापूर्वक लीं। पीछे शाहजीने अपने हाथकी एक बहुमूल्य तलवार शिवाजीके हाथमें दी जिसको शिवाजीने अपने पिताका प्रसाद स्वरूप समझ कर प्रसन्नतापूर्वक ग्रहण किया। उन्होंने अपने पिताकी तलवारका नाम "तुलजा" रखा, और भवानी "तलवार"के पास ही उन्होंने अपने पिताकी दी हुई तलवारको रखवा दिया और नित्य प्रति भवानी तलवारके समान उसकी भी वे पूजा करते थे।

अपने पिताकी इन अकाट्य युक्तियोंको काट न सके। उन्होंने अपने पिताकी विदाई की तैयारी की। पन्हाला दुर्गमें उन्होंने बड़ी धूमधामसे विदा होनेवाले मेहमानोंके सम्मानार्थ एक बड़ा भारी भोज दिया। उन्होंने शाहजीको अनेक बहुमूल्य पदार्थ भेंट किये। उन्होंने शाहजीके प्रत्येक साथी और कर्मचारीको उसके पदके अनुसार वस्त्र और आभूषण प्रदान किये। शाहजीके प्रधान कर्मचारी त्र्यम्बक नारायण हनमन्तेको भी उन्होंने बहुमूल्य कारचोबी किये हुए वस्त्र, रत्न जटित आभूषण, एक तलवार और ढाल दी। उन्होंने अपनी विमाता और वैमात्रेय भ्राता व्यङ्कोजीको भी उनके पद, मान मर्यादाके अनुसार अनेक बहुमूल्य आभूषण और पदार्थ भेंट किये। बहुतसे हाथी और घुड़सवार शाहजीके साथ इसलिये कर दिये कि उन्हें मार्गमें किसी प्रकारका कष्ट न हो।

शाहजीके विदा होते समय, शिवाजी अत्यन्त उदास और दुःखी हुए। उनकी हार्दिक इच्छा थी कि उनके पिता, बीजापुर जैसे एतन्न राज्यके अधीन न रहें। वे चाहते थे कि बुढ़ापेके अन्त समयमें शाहजी अपनी जन्मभूमि महाराष्ट्रमें ही शान्ति पूर्वक अपना जीवन व्यतीत करें। पर शाहजी अपने विचारसे टससे मस न हुए। अन्तमें लाचार होकर शिवाजीको उन्हें विदा करना पड़ा। शाहजीके जाते समय शिवाजीकी आंखोंमें आंसुओंकी झड़ी लग गयी और शाहजीके नौकरों चाकरोंसे उन्होंने बार बार यही कहा कि पिताजी वृद्ध हैं, उनकी सेवा

शुश्रूषा अच्छी तरहसे करना। जब मैं पिताजीके दर्शन करने आऊँगा तब तुम लोगोंको पारितोषक दूँगा।"

कहा जाता है कि शिवाजीका अपने पितासे यह समझौता हो गया था कि पिताजीके जीवित कालमें अब वे बीजापुर-दरबारसे युद्ध न ठानेंगे। शिवाजीसे विदा होकर शाहजी बीजापुर पहुंचे और आदिलशाहसे भेंट की और शिवाजीसे जो समझौता हुआ, वह कह दिया। शिवाजीने जो जवाहरात, हाथी, घोड़े आदि शाहजीको भेंट किये थे, वे उन्होंने आदिलशाहको भेंट कर दिये और कहा कि "शिवाजीने यह नजर भेजी है।" पर वस्तुत शिवाजीने आदिलशाहको नजर नहीं भेजी थी। ये सब पदार्थ उन्होंने अपने पिताको भेंट किये थे। बीजापुरसे शाहजी अपनी जागीर कर्नाटकको चले गये। पन्हालेमें शाहजीने समर्थ श्रीरामदास स्वामीके दर्शन किये। शाहजी कर्नाटकसे कई बढ़िया तलवारें लाये थे, उन्होंने समस्त तलवारें शिवाजीको दीं और शिवाजीने अपने पिताकी दी हुई तलवारें प्रसन्नतापूर्वक लीं। पीछे शाहजीने अपने हाथकी एक बहुमूल्य तलवार शिवाजीके हाथमें दी जिसको शिवाजीने अपने पिताका प्रसाद स्वरूप समझ कर प्रसन्नतापूर्वक ग्रहण किया। उन्होंने अपने पिताकी तलवारका नाम "तुलजा" रखा, और भवानी "तलवार"के पास ही उन्होंने अपने पिताकी दी हुई तलवारको रखवा दिया और नित्य प्रति भवानी तलवारके समान उसकी भी वे पूजा करते थे।

यहाँ यह लिखना भी उचित प्रतीत होता है कि शिवाजीसे मिले पीछे शाहजी बहुत दिनों तक इस संसारमें नहीं रहे। दो वर्ष पीछे उनका देहान्त हो गया। उनकी मृत्यु इस प्रकार हुई कि बीजापुर-दरबारने शिवाजीसे सन्धि करनेके पीछे कुमायके सरदारोंका दमन किया। कुमायके बहुत से सरदारोंने बीजापुरके अली आदिलशाहकी अधीनता स्वीकार कर ली, किन्तु बेदनूर तथा तुङ्गभद्राके आसपासके सरदारोंने अली आदिलशाहकी अधीनता स्वीकार नहीं की। जिनमें भद्राप्पा और शिवाप्पा नामक दो सरदार मुख्य थे। आदिलशाहने उक्त दोनोंको दमन करनेके लिये शाहजीको भेजा। शाहजीने विद्रोही सरदारोंको एक युद्धमें परास्त कर दिया। परास्त होनेपर उन सरदारोंने केवल बेदनूर जिला छोड़कर समस्त धरती बीजापुर दरबारको देनी स्वीकार कर ली। आदिलशाहने यह प्रान्त शाहजीको दे दिया तथा और भी कुछ जागीर उनको दी। वस्त्र, अलङ्कार, हाथी, घोड़े आदि भेंटमें शाहजीको दिये तथा दरबारमें शाहजीकी बड़ी प्रशंसा की। इस प्रकार बेदनूरके सरदारोंको परास्त करके शाहजी तुङ्गभद्राके उत्तर किनारेकी ओर गये। वहाँ बसवापाटनके एक गाँवमें डेरा किया। यह स्थान शिकार खेलनेके लिये बहुत अच्छा था। एक दिन शाहजीकी इच्छा जङ्गली और कालें हिरनके शिकार करनेकी हुई। घोड़ेपर सवार होकर एक दिन वे शिकार खेलने निकल गये। वहाँ उन्होंने एक हिरनपर

गोली चलायी। हिरनके चोट भी आयी परन्तु वह भाग गया। शाहजीने भी उसके पीछे अपना घोड़ा दौड़ाया। दौड़ते हुए घोड़ेके आगेके पांवोंमें एक कीड़ा लिपट गया जिससे घोड़ा गिर पड़ा। शाहजी भी घोड़ेसे गिर पड़े *। उनके साथी यह देख कर दौड़े हुए वहां आये परन्तु शाहजीको इतनी चोट आयी कि वे उसी क्षण मर गये। यह घटना संवत् १७२०—जनवरी सन् १६६४ ई० को हुई।

शाहजीके दम निकलते ही उनके आदमियोंने व्यङ्कोजीके पास उनको मृत्युका समाचार भेजा। उस समय व्यङ्कोजी तञ्जौरमें थे। पाठक पढ़ चुके हैं कि व्यङ्कोजी शाहजीकी दूसरी पत्नी तुकाबाईके पुत्र और शिवाजीके वैमातृज भ्राता थे। अपने पिताकी मृत्युका समाचार पाते ही व्यङ्कोजी शीघ्र ही दुमाव पहुंचे। वहां पहुंचकर अपने पिताकी अन्त्येष्टि क्रिया की। बीजापुर-दरबारने व्यङ्कोजीको उनके पिताकी बङ्गलौर और तञ्जौरकी जागीर दी, सहानुभूति एवं समवेदनाका पत्र भेजा। जब शाहजीकी मृत्युका समाचार जीजाबाई और शिवाजीको पहुंचा तब वे दोनों बहुत दुःखित हुए। जीजाबाई अपने पति की वियोगवेदनासे इतनी दुःखित हुई कि वे सती होनेको तैयार हो गयी थीं। जब शिवाजीको अपनी माताके इस विचारकी

* किसी किसीने लिखा है कि भागते समय शाहजीके घोड़ेका पैर एक गड्ढेमें फिसल गया था, जिससे शाहजी घोड़ेपरसे गिर पड़े थे। घोड़ेने शाहजीकी छातीपर पैर रख दिया, जिससे उनकी मृत्यु हुई।

खबर मिली तब वे और भी दुःखित हुए। उन्होंने मातासे सती न होनेके लिये प्रार्थना की। पर सती साध्वी जीजाबाई अपने विचारोंसे नहीं डिगीं, वे अपने विचारसे तनिक भी नहीं टलीं। शिवाजी अपनी माताके चरण पकड़कर बालकके समान रोने लगे। शिवाजी की ऐसी दशा देखकर मोरोपन्त, निराजीपन्त, दत्ताजीपन्त आदिने हाथ जोड़कर जीजाबाईसे प्रार्थना की कि यदि आपने अग्नि प्रवेश किया तो महाराजका भी आपके पीछे जीवित रहना कठिन है। उन्होंने अपने बाहुबलसे जो राज्य स्थापित किया है वह मटियामेट हो जायगा। पीछे शिवाजी महाराज और शाहजीकी कीर्तिको स्थिर रखनेवाला कोई नहीं है। इन सब बातोंका विचार करके महाराजको अपने पास बुला लीजिये, उन्हें धैर्य प्रदान कीजिए। आप शोकसे व्याकुल मत हूजिये। अपना हृदय मजबूत कीजिए। शाहजीके विरहमें सती होकर दुनियामें अपने वंश-क्षयका कलङ्क मत लीजिये। जब सब लोगोंने इस प्रकार जीजाबाईको समझाया तब उन्हें धैर्य हुआ। वे अपने प्यारे पुत्र शिवाजीके कारण सती नहीं हुईं। शिवाजीने कई लाख रुपये अपने पिताके श्राद्धकर्ममें खर्च किये।

शिवाजीको शाहजीकी मृत्युसे बहुत दुःख हुआ। उन्होंने सोचा कि यदि दुभाषके सरदार न उत्पात मचाते तो न शाहजी वहाँ जाते और न मरते। बस उन्होंने दुभाषके सरदारों पर आक्रमण करनेके लिये अपनी सेनाका एक घुड़सवार सैन्य दल तथा युद्धके अन्य सामान सहित भेजा। दुभाषके

सरदारोंने क्षतिपूर्त्तिके लिये बहुतसा धन दण्ड देकर शिवाजीसे अपना पीछा छुड़ाया। बीजापुर-दरबारने इसका कुछ भी विरोध नहीं किया। जो बीजापुर-दरबार वर्षोंसे शिवाजीको दमन करनेकी चेष्टा कर रहा था उसने शिवाजीके तुकायके सरदारोंपर आक्रमण करनेपर तनिक भी चूं नहीं की बल्कि उलटा उसने शिवाजीको वह गांव * ही भेंट कर दिया जहां शाहजीकी मृत्यु हुई थी। शिवाजी वहां स्वयं गये और वहां बहुतसा पुण्य दान किया और उस स्थानपर अपने पिताजीकी समाधि बनवायी जो आजकल भग्नावस्थामें है। किसी किसी इतिहास-लेखकने लिखा है कि शिवाजीने कुछ गांव बीजापुर-दरबारसे खरीद लिये थे जिससे समाधिका व्यय चलता था और इसके विपरीत कोई कोई इतिहास-लेखक लिखते हैं कि बीजापुर-दरबारने कुछ गांव, शाहजीकी समाधिके खर्चके लिये भेंट कर दिये थे। जो कुछ हो, बहुत दिनों तक उस समाधिपर रात दिन निरन्तर, मृत शाहजीके सम्मानार्थ प्रदीप प्रज्वलित रहता था।

*—जिस गांवमें शाहजी मरे थे, उसका नाम किसीने 'बासव पट्टन', "बसव पाहन" और किसी किसीने बल्लमीर, किसीने हेदगिरि लिखा है।

दसवां परिच्छेद

मुगलोंसे मुठभेड़

"कारज ताहीको सरै, करै जो समय विचार
कबहु न हारै खेल जो, खेलै दाव विचार"॥

बीजापुर-दरबारसे भयपाश पाकर शिवाजीने अपना ध्यान मुगलोंकी ओर फेरा। संवत् १०१६ वि०—सन् १६५९ जुलाई मासमें औरङ्गजेबने अपने मामा शाइस्ता खांको शाहजादे मुअज्जिमके स्थानमें दक्षिणका सूबेदार करके भेजा। इससे पहले शाइस्ता खां मालवाके सूबेदार रह चुके थे और कुछ दिनोंतक उन्होंने दक्षिणका भी शासन किया था। जब औरङ्गजेबने गोलकुण्डा पर आक्रमण किया तब शाइस्ता खांने उन्हें अच्छी सहायता दी थी। गोलकुण्डाकी लड़ाईमें शाइस्ता खांने अच्छा नाम प्राप्त किया था। औरङ्गजेबने दक्षिणमें शाइस्ता खांको जो जो काम सौंपे थे उनमेंसे एक आदेश शिवाजीको दमन करनेका भी था। उस समय बीजापुर-दरबारसे शिवाजीका युद्ध चल रहा था। इसलिये शिवाजीने अपनी सेनाके दो भाग किये, जिनमें उन्होंने अपना एक सैन्यदल शाइस्ता खांका सामना करनेके लिये भेज दिया था। संवत् १०१८ वि०—सन् १६६१ ई० के आ

मासमें शाइस्ता खांने कोकणका कल्याण दुर्ग ले लिया। यह वही दुर्ग था जिसे शिवाजीने थोड़े दिनों पहले मौलाना अहमदसे लिया था। इस समय शिवाजी कल्याण दुर्गकी रक्षा करनेमें समर्थ नहीं हो सके थे। उन्होंने नेताजी पालकरके अधीन घुड़सवार सेना और मोरो पिङ्गलेके साथ पैदल सेना दक्षिणमें जो मुगलोंके स्थान थे उन्हें लूटनेके लिये भेजी। शिवाजीकी यह सेना अहमदनगरसे औरङ्गाबाद गयी। शिवाजीकी इस सेनाके पहुंचते ही मुगल अफसरोंमें बड़ी खलबली मची, जिसके सम्बन्धमें एक विचित्र कहानी विख्यात है, कि कुछ मुगल अफसरोंने शाइस्ता खांसे यह शिकायत की कि हम लोगोंने राजस्व करका जो रुपया उगाहा है, उसको भेजनेमें असमर्थ हैं; क्योंकि हमें मराठोंका बड़ा भय है कि कहीं वे मार्गमें उस धनको छीन न लें। अपने अधीन मुगल कर्मचारियोंसे यह सुनकर शाइस्ता खां बहुत बिगड़े। उन्होंने अपने अधीन मुगल कर्मचारियोंको लिखा —"आप लोग मर्द होकर डरते हैं, मैं एक स्त्री भेज रहा हूं-जो इस कामके करनेमें नहीं डरेगी।" इतना लिखकर उन्होंने रानी वागिन नामक एक स्त्रीके अधीन कुछ सेना भेजी। रानी वागिन उदयराय देशमुख नामक एक सरदार की स्त्री थी। यह अबला होनेपर भी सबला थी। यह वीरांगना थी। शिवाजीने उस वीरांगनाको कैद कर लिया और उसकी सेनाको तितर वितर कर दिया। थोड़े दिनों पीछे ही शिवाजीने मुगल सेनाके एक सैन्यदलको अहमदनगरके पास

परास्त किया। जो औरङ्गाबादसे एक राजपूत अफसरके अधीन भेजा गया था। मुगलोंके इस सैन्यदलको परास्त करके शिवाजी-ने दक्षिणमें मुगलोंके जो स्थान थे उनपर आक्रमण किया और जो नामी नामी स्थान थे उनमेंसे क्षतिपूर्तिके लिये धन संग्रह भी किया।

अपलगढ़ नामक दृढ़ किला मुगलोंके अधीन था। उक्त किलेका अध्यक्ष केसरसिंह नामक एक राजपूत था। उस वीरने शिवाजीको किला समर्पण करना स्वीकार नहीं किया। शिवाजीने उक्त किलेपर आक्रमण किया। कई दिनों तक दोनों ओरसे खूब युद्ध हुआ, अन्तमें उस वीर केसरसिंहने देखा कि दुर्गका पतन हुए बिना नहीं रहेगा, किसी प्रकारसे दुर्गकी रक्षा होनी सम्भव नहीं है, तब वह अपनी स्त्रियोंको वीर क्षत्रियोंके नियमके अनुसार जौहर अर्थात् अग्निमें जलकर मरनेकी आज्ञा देकर अपने साथियों सहित शिवाजीकी सेनापर टूट पड़ा। युद्धमें केसरसिंह अपने साथियों सहित वीरगतिको प्राप्त हुआ। युद्धमें जितने राजपूत वीरगतिको प्राप्त हुए थे उन सबकी अंत्येष्टि क्रिया शिवाजीने हिन्दू धर्म और उनके पदकी मर्यादाके अनुसार करनेकी आज्ञा दी। शिवाजीकी आज्ञाके अनुसार मृत राजपूतोंका अन्त्येष्टि संस्कार किया गया। केसरसिंहके परिवारमें केवल उसकी माता और लड़की बची थी और इनके अतिरिक्त उसके परिवारके सब व्यक्ति मारे गये। ये दोनों किलेकी एक दुर्गमें छिपी हुई मिलीं। शिवाजीने मृत केसर

सिद्दकी पुत्री और माताके प्रति उनके गौरव, मान मर्यादाके अनुकूल व्यवहार किया। उन दोनोंने शिवाजीसे प्रार्थना की कि हमें अपनी जन्मभूमि को भेज दीजिये। शिवाजीने उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली और उन्हें वस्त्र, अलङ्कार आदि देकर बड़े सम्मान सहित विदा किया।

कहते हैं कि जब शिवाजी पालकीमें सवार होकर किलेका निरीक्षण करनेको आने लगे तब उनका दुशाला एक पेड़की डालमें उलझकर पृथ्वीपर गिर पड़ा। उसी समय वहीं उन्होंने अपनी पालकी रखवा दी और कहा कि यह अच्छा शकुन हुआ है। यहां पृथ्वीके नीचे अवश्य धन गड़ा हुआ है। जहां उनका दुशाला गिरा था वहां जमीन खोदनेकी आज्ञा दी। तुरन्त ही उनकी आज्ञाका पालन किया गया। पृथ्वी खोदी गयी, उसमें चार लाख सोनेकी मुहरें निकलीं।

जब औरङ्गजेबको शिवाजीके इन आक्रमणोंका पता लगा तब वे बहुत बिगड़े। उन्होंने शाइस्ता खांको लिखा कि शिवाजी ने बीजापुरसे जो जो स्थान ले लिये हैं उनपर आक्रमण करो और उन्हें शीघ्र छीन लो। शाइस्ता खांने औरङ्गजेबके इस हुक्म के मुताबिक शीघ्र ही काम शुरू किया। उन्होंने उस समय दक्षिणमें जितनी मुगल सेना थी उसको इकट्ठा किया और सन् १६६० ई० के जनवरी मासके अन्तमें वे औरङ्गाबादसे चले। उनके साथ एक लाख सेना थी जिसमें पांच सात सौ हाथी थे, चार हजार ऊंट थे, तीन हजार गाड़ियां युद्धके सामानसे

लदी हुई थीं जिनको बैल खींचते थे और युद्धके सामानसे भरी हुई दो हजार गाड़ियोंको घोड़ा खींचते थे। बत्तीस करोड़ रुपये भी थे। औरङ्गाबादसे चलते समय शाइस्ता खांने प्रतिज्ञा की थी कि शिवाजीको मुगल-साम्राज्यके अधीन करूंगा और उनसे सब किले छीन लूंगा। अतएव एक सैन्यदल उन्होंने मुमताज खांके अधीन औरङ्गाबादमें छोड़ा और दूसरा सैन्यदल उन्होंने जोधपुरके महाराज जसवन्तसिंहके अधीन नियत किया और स्वयं वे एक सैन्यदलको लेकर अहमदनगरकी ओर चले। राहमें पेडगांवमें जो अहमदनगर जिलेमें है वे ठहर गये। पेड़गांवसे उन्होंने सिन्दखेड़ाके जादवराव नामक एक मराठा सरदारके अधीन कुछ घुड़सवार सेना भेजी। शिवाजीके घुड़सवारों और उक्त मराठे सरदारके अश्वारोही सैनिकोंमें मुठभेड़ हुई। जिसमें शिवाजीके अश्वारोही सैनिकोंको सफलता प्राप्त नहीं हुई। शिवाजी राजगढ़ चल दिये। वहांसे वे सूपा गये और सूपासे फिर पूना पहुंचे। पूनासे सिंहगढ़ केवल तेरह मीलकी दूरीपर था, शाइस्ता खांका विचार भी पहले सिंहगढ़पर आक्रमण करनेका ही था। परन्तु फिर उन्होंने अपना यह विचार परित्याग कर दिया, क्योंकि पहले वे चाकनपर आक्रमण करके अपनी सेनाके लिये सब प्रकारकी सुविधायें करना चाहते थे। शाइस्ता खां जिस स्थानपर ठहरे हुए थे, वहांसे जुन्नारतक एक बड़ी सड़क जाती थी जिसपर चाकन बसा हुआ था। चाकनसे उन्हें अपनी सेनाके लिये रसद

आदिकी सामग्रीका भी बड़ा सुभीता था। इन सब बातोंको सोचकर शाइस्ता खांने चाकणपर ही पहले आक्रमण करनेकी ठानी। चाकण किलेका फौजदार अर्थात् दुर्गाध्यक्ष फिरङ्गोजी नरसाला था जिसने शाहाजी कोकड़ेयकी मृत्युके पीछे शिवाजीको अधीनता स्वीकार कर ली थी। उसने शाइस्ता खांके मुकाबिलेमें अपूर्व वीरताका परिचय दिया। शाइस्ता खांके अधीन मुगल सेनाने लगभग ५०, ६० दिनतक चाकण दुर्गको घेरा पर फिरङ्गोजी नरसालाके सामने मुगल सेनाकी दाल नहीं गल सकी। शाइस्ता खां मराठोंकी वीरता देखकर बहुत प्रसन्न हुए। लगातार पचास साठ दिनतक आक्रमण करनेपर भी मुगल सेना चाकणके दुर्गका पतन करनेमें असमर्थ रही। तब लाचार होकर मुगल सेनाने चाकण दुर्गमें प्रवेश करनेके लिये एक सुरङ्ग खोदी। सुरङ्ग खोदते समय किलेके नीचेका एक हिस्सा और कुछ आदमी उड़ गये। खाफी खांने इस सुरङ्गका वर्णन करते हुए लिखा है कि आदमी, ईंट, पत्थर ठीक वैसे ही उड़ गये, जैसे हवामें कबूतर उड़ जाते हैं। सुरङ्ग तैयार हो जानेपर मुगल सैनिक अपने बेहरोंके आगे ढालोंको करके सुरङ्गमें घुसे परन्तु तिसपर भी फिरङ्गोजी आत्म-समर्पण करनेको तैयार नहीं हुए। उन्होंने सुरङ्गके भीतर, मुगलोंकी सुरङ्गको उड़ानेके लिये दूसरी सुरङ्ग खोदी और उस सुरङ्गके मुहानेपर फिरङ्गोजी और उनके आदमी, मुगल सेनाका सामना करनेके लिये डट गये। उस दिन बिना विराम और विश्रामके दोनों ओरसे युद्ध

होता रहा। उस दिन मुगल सेनाने समस्त दिन [illegible] आक्रमण किया। मराठे और मुगल दोनोंमेंसे किसीने भी अपना स्थान नहीं छोड़ा। उस दिन मराठे और मुगल वीर रातमें किलेके उस विध्वंस भागमें ही रात बितायी। दूसरे दिन मुगलोंकी नयी सेना आ गयी, जिससे मुगलोंका बल बढ़ गया उन्होंने नयी सेनाकी सहायतासे फिरङ्गोजी नरसाला तथा उनके साथियोंको बुर्जोंमेंसे किलेमें खदेड़ दिया और मुगल सेना भी किलेमें घुस पड़ी। फिरङ्गोजी नरसाला और उनके साथी मुगलोंकी कैदमें आये। पर मुगलोंको यह विजय बहुत महंगी पड़ी, मुगलोंकी ओरसे २६८ आदमी मारे गये और [illegible] घायल हुए। मुगल सेनापति शाइस्ता खां फिरङ्गोजी नरसालाकी वीरतासे बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने उनका विशेष सम्मान * किया और उनसे मुगल सेनामें कोई पद ग्रहण करनेका विशेष आग्रह किया पर शिवाजीके वीर दुर्गाध्यक्षने मुगल साम्राज्यके किसी भी ऊंचे पदको स्वीकार नहीं किया। उनके जाते समय शाइस्ता खांने फिर कहा कि "यदि आप मुगल सेनामें सम्मिलि

—फिरङ्गोजीके बारेमें लिखा हुआ है कि [illegible] नरसालाको [illegible] कर दिया था। परन्तु [illegible] है कि शिवाजीने फिरङ्गोजीको [illegible] कर दिया था। [illegible] फिरङ्गोजीका [illegible] और शाइस्ता खांके [illegible] दिया। [illegible] फिरङ्गोजीको [illegible] किया। [illegible] शाइस्ता खांके [illegible] किया था।

होना चाहते हैं तो आपको कोई न कोई उच्च पद अवश्य प्रदान किया जावेगा। आपकी जब इच्छा हो तब आप आ सकते हैं।" पर फिरङ्गोजी शाइस्ता खांके प्रस्तावसे सहमत नहीं हुए और अपनी सेना सहित शिवाजीके पास चले आये। शिवाजीने अपने वीर सेनानायक फिरङ्गोजीको भूपालगढ़का किलेदार नियुक्त किया। कहा जाता है कि पूनामें बाबाजीराम और होनाप्पा देशपांडे नामक दो देशमुख थे। वे किसी कारण शिवाजीसे बिगड़कर शाइस्ता खांकी ओर जा मिले थे। जब शिवाजीको इन लोगोंके विश्वासघातका पता लगा तब वे बहुत बिगड़े। इन देशपांडोंका एक रिश्तेदार शिवाजीके यहां था। उसका नाम सम्भाजी कावजी था। यह शिवाजीका बड़ा कृपा पात्र था। पाठक भूले न होंगे कि यह वही सम्भाजी कावजी था जिसने शिवाजीके कहनेसे जावलीके हनमन्तराव मोरेका बध किया था। एक दिन शिवाजीने सम्भाजी कावजीसे भरे दरबारमें कहा था कि "तुम्हारे दो रिश्तेदार हमसे विरुद्ध होकर वैरीसे आ मिले हैं इसलिये हम तुम्हारे ऊपर क्या विश्वास करें।" शिवाजीके ये वचन सम्भाजीको बहुत बुरे लगे और वह शाइस्ता खांसे जा मिला। शाइस्ता खां उससे मिलकर बहुत प्रसन्न हुए। सम्भाजी कावजीने अपनी पहली ही भेंटमें अनेक शारीरिक व्यायाम दिखलाकर, शाइस्ता खांको प्रसन्न कर लिया। उसने खांके सामने एक घोड़ेको पैर पकड़कर ऊपर उठा लिया। खां उसके शारीरिक बलको देखकर अत्यन्त

प्रसन्न हुआ और उसे पांच सौ घोड़ोंका सवार और माहुलीमें थानेदार नियुक्त किया। जब शिवाजीको पता लगा, तब उन्होंने नेताजी पालकरके अधीन एक सैन्यदल भेजा जिसमें सम्भा जी पराजित हुआ और मारा गया।

चाकण दुर्गके पतन होनेपर शिवाजी सिंहगढसे राजगढ़ चले गये। यहींपर उन्हें शाइस्ता खांकी एक चिट्ठी * मिली जिसमें शाइस्ता खांने फारसीका एक शेर (पद्य) भेजा था। उस पद्यमें शिवाजीकी बन्दरसे उपमा दी और लिखा कि जिस प्रकार जङ्गल, पेड़ और पहाड़ोंपर बन्दर रहते हैं ठीक वैसे ही शिवाजी भी अपना बचाव जङ्गल और पहाड़ोंपर ही कर सकते हैं। इसके उत्तरमें शिवाजीने भी शाइस्ता खांको संस्कृत का एक श्लोक भेजा जिसका तात्पर्य यह था कि मैं बन्दर नहीं बल्कि बन्दरोंका स्वामी हनुमान हूं। मैंने यह शपथ ग्रहण की है कि जिस प्रकार बन्दरोंने रामचन्द्रजीको रावणके मटिया मेट करनेमें सहायता दी थी ठीक वैसे ही मैं भी शाइस्ता खांका मटियामेट किये बिना नहीं रहूंगा। शाइस्ता खां इस पत्रको पाकर चाकणसे पूना चले आये और उसी राजमहलमें ठहरे जिसमें शिवाजीने अपनी बाल्यावस्था बितायी थी। वे शिवाजी की हिम्मत और चालाकीको अच्छी तरहसे जानते थे और वे इस बातसे भी परिचित थे कि मराठे लोग बड़े चालाक होते हैं।

---

* किसी किसी इतिहास-लेखकने लिखा है कि यह चिट्ठी संस्कृतमें थी।

वे अचानक छापा मारते हैं, इसलिये उन्होंने पूना और उसके आसपासके स्थानोंमें नाकेबन्दी करके अपनी रक्षाका विशेष प्रबन्ध किया। उन्होंने अपनी अश्वारोही सेनामेंसे प्रत्येक मराठा घुड़सवारको अलग कर दिया और समस्त हिन्दुओंको चाहे वे सैनिक हों या न हों, यह आज्ञा दे दी कि वे विना पर वानाके पूनासे कहीं बाहर न जाने पावें और न आने पावें। वे मुगल सेनाके मराठा-सरदारोंके अतिरिक्त अन्य मराठा-सरदा रोंसे मिलते जुलते भी न थे। उन्होंने अपने अधीनस्थ मराठा पैदल सेनाको इसलिये बरखास्त नहीं किया कि एकदम पैदल सेना घट जायगी। इसके अतिरिक्त शाइस्ता खांने अपने सहायक, जोधपुर नरेश, महाराज जसवन्तसिंह और उनकी दस हजार सेनाको पूनाके दक्षिण ओर एक मुख्य स्थानपर जो सिंहगढ़की ओर जाता था नियत किया। खां साहब यह सब प्रबन्ध करके अपनी रक्षाके लिये निश्चिन्त थे। वे समझे हुए थे कि अब शिवाजी हमारा क्या कर सकता है।

पर शिवाजीके सामने खां साहबका यह प्रबन्ध कुछ भी उप युक्त नहीं हुआ। उन्होंने शाइस्ता खांपर अचानक धावा करना भी उचित नहीं समझा, क्योंकि खांके अधीन सेना अधिक थी। पर उन्होंने खांसे बदला लेने और उसे पूनासे हटानेका पूरा विचार कर लिया। वे अच्छी तरहसे जानते थे कि खांसे न तो मैदानमें युद्ध करनेसे विजय प्राप्त हो सकती है और न खांको लोभ लालच देकर अपनी ओर मिलाया जा सकता है क्योंकि भारतके

सम्राट् औरङ्गजेबके मामा और मुगल साम्राज्यके नामी सूबेदार शाइस्ता खाँ सोने चाँदीके लोभमें अपने उत्तरदायित्वपूर्ण कर्त्तव्यको भूलनेवाले नहीं हैं। वे इस बातको भी अच्छी तरह जानते थे कि शाइस्ता खाँ किसी प्रकार सन्धि करनेको भी तैयार न होगा, क्योंकि वह शिवाजीको तहस नहस करनेकी प्रतिज्ञा करके ही औरङ्गाबादसे पूना चला था। इसलिये शिवाजीको केवल एक ही उपाय सूझा कि किसी चालाकीसे खाँपर विजय प्राप्त करनी चाहिए। जिस प्रकारसे आजकल अङ्गरेजोंका बिना हिन्दुस्तानियोंकी सहायताके राजशासन चलना असम्भव है, उसी प्रकार उस समय मुसलमानोंका हिन्दुओंकी सहायता विना राजकाज चलना असम्भव था। महाराष्ट्रोंसे विद्वेषभाव रखने और महाराष्ट्रकी स्वाधीनताका मटियामेट करनेका बीड़ा उठानेपर भी खाँका मराठोंके विना काम नहीं चलता था। मुगल सेनामें भी मराठे थे। उस समय पूनामें मुगलोंकी जो सेना थी उसमें अनेक मराठे थे। पूनामें स्थित मुगल सेनाके एक घुड़सवारदलका अध्यक्ष एक मराठा ही था। शिवाजीने अपने दो ब्राह्मण कारकुनोंको पूनामें उक्त मराठा सरदारके पास भेजा तथा अपने गुप्तचरोंसे पूना नगर तथा शाइस्ता खाँके सारे गुप्त समाचार मंगवा लिये। जिस प्रकार आजकल नौकरशाहीके अत्याचारोंको मेटनेके लिये सर्वसाधारणमें स्वदेशभक्ति और स्वदेशानुरागका भाव जागरित किया जाता है, उसी प्रकार उन दिनों धर्मके नामपर तत्कालीन शासकोंके अत्या

चार मेटनेकी अपील की जाती थी। क्योंकि अनेक मुसलमान शासक और बादशाहोंमें धार्मिक सहनशीलता बहुत कम थी। मुसलमानोंकी इस धार्मिक विद्वेषाग्निके कारण अनेक मराठे और हिन्दुओंने भी शिवाजीका साथ दिया था। क्योंकि शिवाजीने हिन्दूधर्म और महाराष्ट्रकी स्वाधीनताकी रक्षाका बीड़ा उठाया था। इसमें सन्देह नहीं कि शिवाजीको अपने धार्मिक विचारोंके कारण भी सफलता प्राप्त होती थी।

जैसा ऊपर लिखा हुआ है कि शिवाजीके दोनों ब्राह्मण गुप्तचर पूना पहुंचे और मुगल सेनाके एक अश्वारोही सैन्य दलके मराठा सरदारसे मिले और उसे अपनी ओर मिला लिया। इसका इतिहासमें पता नहीं लगता है कि शिवाजीके गुप्तचरोंने उक्त मराठेको धर्मके नामपर अथवा धनका लालच देकर अपनी ओर मिलाया था। शिवाजीके गुप्तचरोंने उक्त मराठे शिलेदारको यह परामर्श दिया कि "आप खांसे यह प्रार्थना कीजिये कि मेरे परिवारमें विवाह है इसलिये पूना शहरमें बारात आने की परवानगी दीजिये।" शिवाजीके गुप्तचरोंके कथनके अनुसार उक्त मराठा शिलेदारने शाइस्ता खांसे प्रार्थना की और यह प्रार्थना स्वीकृत हुई। बस उक्त मराठा शिलेदारने अपने कुछ मित्रोंकी सहायतासे बनावटी विवाहका ढोंग रचा और शिवाजीके गुप्तचरोंको शिवाजीके पास भेजा। उनके द्वारा यह कहला भेजा कि आप विश्वास रखियेगा कि आपको सब प्रकारसे सहायता दी जायगी। यह समाचार पाते ही शिवाजी

सिंहगढ़ किलेसे अपने साथ डेढ़ हजार मावाले [illegible] ले आये और उन्होंने पूनाके बाहर "कम्भज" नामक घाटकी ओर तथा पासके कुछ ग्रामोंमें चौपाये, बैल, भैंस आदि खड़े किये। इन चौपायोंकी सींगोंमें तथा "कम्भज" घाटपर जो पेड़ लगे हुए थे उनमें तेलके भींगे हुए पलीते बंधवा दिये। तथा वहां कुछ आदमी रखे और उन्हें आज्ञा दी कि बिगुल बजते ही ये पलीते जला दिये जाय और चौपायोंको दौड़ाया जाय। इस काममें शिवाजीका यह उद्देश्य था कि खांकी घुड़सवार सेना यह समझे कि शिवाजीकी सेना इस ओर भागी आ रही है अतएव खांकी सेना शिवाजीकी सेना समझकर उसी ओर पीछा करनेके लिये दौड़ पड़ेगी और शिवाजी बिना किसी बाधाके सिंहगढ़ पहुंच जायंगे। उन्होंने अपने कुछ थोड़ेसे आदमी पूनाके आसपास रखे और उन्हें आज्ञा दी कि जब बिगुलकी आवाज सुनाई पड़े तब सब लोग इकट्ठे हो जायं। शहरके बाहर आम्रवृक्षोंके नीचे उन्होंने अपने पांच सौ योद्धाओंको मुगलसेनासे कुछ दूरीपर रखा। इस भांति शिवाजीने अपनी सेनाको छोटे छोटे टुकड़ोंमें बांटकर सबको हिदायत कर दी कि बिगुलके बजते ही सब लोग बताये हुए कार्योंको करें।

पूना शहरमें जानेसे पहले शिवाजीने जिरहबख्तर पहनकर उसके ऊपर अङ्गरखा पहना। सिरपर शिरस्त्राण धारण किया। उसके ऊपर साफा बांधा। एक हाथमें तलवार ली और दूसरेमें बाघनख लिया। संवत् १७२० वि०—सन् १६६३ ई० की पांचवीं

अप्रिलकी रात पूनाके इतिहासमें सदैव स्मरणीय रहेगी। उस दिन शिवाजीने अपने कुछ * साथियोंकी एक बारात बनाई। अपना तथा अपने साथियोंका भेष ऐसा बदल दिया कि देखनेमें ये मुगल सेनाके सिपाही प्रतीत होते थे। बस, भेष बदलकर पूनाकी ओर चल पड़े और शहरकोतवालसे शहरके भीतर आनेके लिये पास मांगा कि एक बारात आ रही है। शिवाजी तथा उनके साथियोंके आगे एक लड़का दुल्हाके रूपमें था। वह सिरसे पैरतक एकदम दुल्हाके कपड़े पहने हुए था। उसके पीछे शिवाजी तथा उनके साथियोंमेंसे कोई ढोल बजा रहा था कोई शिनाई बजा रहा था, जिससे किसीको उनपर किसी प्रकारका सन्देह न हो। शहरकोतवालने बारातको शहरमें आनेका पास दे दिया जिसकी स्वीकृति पहले ही शाइस्ता खांसे हो चुकी थी। उसी समय शिवाजीने अपने वीर सैनिकोंका एक दल पैदल सैनिकोंके भेषमें दूसरे दरवाजेसे भेजा। ये लोग दूसरे दरवाजेसे अपने कुछ साथियोंको घसीटते हुए ले गये और जिस किसीने पूछा उससे

---

* खाफी खां दो सौ आदमी लिखता है पर इसमें संदेह है क्योंकि दो सौ आदमियोंकी बारात देखकर, मुसलमान पहरेदारोंको अवश्य ही शिवाजीकी चालाकीका पता लग जाता। मराठा लेखकोंमेंसे किसीने बीस आदमी और किसीने पचीस आदमी लिखे हैं। यह संख्या उचित प्रतीत होती है। उस समय आजकलकी भांति आर्म्स एक्ट न था इसलिये मराठे बीच विवाह आदिके समय भी अपने साथ हथियार ले जाते थे। बारातके बहाने जो बीस पूनामें शिवाजीके साथ गये थे वे अपने साथ हथियार भी ले गये थे। हमने यहां खाफी खांके इतिहासके आधारपर ही शिवाजीके आक्रमणका बयान किया है।

कहा, ये युद्धके कैदी हैं इन्होंने बुरी तरहसे हमको मारा है। यह ऊपर लिखा जा चुका है कि पूना शहरके बाहर शिवाजीने बहुत से पैदल सैनिक छिपा दिये कि यदि किसी प्रकारकी आपत्ति हो तो समयपर वे काम आ सकें और आधी रातके समय उन्होंने पांच सौ आदमी शहरके बाहर भिन्न भिन्न स्थानोंमें रखे। जिस राजमहलमें शाइस्ता खां ठहरा हुआ था शिवाजी उसकी एक एक ईंटसे परिचित थे। क्योंकि उनकी बाल्यावस्था तथा युवावस्थाका बहुत सा भाग उसीमें बीता था।

शिवाजीने अपने साथ राजमहल चलनेके लिये तानाजी मोलसरे, पासाजी कङ्क, दादाजी बापुजी देशपांडे, चिमणाजी बापुजी देशपांडे तथा अन्य बीस पचीस आदमियोंको लिया। पहले उन्होंने सदर फाटकसे ही राजमहलमें घुसना चाहा पर वहां अच्छी रोशनी थी और पहरेदार भी जागे हुए थे। इसलिये वे वहांसे पीछेकी ओर फिर गये। राजमहलमें खां साहबने पीछेकी ओर अपना बबर्चीखाना बना लिया था। शिवाजीने इस बबर्चीखानेसे ही राजमहलमें घुसनेकी सोची।

रमजानका महीना था। हमारे बहुतसे पाठक यह जानते होंगे कि मुसलमान लोग इस मासमें रोजा रखते हैं, अर्थात् चन्द्रमाके अस्त होनेसे पहले और उदय होनेके पीछे वे भोजन करते हैं। नवाब शाइस्ता खांके कुछ बबर्ची रातको भोजन बनाकर और नवाब साहब तथा उनके परिवारके लोगोंको खिला पिलाकर सोये ही थे और कुछ बबर्ची जाग जाना रहे थे कि

दिन निकलनेसे पहले भोजन बनाना होगा। बाहरके बवर्ची खानेमें और जनानेके नौकरोंके वासस्थानके बीचमें एक दीवाल थी जिससे दोनों कमरे अलग अलग थे। परन्तु उक्त दोनों कमरोंमें आने जानेके लिये एक दरवाजा था जो पीछेसे मिट्टी और ईंटोंसे जनानेघरको बिलकुल अलग करनेके लिये बन्द कर दिया गया था। ज्योंही मराठे उस दरवाजेकी ईंटें निकालने लगे त्योंही आहट पाकर कुछ नौकर जग पड़े। उन्होंने खांको इसकी सूचना दी। खां साहब उस समय सो रहे थे, नौकरों के जगानेपर बड़े नाराज हुए और फरमाया कि "इस जरा सी बात (अर्थात् दीवालमें आहट होनेपर) के लिये तुम लोगोंने मुझे जगा दिया है।" इस प्रकार नौकरोंको फटकारकर वे फिर सो गये। नौकर लोग भी अपना सा मुंह लेकर चले आये।

थोड़ी देरमें दीवालमें एक आदमीके घुसने लायक छेद हो गया, शिवाजी और उनके साथी धीरे धीरे उसी छेदमेंसे भीतर घुसे। आगे जनानेमें जानेके लिये उन्हें एक और खिड़की मिली। कुदालीसे उन्होंने उस खिड़कीकी भी मिट्टी और ईंटें निकाल डालीं। एक नौकर जो दीवालके पास ही सो रहा था, जाग पड़ा और उसने खांको फिर उठाया। खांने उस नौकरको भी फटकार बतला दी और नींदके खुर्राटे भरने लगे कि इतनेमें ही एक दो मिनिटके पीछे एक दासी दौड़ी हुई खांके पास गयी और कहा कि हमारे घरकी दीवालमें एक छेद हो गया

है। शाइस्ताखाँ झटपट अपने बिस्तरेसे उठ बैठे और अपने हाथमें एक भाला तथा कमान और तीर ले लिये। इतनेमें शिवाजीने खिड़की खोल ली और अपने साथियोंके साथ उसमें घुस पड़े। शाइस्ताखाने शिवाजीके एक आदमीको तीरसे मार गिराया, परन्तु उस आदमीने मरनेसे पहले अपनी तलवारसे शाइस्ताखांके हाथका एक अंगूठा काट दिया। शाइस्ताखांने इस समय अच्छी वीरता प्रकट की, उन्होंने भालेसे एक दूसरे मराठेको भी मार डाला। इतनेमें शिवाजीका दूसरा दल भी आ पहुंचा, उसने शाइस्ताखांके खोजाओंको परास्त कर दिया। नवाबके नौकरोंने सहायताके लिये ढोल बजाये पर उनका ढोल बजाना व्यर्थ हुआ। क्योंकि शिवाजीके आदमियोंने दूसरी ओरके दरवाजे बन्द कर दिये थे।

शाइस्ताखांके बेटे अबदुल फतेहखांने मराठोंपर आक्रमण किया, किन्तु दो या तीन मराठोंको मारकर वह स्वयं मारा गया। जिस समय नवाबका लड़का मराठोंसे युद्ध कर रहा था, उस समय दो दासियाँ नवाबको दूसरे स्थानमें ले गयीं, क्योंकि अंगूठा कट जानेसे वे मूर्च्छित हो गये थे। एक और मुसलमान सज्जनने जिसका रूप, शाइस्ताखांसे मिलता जुलता था और जो अवस्थामें भी उनके बराबर था, रस्सेकी सीढ़ी लगाकर राजमहलसे भागना चाहा था, मराठोंने उसे शाइस्ताखां समझा और उसका सिर उड़ा दिया। इसपर शिवाजीने समझा कि शाइस्ताखां मारा गया है, राजमहलके दरवाजे खोल

दिये और अपने सब आदमियोंको इकट्ठा करके पूनासे जितनी जल्दी भाग सके, उतनी जल्दी भाग गये। पूनासे चलनेके पहले उन्होंने अपनी सहायताके लिये जो पैदल सिपाही रखे थे, उन्हें भी अपने साथ ले लिया और पूनाके बाहर "कात्रज" नामक घाटकी ओर चल दिये। "कात्रज" घाटकी ओर पहाड़ीपर जितने पेड़ थे, उन सबपर मराठोंने पलीते बांधे और जला दिये थे, जिससे मुगल सेनाने समझा कि पहाड़की चोटीपर मराठोंकी असंख्य सेना खड़ी हुई है। "शिवाजी "कात्रज" घाटके पश्चिमकी ओरसे होते हुए जितनी जल्दी हो सका, सिंहगढ़में पहुंच गये। मुगल सेनाने "कात्रज" घाटकी ओर मराठा सेना समझकर धावा किया पर कोई था नहीं, मुगल सेना युद्ध किससे करती। मुगल सेनाके इस प्रकार ध्यान बंटनेसे शिवाजी और उनके साथियोंको सिंहगढ पहुंचनेमें सुगमता हुई।

शिवाजी और शाइस्ताखांके युद्धके सम्बन्धमें भिन्न भिन्न इतिहास-लेखकोंका भिन्न भिन्न मत है। प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता प्रोफेसर यदुनाथ सरकारने "सूरत फैक्टरी रिकार्डस"के आधार पर शाइस्ताखां और शिवाजीके युद्धका वर्णन लिखा है। उसका सारांश यह है कि भयभीत स्त्रियोंने नवाबको (शाइस्ताखांको) जगाया। इसके पहले कि शाइस्ताखां अपना हथियार चलाते शिवाजीने अपनी तलवारसे उनका अंगूठा काट दिया। मालूम होता है कि किसी चतुर स्त्रीने वहांसे रोशनी हटा दी, जिससे अन्धेरेमें दो महाराष्ट्रोंका पैर पानीके गड्ढेमें फिसल गया था।

उस समय इतनी घबराहट मची हुई थी कि खांकी दो बांदियां (दासियां) उन्हें (खांको) आरामगाहमें ले गयी थीं। अन्धेरेमें ही मराठोंने मारकाटका काम जारी रखा था जिससे खांकी दो स्त्रियां घायल हुई और छ मारी गयीं। पर शायद मराठोंको यह मालूम न था कि वे स्त्रियां हैं, क्योंकि उस समय अन्धेरा था। यदि मराठोंको यह मालूम हो जाता कि वे स्त्रियां हैं तो सम्भव है कि वे स्त्रियोंपर हाथ न उठाते। इसी बीचमें शिवाजीका आधा सैन्यदल जिसमें लगभग सौ आदमी थे, जो बाबाजी बापूजीकी अधीनतामें बाहर खड़े हुए थे खांके खास पहरेदारोंपर टूट पड़े और उन्होंने कितने ही सोते हुए पहरेदारोंको यह कहते हुए मार डाला कि क्या तुम इसी तरह की रखवारी करते हो? इसके पीछे बाजा बजानेवालोंके घरमें वे लोग घुस गये और बाजा बजानेवालोंसे कहा कि खां साहबने बाजा बजानेका हुक्म दिया है। ढोल तथा अन्य बाजोंकी आवाज और शत्रुओंके हल्ला-गुल्लासे और भी घबराहट फैल गयी। जनानेमें इतना हल्ला-गुल्ला हुआ कि मुगल सेनाने अनुमान किया कि उनके सेनापतिपर आक्रमण हुआ है और मुगल सैन्यदलमें शत्रुके बहुतसे आदमी आ गये हैं। मुगल-सेनाके अनेक वीर "दुश्मन आ गया" यह चिल्लाते हुए और अपने हथियार उठाकर मराठोंका पीछा करनेको चले।

शाइस्ताखांका एक पुत्र फतेहखां सबसे पहले, बिना किसी दूसरेकी सहायताके अपने पिताकी रक्षाके लिये आगे

पड़ा। पर यह वीर दो या तीन मराठोंको मारकर स्वयं युद्धमें मारा गया। एक मुगल कप्तान जनानेके पीछे रहता था, जब उसने देखा कि मराठोंने पीछेसे दरवाजा बन्द कर दिया है तब उसने रस्सेकी सीढ़ीके सहारे भीतर आना चाहा। वह रस्सेकी सीढ़ी लगाकर भीतर आना चाहता था कि मराठोंने उसपर आक्रमण किया और उसको मार डाला।

शिवाजीने देखा कि अब शत्रु पूरी तरहसे जाग उठे हैं और अपने हथियार सँभाल रहे हैं तब वे वहांसे अपने आदमियोंको इकट्ठा करके चलते बने, मुगलोंको यह पता नहीं लगा कि शत्रु, किधर हैं। वे व्यर्थ ही अपने कैम्पमें मराठोंको इधर-उधर ढूंढते रहे। रातके आक्रमणमें पूर्ण सफलता प्राप्त हुई। मराठोंकी ओरसे छ आदमी मारे गये और चालीस घायल हुए। शाइस्ता खांकी छ: स्त्रियां और बांदियां, एक लड़का और कप्तान मारे गये और दो लड़के, आठ स्त्रियां और स्वयं खां घायल हुए।"*

* चिटनीस लिखता है कि शाइस्ताखां महलमें नहीं रहते थे। [illegible] उसके पास वह एक खेमेमें रहते थे। शिवाजी महाराज खांके खेमेमें अपने दो साथियों सहित पहुंचे। उस समय खांको गहरी नींद आ रही थी। शिवाजी उनकी छातीपर चढ़ बैठे और उनकी छातीमें तलवार घुसेड़नेको ही थे कि खांकी स्त्री जाग उठी। उसने अपने पतिकी ऐसी दशा देखकर महाराजके पैर छुये और हाथ जोड़कर याचना की कि मेरे पतिके प्राण मत लीजिये। उसकी यह दशा देखकर शिवाजीका हृदय पिघल गया और उन्होंने विचार किया कि इससे रणक्षेत्रमें युद्ध करनेमें ही अच्छा होगा। —ऐसे विचार करके शिवाजी खांकी छातीपरसे उठ बैठे और एक हाथमें तलवार और दूसरे हाथमें बघनख खांके पेटके पास करके उनसे कहा, चलो हमारे साथ चलो, यहां हल्ला-गुल्ला मत करो, चुपचाप चलो लड़ाई को। इस प्रकार कहकर खांका हाथ पकड़कर जिस रास्तेसे वे आये थे उस

समासद् और चित्रगुप्त इस सम्बन्धमें लिखते हैं —"खाँ जिस तम्बूमें रहते थे, उसमें एक दिन अकस्मात् शिवाजी घुस गये। वहाँ कुछ स्त्रियाँ जाग रही थीं, उन्होंने हल्ला मचाया, जिससे खाँकी नींद टूट गयी। पहले खाँने समझा कि डाकुओंने अचानक हमपर छापा मारा है। ऐसा खयाल करके वे स्त्रियोंके भीतर जा छिपे। शिवाजी महाराज उन्हें ढूंढने लगे, इतनेमें खाँ तलवार लेकर शिवाजीपर आक्रमण करनेको तैयार हुआ। शिवाजीने खाँको देख लिया और खाँसे पहले ही खाँपर तलवार चलायी। शिवाजीके प्रहारसे खाँकी तीन अङ्गुलियाँ कट गयीं। खाँके सैनिक यह हल्ला गुल्ला सुनकर खाँके खेमेमें आये, उनके आते ही शिवाजी अपने साथियों सहित चट पट खेमेसे बाहर निकल गये।"

रायरी बखरमें इस घटनाके सम्बन्धमें लिखा हुआ है कि खाँ लालमहलमें रहते थे। उक्त *महलके पास एक माली रहता* था। शिवाजीने उस मालीको उसके सालेकी मार्फत अपनी ओर मिला लिया। उसने शिवाजीको वचन दिया कि रातके *समय मैं आपको खाँके शयनागार (ख्वाबगाह) में* पहुंचा

सकते थे दो घा और उनको स्त्री सहित बाहर निकल आये और अपने आदमियोंसे जा मिले।—बाहर निकलकर उन्होंने खाँसे कहा—मैं शिवाजी हूँ, तू मेरे ऊपर चढ़ाई करने आया है। परन्तु तुझे पराजित करने और मारनेमें मुझे कुछ देरी नहीं लगेगी। अगर तुझे अपना जी प्यारा है तो तू मेरे साथ युद्ध करनेका विचार छोड़ दे और यह जानते चला जा। यह कहकर उन्होंने खाँको छोड़ दिया था।

गूंगा। इस कामके लिये शिवाजीने उसे पांच सौ हूण देनेका वादा किया था। इस कामको व्यवस्थाकर महाराज राय गढके किलेसे निकले और शीघ्र ही रातके समय पूना पहुंच गये और उस माळीकी माताकी सहायतासे अपने कुछ विश्वास पात्र मनुष्योंके साथ महलमें घुसे। दरवाजेके आगे पचीस पहरेदार थे, जिनमें एक खोजा जाग रहा था। उसको सबसे पहले शिवाजीके साथियोंने काट दिया। माळी भूलसे शिवाजी महाराजको खांके शयनगाहमें न ले जाकर खांके बेटेके शयन गाहमें ले गया। वहां उन्होंने खांके बेटेको मार दिया और एक दासीको धमकाया और पूछा कि खाँ कौनसे घरमें सोता है? इतनेमें होहल्ला सुनकर खां जाग उठे और अपने सोनेके कमरे से बाहर निकले। खांको देखते ही शिवाजी महाराज, उनपर टूट पड़े और उनकी तलवारके प्रहारसे खांके हाथका एक अंगूठा कट गया। जब खांके सैनिकोंने शोर-गुल सुना तब उन्होंने मशालें जलाई। यह देखकर शिवाजी जिस मार्गसे महलमें घुसे थे, उस मार्गसे ही बाहर निकल गये। परन्तु लाल महलके बागको चारों ओरसे सैनिकोंने घेर लिया था। जिस मार्गसे शिवाजी निकले थे, उस मार्गको भी सैनिक घेरे हुए थे। शिवाजीने एकदम उन सैनिकोंपर हमला कर दिया, जिससे वे सैनिक मारे गये और शिवाजी अपने साथियों सहित कुशल पूर्वक शहरके बाहर चले गये और वहांसे घोड़ोंपर सवार होकर रायगढ़ चले गये।"

शिवदिग्विजयमें चिटनीस और रायरीके बखर दोनोंसे मिलता-जुलता वृत्तान्त लिखा है कि शिवाजीने शाइस्ताखां बेटेके शयनगृहमें पहुंचकर निद्रावस्थामें खांके बेटेका खां समझ कर वध कर दिया। उनकी तलवारके प्रहारकी आहट सुनकर खांके लड़केकी स्त्रीकी नींद टूट गयी जो अपने पतिके पास सो रही थी। इससे शिवाजीको ज्ञात हुआ कि यह खां नहीं है, खांका पुत्र है। इसपर उन्होंने उससे खांका शयनगृह पूछा। उसने उनको खांका शयनगृह बतला दिया। उन्होंने खांके शयनगृहमें घुसते ही उसपर तलवार तानी। प्रदीपके प्रकाशमें शिवाजीकी तलवार चमकी और खांके पास जो स्त्री सो रही थी, उसने तलवारकी चमक देख ली और वह शिवाजीके पैरोंपर गिर पड़ी तथा खांके प्राणोंकी दयाभिक्षा मांगी—इतने में खां भी जाग उठा, पर हथियार लेकर शिवाजीसे युद्ध करने की उसकी हिम्मत नहीं पड़ी। स्त्रीकी विनतीपर शिवाजीके हृदयमें दया उत्पन्न हुई, वे खां और उसकी स्त्रीको महलमेंसे बाहर ले आये और वहां खांके हाथकी एक अङ्गुली काटकर उससे कहा कि "कल तू इस महलसे चला जा नहीं तुझे जानसे मार डालूंगा।" अस्तु जो कुछ हो इन इतिहासलेखकोंमें किसका कथन सच्चा है और किसका कथन झूठा यह भगवान जाने। पर सबके सब एक बातसे सहमत अवश्य हैं कि शिवाजीने रातके समय, छिपकर शाइस्ताखांपर छापा मारा था और इससे इसके छक्के छूट गये थे। शिवाजीको अपने इस

आक्रमणमें सफलता प्राप्त हुई, शाइस्ताखाँ उनको बाल बाँका भी नहीं कर सका। इसके आगे जो कुछ हुआ, उसका सारांश भी सुनिये। शिवाजीके सिंहगढ़में पहुंच आनेके कुछ घंटों पीछे शाइस्ताखाँने सिंहगढ़पर चढ़ाई की, पर उनके पास उस समय सिंहगढ़के घेरे लायक तोपें न थीं। वर्षाऋतु भी आनेवाली थी। वर्षामें मुठा नदीके चढ़नेपर, सिंहगढ़का घेरा और भी कठिन हो जाता। इसलिये खाँको सिंहगढ़के घेरेका विचार छोड़ना पड़ा। शिवाजीने इस समय एक और भी चालाकी चली, जिससे उन्होंने शाइस्ताखाँको इस अवसरपर भी खूब छकाया। वह चालाकी यह थी कि मुगल-सेना सिंहगढ़की ओर बढ़ती गयी पर उन्होंने एक भी गोली मुगल सेनापर नहीं चलायी। पर जब मुगल-सेना किलेके नीचे पहुंची तब उन्होंने गोलोंके समान गोलोंकी वर्षा शुरू कर दी। गोलोंकी विकट मार मुगल-सेना सहन करनेमें समर्थ नहीं हुई तोपका एक गोला लगनेसे स्वयं शाइस्ताखाँका हाथी मर गया। अब खाँ साहबको पूना लौटनेके सिवाय और कुछ चारा न रहा, उन्होंने अपनी सेनाको पूना लौटनेकी आज्ञा दी और मुगल-सेना पूनाकी ओर लौटी, पर लौटते समय भी उसकी खैर नहीं हुई। शिवाजीकी अश्वारोही सेनाके अध्यक्ष नेताजी पालकरके सुयोग्य सहकारी प्रतापराव गुजरने लौटती हुई मुगल-सेनाके मुख्य सैन्यदलपर आक्रमण किया जिससे मुगल सेनाकी विशेष क्षति हुई। -

शाइस्ताखाँ शिवाजीके आकस्मिक् आक्रमणसे जितने दुःखी

हुए थे, इसका पता केवल इतनेसे ही लगता है कि घटनाके दूसरे दिन सवेरेके समय, जब जोधपुरनरेश, महाराज जसवन्तसिंह, शाइस्ताख़ांके पास सहानुभूति प्रकट करने गये थे तब शाइस्ताख़ांने सभ्यता और शिष्टाचारके सभी नियमोंको तिलाञ्जलि देकर कुछ देरके लिये चुप्पी साध ली और पीछे त्योरी चढ़ाकर जसवन्तसिंहसे ताना मारते हुए कहा—"मैं समझता हूं। जिस वक्त रातको मेरे ऊपर यह मुसीबत आयी थी उस वक्त जनाब, जहांपनाह शाहनशाहोंकी ख़िदमतमें ही थे। रातमें जिस वक्त दुश्मनोंने मेरे ऊपर हमला किया था, उस वक्त मैंने कयास किया था कि जनाब दुश्मनोंसे लड़ते लड़ते बहिश्तको तशरीफ़ ले गये हैं।" महाराज जसवन्तसिंह, नवाब शाइस्ताख़ांकी इस तानेज़नीसे बहुत दुःखी हुए। क्योंकि इस आकस्मिक घटनाका उनपर कुछ भी उत्तरदायित्व न था। उनके अधीन केवल रक्षित सेना थी। वे ख़ांके पास राजमहलमें शोचित होकर चले आये। वास्तवमें समस्त दक्षिण और मुग़ल-सेनामें यह अफ़वाह बड़े ज़ोरोंसे फैली हुई थी कि महाराज जसवन्तसिंहके षड्यन्त्रसे ही शिवाजीने ख़ांपर आकस्मिक् धावा किया था। परन्तु शिवाजीने एक कारकुन रावजी रायको जो उस समय राजापुरमें था, एक पत्रमें लिखा था कि "मैंने यह कार्य्य किसी मनुष्यकी सलाहसे नहीं किया था, केवल भवानीकी उत्तेजनासे ही मैंने यह अद्भुत और आश्चर्यजनक कार्य किया है।"

मुगल सूबेदार नवाब शाइस्ताखाँ अत्यन्त दुःखित और लज्जित होकर पूनासे औरङ्गाबादको चले गये। उन्होंने सम्राट् औरङ्गजेबको लिखा कि "मेरे सबके सब ही हिन्दू मातहत शिवाजीसे मिल गये हैं।" पूनासे औरङ्गाबाद जाते समय शाइस्ताखाँने जसवन्तसिंहपर जुन्नार और चाकणके किलेकी रक्षाका भार सौंपा। महाराज जसवन्तसिंहने सिंहगढ़पर आक्रमण करनेकी ठानी, परन्तु उनके पास ऐसी सेना न थी कि वे आक्रमणमें सफलता प्राप्त करते, दूसरे वर्षा ऋतु भी आ गयी थी इसलिये उन्होंने सिंहगढ़से घेरा उठा लिया।

मई मासमें शाइस्ताखाँकी इस आकस्मिक विपत्तिका समाचार सम्राट् औरङ्गजेबके पास पहुंचा। उस समय वे काश्मीर जा रहे थे। इस समाचारको सुनकर वे अत्यन्त दुःखित हुए। उन्होंने शाइस्ताखाँ और जसवन्तसिंह दोनोंकी निन्दा की। उन्होंने संवत् १७२० वि० १ ली दिसम्बर सन् १६६३ ई०को शाइस्ताखाँको दक्षिणसे बङ्गाल जानेका हुकम भेज दिया। शाइस्ताखाँसे सम्राट् औरङ्गजेब कितने नाराज हुए थे इसका पता केवल इतनेहीसे लगता है कि उन्होंने शाइस्ताखाँसे बङ्गाल जाते समय मिलनातक स्वीकार नहीं किया। शाइस्ताखाँ, सम्राट्से बिना मिले ही संवत् १७२० वि० सन् १६६४ ई० के जनवरी मासके मध्यमें दक्षिणसे बङ्गाल चले गये। उनके स्थान पर सम्राट् औरङ्गजेबने शाहजादा मुअज्जिमको दक्षिणका सूबेदार नियत किया।

सुप्रसिद्ध कवि भूषणने शाइस्ता खाँ और शिवाजीकी मुठ भेड़के सम्बन्धमें क्या ही अच्छा कवित्त कहा है—

"दच्छिनको दाबि करि बैठो है सइस्तखान
पूना माँहि दूना करि जोर करवारको।
हिन्दुवान खम्भ गढ़पति दलथम्भ भनि
भूषन भरैया कियो सुजस अपारको॥
मनसबदार चौकीदारन गजाय महलनमें
मचाय महाभारतक भारको।
तो सो को सिवाजी जेहि दो सौ आदमी सों
जीत्यो जंग सरदार सौ हजार असवारको॥

ग्यारहवां परिच्छेद

सूरतकी लूट

"दच्छिन जीति लियो दलके अरु पच्छिम जीतिके चामर चार्‌यो,
रूप गुमान गयो गुजरातको सूरतको रस चूसिके चाख्यो।
पञ्जन पेलि मलेच्छ मले बचे भूषन सोई जो दीन ह्वै भाख्यो,
सौरङ्ग है शिवराज बली जिन नौरङ्गमें रङ्ग एक न राख्यो॥"

निरन्तर युद्धोंमें लिप्त रहनेके कारण शिवाजीको धनकी विशेष आवश्यकता रहती थी। मुगलोंसे युद्ध ठन गया था, बिना धनके युद्धका चलना असम्भव था, अतएव जिस समय दक्षिणके सूबेदार शाइस्ताखां "नाच न जानें आंगन टेढ़ा"—जोधपुर नरेश, महाराज जसवन्तसिंहकी शिकायत कर रहे थे और जिस समय सम्राट् औरङ्गजेब, शाइस्ताखां और जसवन्तसिंहसे चिढ़कर, दक्षिणके शासन कार्यमें उलट-फेर कर रहे थे उस समय शिवाजी खाली नहीं बैठे थे। उन्होंने उस समय भविष्यमें काम करनेके लिये धन इकट्ठा किया। पहले उन्होंने बसीनपर आक्रमण करनेका विचार किया था। बसीनपर उन दिनों पोर्तगीजोंका अधिकार था। इसके लिये उन्होंने सेना भी इकट्ठी की, पर पीछे उन्होंने बसीनपर आक्रमण करनेका विचार त्याग

यन जातियां अपने व्यवसाय और वाणिज्यकी वृद्धिके लिये हिन्दुस्तानमें आयीं जिसमें पोर्तगीज भी अपने व्यवसाय और वाणिज्यके बढ़ानेके लिये हिन्दुस्तानमें आये। उन्होंने सम्वत् १५६६ वि० सन् १५१२ ई०में सूरत नगरपर आक्रमण किया और उसे लूटा। पोर्तगीजोंकी यह करतूत देखकर गुजरातके तत्कालीन बादशाहने एक किला बनवाया, पर किला मजबूत नहीं बना था और संवत् १५८७ वि० तथा संवत् १५८८ वि० अर्थात् सन् १५३० ई० और सन् १५३१ ई० में पोर्तगीजोंके जहाज तासी नदीमें फिर पहुंचे और सूरत नगरको लूटा। इसपर गुजरातके तत्कालीन बादशाहने तासी नदीके किनारेपर ही एक किला बनवाना चाहा और उस किलेके बनवानेका भार एक तुर्कपर सौंपा, जिसका नाम शफी आगा था। यह देखकर पोर्तगीजोंने एक और ही चाल चली, यह चाल यह थी कि उन्होंने किले बनानेवाले तुर्कको रिशवत दी कि वह किले बनानेमें कुछ देरी कर दे। पोर्तगीजोंकी यह कूटनीति चल गयी। किसी तरहसे संवत् १६०२ वि० अर्थात् सन् १५४५ ई० में किला बना।

नदीकी ओरसे यह किला मजबूत बनाया गया और थलकी ओरसे छ फुटकी खाई खोदकर और ३५ गज चौड़ी एक शहर पनाह बनाकर रक्षा की। सम्वत् १६२७ वि० सन् १८७३ ई० में अकबरने सूरतपर विजय प्राप्त की और सूरतके पोर्तगीजोंका भाग्य चमक रहा था। पर कुछ दिनों पीछे पोर्तगीजोंका यह

खोलवाला न रहा। संवत् १६७३ वि० सन् १६१६ ई० में डच लोग हिन्दुस्तानमें आये और उन्होंने भी मुगल सम्राट्की आज्ञासे सूरतमें कोठी बनाई।

"खरबूजेको देखकर खरबूजा रङ्ग बदलता है।" जब डच और पोर्त्तगीज हिन्दुस्तानमें व्यापार करने लगे तब अङ्गरेज चुप क्यों बैठते, अतएव संवत् १६५७ वि० सन् १६०० ई० में इङ्गलैण्डकी रानी एलिजाबेथके समयमें अङ्गरेज व्यापारियोंको ईस्ट इण्डिया कम्पनी बनानेकी आज्ञा प्राप्त हुई। उसके १२ वर्ष पीछे संवत् १६६९ वि० सन् १६१२ ई० में एक अङ्गरेज व्यापारी, जिसका नाम केररीज (Kerridge) था सूरतमें पहुंचा। सूरतके निवासियोंने उसके आनेमें कुछ आपत्ति नहीं की, पर पोर्त्तगीजों को यह बात बुरी लगी। उन्होंने अङ्गरेज व्यापारीपर आक्रमण किया। अङ्गरेज व्यापारीने भी आक्रमणका उत्तर आक्रमणसे दिया जिससे पोर्त्तगीज कुछ ठण्डे पड़े और उसी वर्ष उस अङ्गरेज व्यापारीने मुगल सम्राट् शाहजहांसे आज्ञा लेकर सूरतमें कोठी बनवाई। उस समय यूरोपियन जातियां अपने अपने स्वार्थके लिये आपसमें लड़ रही थीं, अंगरेज और डचोंकी देखा-देखी फ्रेंचोंकी भी भारतके ऊपर लार टपकी। संवत् १६७७ वि० सन् १६२० ई० में फ्रेंच भी सूरतमें पहुंचे और उन्हें भी बाईस वर्ष पीछे अर्थात् संवत् १६९९ वि० सन् १६४२ ई० में सूरतमें कोठी खोलनेकी आज्ञा मिल गयी। इस प्रकार मुगल-साम्राज्यमें सूरत व्यापारका केन्द्र था। वहां धनकी कमी न

थी, यूरोपियन व्यापारियोंके अतिरिक्त, भारतसे जो मुसलमान मक्का तथा अरबके अन्य तीर्थोंको जाते थे वे भी यहींसे जाते थे। उस समय सूरतकी जन संख्या लगभग दो लाख थी। उसमें बहुतसे बगीचे और खुले हुए मैदान थे। गलियां कुछ तङ्ग और टेढ़ी तिरछी थीं। धनाढ्य व्यक्तियोंके मकान बहुधा तटकी ओर थे। खास शहरमें साधारण श्रेणी, विशेषतः गरीब आदमियोंके झोंपड़े थे। ये मकानात लकड़ीके खम्भे और बांस की दीवालोंके बने हुए थे। इन मकानोंके फर्श मिट्टीसे चौरस किये हुए थे। नगरके अन्यान्य भागोंमें मुश्किलसे किसी किसी गलीमें दो या तीन ईंटोंके मकान दिखलायी पड़ते थे। शहरके किसी किसी भागकी तो ऐसी दशा थी कि लगातार कितनी ही गलियोंमें ईंटोंके मकान दिखलायी नहीं पड़ते थे। समस्त नगर सुरक्षित न था, नगरके दरवाजे टूटे फूटे और बेमरम्मत थे। शहरके कुछ भागोंमें एक सूखी खाई थी, उसमें भी भीतरकी ओर दीवाल न थी, जिसमेंसे होकर बिना किसी रुकावटके, मजेमें एक प्यादा भी चला आ सकता था। सारांश यह है कि उस समय व्यापारका केन्द्र होनेपर भी सूरतकी सूरत बेडौल थी। उसमें बहुतसे लक्ष्मीके उपासक व्यापारी थे, निर्धन शिल्पकार थे, अग्निकी पूजा करनेवाले पारसी थे और शान्ति प्रिय जैनी थे, जो शीघ्र ही युद्धके समय अपनी आत्मरक्षा करने में समर्थ नहीं हो सकते थे। बड़े बड़े व्यापारियोंने जो लाखों और करोड़ोंका कारबार करते थे अपनी रक्षाके लिये वेतनभोगी

रक्षक और योद्धा नहीं रखे थे। उन्होंने यह न समझा था कि लूटमें जो हमारी हानि होगी, उससे कहीं कमखर्च अपनी आत्म रक्षा करनेमें होगा। सूरत उन दिनोंमें सोनेकी खान था, पर उस खानकी रखवालीका उचित प्रबन्ध न था। शिवाजी ऐसी सोनेकी खानको कब छोड़नेवाले थे। उन्होंने अपना एक गुप्तचर, जिसका नाम भैरोंजी नायक था, भेजा। वह सूरत पहुंचा और वहांसे लौटकर उक्त नगरका भौगोलिक तथा अन्य प्रकारका सब वृत्तान्त शिवाजीको सुनाया। * शिवाजीने अपने साथ चार हजार सेना ली और अपना साधुओंका भेष धारण करके चुपचाप चल दिये। सबपर यह प्रकट कर दिया कि "मैं तीर्थयात्राके लिये नासिक आ रहा हूं।" वे उत्तरीय कोंकणसे धरमपुर रियासतमें होते हुए संवत् १७२० वि० ५ वीं जनवरी सन् १६६४ ई० को सूरतसे १० और १२ मीलकी दूरीपर

* इस इतिह[illegible] और [illegible] हते हैं कि जब शिवाजी फकीर भेष धरकर सूरत पहुंचे थे तो [illegible] अपने प्र[illegible]र [illegible] न रहकर समस्त परिस्थिति विदित व्यापारियों के रहनेका स्था[illegible] [illegible] महोदयके शिवाजी-चरित्रमें लिखा हुआ है कि शिवाजीने इस [illegible] गौ[illegible] [illegible]ार मोरोपन्त पिंगले, प्रतापराव गूजर आदि सरदारों-के साथ सूरतकी ओ[illegible] [illegible] जानेका मार्ग पकड़ा। समस्त सेनाका ध्यान बटानेके लिये उन्होंने यह प[illegible] उड़ा दी कि नासिक तीर्थ-यात्रा करते हुए मोरोपन्त की नयी लिपि लिये हैं, उनका निरीक्षण करनेके लिये जा रहे हैं। आगे लिखता है कि चेउल और बसीनको चार सेना रखो जिससे लोगोंको यह विश्वास हो गया कि शिवाजी इन [illegible] आक्रमण करना चाहते हैं और बसीनसे अप-नाए अपनी चार हजार साथियों सहित वे सूरत चले गये। उन्होंने अपनी शेष सेनाको यह आज्ञा दी कि वे कुछ [illegible] इस प्रकारसे बजाते रहें जिससे लोगोंको यह पता लगे कि बसीन और चेउलपर आक्रमण होनेवाला है।

पहुंच गये। शिवाजी सूरतपर धावा करनेके लिये आ रहे हैं, यह सुनते ही सूरत निवासियोंके छक्के छूट गये। बहुतसे लोग शिवाजीके आनेका समाचार सुनते ही अपनी स्त्रियों और बच्चोंको लेकर भाग गये। कुछ लोगोंने तासी नदीकी दूसरी ओर शरण ली। जो धनाढ्य थे, उन्होंने सूरतके किलेदारको रिश्वत देकर किलेमें शरण ली। सूरतका दुर्ग अत्यन्त दृढ़ था। शिवाजीके साथ जो सेना थी, वह दुर्गपर आक्रमण करने योग्य न थी और न शिवाजीका उद्देश्य सूरत दुर्गपर आक्रमण करने का था। उनका उद्देश्य उस समय अपना भावी कार्य सञ्चालन करनेके लिये धनका सञ्चय करना था।

उस समय सूरत नगरका शासक इनायतखां था। किलेका फौजदार एक और आदमी था। जब इनायतखांने शिवाजीके आगमनका समाचार सुना तब उसने अपना एक दूत उनके पास भेजा। दूतके द्वारा उसने कहलाया कि सूरत नगरपर आक्रमण करनेमें आपका उद्देश्य क्या है? शिवाजीके पास दूत भेजनेके अतिरिक्त उसने दो दूत डच और सौदागरोंके पास भी भेजे और उनसे प्रार्थना की कि "आपलोग सूरत नगरकी रक्षा कीजिये।" सूरतमें उस समय डच और अङ्गरेजोंकी कोठियां खुल चुकी थीं, डच और अङ्गरेजोंने इनायतखांके दूतोंको उत्तर दे दिया कि हमलोग अपनी कोठियोंकी रक्षा करना, सूरत नगरकी रक्षा करनेकी अपेक्षा अपना विशेष कर्तव्य समझते हैं। डच लोगोंने भी शिवाजीके पास अपने दो

दूत भेजे, शिवाजीने डच और इनायतखांके दूतोंको अपने यहां गिरफ्तार करके रख लिया। दूतोंकी गिरफ्तारीका समाचार सुनते ही इनायतखांके होश फाख्ता हो गये। वह स्वभावतः ही डरपोक था, इसलिये शिवाजीका सामना न करके वह किलेमें भाग गया। इनायतखांको नगरकी रक्षाके लिये पांच सौ सिपाहियोंका वेतन भी मिलता था, पर रुपयेके लालचसे वह उचितरूपसे पांच सौ सैन्य-दल नहीं रखता था।* शिवाजीके आनेपर उसने नगरकी रक्षाका कुछ प्रबन्ध नहीं किया।

अङ्गरेजोंकी आत्मरक्षा—जब कि सूरतके शासक और निवासी, शिवाजीके आगमनका समाचार सुनकर अपनी आत्म रक्षाका कुछ उपाय न करके, भयभीत होकर "किंकर्त्तव्य विमूढ़" हो गये थे, उस समय मुट्ठीभर विदेशी व्यापारियोंका साहस और प्रयत्न प्रशंसनीय था। शिवाजीके आगमनका समाचार सुनकर डच और अङ्गरेज व्यापारियोंने ठान लिया कि चाहे जो कुछ हो अपने प्राणोंकी बाजी लगाकर शिवाजीके आक्रमणसे अपनी कोठियोंकी रक्षा करेंगे। यदि वे चाहते, सूरतके अन्य नगर निवासियों और शासककी भांति वे भी भाग जाते, परन्तु

---

* बर्नियर और टैवर्नियरने लिखा है कि सूरतका शासक शिवाजीकी गति रोकनेके लिये तैयार हुआ था पर उससे कहा गया था कि शिवाजी सूरत नगरमें प्रवेश नहीं करेंगे नगरके बाहरसे ही चले जायँगे। फायर लिखता है कि नगरके शासक और किलेदार दोनोंने शिवाजीको ले जाकर किलेपरसे तोपें दागी थीं पर शिवाजीने इस विषयमें कुछ नहीं किया।

इन्होंने अपनी थोड़ी संख्या होनेपर भी अपने कर्त्तव्य पालनसे जी नहीं चुराया। उन्होंने अपने प्राणोंसे अधिक अपनी कोठियोंकी सम्पत्तिकी रक्षा करना आवश्यक समझा। पाठक केवल एक इसी उदाहरणसे समझ सकते हैं कि यूरोपियन लोग अपने कर्त्तव्य-पालनमें कितने दत्तचित्त होते हैं। वे अपने स्वार्थको अपेक्षा राष्ट्रके स्वार्थका सदैव अधिक महत्व समझते हैं। यदि उनमें अपनी जाति अथवा राष्ट्रके स्वार्थकी अपेक्षा वैयक्तिक स्वार्थकी मात्रा अधिक होती तो आज संसारमें उनका प्रबल प्रताप दिखलायी पड़ता या नहीं—इसमें सन्देह है।

उन दिनों सूरतमें अङ्गरेजोंकी जो फैक्टरी थी, उसका प्रधान सर जार्ज आक्सडन नामक अङ्गरेज था। उसने अपनी कौंसिल के परामर्शसे यही निश्चय किया कि अपने स्थानसे नहीं हटना चाहिये अर्थात् कोठी नहीं छोड़नी चाहिये, कोठीकी रक्षा करनी चाहिये। यह विचार स्थिर करके अङ्गरेजोंने शहरके एक व्यापारीसे दो छोटी पीतलकी तोपें लीं और चार तोपें अपने जहाजों से मंगवा लीं। अपने जहाजोंसे कुछ अस्त्र-शस्त्र धारी मल्लाह भी बुला लिये। इस प्रकार कोठीमें डेढ़ सौ अङ्गरेज, साठ प्यादे इकट्ठे हुए। अङ्गरेज, प्यादों और मल्लाहोंकी संख्या सब मिलाकर दो सौ दस हो गयी थी उनमेंसे चार तोपें उन्होंने अपनी कोठीकी छतपर लगाईं, कोठीके पास ही हाजी सय्यदबेगका बड़ा आलीशान मकान था, उसमें भी कुछ लोग रखे। दो बड़ी तोपें, कोठीके आगेके फाटकके पीछे लगाईं। शीघ्रतासे मोर्चा

की सामग्री, पानी, बारूद आदिका जो कुछ प्रबन्ध हो सका वह उन्होंने कर लिया। अङ्गरेज लोग शिवाजीके आगमनके समाचार सुनकर कितने भयभीत और अपनी आत्मरक्षाके लिये कितने चिन्तित थे, उसका केवल इस बातसे ही पता लगता है कि उनमें किसीने बहुत जल्दी शीशा गलाया, किसीने गोलियां बनाईं, किसीने छेनीसे शीशेके टुकड़े किये। मतलब यह है कि उस समय अङ्गरेजोंकी कोठीमें सुस्ती और आलस्यसे कोई भी शान्तिसे अथवा चुपचाप बैठा न था। सङ्कट निवारणके लिये सब ही चेष्टा कर रहे थे। उन्होंने आपसमें कप्तान चुनकर खास खास हिस्सोंमें तैनात किये और उनकी सहायताके निमित्त भी कुछ आदमी रखे और आवश्यकता आनेपर शीघ्र ही एक दूसरेकी सहायता करनेका निश्चय हो चुका था। इस तरहसे अपनी कोठीकी रक्षाका प्रबन्ध करके अंगरेजोंने पासका एक मन्दिर अपने कब्जेमें कर लिया और उस मन्दिरमें जो आदमी थे, उन्हें उसमेंसे हटा दिया। दूसरी ओर उन्होंने एक मसजिदको भी बन्द कर दिया, जिसकी खिड़कियां उनकी कोठीके बाहरके अहातेसे दिखलायी पड़ती थीं। यह सब प्रबन्ध करके आक्सडनने अपने साथ दो सौ योद्धा लिये और समस्त शहरमें छठवीं तारीखको प्रातःकाल घूमा और बाजे तथा ढोल बजाकर यह घोषणा कर दी कि मैंने अपने थोड़ेसे आदमियोंके साथ शिवाजीका मुकाबिला करनेकी ठान ली है। डच लोगोंकी कोठी, अंगरेजोंकी कोठीसे एक मीलकी दूरीपर

थी, ऐसे समय एक दूसरेको सहायता पहुंचाना असम्भव था। डच, अंगरेज तथा दूसरी यूरोपियन जातियोंमें परस्पर शत्रुता थी, पर इस समय डच और अंगरेजोंने आपसकी शत्रुताका कुछ खयाल न करके परस्पर मिलकर अपनी कोठियोंकी रक्षा की। यूरोपियन सौदागरोंकी देखा-देखी तुर्क और आर्मेनियन व्यापारियोंने भी अपनी सरायको, जो अंगरेजोंकी कोठियोंके पास थी, रक्षा की।

संवत् १७२१ वि० सन् १६६४ ई० की छठवीं जनवरी बुधवारके दिन प्रातःकाल ११ बजे शिवाजी सूरत पहुंचे। सूरत नगरके बाहर, सूरतसे चौथाई मीलकी दूरीपर उन्होंने एक बाग में अपना डेरा किया। पहली रातको उन्होंने अपने दो दूतोंको एक चिट्ठी देकर, सूरत-नगरके शासक और तीन नामी तथा धनी व्यापारी हाजी सैयद बेग, बहारजी बोहरा और हाजी कासिमके पास भेजा। उन्होंने सूरतके शासक और व्यापारियों को पत्रमें यह लिखा और दूतोंके द्वारा भी कहला भेजा कि आप लोग मेरे शिविरमें आइये और क्षति निवारणार्थ कुछ दण्ड देकर सूरत-नगरको आक्रमणसे बचाइये, नहीं तो मैं सूरत नगरको नष्ट कर दूंगा। डरपोक शासक इनायतखांने किलेसे बाहर निकलना उचित नहीं समझा और न शिवाजीको उत्तर भेजा। कुछ देर पीछे शिवाजीने अपने सवारोंको सूरतनगर लूटनेकी आज्ञा दी।

सूरत-नगर खाली पड़ा हुआ था, क्योंकि उसके बहुतसे

निवासी पहलेसे ही चले गये थे। शिवाजीके सवारोंने खाली नगरमें लूट मार मचायी। कुछ सवारोंने किलेपर भी आक्रमण किया, इसमें उनका उद्देश्य किला लेनेका नहीं था वरन् किलेकी सेनाको डरानेका था कि कहीं किलेकी सेना शिवाजी पर आक्रमण न कर बैठे। सूरत किलेपर मराठे सैनिकोंके आक्रमण करनेपर किलेदारने भी दुर्गके ऊपरसे तोपें चलाई इससे सूरत-नगरकी रक्षा होनेकी अपेक्षा और अधिक हानि हुई। शिवाजीने चार दिन बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनितक सूरत-नगरको लूटा, और हजारों मकानोंमें आग लगवा दी। नगरका दो तिहाई हिस्सा नष्ट कर डाला गया। सूरत नगरके तत्कालीन अङ्गरेज पादरीने लिखा है कि बृहस्पति और शुक्रवारकी रातें बड़ी भयङ्कर थीं। इन दोनों रातोंमें अग्निने ऐसा भयङ्कर रूप धारण किया था कि रात दिनके समान प्रतीत होती थी। और दिन रातके समान दिखलायी पड़ता था। क्योंकि अग्निका धुआं समस्त वायुमें छा गया था, जिससे भुवन भास्करका कहीं पता न लगता था।

डचोंकी कोठीके पास ही वहारजी वोहरेका आलीशान भवन था। उन दिनों वह संसारके समस्त व्यापारियोंमें धनी समझा जाता था। उसकी सम्पत्ति अस्सी लाख रुपयेकी अनुमान की जाती थी। मराठोंने बुधसे लेकर शुक्रवारकी संध्यातक उसके घरको खूब लूटा, जब उसके घरमें कुछ बाकी न छोड़ा तब उसके मकानके फर्शको ही खोद डाला। उसके मकानमें

आग लगा दी। केवल उसके घरसे ही अट्ठाईस सेर मणि माणिक्य आदि मराठोंके हाथ लगे थे।

अङ्गरेजोंकी कोठीके पास एक दूसरे धनी व्यापारी—हाजी सय्यदबेगका विशाल निवासस्थान और आलीशान गोदाम था। शिवाजीके आगमनका समाचार सुनते ही हाजी सय्यदबेग अपनी सम्पत्तिकी रक्षाका कुछ प्रबन्ध किये बिना ही किलेमें भाग गया। मराठोंने उसके घरको भी बुधवारको दोपहरके पीछेसे बृहस्पतिके दोपहरतक लूटा, मराठोंने उसके घर और गोदामके दरवाजे तोड़ डाले, सन्दूकें तोड़ डालीं और जितना धन उसके यहांसे ले जा सके, उतना धन ले गये। उसके गोदाममें पहुंचकर उन्होंने उसके चांदी भरे पीपे तोड़ डाले। बृहस्पतिको अपराह्नके समय मराठे हाजी सय्यदबेगके यहांसे शीघ्र ही चल दिये, क्योंकि कुछ अङ्गरेजोंने पचीस मराठे घुड़सवारोंका पीछा किया। मराठे अङ्गरेजोंकी कोठीके पास एक मकानमें आग लगाना चाहते थे जिससे अङ्गरेजोंकी कोठीको बहुत हानि पहुंचती। अङ्गरेजोंकी बन्दूककी गोलीसे एक मराठा घुड़सवार जख्मी हो गया था और दो अङ्गरेज भी मराठोंके तीर और तलवारसे कुछ घायल हुए थे।

दूसरे दिन अङ्गरेजोंने सय्यदबेगके मकानपर भरी कुछ रक्षक नियत किये, जिससे आगे उसकी हानि न हुई। अङ्गरेजोंके इस व्यवहारसे शिवाजी बड़े क्रोधित हुए, उन्होंने शुक्रवारको अपराह्नके समय अङ्गरेजोंके पास यह सन्देश भेजा कि "या तो

तीन लाख रुपये दें या मेरे आदमियोंको हाजीका मकान लूटने दें। यदि आप लोगोंने मेरी इन दोनों बातोंमेंसे एक भी न मानी तो मैं स्वयं आऊंगा और आप लोगोंकी कोठीमें जितने आदमी होंगे, उनमेंसे एकको भी जीता नहीं छोड़ूंगा। आप लोगों की कोठीको मिट्टीमें मिला दूंगा।" प्रेसीडेण्ट आक्सडनने उत्तर दिया कि "शनिवारके सबेरेतक हमलोगोंको इस विषयपर विचार करने दीजिये।" फिर आक्सडनने शिवाजीसे कहला भेजा कि "हम आपके दोनों प्रस्तावोंमेंसे किसीको माननेके लिये तैयार नहीं हैं। आप चाहें जब आ जाइये हमने पीछे न हटनेका विचार कर लिया है। मैं आपसे प्रार्थना करता हूं, जितनी जल्दी आपने आनेका विचार किया हो, उससे एक पहर पहले यहां पधारिये।"* शिवाजीने इसका कुछ उत्तर नहीं दिया इसका कारण यह प्रतीत होता है कि उन्होंने थोड़ेसे रुपयेके लालचमें अङ्गरेजोंकी तोपोंसे अपने आदमियोंका वध कराना उचित न समझा होगा। शायद शिवाजीके साथ सूरतकी लूटके समय तोपें न होंगी।

धन कैसे प्राप्त किया? सूरतकी लूटका वर्णन करते समय अनेक यूरोपियन और मुसल्मान लेखकोंने शिवाजीका बहुत बुरा चित्र अङ्कित किया है। बर्नियरने लिखा है कि एक धनी व्यापारी जो जातिका यहूदी था और कुस्तुन्तुनियाका रहनेवाला था कुछ जवाहरात अङ्गरेजोंको बेचनेके लिये लाया था मराठोंने उसे पकड़ा और उसे शिवाजीके सामने लाये। उस

* प्रो० यदुनाथ सरकार कृत शिवाजीका चरित्र।

यहूदीसे कहा गया कि तू अपनी सब सम्पत्ति दे दे, पर वह राजी न हुआ। उसे तीन बार धरतीपर पटका और उसके गलेपर तलवार रखी पर उस यहूदीको अपने प्राणोंसे अधिक धन प्यारा था। वह किसी प्रकारसे भी राजी न हुआ तब शिवाजीने उसे छोड़ दिया।

एक वृद्ध व्यापारी आगरेके पाससे चालीस बैल कपड़ेसे लदे हुए, सूरतमें बेचनेके लिये लाया था पर उसका कुछ भी कपड़ा बिका न था। मराठोंने उससे रुपया माँगा पर उसके पास रुपया न था, इसलिये शिवाजीकी आज्ञासे उसका हाथ कट लिया गया और मराठोंने उसके कपड़े जला दिये।* यह घटना सूरतकी लूटके समयके अङ्गरेज पादरीने लिखी है। उस पादरीने यह भी लिखा है कि शिवाजीकी धन प्राप्तिकी लालसा इतनी प्रबल हो गयी थी कि उन्होंने अपने कैदियोंसे स्वीकारोक्ति कराने के लिये उनके प्रति किसी प्रकारके पाशविक व्यवहार करनेमें कसर नहीं छोड़ी थी। उन्होंने बुरी तरहसे कोड़े लगाये। उन्हें मार डालनेकी धमकी दी गयी, उनमेंसे कुछ मारे भी गये। शिवाजी जितना धन उनके पास समझते अथवा जितने धनकी प्राप्तिकी उनसे आशा करते थे, उतना धन वे न दे सके। शिवाजीने इन लोगोंमेंसे किसीके एक हाथ और किसीके दोनों हाथ कटवा दिये। कहा नहीं जा सकता कि यह बात कहाँतक सच है? सम्भव है कि शिवाजीने सूरतवासियोंके प्रति ऐसा

* Letter of Escaliot quoted by Prof. Sarcar

अमानुषिक व्यवहार किया हो अथवा शिवाजीके प्रति विद्वेष भावसे इन लेखकोंने अपने मस्तिष्कसे ऐसी कल्पनाओंकी उत्पत्ति की हो। पर मराठा इतिहास-लेखकोंने सूरत-लूटके सम्बन्धमें शिवाजीके चरित्रमें ऐसी कोई बात नहीं लिखी है। इससे इसमें सन्देह प्रतीत होता है और यह भी हो सकता है कि मराठे लेखकोंने पक्षपातके कारण शिवाजीके पाशविक व्यवहारकी उपेक्षा की हो, पर इसमें सन्देह नहीं कि शिवाजीकी लूटसे सूरतकी सूरत बहुत ही बेडौल और भयङ्कर हो गयी थी। अवश्य ही शिवाजीका काम निन्दनीय था, पर इतिहासमें ऐसे उदाहरण कम नहीं मिलते हैं। मुहम्मद गजनवी, चङ्गेजखां, तैमूरलंग, नादिरशाह, अहमदशाह आदिके विषयमें यहां कुछ नहीं कहेंगे, क्योंकि आजकल इतिहासके नामसे जो पोथियां हमारे बच्चोंको पढ़ाई जाती हैं उनमें लुटेरे डाकू कहकर इन लोगोंकी खूब निन्दा की गयी है, पर ताज्जुब तो यह है कि "भूतोंके मुंहसे हरिनाम सुनायी पड़ रहा है।" जो लोग आज हमें सभ्यताका पाठ पढ़ा रहे हैं वे लोग यह नहीं सोचते कि अब वह मुर्शिदाबाद कहां है जिसको देखकर क्लाइव सरीखे व्यक्ति दंग रह गये थे और कहा था कि लण्डन शहरसे भी यह बड़ा शहर है। उस अवध-राज्यकी सम्पत्ति कहां गयी जिसको देखकर ईस्ट इण्डिया कम्पनीके कर्मचारियोंकी लार टपक पड़ी थी। पंजाब केसरी महाराज रणजीतसिंहका वह राजकोष कहां गया जिसको देखकर सभ्यताका घमंड करनेवाली जातियोंकी आंखोंमें चका

यहूदीसे कहा गया कि तू अपनी सब सम्पत्ति दे दे, पर वह राजी न हुआ। उसे तीन बार धरतीपर पटका और उसके गलेपर तलवार रखी पर उस यहूदीको अपने प्राणोंसे अधिक धन प्यारा था। वह किसी प्रकारसे भी राजी न हुआ तब शिवाजीने उसे छोड़ दिया।

एक वृद्ध व्यापारी आगरेके पाससे चालीस बैल कपड़ेसे लदे हुए, सूरतमें बेचनेके लिये लाया था पर उसका कुछ भी कपड़ा बिका न था। मराठोंने उससे रुपया माँगा पर उसके पास रुपया न था, इसलिये शिवाजीकी आज्ञासे उसका हाथ काट लिया गया और मराठोंने उसके कपड़े जला दिये।* यह सब सूरतकी लूटके समयके अङ्गरेज पादरीने लिखी है। उस पादरीने यह भी लिखा है कि शिवाजीकी धन प्राप्तिकी लालसा इतनी प्रबल हो गयी थी कि उन्होंने अपने कैदियोंसे स्वीकारोक्ति करानेके लिये उनके प्रति किसी प्रकारके पाशविक व्यवहार करनेमें कसर नहीं छोड़ी थी। उन्होंने बुरी तरहसे कोड़े लगाये। उन्हें मार डालनेकी धमकी दी गयी, उनमेंसे कुछ मारे भी गये। शिवाजी जितना धन उनके पास समझते अथवा जितने धनकी प्राप्तिकी उनसे आशा करते थे, उतना धन वे न दे सके। शिवाजीने इन लोगोंमेंसे किसीके एक हाथ और किसीके दोनों हाथ कटवा दिये। कहा नहीं जा सकता कि यह बात कहाँतक सच है? सम्भव है कि शिवाजीने सूरतवासियोंके प्रति ऐसा

* Letter of Escaliot quoted by Prof. Sarcar

अमानुषिक व्यवहार किया हो अथवा शिवाजीके प्रति विद्वेष भावसे इन लेखकोंने अपने मस्तिष्कसे ऐसी कल्पनाओंकी उत्पत्ति की हो। पर मराठा-इतिहास-लेखकोंने सूरत-लूटके सम्बन्धमें शिवाजीके चरित्रमें ऐसी कोई बात नहीं लिखी है। इससे इसमें सन्देह प्रतीत होता है और यह भी हो सकता है कि मराठे लेखकोंने पक्षपातके कारण शिवाजीके पाशयिक व्यवहारकी उपेक्षा की हो, पर इसमें सन्देह नहीं कि शिवाजीकी लूटसे सूरतकी सूरत बहुत ही बेडौल और भयङ्कर हो गयी थी। अवश्य ही शिवाजीका काम निन्दनीय था, पर इतिहासमें ऐसे उदाहरण कम नहीं मिलते हैं। मुहम्मद गज़नवी, चङ्गेजखां, तैमूरलंग, नादिरशाह, अहमदशाह आदिके विषयमें यहां कुछ नहीं कहेंगे, क्योंकि आजकल इतिहासके नामसे जो पोथियां हमारे बच्चोंको पढ़ाई जाती हैं उनमें लुटेरे डाकू कहकर इन लोगोंकी खूब निन्दा की गयी है, पर ताज्जुब तो यह है कि "मूर्खोंके मुंहसे हरिनाम सुनायी पड़ रहा है।" जो लोग आज हमें सभ्यताका पाठ पढ़ा रहे हैं वे लोग यह नहीं सोचते कि अब वह मुर्शिदा बाद कहां है जिसको देखकर क्लाइव सरीखे व्यक्ति दंग रह गये थे और कहा था कि लण्डन शहरसे भी यह बड़ा शहर है। उस अवध-राज्यकी सम्पत्ति कहां गयी जिसको देखकर ईस्ट इण्डिया कम्पनीके कर्मचारियोंकी लार टपक पड़ी थी। पंजाब केसरी महाराज रणजीतसिंहका वह राजकोष कहां गया जिसको देखकर सभ्यताका घमंड करनेवाली जातियोंकी आंखोंमें चका

चौथ छा गयी थी। यदि शिवाजीने सूरत लूटा तो सभ्यताका घमण्ड करनेवाली जातियोंने क्या नहीं किया है? शिवाजीकी सूरतकी लूट एक या दो बारकी थी पर आज तो भारतमें चिरकालीन लूट मच रही है। शिवाजीने कुछ दिनोंके लिए अथवा सदैवके लिये सूरतका व्यापार नष्ट किया था तो आज सभ्यताके फेरमें भारतका व्यापार सदैवके लिये लुप्त हो गया है। सभ्यताकी आड़में आज भारत खोखला हो गया है। आज सभ्यताके नामपर बूढ़ा भारत रो रहा है।

शिवाजीने सूरतमें लूटमार क्यों मचाई, इस विषयमें शिवाजीके उन वाक्योंपर भी विचारना आवश्यक है जो उन्होंने सूरत पहुँचनेपर सर्वसाधारणमें कहे थे। उन्होंने कहा था कि "मैं अंगरेज अथवा किसी दूसरे व्यापारीको वेवकिफ हानि पहुंचानेके लिये यहां नहीं आया हूं। औरंगजेबने जो मेरे देशको जीता है और मेरे रिश्तेदारोंको मार डाला है उसका बदला लेने आया हूं।" अनेक व्यक्ति इसपर यह कहे बिना न रहेंगे कि शिवाजीको इस प्रकारसे बदला नहीं लेना चाहिये था, पर हम पूछते हैं कि सभ्यताका घमण्ड करनेवाली जातियोंने बदला लेनेमें शिवाजीको भी मात कर दिया है। मुलतानके हस्तगत होनेपर सभ्यताका दम भरनेवाले अंग्रेजोंने क्या नहीं किया था? अंग्रेजी सेनाके तत्कालीन मेजर एडवार्डिस साहबने उस समय मुलतान नगरकी दुर्दशाका और अंग्रेजोंकी उद्दण्डताका वर्णन करते हुए यहांतक लिखा था कि "अमिहिंसाका ऐसा भयानक

चित्र मैंने कभी कहीं नहीं देखा था।"* संवत् १६१४ वि० अर्थात् सन् १८५७ ई० में भारतके स्वाधीनताका जो अन्तिम दीप निर्वाण हुआ था, उसमें अनेक अङ्गरेज़ोंने न मालूम कितने निर्दोष हिन्दुस्तानियोंके प्राण लिये थे। आजकल भी क्या नहीं किया जाता है? शिवाजीने अपने शत्रुके नगरमें कुछ लोगोंका वध किया पर आज भी अपनी निहत्थी प्रजापर जलियांवाला बागमें गोली चलायी जा सकती है। मार्शल-लाकी आड़में सैकड़ों, हज़ारों मनुष्योंको सताया जा सकता है। रायबरेलीका हत्याकाण्ड हो सकता है। भेड़ और बकरीकी भांति चौसठ मोपलोंको रेलगाडीमें बन्द करके ईश्वरके यहां पहुंचाया जा सकता है। तब फिर शिवाजीको ही क्यों दोष दिया जाता है? यह बात हज़ार बार समझनेकी चेष्टा करनेपर भी हमारी समझमें नहीं आती कि इसमें क्या गूढ़ रहस्य भरा है।

फिर शिवाजीने सूरतकी लूटके समय अपनी असीम दयाका भी तो परिचय दिया था। पर जिनकी आंखोंमें पक्षपातकी चर्बी छाई हुई है, वे भलेमानस, शिवाजीके चरित्रकी इस महत्ताका क्यों उल्लेख करने लगे। जिनको दूसरोंके दोष ढूंढनेकी लालसा रहती है, उन्हें गुणोंके अनुसन्धान करनेका अवकाश ही नहीं मिलता। जिन दिनों शिवाजी सूरतमें पहुंचे थे, उन दिनों वहां एक रोमन कैथोलिक पादरी (कम्पूशियन) रहता था जिसका नाम

* जो लोग इस विषयका विशेष हाल जानना चाहते हों वह लेखककी दूसरी पुस्तक—'पञ्जाब हरण' पढ़ें जो हिन्दी पुस्तक एजेन्सीसे मिलती है।

फादर एम ग्रोस था। शिवाजीको किसीने उसका निवास-स्थान बतलाया। इसपर शिवाजीने कहा कि पादरी लोग पवित्र और धर्मात्मा होते हैं, इनको नहीं सताना चाहिये। यह कहकर उन्होंने उस पादरीको लूटनेकी मनाई कर दी। इसी तरहसे उन्होंने मोहनदास पारख नामक एक व्यक्तिकी सम्पत्ति लूटनेकी मनाई कर दी थी। उक्त मोहनदास पारख, डचोंका नामी दलाल था और दलालीमें अच्छा धन उपार्जन किया था। यह केवल धन लोलुप ही न था परन्तु धर्मात्मा भी था। यह बहुतसा दान पुण्य भी करता था। शिवाजीके सूरत पहुंचनेसे एक वर्ष पहले उसकी मृत्यु हो चुकी थी। उसका बहुत बड़ा कुटुम्ब था और उसकी बहुत बड़ी सम्पत्ति थी, जब शिवाजीको उसके कार्योंका पता लगा तब उन्होंने अपने सैनिकोंसे उसकी सम्पत्ति लूटनेकी मनाई कर दी। शिवाजीकी इस आज्ञाका पालन हुआ। उनकी सेनाके किसी आदमीने उक्त पारखकी सम्पत्तिको छुआतक नहीं।*

और सुनिये, ईस्ट इण्डिया कम्पनीका एक अङ्गरेज कर्मचारी जिसका नाम एनथोनी स्मिथ था, उस नेटी (जहाज) से उतरा था। मराठोंने उसे कैद कर लिया और उसे शिवाजीके सामने ले गये। वह शिवाजीके शिविरमें तीन दिनतक कैद रहा था। दूसरे कैदियोंके साथ, शिवाजीने उसके दाहिने हाथ काटने की आज्ञा दी, इसपर उस अङ्गरेजने हिन्दुस्तानी भाषामें चिल्ला

* सरकार—पेज १८८—१८९

कर कहा कि मेरे हाथ काटनेके बदलेमें मेरा सिर उड़ा दीजिये। इसपर उसकी टोपी उतार ली गयी। टोपी उतारनेपर वह पह चान लिया गया कि वह अङ्गरेज है। बस वह छोड़ दिया गया। शिवाजीने अपने एक दूतके साथ उसे अङ्गरेजोंकी कोठीपर पहुंचा दिया। * उक्त अङ्गरेजने शिवाजीके सूरत आक्रमणका संक्षिप्त वर्णन लिखा है कि शिवाजी अपने खेमेमें बैठे हुए थे। उनके सामने कैदी लाये गये थे, उनसे रुपया मांगा जाता था। जो लोग रुपया नहीं देते थे, उनके या तो सिर उड़ा दिये जाते अथवा उनके हाथ काट दिये जाते थे। किसी किसीने लिखा है कि उन्होंने चार आदमियोंके सिर कटवा लिये थे और चौबीस आदमियोंके हाथ कटवाये थे।

शिवाजीके वध करनेकी चेष्टा—पहले ही लिखा जा चुका है कि सूरतका शासक इनायतखां शिवाजीके आगमनका समा चार सुनकर एक दिन पहले मङ्गलवारकी रातको ही किलेमें भाग गया था। बृहस्पतिवारको उसने एक नवयुवकको शिवा जीके पास सन्धि करनेके बहाने भेजा। उस नवयुवकने सन्धि की कुछ ऐसी शर्तें कहीं, जिनसे चिढ़कर शिवाजीने उससे कहा कि तुम्हारा मालिक स्त्रियोंके समान अपने घरमें बैठा हुआ है, क्या उसने मुझे भी औरत समझ लिया है जो उसने मुझसे इन शर्तोंके स्वीकार करनेकी आशा की है? उस नवयुवकने शीघ्र

---

* The Log of the loyal Merchant में लिखा है कि अङ्गरेज कैदी साढ़े तीन सौ रुपया जरमाना देकर छूटा था।

ही उत्तर दिया कि हम औरतें नहीं हैं, मुझे आपसे कुछ और भी कहना है। यह कहते हुए उसने अपने पाससे एक छिपी हुई कटार निकालकर शिवाजीकी छातीमें भोंकनी चाही। शिवाजीके पास उनका एक मराठा शरीर-रक्षक नङ्गी तलवार लिये हुए खड़ा था, उसने अपनी तलवारके एक आघातसे ही घातकका हाथ काट दिया, पर फिर भी वह घातक अपना काम किये बिना नहीं रहा, उसने अपनी कटारसे शिवाजीको चोट पहुँचा दी। शिवाजी और वह घातक दोनों एक साथ धरतीपर गिर पड़े। शिवाजीके घावोंपर खून बहने लगा, यह देखकर उनके साथियोंने समझा कि वे मारे गये, उसी समय शिवाजीके साथियोंने समस्त कैदियोंको वध करनेके लिये शोर मचाया और शिवाजीके शरीर-रक्षकने उस घातककी खोपड़ी उड़ा दी। शिवाजी शीघ्र ही जमीनपरसे उठ आये और कतल करनेकी मनाई कर दी।

इतिहास प्रेमी पाठकोंको यहां स्मरण रखना चाहिये कि नादिरशाहने अपने एक सायीके ऊपर ढेला फेंकनेपर दिल्लीमें कतले आम कराया, पर शिवाजीने अपने ऊपर वार होनेपर भी सूरतमें कतले-आमकी आज्ञा नहीं दी। उन्होंने न तो नादिरशाहके समान सूरतमें कतल करवायी और न सूरतमें जलियांवाला बागके समान गोलियां चलवाई।

चार दिनतक सूरत नगरको लूटकर १० वीं जनवरी रविवारके सबेरे दस बजे सूरतसे चलकर शिवाजी अपनी सेना

सहित चल दिये। क्योंकि उन्होंने सुना कि मुगल-सेना नगरकी रक्षा करनेके लिये आ रही है। उन्होंने मुगल-सेनासे मुठभेड़ करना उचित नहीं समझा। रविवारकी रातको वे सूरतसे बारह मीलकी दूरीपर रहे और शीघ्र वहासे फिर वे कोकणको चले गये।

शिवाजीका आतङ्क और डर सूरत नगरके निवासियोंपर ऐसा छा गया कि सूरतसे शिवाजीके चले जानेपर भी वहांके निवासी कई दिनोंतक सूरतमें लौटकर नहीं आये। क्योंकि उन्हें शिवाजीके दुबारा लौटकर आनेका डर लगा हुआ था। कई दिन पीछे सूरत नगर निवासियोंने अपने घरोंकी सूरत देखी। १७ वीं जनवरीको जब मुगल-सेना सूरत पहुँची, तब सूरत नगरके डरपोक शासक इनायतखा भी किलेमेंसे निकला और अपनी सूरत नगर निवासियोंको दिखलायी। उसको देखते ही नगर निवासियोंने बड़ी घृणा प्रकट की, बस इसपर क्रोधित होकर इनायतखांके बेटेने गोली चलानेकी इनायत की। जिसमें एक निर्दोष हिन्दू व्यापारी मारा गया। ठीक ही है —

"जबरदस्तसे चट दब जाना, जेरदस्तको अकड़ दिखाना।"

सूरत नगरकी लूटमें कमसे कम साढ़े आठ करोड़ रुपयेका माल शिवाजीके हाथ लगा। जब बादशाह औरङ्गजेबने सूरत नगरकी लूटके विषयमें सुना तब वे बहुत बिगड़े। किन्तु अङ्ग-रेजोंकी वीरतासे वे बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने अङ्गरेज व्यापारियोंकी बड़ी प्रशंसा की। उन्होंने सूरत नगर निवासियोंके

प्रति सहानुभूति प्रकट की और इस सहानुभूतिके उपलक्षमें उन्होंने सूरत नगरके समस्त व्यापारियोंके आनेवाले मालपर एक वर्षतक चुङ्गी माफ कर दी। अङ्गरेज और डच व्यापारियोंके मालपर उन्होंने एक रुपया, प्रति सैकड़ा महसूल घटा दिया। किसी किसी इतिहास-लेखकने यह भी लिखा है कि बादशाह औरंगज़ेबने अङ्गरेज और डच व्यापारियोंके मालपर साढ़े तीन रुपये सैकड़ेसे दो रुपया सैकड़ातकका महसूल घटा दिया था। शिवाजीकी लूटके पीछे अङ्गरेजोंका सूरतमें कैसा प्रभाव हुआ था, इसका पता उस पत्रसे लगता है जो सूरत फैक्टरीके प्रेसीडेंट सर जार्ज आक्सडनने २८ वीं जनवरी सन् १६६४ ई० को कम्पनीको लिखा था। उस पत्रका सारांश यह है—"नगरके हजारों आदमियोंने बादशाहसे प्रार्थना की कि अङ्गरेजोंको इनाम देना चाहिये, क्योंकि उन्होंने अपनी वीरतासे हमारी रक्षा की है। जो मुगल सेना शहरकी रक्षाके लिये पहुँची थी उसमेंसे कई सरदार हमारे पास आये और हमने जो देश और बादशाहकी सेवा की थी उसके लिये अनेक धन्यवाद दिये। इसपर आप (अंगरेजोंकी फैक्टरी) के प्रधानने अपना पिस्तौल सेनाके प्रधान सरदारके सामने रख दिया और कहा—"मैंने अपने हथियार आपके सामने रख दिये हैं, अब भविष्यमें नगरकी रक्षाका भार आपपर है।" इसपर सेनाका प्रधान प्रसन्न हुआ और उस पिस्तौलको स्वीकार करते हुए कहा कि मैं आपको एक घोड़ा, तलवार और खिलअत दूंगा।

इसपर भाप (अंगरेजोंकी कोठी) के प्रधानने कहा—"यह चीजें योद्धाओंकी हैं, हम तो व्यापारी हैं और अपने व्यापारमें सम्राटसे रिआयत चाहते हैं।" ओफ्! जो अंगरेज, एक समय मुगल सम्राटोंके सामने अपने व्यापारकी सुविधाके लिये इस प्रकार प्रार्थना करते थे वे आज भारतके कर्ता धर्ता बने हुए हैं और उन मुगल सम्राटोंके वंशधर रोटीके एक एक टुकड़ेके लिये भटक रहे हैं। सूरतकी लूटपर भूषण कवि कहते हैं —

"दच्छिन दलन दबाय करि सिवसरजा निरसंक
लूटि लियो सूरति सहर बंक करि अति डंक"

* * * *

सूबन साज पठावत है
निज फौज लखे मरहट्टन केरी
औरँग आपनि दुग्ग जमात
बिलोकत तेरिपै फौज दरेरी
साहि तनै सिव साहि भई
भनि भूषन यों तुव धाक घनेरी
रातहु दोस दिलौस तकै
तुव सैनिक सूरति सूरति घेरी।"

सूरतकी लूटके पीछे जब शिवाजी रायगढ पहुँचे तब उन्हें

से किनारेसे बहुत दूर जा निकले, उनके शत्रुओंको पता लग गया कि शिवाजी अपनी राजधानीमें नहीं हैं। उन्होंने शिवाजीका पीछा करना चाहा था कि वे बिजलीके समान जलसे थलपर पहुंच गये और अपनी सेनाको कई भागोंमें बांटकर उस प्रदेश को लूटने लगे। यहांतक कि वे कई नगरोंको लूटकर राय गढ़के किलेमें जा पहुँचे और उनके शत्रु देखते ही रह गये।

यहां यह लिखना भी आवश्यक है कि बारसिलोर नगरके लूटनेके पूर्व बीजापुरके आदिलशाहने शिवाजीसे की हुई सन्धिको भंग कर दी और दो सेनायें कोंकण प्रान्तपर चढ़ाई करनेको रवाना कीं। पर आदिलशाही सेनाको सफलता प्राप्त नहीं हुई। इस चढ़ाईमें बीजापुरवालोंके छः हजार सिपाही मारे गये। इतनेमें वेंगुली नामक बन्दरके लोगोंने शिवाजीका विरोध किया, अतएव वेंगुली बन्दरको लूटकर उन्होंने वहांके निवा सियोंकी अक्ल ठिकाने ला दी।

सूरतसे लौटकर शिवाजीने औरंगजेबको एक पत्र भेजा, जिसमें लिखा था —"मैंने तुम्हारे मामा शाइस्ताखांको दण्ड दिया है। मैंने तुम्हारे खूबसूरत सूरतकी सूरत बिगाड़ दी है। हिन्दुस्तान हिन्दुओंके ही लिये है, यहां तुम्हारा कुछ काम नहीं है। दक्खिनमें भी तुम्हारा कुछ काम नहीं है। दक्खिन, निजामशाही राज्यका है और मैं इस राज्यका वजीर हूं।" औरंगजेबने इस पत्रका कुछ उत्तर नहीं दिया। सूरतकी लूटके कुछ दिनों पीछे शिवाजीने राजाकी उपाधि धारण

अपने पिताकी मृत्युका समाचार मिला, जिससे उन्हें बड़ा दुःख हुआ, जिसके विषयमें पीछे लिखा जा चुका है। पाठक शिवाजीकी चपल गति और पराक्रमका केवल इतनेसे ही अनुमान कर लें कि जिस समय वे सूरतकी लूटमें व्यस्त थे उस समय दूसरी ओर नेताजी पालकर भी मुगलोंके राज्यमें उपद्रव मचा रहे थे। परन्तु मुगल-सेना नेताजी पालकरको परास्त करनेमें असमर्थ रही। तीसरी तरफ शिवाजीकी जलसेना उत्पात मचा रही थी। उसने हिन्दुस्तानसे अरबकी ओर जानेवाले कई जहाजोंको लूट लिया, परन्तु साथ ही यह भी स्मरण रखना चाहिये कि शिवाजी जिस प्रकार अपने धर्म कर्मके पक्के थे, वैसे ही दूसरोंके धर्म सम्बन्धी विचारोंकी रक्षाके प्रति सम्मान करते थे। जो हाजी लोग मक्काकी तीर्थयात्राको जाते थे, उनसे वे केवल कर वसूल करके उन्हें छोड़ देते थे। सूरतसे लौटकर शिवाजी औरंगाबाद गये उस प्रदेशको भी मनमाने ढंगसे विध्वंस किया। अहमदनगर आदि कई स्थान लूटे। बारसिलोर नामक नगरको लूटकर बहुतसा धन अपनी राजधानीको पहुँचाया। बारसिलोर नगर गोवाको १३० मील की भीचाईमें था। शिवाजी अपने समुद्री बेड़े (जिसमें ८५ छोटी छोटी नावें और तीन बड़े जहाज थे) में सवार होकर बारसिलोर आ पहुँचे। शिवाजी कितने द्रुतगामी थे, पाठक इसका केवल इतनेसे ही अनुमान कर लें कि बारसिलोरमें लूट मार करनेके पीछे शिवाजी अपने चार हजार मनुष्योंको साथ

छे किनारेसे बहुत दूर जा निकले, उनके शत्रुओंको पता लग गया कि शिवाजी अपनी राजधानीमें नहीं हैं। उन्होंने शिवाजीका पीछा करना चाहा था कि वे बिजलीके समान जलसे स्थलपर पहुँच गये और अपनी सेनाको कई भागोंमें बाटकर उस प्रदेश को लूटने लगे। यहांतक कि वे कई नगरोंको लूटकर राय गढ़के किलेमें जा पहुँचे और उनके शत्रु देखते ही रह गये।

यहां यह लिखना भी आवश्यक है कि बारसिलोर नगरके लूटनेके पूर्व बीजापुरके आदिलशाहने शिवाजीसे की हुई सन्धिको भंग कर दी और दो सेनायें कोंकण प्रान्तपर चढ़ाई करनेको रवाना कीं। पर आदिलशाही सेनाको सफलता प्राप्त नहीं हुई। इस चढ़ाईमें बीजापुरवालोंके छः हजार सिपाही मारे गये। इतनेमें वेंगुली नामक बन्दरके लोगोंने शिवाजीका विरोध किया, अतएव वेंगुली-बन्दरको लूटकर उन्होंने वहांके निवा सियोंकी अक्ल ठिकाने ला दी।

सूरतसे लौटकर शिवाजीने औरंगजेबको एक पत्र भेजा, जिसमें लिखा था —"मैंने तुम्हारे मामा शाइस्ताखांको दण्ड दिया है। मैंने तुम्हारे खूबसूरत सूरतकी सूरत बिगाड़ दी है। हिन्दुस्तान हिन्दुओंके ही लिये है, यहां तुम्हारा कुछ काम नहीं है। दक्खिनमें भी तुम्हारा कुछ काम नहीं है। दक्खिन, निजामशाही राज्यका है और मैं उस राज्यका वजीर हूं।" औरंगजेबने इस पत्रका कुछ उत्तर नहीं दिया। सूरतकी लूटके कुछ दिनों पीछे शिवाजीने राजाकी उपाधि धारण

की, इससे औरंगजेब और भी कुढ़ गया। जैसे आजकल उपाधि वितरण हुआ करता है वैसे ही उस जमानेमें भी हुआ करता था। मुगल-दरबारकी बिना मंजूरीके कोई साधारण मनुष्य जो वंश परम्परागत राजा न हो, राजाकी उपाधि ग्रहण नहीं कर सकता था। अतएव इन सब बातोंसे कुढ़कर औरंगजेबने किस प्रकारसे बदला लेनेकी ठानी, सो आगे पढ़िये।

बारहवां परिच्छेद

शिवाजी और जयसिंह

"मधुर बचन से जात मिटि।
　　　　उत्तम जन अभिमान
तनक शीत जल सों मिटै
　　　　जैसे दूध उफान ॥"

जब सम्राट् औरङ्गजेबको सूरत नगरकी लूट आदिका समाचार मिला तब उन्होंने अपने यहांके योग्यसे योग्य हिन्दू मुसलमान वीरोंको शिवाजीके दमन करनेके लिये दक्षिणमें भेजनेकी ठान की। संवत् १७२१ वि०, ३० वीं सितम्बर सन् १६६४ ई० को बादशाह औरङ्गजेबका जन्म दिवस था, जन्म दिवसकी खुशी के उपलक्ष्यमें उन्होंने अपने यहांके कितने ही राजकर्मचारियों, अमीरों और सरदारोंकी वेतन वृद्धि और उपाधि वितरण किया था। उसी समय उन्होंने आम्बेराधिपति मिर्जा राजा जयसिंह को शिवाजीको दमन करनेके लिये दक्षिणमें तैनात किया। मिर्जा राजा जयसिंहके अधीन दिलेरखां, दाऊदखां, कुरैशी, राजा रामसिंह सिसोदिया, राजा सुजानसिंह बुन्देला, कीरतसिंह (ये मिर्जाराजा जयसिंहके पुत्र थे), एहतिशामखां शेखजादा,

श्रित न कर लेगी नवतक वह कदापि अपने पूर्व-गौरवको प्र नहीं कर सकती।

जयसिंह और जसवन्तसिंह दोनों ही राजपूत थे। जयसिंह कछवाहे राजपूत थे और जसवन्तसिंह राठौर थे। दोनोंने अपने जीवनके अवकाशका अधिकांश भाग मुगल-साम्राज्यका विस्तार बढ़ानेमें ही बिताया था। जसवन्तसिंहसे मुगल-सम्राट् यहां तक इतना प्रसन्न थे कि वे उन्हें अपने साथ काबुल ले गये थे। काबुलसे लौट आनेके पीछे शाहजहाने जसवन्तसिंहको दक्षिणमें भी भेजा था, वहां उन्होंने गोंडवानामें बहुत नाम पाया और वहांसे वे संवत् १७०२ वि० में आगरे आये। शाहजहां उनसे बहुत प्रसन्न हुआ और संवत् १७१० वि० में इन्हें महाराजाकी पदवी प्रदान की जो उस समयतक किसीको नहीं मिली थी। बादशाह शाहजहां, जसवन्तसिंहजीसे बहुत प्रसन्न रहते थे पर औरङ्गज़ेब उनसे विशेष प्रसन्न न थे, इसका कारण यह था कि जिस समय औरंगज़ेब अपने बूढ़े बाप शाहजहांको कैद करके राजसिंहासनपर बैठे थे उस समय जोधपुर-नरेश जसवन्तसिंहने दाराका पक्ष लिया था और वे दाराकी ओरसे औरंगजेबसे लड़े थे। पीछे वे आम्बेर (जयपुर) के जयसिंहके अनुरोधसे औरंगज़ेबकी ओर हुए। इसका कारण यह था कि जयसिंहसे उनकी गहरी मैत्री थी। प्रायः सभी राजपूत औरंगज़ेबके विरुद्ध थे और दाराके पक्षपाती थे। दाराकी ओरसे अनेक राजपूत औरंगजेबसे लड़े थे जिनमें बूंदीके हाड़ाओंने

अच्छी वीरता प्रगट की थी। केवल एक जयसिंह औरंगज़ेबके पक्षपाती थे। औरङ्गज़ेब भी यह सब बातें भूलनेवाले न थे, पर उन्होंने उस समय जसवन्तसिंहसे किसी प्रकारसे अपना बदला लेना उचित नहीं समझा, क्योंकि वह समय औरङ्गज़ेब का राजपूतोंसे झगड़ा करनेका न था। पीछे औरङ्गज़ेबने शिवाजीको दमन करनेके लिये शाइस्ताखाँके साथ उन्हें दक्षिण भेजा था। शाइस्ताखाँको शिवाजीसे किस प्रकार नीचा देखना पड़ा, यह पाठक पीछे पढ़ चुके हैं और यह भी पढ़ चुके हैं कि उस समय दक्षिणमें यह अफवाह फैली हुई थी कि जसवन्तसिंह शिवाजीसे मिल गये हैं। शाइस्ताखाँके दक्षिण चले आनेके पीछे जसवन्तसिंहने शिवाजीसे सिंहगढ़का किला लेनेकी चेष्टा की; पर उनकी यह चेष्टा व्यर्थ हुई। जैसा ऊपर लिखा जा चुका है कि औरङ्गज़ेबने जयसिंहको जसवन्तसिंहके स्थानपर दक्षिण भेज दिया और उन्हें दिल्ली बुला लिया, बर्नियर लिखता है कि राठौर नरेश जसवन्तसिंह मुगलोंकी राजधानी दिल्ली न पहुंचकर सीधे अपने राज्य जोधपुरको चले गये थे। जो कुछ हो, पीछे औरङ्गज़ेबने जसवन्तसिंहको अफगानिस्तानको भेज दिया, वहां वे एक युद्धमें मारे गये और फिर औरङ्गज़ेबने उनके पुत्र पृथ्वीसिंहको विष देकर किस प्रकार मरवा डाला, राठौरों ने किस प्रकार मुगल सेनासे उनके दूसरे पुत्र अजीतसिंहकी रक्षा की थी, दुर्गादासने अपने स्वामी-पुत्रकी रक्षाके निमित्त कैसी वीरता प्रकट की थी, इन सब विषयोंका प्रस्तुत पुस्तकसे

कोई सम्बन्ध नहीं है, अतएव हम विषयोंकी यहां आलोचना न करके हम मिर्जा राजा जयसिंहके विषयमें कुछ लिखकर अपने मुख्य विषयकी ओर आते हैं। जिन दिनों मिर्जा राजा जयसिंह दक्षिणमें पहुंचे थे उन दिनों उनकी अवस्था साठ वर्षकी थी। बारह वर्षकी अवस्थासे ही वे मुगल सेनामें काम करते थे। संवत् १६७८ वि० में वे आम्बेर (जयपुर) की गद्दीपर विराजे। मुगल सेनामें रहकर उन्होंने मध्य एशियाके बलख, कन्दहार, दक्षिणके बीजापुर आदि स्थानोंमें वीरता प्रकट की थी। सम्राट् शाहजहांके समय शायद ही कोई ऐसा वर्ष बाता होगा जिसमें उन्होंने कहीं न कहीं वीरता प्रकट न की हो और उन्हें कुछ न कुछ पारितोषक न मिला हो। जैसे वे रण-वीर थे वैसे ही वे दौत्य-कर्ममें बड़े कुशल थे। जब कभी विजोत सन्धि विषयक कठिनाई उपस्थित होती थी तब सम्राट् शाहजहां उसके निबटारेका भार उन्हींपर सौंपते थे। औरङ्गजेबने राजकुमार रहते समय ही जयसिंहसे अपना मेल बढ़ा लिया था और दाराकी जयसिंहसे पटती न थी। औरङ्गजेबने दिल्लीका राजसिंहासन जिन लोगोंकी सहायतासे प्राप्त किया था उनमेंसे एक जयसिंह भी थे। तख्तपर बैठते ही औरङ्गजेबने उनके साथ बहुत अच्छा व्यवहार किया और 'सात हजारी' का मनसब देकर, उन्हें मिर्जा 'राजा'की उपाधि प्रदान की

जयसिंहको भेजना सब प्रकारसे उचित समझा, क्योंकि जय सिंह भी समयके अनुसार नीति बर्तना जानते थे।

इसमें सन्देह नहीं कि मिर्जा राजा जयसिंह अत्यन्त चतुर और दूरदर्शी थे। पर दक्षिण दमनका काम कुछ खेल न था। उनके पूर्वाधिकारी शाइस्ताखाँ और जसवन्तसिंहकी सब चेष्टायें निष्फल हुई थीं। शिवाजीका सिक्का भी पूर्णरूपसे जम चुका था। उनके मावले सैनिकोंने कई बार युद्धोंमें अपूर्व वीरता प्रकट की थी। इन सब बातोंसे जयसिंह भलीभांति परिचित थे। उन्हें यही डर था कि दक्षिणमें मुगलोंकी बहुत बड़ी सेना आनेसे कहीं गोलकुण्डा और बीजापुर भयभीत न हो जाय और शिवाजीसे मिलकर कहीं मुगल-सेनाका सामना न कर बैठें। इसलिये उन्होंने ऐसी विकट परिस्थितिमें दूरदर्शिता और राज नीतिज्ञतासे काम निकालनेकी ठानी। उन्हें रात दिन यही चिन्ता सताने लगी कि किस प्रकारसे शिवाजीको अधीन किया जावे। उन्होंने अपने एक पत्रमें सम्राट् औरङ्गजेबको लिखा कि जिस कामके करनेके लिये मुझे यहां भेजा गया है रात दिन उसी कामको पूरा करनेके लिये व्यस्त रहता हूं। मुझे एक क्षण भी आराम और चैन नहीं है। महाराज जयसिंहके पत्रोंसे यह भी विदित होता है कि उन्होंने शिवाजीको वशमें करनेके लिये बड़े जोड़-तोड़ लगाये थे।

सम्राट् औरङ्गजेबने महाराज जयसिंहसे कोकणपर चढ़ाई करनेका अनुरोध किया था, परन्तु दूरदर्शी जयसिंहने सम्राट्के

इस अनुरोधका पालन नहीं किया, क्योंकि वे जानते थे कि कोंकण अथवा पश्चिमी घाटपर चढ़ाई करना ठीक न होगा। इसलिये उन्होंने औरङ्गजेबकी बात न मानी। उन्होंने शिवाजीके राज्यके पूर्वी भागमें ही अपना रहना श्रेयस्कर समझा, क्योंकि यहांसे बीजापुर राज्य और शिवाजी दोनोंका वे अपनी सुविधा से सामना कर सकते थे। उन्होंने सम्राट् औरङ्गजेबको एक लिख दिया कि जिस किसी मनुष्यपर शिवाजीको अधीनताका कार्य्य भार सौंपा जाय उसको इस कार्यके करनेकी पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिये। ऊपर सम्राट्के यहांसे हस्तक्षेप होनेसे कार्यके पूरे होनेकी सम्भावना नहीं है। पहले सम्राट्ने उन्हें युद्ध-सम्बन्धी ही समस्त अधिकार दिये थे और शासन सम्बन्धी अधिकार—जैसे किसीकी वेतन वृद्धि करनी, किसीको दण्ड देना, किसी कर्मचारीका स्थान परिवर्तन करना, सेनाका वेतन, जागीरदारोंका प्रबन्ध आदि औरङ्गाबादके सूबेदारके हाथमें रख थे, पर महाराज जयसिंहको इसपर बहुत आपत्ति हुई। तब ला लाचार होकर शाहन्शाह औरङ्गजेबने उनके इस कथनको स्वीकार कर लिया और अहमदनगर और परेन्दाके किलेदार महाराज जयसिंहके अधीन रखे गये। इसके अतिरिक्त उन्होंने एक बड़ा भारी काम यह किया कि उस समय दक्षिणमें शिवाजीके जितने शत्रु थे उन सबको अपनी ओर मिला लिया। यहांतक कि उन्होंने पश्चिमी किनारेकी यूरोपियन बस्तियोंके मुखियोंको भी अपनी ओर कर लिया और जञ्जीराके सिद्दियोंसे भी शिवाजीके विरुद्ध सहायता देनेके लिये अनुरोध किया।

अनेक मराठा सरदारोंने भी महाराज जयसिंहका साथ दिया, क्योंकि उन्होंने शिवाजीको एक सामान्य जागीरदारकी हैसियतसे बढ़ता देखा था। शिवाजीकी इतनी जल्दी उन्नति देखकर उनके हृदयमें भी डाह, ईर्ष्या, द्वेषकी अग्नि भभक रही थी। उन्होंने भी शिवाजीसे ऐसे अवसरपर ही अपनी शत्रुता और द्वेषाग्निका बदला लेना उचित समझा। कूटनीति परायण जयसिंहने उन सबको अपनी सेनामें मिला लिया। जिस समय जयसिंह बुरहानपुरमें थे उस समय जवाहरके राजाने अपना एक दूत उनके पास भेजा। दूतने जयसिंहसे निवेदन किया कि जवाहरका राजा मुगलोंकी ओर मिलना चाहता है। महाराज जयसिंहने दूतके इस प्रस्तावको प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार किया और राजासे अपने बेटे अथवा भाईको सेना सहित सम्मिलित होनेके लिये कहला भेजा। साथ ही उसे "मनसब" दिलानेका भी वादा किया। शिवाजीने जिस मोरे परिवारसे जावली छीन लिया था वह मोरे परिवार भी महाराजा जयसिंहसे मिल गया। मोरे परिवारके बाजी, चन्द्रराव तथा उसके भाई अम्बाजी गोविन्दराव मोरे भी आम्बेराधिपतिके पास पहुंचे। पहले उन्होंने अपना एक ब्राह्मण महाराज जयसिंहके पास भेजा जिसके द्वारा यह प्रार्थना की कि हमारी रक्षा की जाय और धनसे सहायता दी जाय। उनकी यह प्रार्थना स्वीकार की गयी, उन्हें मुगल-सेनामें ले लिया गया। अफजलखांके पुत्र फजल खांने भी अपने बापकी मृत्युका बदला लेनेका यही उपयुक्त

अवसर समझा, वह भी मुगल सेनामें सम्मिलित हो गया। मतलब यह है कि उस समय दक्षिणमें छोटा बड़ा ऐसा कोई न था जिसने शिवाजीके विरुद्ध मुगल-सेनाकी सहायता न की हो। जिस किसीका शिवाजीसे तनिक भी विरोध था उसके पास मुगल सेनाके जासूस पहुँचे। मुगल-सेना-नायक महाराज जयसिंहने भी शिवाजीके विरोधियोंको अपनी ओर मिलाने के लिये रुपया पानीकी भांति खर्च किया। चांदाके राजाके पास सुपा प्रान्तके जागीरदारके वंशके राम और हनमन्त नामक दो अच्छे सैनिक थे, महाराज जयसिंहने उनको भी अपने पास बुला लिया, क्योंकि वे लोग युद्धस्थल आदिसे अच्छे परिचित थे और उन लोगोंका अपने प्रान्तमें प्रभाव भी अच्छा था। इस प्रकार महाराज जयसिंहने शिवाजीकी समस्त विरोधी शक्तियोंको उनके दमन करनेके लिये इकट्ठी कर ली। पूनामें उन्होंने सख्त पहरा बैठा दिया कि कहीं शिवाजी उनपर भी वैसे ही आक्रमण न करें जैसे उन्होंने शाइस्ताखांपर किया था। जुन्नारके पास, मुगल सम्राज्यकी सीमापर उन्होंने अच्छे पहरे का प्रबन्ध किया, कितने ही दुर्ग और नाकेबन्दीपर उन्होंने अपने अधीन कई सेनापतियोंको सेना सहित नियत कर दिया था। सारांश यह कि उन्होंने अपनी रक्षाका सब प्रकारसे प्रबन्ध कर लिया। शाइस्ताखांसे जो भूल और असावधानी हुई थी, वैसे ही भूल और असावधानी फिर न हो, इस बातका भी मिर्जा राजा जयसिंहने पूर्ण ध्यान रक्खा। उन्होंने दिलेरखांको पुरन्दर

दुर्गको घेरनेके लिये भेजा और अपना डेरा सिंहगढ और पुरन्दरके बीच "साखवद" नामक स्थानमें किया। शिवाजीके सब कामोंका पता जयसिंहको लग चुका था। मराठा इतिहास लेखक लिखते हैं कि जयसिंहको यह भी पता लग चुका था कि शिवाजी स्वधर्मकी रक्षा और स्वराज्य-स्थापनकी चेष्टा कर रहे हैं और इस कार्यके लिये उन्होंने शिवाजीकी तारीफ भी की थी। किसी किसी मराठा इतिहास-लेखकने तो यहाँतक लिखा है कि जयसिंह शिवाजीसे इतने घबड़ाये हुए थे कि उन्होंने अनेक ब्राह्मणोंसे अनुष्ठान, जप, व्रत आदि इसलिये करवाये थे कि जिस कार्यको करनेके लिये वे आये हैं उस कार्यको वे अच्छी तरहसे कर सकें और एक दो इतिहास-लेखक यह भी लिखते हैं कि जिस दिनसे जयसिंहने दक्षिणमें पैर रखा था उस दिनसे जयसिंहको यही चिन्ता थी कि किसी प्रकारसे दक्षिणसे अपनी इज्जत आबरू बचाकर अपने घर राजपूतानेको लौटें। जयसिंह यह भी चाहते थे कि युद्ध किये बिना ही शिवाजीसे निबटारा हो जाय तो अच्छा हो। मराठा इतिहास-लेखकोंके इस कथनमें कहांतक सचाई है, इसको ईश्वर ही जाने, क्योंकि मराठा-इतिहास लेखकोंके इस कथनमें सन्देहका कारण यह है कि जयसिंह डरपोक, बुजदिल और कायर न थे, इससे पहले वे बड़े बड़े युद्धोंमें वीरता प्रकट कर चुके थे। साथ ही वे व्यावहारिक राजनीतिमें बड़े चतुर और प्रवीण थे। अपनी वाणीके बलसे भी वे अनेक मनुष्यों और अपने शत्रुओंको ठीक वैसे ही वशमें

कर लेते थे, जैसे कि वे तलवारके जोरसे अपने वैरियोंका दमन करते थे ; अलबत्ता एक बातकी जयसिंहमें बड़ी कमी यह थी कि उनमें स्वदेशानुराग न था, पर इसमें जयसिंहको ही दोष क्यों दिया जाय, क्योंकि उस समय आजकलकी भांति स्वदेश-भक्तिकी लहर नहीं बह रही थी, इस दोषसे उस समयके बहुत कम हिन्दू बचे थे। उस समय शिवाजीका जो स्वराज्य था वह भी हमारी समझमें महाराष्ट्रकी सीमासे बाहर न था और सच पूछिये तो भारतकी अधोगतिका यही कारण हुआ।

मराठा-इतिहास-लेखकोंके कथनके अनुसार जयसिंहने मान आसूजीके हाथ शिवाजीको एक पत्र भेजा जिसमें लिखा कि "औरङ्गजेब बड़े जबरदस्त बादशाह हैं, उनके साथ आपको मित्रता कर लेनी ही उचित है, उनसे वैर बांधनेमें कुछ अच्छा परिणाम न होगा। आप उदयपुरके सिसौदिया घरानेके हैं, आपका जन्म वंशमें जन्म हुआ है। आपको हिन्दू धर्मका पूरा अभिमान है, आपकी स्वधर्ममें ऐसी निष्ठा देखकर मुझे बड़ा सन्तोष हुआ है। आप स्वधर्मकी रक्षा और अपनी सत्ता स्थापन करनेका जो उद्योग कर रहे हैं, उससे मेरी पूर्ण सहानुभूति है। मेरी इच्छा है कि आपकी रक्षा हो, आपकी सत्ता चिरस्थायी हो। इस समय में आपका जो कुछ विचार हो उसीसे मुझे सूचित कीजिये।"

शिवाजी जयसिंहके उपर्युक्त पत्रको पाकर बड़े प्रसन्न हुए, इस पत्रसे उनकी चिन्ता भी कुछ कम हुई। वे जयसिंहसे युद्ध करना नहीं चाहते थे, इसका कारण महाराष्ट्र इतिहास लेखकों-

ने लिखा है कि उनकी कुलदेवी भवानीने उनसे जयसिंहसे युद्ध करनेको मनाई की थी, चाहे जो कुछ हो, यहां हम इतना कहे बिना नहीं रह सकते कि शिवाजी सदैव अपनी शक्ति और समय का विचार करके काम करते थे। जयसिंहके पत्रको पाकर उन्होंने जयसिंहके पास अपने किसी बुद्धिमान राज्य कर्मचारीको भेजने की ठानी। इस कामके लिये उन्हें अपने कर्मचारियोंमें रघुनाथ पन्त बहुत ठीक जंचा और उसको मिर्जा राजा जयसिंहके पास भेजा, उसे जयसिंहकी नजरके लिये अच्छे रेशमी वस्त्र, बहुमूल्य अलङ्कार, अच्छे अच्छे हाथी, घोड़े दिये और एक पत्र भी उसके द्वारा जयसिंहके पत्रके उत्तरमें भेजा। पत्रके उत्तरमें शिवाजीने लिखाः—"आपने राजदूतके हाथ जो पत्र भेजा है उसे बांचकर मुझे अतीव आनन्द हुआ है। मैंने उस पत्रको पितृदर्शनके समान समझकर दोनों हाथोंसे अपने हृदय और मस्तकमें लगाया है। मुझे आपकी ओरसे यह आशा न थी कि आप मेरे पास पत्र भेजनेकी कृपा करेंगे। इससे आपका पत्र पाकर मुझे और भी सन्तोष हुआ है। अब मेरी सब चिन्ता दूर हो गयी है। आपके पत्रके एक एक अक्षरमें प्रेमका परिचय मिल रहा है। इस पत्र को बांचकर आपके दर्शन करनेकी इच्छा उत्पन्न हुई है। अब मुझे आपपर किसी प्रकारका सन्देह नहीं रहा है। आप मेरे हित चिन्तक हैं। अब मुझे इसमें किसी प्रकारकी शङ्का नहीं रही है कि आपपर भरोसा रखनेसे ही मेरी भलाई होगी। अब आप मुझे अपने चिरञ्जीव राजा रामसिंहके समान समझिये। आपका

पत्र पढ़कर जो आनन्द हुआ है वह प्रकट नहीं किया जा सकता। मेरी इस प्रवृत्तिका कारण एकमात्र जगदम्बा ही जानती है। आपका दिल्लीसे दक्षिणमें आना आज सफल हुआ है। अब मेरे सब मनोरथ सिद्ध होंगे, आज मेरे मनसे सब भय दूर हो गये हैं। मेरा मन बहुत प्रफुल्लित है। आप मेरे शिरच्छत्र हैं। क्षात्र धर्मके अनुसार आप मेरी रक्षा करनेवाले हैं। बादशाह सलामत मुझपर अत्यन्त क्रुद्ध हैं, उनकी नाराजी किस तरहसे दूर की जाय, यह मेरी समझमें नहीं आता है। इसकी मुझे रात दिन चिन्ता लगी रहती है। यह सच है कि बादशाह सलामत सब तरहसे मालिक हैं, परन्तु इस समय क्षात्र धर्मका ह्रास हो गया है। पृथ्वीपर अधर्म बढ़ रहा है। विधर्मियोंने उन्मत्त होकर धर्मका नाश करना आरम्भ कर दिया है। हिन्दुओंके समस्त पुण्य-क्षेत्रोंको भ्रष्ट करके उनमें गोवध करना आरम्भ कर दिया है। देवालयोंको तोड़कर उनके स्थानमें मसजिदें बनवा दी हैं। इसमें उनका हेतु यही है कि पृथ्वीपरसे हिन्दू धर्मका नाश कर दिया जाय। ऐसी परिस्थिति देखकर मुझे अत्यन्त त्रास होता है। बड़ोंके प्रताप और श्रीजगदम्बाकी सहायतासे आजतक मैंने यवनोंका विरोध किया है। हिन्दू-राजाओंको हिन्दू धर्मका अभिमान छोड़ना उचित नहीं है। पुराने समयसे हिन्दू राजा ही इस भूमिपर राज्य करते आ रहे हैं परन्तु इस समय वे मानों मान मर्यादाको तिलाञ्जलि देकर यवनोंके ताबेदार हो गये हैं। यह देखकर मेरे मनमें बड़ा दुःख होता है। बस इन बातोंसे ही

दुखित होकर मैंने बादशाहके प्रान्तमें उत्पात मचाया था और उनके कुछ स्थानोंको अपने कब्जेमें कर लिया था। इसीपर उन्होंने क्रोधित होकर आपको मेरे ऊपर चढ़ाई करनेके लिये भेजा है। परन्तु बादशाहकी अधीनता स्वीकार करनेमें मुझे कुछ भी आपत्ति नहीं है। मैंने जिन स्थानोंपर अपने बाहुबलसे कब्जा किया है वे स्थान मेरे अधिकारमें रहने चाहिये, मैं बाद शाहके प्रांतमें कुछ उपद्रव नहीं करूंगा। मेरी ओरसे इस विषय में बादशाह सलामत निश्चिन्त रहें, यह मेरी प्रार्थना है। यदि बादशाहकी इच्छा दक्षिण प्रांतको अपने कब्जेमें करनेकी हो तो मैं मन वचनसे बादशाहको इस कार्यमें सहायता प्रदान करूंगा।"

शिवाजीका उपर्युक्त आशयका पत्र लेकर रघुनाथपन्त मिर्जा राजा जयसिंहके यहां पहुंचे। जयसिंहने सहर्ष रघुनाथपन्तसे भेंट की। शिवाजीकी भेजी हुई नजर उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार की और स्नेहपूर्ण शब्दोंमें शिवाजीके कुशल-मङ्गलका समाचार पूछा, इसके पीछे शिवाजीके पत्रको पढ़कर संतुष्ट हुए। पत्र पढ़ चुकनेके पीछे उन्होंने रघुनाथपन्तसे अनेक विषयों पर बातें कीं और कहा कि दिल्लीपति बादशाह औरङ्गजेब कोई साधारण व्यक्ति नहीं हैं। वे सार्वभौम नरेश हैं। अति बल वान हैं। उनके साथ युद्ध करनेमें किसी प्रकार भलाई नहीं है। यदि शिवाजी अपनी भलाई चाहते हैं तो मेरे साथ बादशाहसे भेंट करें। मैं उनकी बादशाहसे मुलाकात करा दूंगा और इस

विषयमें मैं उनकी सब प्रकारसे सहायता करूंगा। उनको अपने हृदयमें इस विषयमें कुछ भी भय नहीं करना चाहिये। अपने पुत्र रामसिंहके समान ही मैं शिवाजीको अपना पुत्र समझता हूं। मैं सत्यवक्ता राजपूत हूं, कभी विश्वासघात नहीं करूंगा। शिवाजी इस विषयमें निश्चिन्त रहें। मेरी ओरसे वे अपने हृदयमें कुछ भी अविश्वास न करें। मैं बादशाहसे उनकी प्रशंसा करूंगा। जिससे बादशाह उन्हें अपने यहां बुलानेके लिये निमन्त्रण देंगे और उनका सब प्रकारसे सम्मान करनेकी व्यवस्था की जायगी। मिर्जा राजा जयसिंहने शिवाजीको यह प्रत्युत्तर देकर शिवाजी के वकील रघुनाथपन्तको वस्त्र, अलङ्कार आदि देकर सम्मान किया और उसके हाथ महाराज शिवाजीको भी नजर भेजी।

रघुनाथपन्तने चलनेसे पूर्व मिर्जा राजा जयसिंहसे एकान्तमें भेंट की और यह निवेदन किया कि "आप बुद्धिमान हिन्दू राजा हैं, शास्त्र और मर्यादाके अनुसार क्षात्र धर्मकी रक्षा करना आपका पवित्र कर्त्तव्य है। यवनोंने हिन्दू धर्मका नाश करना आरम्भ कर दिया है। उनके भयसे श्रीकाशी, यमुना, सरस्वती आदि तीर्थ उजड़ गये हैं। हे राजन्! यवनोंको कुकर्मोंमें प्रवृत्त देख कर भी आपको तनिक भी द्वेष नहीं होता है। आप यवनोंकी सेवा कर रहे हैं, इसमें कुछ गौरवकी बात नहीं है। वर्त्तमान परिस्थितिको देखकर आप काम कीजिये। महाराज शिवाजी आपके बालक हैं, उनके द्वारा हिन्दू धर्मका उद्धार करना आपके हाथ है। मैं तो यह समझता हूं कि उचित रीतिसे आपने

धर्मकी रक्षा करना आपका कर्त्तव्य है। आप हिन्दू राज कुलमें दूसरे सूर्य उत्पन्न हुए हैं। आप शिवाजीके नाशका कलङ्क अपने माथे न लीजिये। शिवाजीके प्रति विश्वासघात करनेसे संसारमें आपकी बड़ी निन्दा होगी। उन्होंने अपना मस्तक आपके चरणोंमें नवा दिया है। अब आप उनके प्राणदाता बनकर संसारमें अपनी कीर्त्ति कौमुदीका विस्तार कीजिये।" शिवाजीके वकीलकी बातें सुनकर जयसिंहको क्रोध उत्पन्न नहीं हुआ, बल्कि उलटे प्रेमपूर्वक उन्होंने रघुनाथपन्तसे कहा कि हमारी ओरसे किसी प्रकारका विश्वासघात नहीं किया जायगा। इसके पीछे जयसिंहने रघुनाथपन्तकी दिलेरखांसे भेंट करायी। रघुनाथपन्तने शिवाजीका भेजा हुआ दूसरा नजराना दिलेर खांको भेट किया और सर्व-सम्मतिसे यह सलाह ठहरी कि शिवाजीको जो शर्तें करनी हों वह स्पष्ट रूपसे लिखकर औरङ्ग-जेबके पास भेजी जायें। और वहांसे उनपर जैसा विचार हो वैसा कार्य किया जाय। रघुनाथपन्त यह सन्देश लेकर शिवाजी के पास रायगढ़ पहुंचा और जो कुछ जयसिंह और दिलेरखां से बातें हुई वह सब शिवाजीसे कहीं। इसपर शिवाजीने अपनी शर्तोंकी एक फिहरिस्त तैयार की। शर्तोंका आशय यह था कि इस प्रांतमें शिवाजीने जिन किले और स्थानोंपर कब्जा कर लिया है वे स्थान और किले उनके अधिकारमें रहें और उन्हें इसके अलावे चौथ और सरदेशमुखी उगाहनेका स्वत्व रहे। यदि ये शर्तें स्वीकृत हों तो मुगल-साम्राज्य और मराठोंमें मैत्री

हो सकती है। सन्धि विषयक नियमोंके पत्रको लेकर रघुनाथ पन्त पुन जयसिंहके पास गया और जयसिंहको सन्धि विषयक पत्र देकर रघुनाथपन्तने शिवाजीका यह मौखिक सन्देश दिया कि शिवाजीकी सन्धि करनेकी इच्छा अन्तःकरणसे है, इसमें किसी तरहका प्रपंच मत समझियेगा।

शिवाजीके दूत रघुनाथपन्तने यह प्रतिज्ञा की कि शिवाजी की ओरसे किसी तरहकी धोखेबाजी और दगाबाजी नहीं होगी। जयसिंहने शिवाजीके दूतसे यह भी कहा कि शिवाजी मेरे ऊपर विश्वास करें और मेरे कहनेके अनुसार कार्य करें, किसी प्रकार की बुराई नहीं होगी। अन्तमें यह निश्चय हुआ कि जब शिवाजी जयसिंहसे भेंट करने आयेंगे तब सन्धि विषयक सब नियम तय किये जायँगे।

जब दिलेरखांको यह पता लगा कि जयसिंह और शिवाजी की मुलाकातके समय सन्धि विषयक नियम तय होंगे तब उसके मनमें स्वभावतः ही यह सन्देह उत्पन्न हुआ कि जयसिंह शिवाजीसे मिल तो नहीं गये हैं। दोनों हिन्दू हैं, दोनों मिलकर मुगल साम्राज्यको हानि तो नहीं पहुंचायेंगे। अत एव यह सोचकर उसने राजा जयसिंहसे अनुरोध किया कि "सन्धिकी शर्तें बादशाहके यहांसे मंजूर होनी चाहिये। आप बादशाहको सब वृत्तांत विस्तृतरूपसे लिख दीजिये, वहांसे जो आज्ञा आये उसके अनुसार काम कीजिये। अभी हमलोगोंने शिवाजीके दो किलोंको घेरा है। अतएव जल्दी घेरा सम

उठाइये । मैं पुरन्दरके किलेपर कब्जा करता हूं, आप रायगढ़के किलेको लीजिये ।" दिलेरखांका ऐसा आग्रह देखकर जयसिंहने प्रत्युत्तरमें कहा—"शिवाजी अपने साथ सन्धि करनेको तैयार हैं। निजामशाहीके पतनके पीछे जिन किले और स्थानोंपर मुगल-साम्राज्यका आधिपत्य था उनमेंसे जिनपर शिवाजीने कब्जा कर लिया था, अब वे उन स्थान और किलोंको पुन मुगल साम्राज्य को लौटानेको तैयार हैं। इसलिये अब युद्ध करना व्यर्थ है। अब हमारे यहां आनेका मतलब सिद्ध हो गया है। जो काम विना युद्धके ही हो सकता है इसके लिये युद्ध और रक्तपातकी आवश्यकता ही क्या ? इन किलोंपर कब्जा करना बहुत कठिन । प्रत्येक किलेके लेनेमें हमारे आदमियोंका बलिदान करना पड़ेगा। इसपर भी कोई किला अपने अधिकारमें आवेगा या नहीं, इसमें सन्देह है। इसलिये इस समय किले लेनेका काम स्थगित किया जाय। इस समय सिर्फ इतना ही काम करना चाहिये कि सामने किलेपर मराठा-सेनाकी जो रसद आ रही है उसके बन्द करनेका उद्योग करना चाहिये ।" इस तरहसे जय सिंहने दिलेरखांको बहुत समझाया, पर वे जयसिंहकी सम्मतिके अनुसार कार्य करनेके लिये तैयार न हुए। उन्होंने कहा कि "बिना बादशाहकी ओर्डरके सन्धि नहीं करनी चाहिये। चाहे जो कुछ हो मैं और मेरे आदमी पुरन्दरका किला लेंगे, मैं पुर न्दरके किलेको लेता हूं," यह कहकर दिलेरखांने पुरन्दरके किलेके लेनेकी तैयारी की।

ऊपर जो कुछ लिखा गया है, वह भी श्रीकृष्णराय अर्जुन केलुस्कर लिखित मराठी-भाषाके शिवाजीके चरित्रके आधार-पर लिखा गया है। किन्तु प्रोफेसर यदुनाथ सरकारने मुसलमान इतिहास-लेखकोंके आधारपर लिखा है कि पुरन्दर-दुर्गके पतन होनेके पीछे शिवाजीने सन्धि विषयक प्रस्ताव मिर्ज़ा राजा जयसिंहसे किया था, पर साथ ही उक्त सरकार महोदयने अपनी पुस्तकके पृष्ठ १३७ के नीचे एक फुटनोट एक हस्तलिखित पुस्तकके आधारपर दिया है जिसमें मिर्ज़ा राजा जयसिंहके एक पत्रका सारांश इस भांति दिया है कि "पायलके निकट शाही सेनाके पहुंचनेपर शिवाजीके दूतोंने मेरे पास आना आरम्भ कर दिया था। पूना पहुंचनेपर वे मेरे पास दो पत्र लाये थे, मैंने उन पत्रोंका कुछ उत्तर नहीं दिया। वे निराश होकर लौट गये। तब शिवाजीने अपने एक विश्वास पात्र आदमीके हाथ जिसका नाम करमाजी था, एक बहुत बड़ा पत्र हिन्दीमें भेजा। उसने मुझसे अत्यन्त नम्रतापूर्वक बार बार उक्त पत्रको पढ़नेका अनुरोध किया कि एक बार आप इन चिट्ठियोंको पढ़ तो लीजिये। उन चिट्ठियोंमें शिवाजीने बीजापुरसे युद्ध करने और इस पहाड़ी प्रदेशके विजय करनेमें मदद करनेका वादा किया था। मैंने जवाबमें यही कहा कि अगर तुम अपनी भलाई चाहते हो तो बादशाहकी सेवामें रहना स्वीकार कर लो।" और जो कुछ हो एक बातसे सभी इतिहास लेखक सहमत हैं कि शिवाजीने मिर्ज़ा राजा जयसिंहसे सन्धि

विषयक प्रस्ताव अवश्य किया था। स्काट वेरिङ्गने लिखा है कि "शिवाजीने प्रतापराव गूजरको जयसिंहका वध करनेके लिये भेजा था। प्रतापराव गूजर किसी प्रकारसे जयसिंहके यहां नौकर हो गया था। वह सदैव जयसिंहके पास ही रहता था। एक दिन उसने जयसिंहके निकट बहुत थोड़े आदमी देखकर जयसिंहके मारनेकी चेष्टा की। वह शीघ्र ही पकड़ा गया और उसके हथियार छीनकर जयसिंहने उसे अपने यहांसे निकाल दिया और किसी प्रकारका उसे दण्ड नहीं दिया।" इन इतिहास-लेखकोंमें कौन सच्चा और और कौन झूठा है, इसको भगवान जाने, पर आगे जो कुछ हुआ वह सुनिये।

दिलेरखांने पुरन्दर दुर्गके पतनकी प्रतिज्ञा की। पर पुरन्दर दुर्गका पतन कुछ खिलवाड़ न था। पुरन्दरका किलेदार मुरार बाजी नामक एक व्यक्ति था, जो प्रभु जातिका था, उसके अधीन एक हजार सैनिक थे, पर बहुतसे किसान तथा दूसरी जातिके लोग भी किलेमें शरण लेनेके लिये भाग गये थे। पुरन्दरसे कुछ दूर रुद्रमालपर भी एक सैन्यदल रखा गया था। मुगल सेनाने भी बड़े ठाटबाटसे पुरन्दर दुर्गपर चढ़ाई की। मुगल-सेनाने पुरन्दर-दुर्गको चारों ओरसे घेरा। दिलेरखांने अपने दोनों भतीजों और अफगान सैन्यदलके साथ रुद्रमाल और पुरन्दरके बीचमें मोर्चाबन्दी की थी, उसके सामने तोपखानेका एक सरदार तुर्कअजां था और उसकी सहायताके लिये एक सैन्यदल था जिसको महाराज जयसिंहने भेजा था। पुरन्दर-

किलेके उत्तर दरवाजेके सामने महाराज जयसिंहका पुत्र कीर्तसिंह अपनी तीन हजार सेना और दूसरे मनसबदारोंके साथ था। दाहिनी ओर राजा नृसिंह गौड़, पर्ण राठौर, नरवरके राजा जगतसिंह और सय्यद अफजूल मालम थे और किलेके गुसद्वारकी ओर दाऊदखाँ, राजा रामसिंह, मुहम्मद सलीह तरखाँ, रामसिंह हाड़ा, शेरसिंह राठौर, राजसिंह गौड़ और दूसरे सरदार अपनी सेनाओं सहित थे। इस सैन्य दलके दाहिनी ओर रसूलबेग रोजबानी और उनके दूसरे साथी रोजबानी थे। रुद्रमालके सामने चतुर्भुज चौहान और दिलेरखां के दूसरे साथी थे और इन लोगोंके पीछे मित्रसेन इन्द्रमणि बुन्देला आदि दूसरे लोग थे।

महाराज जयसिंहने अपना डेरा पुरन्दर किलेकी पहाड़ीके नीचे लगाया था और उनके साथी मनिकोंने पहाड़ीकी ओर बढ़ जाने। जिस प्रकार पानीपतके तीसरे युद्धमें अहमदशाह अब्दाली एक घोड़ेपर सवार होकर दिनभर अपनी सेनामें घूमता था और सैनिकोंको उत्साहित करता था, ठीक वैसे ही महाराज जयसिंह प्रतिदिन अपने अधीन सैन्य-दलके आदमियों-से मिलते थे और उन्हें उत्साहित करते थे। मोरचेका काम कैसा हो रहा है, इसका भी निरीक्षण करते थे। वे इस बात की बहुत चेष्टा करते थे कि तोपें किसी प्रकार दमदमें और टीलोंपर चढ़ जायं। एक तोप "अबदुल्लाखां" नामकी थी, वह तीन दिनमें टीलेपर चढ़ी और और रुद्रमालके सामने लगायी

गयी। एक और दूसरी तोप थी, जिसका नाम "फतह्-लश्कर" था। वह साढे तीन दिनमें वहां चढाई गयी। एक और तीसरी तोप "हैली" नामकी थी जो बडी मुश्किलसे वहां चढ़ाई गयी। इन तोपोंसे गोलोंकी ओलोंके समान वर्षा हुई जिससे किलेके आगेकी बुर्जोंका भाग उड़ गया और किलेमें पहुंचनेके लिये सुरङ्ग खोदनेके लिये आदमी भेजे गये। १३ वीं अप्रेलको दिलेर खांके आदमियोंने बिजरागढ़ बुर्जोंको उड़ा दिया और दुर्ग रक्षकोंके एक सैन्य-दलको पीछेकी ओर खदेड़ दिया। दुर्ग-सेनाके सात आदमी मारे गये और चार घायल हुए। जयसिंहने अपने राजपूतोंका एक सैन्यदल दिलेरखांकी सहायताके लिये और भेज दिया। दूसरे दिन मुगल-सेना सीढ़ियां लगाकर किलेके बाहरी भग्न भागपर चढ़ी। किलेके बाहरी भागकी सेना मुगल सैनिकोंकी अग्निवर्षा सहन करनेमें समर्थ नहीं हुई। उसमें कुछ लोग हथियार छोड़कर वहांसे चलते बने, जयसिंहने इन सैनिकों के चले जानेमें किसी प्रकारकी रुकावट नहीं डाली। ऐसा करनेमें उनका यही उद्देश्य था कि इन लोगोंकी देखा-देखी पुरन्दर किलेके दूसरे वीर-सैनिक भी अपने अपने हथियार रखकर चले जायं। मुगल-सेनाके जिन नायकोंने इस युद्धमें वीरता प्रकट की थी, उन्हें दिलेरखां और जयसिंह दोनोंने खिलत दी। मुगल सेनाके इस युद्धमें अस्सी आदमी मारे गये और १०९ घायल हुए।

बिजरागढ़के हाथ आनेसे ही पुरन्दर दुर्गके पतनकी आशा

बँध गयी थी परन्तु इस बीचमें एक ऐसी घटना हुई जिसके कारण दाऊदखाँ कुरैशी और दिलेरखाँका परस्पर मतभेद हो गया। उसका कारण यह था कि किलेके गुप्त-द्वारपर दाऊद खाँ कुरैशी तैनात किया गया था किन्तु कुछ दिनों पीछे पता लगा कि उस गुप्त द्वारसे मराठोंका एक सैन्यदल किलेमें पहुंच गया है और दाऊदखाँने उस सैन्यदलका सामना नहीं किया, दिलेरखाँने जब यह समाचार सुना तब उन्होंने दाऊदखाँ को इस उपेक्षाके लिये बहुत कुछ लानत मलामत की। बस दाऊदखाँ और दिलेरखाँमें झगड़ेकी यही जड़ थी। महाराज जयसिंहने इस झगड़ेको मिटानेके लिये दाऊदखाँको दूसरी ओर नियत किया और उसके स्थानपर पुरदिलखाँ और शुभकरण बुन्देलाको नियत किया। परन्तु पीछे पता लगा कि शुभकरण बुन्देला हृदयसे काम नहीं कर रहे हैं वे भीतर ही भीतर शिवाजीकी ओर झुके हुए हैं। महाराज जयसिंहने शुभकरण बुन्देलाको भी दूसरी ओर भेज दिया।

मराठे वीरोंने भी अत्यन्त वीरतापूर्वक मुगल-सेनाका सामना किया। इसी बीचमें मुगल-सेनाके कुछ दलने राजगढ़, सिंहगढ़ और रोहिरा आदि गढ़ोंपर भी आक्रमण किया। इसके अतिरिक्त मुगल-सेनाने शिवाजीके राज्यमें कहीं कहीं लूट-मार भी मचा दी थी, जिससे शिवाजीकी प्रजाको बड़ा कष्ट हुआ। पुरन्दर किलेका घेरा लगातार दो मासतक रहा। अन्तमें मुगल सेनाने मोर्चेका कोट हस्तगत कर लिया, मराठे लोग ऊपरके कोटमें

चले गये और वहींसे तोपोंकी मार शुरू की। जिससे मुगल सेना ठहर न सकी। मुरारबाजी उसका पीछा करते हुए दिलेर खांकी छावनीतक पहुंच गये। उनके अतुल-पराक्रमको देखकर खांको बड़ा ताज्जुब हुआ। उन्होंने बड़ी उत्तेजनासे मराठी सेना पर आक्रमण किया। इस धावेमें अनेक मराठा वीर खेत रहे। तब पुरन्दर किलेके अध्यक्ष मुरारबाजी प्रभुने अपने थोड़ेसे चुने हुए आदमियोंको ही लेकर मुगल-सेनाका सामना किया। दिलेरखां अपने पांच हजार अफगान और दूसरी जातिके सैन्य दलके साथ पहाड़ीपर चढ़ने लगे। मुरारबाजी प्रभुसे यह न देखा गया कि उनके जीते जी शत्रु किलेपर अपनी विजयपताका फहरा दे। "हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा भोक्ष्यसे महीम्" भगवान श्रीकृष्णके इस वाक्यका स्मरण करके मुरारबाजी प्रभु दिलेरखांकी वक्रगतिको रोकनेके लिये आगे बढ़े। उनके साथ कुछ मावले सवार थे। रणचण्डीका विकट ताण्डव हुआ। मुरारबाजी और उनके मावले सैनिकोंने पांच सौ पठानोंको मार गिराया। इसके अतिरिक्त मराठोंके हाथसे मुगल-सेनाके बहुतसे पैदल सैनिक भी मारे गये। मुरारबाजी अपने साठ आदमियोंको लेकर दिलेरखांकी छावनीकी ओर बढ़े। मुरारबाजीकी सेनासे मुगलोंकी सेना कहीं अधिक थी, इसलिये मुरारबाजीके बहुतसे आदमी मारे गये, पर वे इससे हताश न हुए। वे अपनी तलवार लेकर सीधे दिलेरखांके ऊपर लपके। दिलेरखां मुरारबाजीके साहसको देखकर इतने प्रसन्न हुए कि

उन्होंने उनसे आत्मसमर्पण करनेके लिये कहा। साथ ही उनकी प्राणरक्षा करने तथा अपने अधीन एक उच्च पद प्रदान करनेका वचन दिया। परन्तु स्वामिभक्त और देशभक्त मुरारबाजीने यह बात स्वीकार नहीं की और उन्होंने फिर दिलेरखांपर आक्रमण किया। इस बार मुरारबाजीकी ढाल लड़ते लड़ते टूटकर गिर पड़ी परन्तु इसपर भी वे हतोत्साह नहीं हुए। अपने वस्त्रको लपेट कर उसीकी ढाल बनाकर शत्रुओंसे लड़ने लगे और मुगल सेनाके अनेक वीरोंको मार गिराया। फिर दिलेरखांपर भी उन्होंने तलवारका एक वार किया। परन्तु वार खाली गया। दिलेरखांने एक तीरसे मुरारबाजीको मार गिराया। मुरारबाजीका सिर धड़से अलग होकर जमीनपर गिर पड़ा परन्तु कहते हैं कि उस वीरका केवल कबन्ध ही लड़ता रहा और अनेक मुगल-वीरोंको भूतलशायी किया। मुरारबाजीरावके साथ ही तीन सौ मावले इस संसारमें अपनी अनन्त कीर्ति छोड़ कर स्वर्गको सिधारे। दुर्भाग्यवश मुरारबाजीके मारे जानेपर भी शिवाजीकी सेनाने दुर्गको मुगलोंको समर्पण नहीं किया। मुरारबाजीके मारे जानेपर शिवाजीकी सेनाने मुगलोंका और भी वीरतासे सामना किया। मराठा वीरोंने मुरारबाजीके शवके टुकड़े इकट्ठा करके शिवाजीके पास भेज दिये। शिवाजीको अपने प्राणप्रिय सरदारकी यह गति देखकर जो दुःख हुआ वह अकथनीय है। सन्धि-स्थापनके पास हो जानेपर भी पुरन्दरका किला मुगलोंके हाथमें नहीं गया। किन्तु शिवा

पतिके भी मराठे वीर किलेकी रक्षा करते रहे। मुगल-सेनाके हाथमें किलेके नीचेका परकोटा फिर आ गया परन्तु ऊपरसे मराठोंने मुगलोंपर अग्निकी ऐसी वर्षा की कि वह वहां न ठहर सके। मुगल-सेनाने पास ही रुद्रमालसे पुरन्दर दुर्गका पतन करनेके लिये अग्नि वर्षा की।

जब दिलेरखां पुरन्दर दुर्गके लेनेमें अपनी दिलेरी प्रकट कर रहे थे तब जयसिंह भी चुपचाप आलस्यसे अपने दिन नहीं बिता रहे थे। वे स्वयं दाऊदखांके अधीन छः हजार सेनाके साथ राजगढ़ और रोहिराकी ओर बढ़े और अपने साथमें राजा रायसिंह, बीजापुरके एक सरदार शारज़ाखां, अमरसिंह चन्दावत, अचलसिंह कछवाहाको—जो उनकी निजी घरेलू सेनाका अफसर था—तथा अपनी सेनामेंसे चार सौ आदमियोंको लिया, राजगढ़, सिंहगढ़, रोहिरा आदि किलोंपर दोनों ओरसे आक्रमण करनेकी चेष्टा की। राजा जयसिंहके अधीन मुगल-सेनाने मार्गमें जो कोई गांव मिलता था, उसमें खूब लूट मार मचायी। खेती तथा गांवके निवासियोंको नष्ट करनेमें किसी प्रकारकी कसर नहीं छोड़ी, गांवके गांव नष्ट कर दिये। इस प्रकार जयसिंह सिंहगढ़, राजगढ़, रोहिरा आदिकी ओर अग्रसर हुए। कुतुबुद्दीनखां और लोदीखांको उत्तरकी ओरसे जानेकी आज्ञा दी। इस प्रकार उन्होंने चारों ओरसे शिवाजीको तङ्ग करना आरम्भ किया।

२० वीं मार्चको दाऊदखांका सैन्यदल रोहिरा किलेके निकट

पहुंचा। दाऊदखांके सैन्यदलने पचास गांव जला दिये और नष्ट कर दिये। जो लोग शिवाजीको केवल सूरत-लूटके कारण लुटेरा, डाकू, हत्यारा आदि विशेषणोंसे याद करते हैं, वे एक बार आंख खोलकर देखें कि मुगल सेनाने भी शिवाजीके अधीन प्रदेशोंमें कम अत्याचार नहीं किये थे। गांवके गांव जला दिये, गांवोंके निर्दोष निवासियोंको बुरी तरहसे सताया, पहाड़ोंके बीचमें जो गांव बसे हुए थे, मुगल-सेनाने उन गांवों मेंसे कितने ही गांव नष्ट कर दिये। जहां कहीं फसल खड़ी थी उसको जला दिया और नष्ट कर दिया। इस प्रकार मुगल-सेनाने शिवाजीके राज्यमें उत्पात मचाया था।

जब शिवाजीके पास पुरन्दर-दुर्गके युद्धके सब समाचार पहुंचे तब वे सोचने लगे कि अब क्या करना चाहिये *। ऐसे अवसरोंपर वे अपनी कुलदेवी भवानीका ध्यान किया करते थे, अतएव उन्होंने इस बार भी वैसा ही किया। उस समय उनके पास अन्नीराका बालाजी आवाजी नामक एक व्यक्ति प्रभु जातिका था। उन्होंने उससे कह दिया था कि भवानीके ध्यान में मग्न होकर जो शब्द मेरे मुंहसे निकलें उन्हें तुम लिख लेना। बालाजी आवाजी कागज कलम लेकर शिवाजीके निकट बैठ गये। शिवाजीने भवानीका ध्यान किया, ध्यानावस्थामें उनके

* किसी किसीने लिखा है कि [illegible]
[illegible]
[illegible] है।

मुखसे ये शब्द निकले कि "राजा जयसिंह हिन्दू हैं, वे अफजल खां अथवा शाइस्ताखांकी भांति पराजित नहीं किये जा सकते हैं। इसलिये शिवाजीको उनसे सन्धि कर लेनी चाहिये। पर इसमें शिवाजीको डरनेकी कोई बात नहीं है। भवानी प्रत्येक अवसरपर उनकी रक्षा करेगी।" जब शिवाजीका ध्यान भंग हुआ तब उन्होंने अपनी माता जीजाबाई और अपने मंत्रियोंसे इस विषयमें परामर्श किया कि अब क्या करना चाहिये। सब की सम्मतिसे यही निश्चय हुआ कि सन्धि करनेके लिये कोई दूत राजा जयसिंहके पास भेजना चाहिये! बस, इस निश्चयके अनुसार एक दूत राजा जयसिंहके पास सन्धि करनेके लिये भेजा गया।

पूर्ण रूपसे पराजित न होनेपर भी शिवाजीने जयसिंहके पास सन्धि करनेके लिये दूत क्यों भेजा—यह अत्यन्त विवाद ग्रस्त विषय है।

इस विषयमें इतिहास लेखकोंका परस्पर मतभेद है। अङ्गरेज इतिहास-लेखक ग्राण्ट डफ आदिने शिवाजीका सन्धि करनेके लिये उद्यत होना, शिवाजीके हृदयकी दुर्बलता प्रकट की है। देशी इतिहास-लेखक रानडे आदिने शिवाजीकी राजा जयसिंह से सन्धि करनेमें कोई गहरी नीति बतलायी है। परन्तु यह बिना किसी सङ्कोचके कहा जा सकता है कि शिवाजी निराश और विवश होकर जयसिंहसे सन्धि करनेको तैयार नहीं हुए थे। जयसिंहके पास सन्धिके लिये दूत भेजनेमें भी उनकी दूरदर्शिता

ही थी। शिवाजीको उस समय केवल मुगलोंसे ही सामना करना न था उनके पड़ोसमें ही बीजापुर-राज्य भी उनपर दाँत लगाये हुए था। शिवाजी यह देख चुके थे कि उनके पिता शाहजी अकेले ही बीजापुर और मुगल दोनोंसे लड़े थे, अलग अलग दोनोंसे लड़नेमें उनके पिताको सफलता प्राप्त हुई थी। दोनोंसे एक साथ लड़कर सफलता प्राप्त नहीं हो सकती थी। क्योंकि जब मुगल और बीजापुर दोनों मिल गये तब उनके पिता दोनोंके मुकाबिलेमें ठहर नहीं सके। इस समय शिवाजीने जय सिंहके द्वारा मुगलोंसे जो सन्धि की थी उसका यही कारण प्रतीत होता है कि कहीं बीजापुर-दरबार भी मुगलोंसे मिल न जाय। पहले उन्होंने बीजापुर-दरबारसे सन्धि हो जानेपर मुगलोंके स्थानोंपर आक्रमण किया था। पर बीजापुर नरेश अली आदिलशाह अपनी बातसे पक्के न निकले, सन्धि हो जानेके पीछे उन्होंने शिवाजीके अधिकृत कोंकण आदि प्रदेशोंपर जो आक्रमण किये थे, इससे शिवाजीका उनपर विश्वास नहीं रहा और यह भी प्रतीत हो गया कि अली आदिलशाह भी औरङ्गजेब से मिले हुए थे। इसलिये शिवाजीने सोच लिया था कि मुगलोंसे सन्धि करके बीजापुर-दरबारकी शक्तिको घटाना चाहिये। कोई कोई इतिहास-लेखक यह भी कहते हैं कि जब मुगलोंसे सन्धि न हुई तो कोंकण प्रांत आदिलशाहको देकर शिवाजीने आदिल शाहसे मित्रता और मुगलोंसे युद्ध करनेकी ठान ली थी जिससे मार्गके लिये लड़ाईका कण्टक दूर हो जाय, इसके अतिरिक्त

पाठक यह भी पढ़ चुके हैं कि पुरन्दर दुर्गके घेरेके समय अनेक मराठा सरदारोंने भी शिवाजीके विरुद्ध आम्बेराधिपति जयसिंह को किस प्रकारसे सहायता दी थी। "घरका भेदी लङ्का ढावे" ऐसे मराठे सरदारोंकी भी उस समय कमी न थी। अतएव दूरदर्शी शिवाजीने ऐसे समयमें महाराज जयसिंहके पास सन्धि के लिये दूत भेजकर दूरदर्शिताका ही काम किया। जयसिंहसे सन्धि करनेमें शिवाजीके हृदयकी दुर्बलता न थी बल्कि उनकी दूरदर्शिता थी।

शिवाजीने राजा जयसिंहके पास सन्धि करनेके लिये अपना एक दूत भेजा। पर जयसिंहने दूतकी बातोंपर गम्भीरतापूर्वक विचार नहीं किया और न जयसिंह, सिद्दी जौहरकी भांति औरंगजेबसे किसी प्रकारका विश्वासघात करना चाहते थे। इसलिये उन्होंने शिवाजीके दूतकी बातपर ध्यान नहीं दिया। अन्तमें शिवाजीने अपने न्यायाधीश रघुनाथ पन्तको जयसिंहके पास भेजा। संवत् १७२२ वि० ९ वीं जून सन् १६६५ ई० को रघुनाथपन्त जयसिंहके पास पहुंचा। उसने सन्धि सम्बन्धी बातें करके कहा कि शिवाजी आपसे मिलना चाहते हैं। जयसिंहने तुलसी-पत्र हाथमें रखकर शपथ ग्रहण की कि यदि शिवाजी मिलने आवेंगे तो उनका एक बाल बाँका भी नहीं किया जायगा। चाहे सन्धि विषयक नियम तय हों या न हों। शिवाजी उस समय रायगढ़में थे वहींपर उन्हें जयसिंहका उपर्युक्त सन्देश मिला। इस सन्देशको पाकर

वे अपने कुछ साथियोंके साथ मिर्जा राजा जयसिंहसे मिलनेके लिये चले गये। मराठी भाषाके ग्रन्थ—"शिवदिग्विजय" आदिमें लिखा हुआ है कि शिवाजी जयसिंहसे अपने एक हजार सवारोंके साथ मिलने गये थे। उस समय उनके शरीर-रक्षकोंने अत्यन्त बहुमूल्य वस्त्र और आभूषण धारण किये थे। उनके दरबारियों तथा अन्य कर्मचारियोंने भी बहुत बढ़िया वस्त्र तथा आभूषण पहने थे। उनकी सेनाके नायकों और हेडकारियोंने आँखोंमें चकाचौंध लानेवाले वस्त्र पहने थे, पर शिवाजीकी पोशाक बहुत सादी थी। हाथमें तीर कमान लेकर वे हाथीपर सवार होकर मिर्जा राजा जयसिंहके पास पहुंचे। इसके विपरीत प्रो॰ यदुनाथ सरकार लिखते हैं कि शिवाजी, एक पालकीमें बैठकर, अपने छ ब्राह्मणोंके साथ मिर्जा राजा जयसिंहके पास गये थे। प्रो॰ सरकारका ही कथन ठीक प्रतीत होता है क्योंकि अगर शिवाजी इतनी धूमधामसे आते तो मिर्जा राजा जयसिंह भड़क जाते। शिवाजीके साथ एक हजार आदमियोंके होनेसे जयसिंह समझते कि शिवाजी कुछ और उत्पात न कर डालें।

११ वीं जूनको सवेरे ६ बजे जब जयसिंह पुरन्दर किलेके नीचे अपना दरबार कर रहे थे तब उन्हें खबर मिली कि शिवाजी आ रहे हैं। जयसिंहने उसी समय अपने मन्त्री उदय राज और उग्रसेन कछवाहको मार्गमें ही शिवाजीसे मिलनेके लिये भेजा और उन लोगोंसे कह दिया कि शिवाजीसे कह देना कि यदि तुम मुगल सम्राट्को समस्त किले देना स्वीकार करो

तो आओ, नहीं तो यहां आनेका कष्ट मत उठाओ और अपने स्थानको लौट जाओ। शिवाजीने जयसिंहके दोनों कर्मचारियोंसे साधारणतः सन्धिकी यह शर्त्त स्वीकार कर ली और आगे बढ़े। जयसिंहके शिविरके पास जब शिवाजी पहुंचे तब जयसिंहके बख्शीने दरवाजेपर उनका स्वागत किया। स्वयं राजा जयसिंहने भी कुछ आगे बढ़कर शिवाजीका स्वागत किया और उन्हें अपने गलेसे लगा लिया, पीछे उन्होंने शिवाजीको अपने पास ही गद्दीपर दाहिनी ओर बैठाया। हथियार लिये हुए राजपूत चारों ओर खड़े थे कि कहीं अफजलखांके घातक शिवाजी किसी प्रकारकी दुर्घटना न कर बैठे। दोनों ओरसे सन्धि विषयक बातचीत होने लगी। जयसिंहने शिवाजीसे कहा कि मैं केवल आपके प्राणोंकी रक्षाका ही भार नहीं लेता हूं किन्तु यह भी वचन भरता हूं कि बादशाहसे आपको क्षमा प्रदान करा दूंगा। शिवाजीने भी जयसिंहको यह विश्वास दिलाया कि मेरी इच्छा बादशाहसे मित्रता हो, इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं है।

जयसिंहने शिवाजीको अपने खेमेमें ही ठहराया। उस दिन आधी राततक, दोनों ओरसे सन्धि विषयक बातें होती रहीं। अन्तमें शिवाजी और जयसिंहमें परस्पर यह तय हुआ कि शिवाजी * तेईस किले बादशाहको दे देवें और चार्षिक चार लाख हुण आयकी धरती मुगल साम्राज्यको दी जावे और बारह

* अन्य व बखरवालोंने बीस किले लिखे हैं पर श्री यदुनाथ सरकारने तेईस लिखा है।

किले शिवाजी अपने पास रखें और एक लाख हुनकी आय वालीकी धरती उनके पास केवल इस शर्तपर रहेगी कि वे मुगल साम्राज्यके भक्त रहेंगे और उसकी सहायता और सेवा करेंगे। शिवाजीने जयसिंहसे यह विशेष अनुरोध किया कि "मुझे दिल्ली न ले जाया जाय, मेरा लड़का पांच हजार मनसबदारीकी हैसियतसे दरबारमें पहुँचे।" उन्होंने यह भी कहा कि "जिस प्रकारसे उदयपुरके महाराणाओंको दरबारकी हाजिरीसे मुआफ कर दिया गया है वैसे ही मुझे भी किया जाय। उन्होंने मुगल दरबार न जानेके लिये अनेक कारणोंमें एक यह भी कहा कि मैं अपने पिछले गाफलमनो और राजविद्रोही कार्यों के कारण बादशाहको अपना मुंह दिखाने लायक नहीं रहा हूँ, मैं बादशाह सलामतके गुलाम और नौकर अपने पुत्रको भेज दूंगा जिसको पांच हजारका मनसब तथा उपयुक्त जागीर दी जाय। मुझ जैसे पापीको कोई मनसब अथवा मुगल सेनामें किसी प्रकारकी सेवा प्रदान करनेकी आवश्यकता नहीं है। पर हां, दक्षिणमें जब कभी मुगल साम्राज्यका किसीसे युद्ध छिड़ेगा तब मैं पूर्णरूपसे मुगल सेनाकी सहायता करूंगा। उस समय मुझसे जो कुछ सेवाके लिये कहा जायगा वही सेवा मैं करनेको तैयार रहूंगा।"

जब शिवाजी महाराज और मिर्जा राजा जयसिंहकी यह गुप्त सन्धि विषयक बातें हो रही थीं, तब दिलेरखां यह सुनकर कि शिवाजी और जयसिंहमें परस्पर सन्धिकी बातें हो

रही हैं, बिगड़ उठे। मराठा इतिहास (बखर) लेखक कहते हैं कि दिलेरखां सन्धि विषयक बातें सुनकर इतने बिगड़े थे कि क्रोधमें आकर उन्होंने अपना हाथतक चबा डाला था। दिलेर खांके इतने उत्तेजित और क्रोधित होनेका कारण यह था कि वे पुरन्दर दुर्गका पतन करके अपनी वीरता दिखलाना चाहते थे। मिर्ज़ा राजा जयसिंह बड़े चतुर और दूरदर्शी थे। वे आपसमें ही मुगल सेनाके बीचमें फूट नहीं डालना चाहते थे। उन्होंने दिलेरखांको प्रसन्न करनेके लिये एक हाथीपर शिवाजीको राजा रामसिंहके साथ दिलेरखांके पास भेजा। दिलेरखां शिवाजीसे अच्छी तरह मिले पर उन्हें शिवाजीके ऊपर विश्वास न था। उन्हें भी मिर्ज़ा राजा जयसिंहकी भांति डर था कि कहीं शिवाजी उनपर अकस्मात् आक्रमण न कर बैठे, इस भयके कारण शिवाजीसे मिलते समय अपने अस्त्र शस्त्रोंसे सुसज्जित रहे। शिवाजी और वे दोनों बराबर एक ही दीवान (गद्दी) पर बैठे। मिर्ज़ा राजा जयसिंहके मामा सुभानसिंहने दिलेरखांको सन्धि विषयक नियम समझाये, इसपर दिलेरखां बड़े लाल पीले हुए और कहा कि "अबतक मैं पुरन्दरके किलेका पतन न कर लूंगा और पुरन्दर किलेके एक एक आदमीका तलवारसे सिर न उड़ा दूंगा तबतक मैं सन्धिके बारेमें कुछ सुना ही नहीं चाहता हूं।" यह खांकी शिवाजीको केवल बन्दर घुड़की थी। खांके ये शब्द सुनकर शिवाजीने अत्यन्त नम्रतापूर्वक उत्तर दिया—"यह किला आपका ही है, सिर्फ इस किलेके लिये आप इतना खून

क्यों बहाना चाहता है ? मैं तो खुद आपके पाक दस्तों (पवित्र हाथों) में किलेकी तालियां देने आया हूं। पुरन्दर किलेके साथ ही मैं तो और भी दूसरे किले आपको देना चाहता हूं। मेरी सिर्फ इतनी इल्तिजा है कि मुझे मुआफी बख्शी जाय। मैं यह अच्छी तरह जानता हूं कि मेरे जैसे मामूली सरदारके लिये मुगलिया सल्तनतके फौजके आप जैसे बहादुर अमीरसे भिड़ना ठीक नहीं।" दिलेरखां शिवाजीके इन शब्दोंको सुनकर अत्यन्त प्रसन्न और सन्तुष्ट हुए और कहा कि जयसिंह हमारे मुरब्बी हैं, और बादशाह सलामतका उनपर पूरा एतकाद और भरोसा है। मैं जयसिंहका मातहत हूं। जो कुछ वे करेंगे, वह मुझे मन्जूर है। पुरन्दर किलेकी चाबियां पाकर दिलेरखांने पुरन्दर किलेका घेरा उठा लिया और शिवाजीको दो घोड़े एक तलवार, एक बहुत बढ़िया कटार और कपड़ेके दो सुनहले थान दिये। फिर दिलेरखां शिवाजीको मिर्ज़ा राजा जयसिंहके पास वापिस ले गये और उनका हाथ मिर्ज़ा राजा जयसिंहके हाथमें पकड़ाया। शिवाजीने मिर्ज़ा राजा जयसिंह, दिलेरखां तथा अन्य मुगल सरदारोंको बड़ी धूमधामसे एक दावत (भोज) दी। मुगल-सेनापतियोंने भी शिवाजीको एक दावत दी। राजा जयसिंहने शिवाजीको एक खिलअत दी, खिलअतमें एक घोड़ा, एक हाथी और पगड़ीमें बांधनेके लिये एक हीरा भी दिया था। दिलेरखांने शिवाजीको एक तलवार दी, शिवाजीने थोड़ी देर पीछे वह तलवार रख दी और कहा कि "मैं बादशाहकी खिदमत बिना तलवारके ही करूंगा।"

फारसीके आलमगीरनामेमें लिखा हुआ है कि जब शिवाजी अपने ब्राह्मण दूतोंको मिर्जा राजा जयसिंहके पास भेज रहे थे तब मिर्जा राजा जयसिंहने औरङ्गजेबको एक फरमान भेजनेके लिये लिखा कि जैसे ही शिवाजी अधीनता स्वीकार करेंगे, वैसे ही उन्हें यह फरमान दे दिया जायेगा। खुशकिस्मतीसे जिस दिन शिवाजीने अधीनता स्वीकार की उसके दूसरे दिन ही यह फरमान पहुंच गया। मुगल दरबारके नियमके अनुसार मिर्जा राजा जयसिंहने शिवाजीको उस फरमानके सम्मानार्थ छः मील पैदल चलनेके लिये बाध्य किया और उन्हें खिलअत दी।" आलमगीरनामेमें लिखित इस घटनामें कहांतक सचाई है इसमें सन्देह है—क्योंकि मिर्जा राजा जयसिंहके पत्रोंमें इस घटनाका कुछ भी उल्लेख नहीं है।*

मराठोंने १२ वीं जूनको पुरन्दरका किला खाली कर दिया। उस दिन सात हजार स्त्रियां और पुरुष पुरन्दर किलेमेंसे बाहर निकले। इन सात हजार व्यक्तियोंमेंसे चार हजार सैनिक थे। किलेका सब सामान रसद तोपखाना तथा अन्य अस्त्र शस्त्र आदि मुगल-सरकारकी सम्पत्ति हुई। अन्तमें बहुत वाद विवादके पीछे सन्धि हुई जिसके अनुसार शिवाजीने मुगलोंके जो किले और अहमदनगरके जो किले जीत लिये थे वे सब लौटा दिये।

१४ वीं तारीखको जयसिंहने फिर शिवाजीको एक हाथी

* डा० यदुनाथ सरकार कृत मराठीका शिवाजीचरित पेज १०१—१०२।

इस सन्धिके विषयमें २६ वीं अगस्त सन् १६६५ ई० को औरङ्गजेबने शिवाजीको जो पत्र भेजा था उसका सारांश यह है कि "आपके इस पत्रमें राजा जयसिंहसे आपकी भेंटका अच्छा वृत्तान्त दिया है। हमें इस बातसे प्रसन्नता हुई कि आप मुआफी मांगनेकी लालसा रखते हैं। हमें आपकी इच्छाओंका पता आपके कर्मचारियोंसे लग चुका है अर्थात् अब आपको अपने पुराने कार्योंके लिये पश्चात्ताप है। अब आप तीस किले देनेको तैयार हैं और बारह किले और उनके आस पास जागीर, एक लाख पगोड़ा वार्षिक आयकी आप अपने पास रखना चाहते हैं। बारह किलोंमें कोंकण प्रान्तका एक भाग जो आपने बीजापुर राज्यसे ले लिया है और जिसका राजस्वकर चार लाख पगोड़ा है। और दूसरा भाग बालाघाटमें है जिसका राजस्वकर पांच लाख पगोड़ा है आप अपने अधिकारमें रखना चाहते हैं। आप इसकी स्वीकृति हमसे चाहते हैं साथ ही आप चालीस लाख पगोडा तीन लाख वार्षिक किश्त करके हमें देना चाहते हैं।

इसका उत्तर हमारी ओरसे यह है कि आपने पहले जो नीति ग्रहण की थी, वह नीति बुद्धिमत्ता और दूरदर्शिताकी नीति न थी, वह नीति ऐसी बेहूदी है कि क्षमा करने योग्य नहीं है। हम अभी इसके लिये क्षमा प्रदान न करते, परन्तु हम राजा जयसिंहके अनुरोधसे क्षमा करते हैं और नीचे लिखे हुए बारह किले आपके पास रहनेकी आज्ञा हम प्रदान करते हैं। किलोंके पासकी जागीर भी आपके अधिकारमें रहनेकी

हम स्वीकृति प्रदान करते हैं पर कोंकण प्रान्तका यह भाग जिसका राजस्व कर नौ लाख है उसमेंसे चार लाख आयवाला भाग जो आपके कब्जेमें है हमारे साम्राज्यमें सम्मिलित कर लिया गया है और दूसरा पांच लाख राजस्व करवाला भाग आपको नीचे लिखी हुई दो शर्तोंपर दिया जाता है।

१—आप इसे बीजापुर राज्यसे हमारे हाथमें पड़नेसे पहले ले लीजियेगा।

२—आप अपनी सेनासहित जयसिंहके साथ सम्मिलित हो जाइये और साम्राज्यके कामको सन्तोषजनक कीजिये और बीजापुर विजयकी प्राप्तिके पीछे दण्ड स्वरूप जो रुपया आपने देनेका वचन दिया है वह चुका दीजिये।

अभी आपके पुत्रको पांच हज़ार घोड़ोंका मनसब दिया जाता है। प्रत्येक घुड़सवार अपने पास दो या तीन, घोड़े रख सकेगा। एक खिलअत आपके लिये भेजी गई है। यह हमारी आज्ञाका प्रमाणपत्र है और इसपर यह हमारी मुहर है। आगे इस पत्रमें बारह किलोंके नाम हैं जो शिवाजीके पास रहे थे।*
पाठक ऊपर उद्धृत औरङ्गजेबके इस पत्रको ध्यानपूर्वक पढ़ेंगे तो उन्हें पता लग जायगा कि औरंगजेबका शिवाजीसे

*औरङ्गजेबके पत्रमें चौथ और सरदेशमुखीका हक उस पर नहीं है। किनकेड साहबने यह अटकल लगायी है कि शायद औरङ्गजेबने इन शब्दोंका अर्थ ही न समझा होगा। शिवाजीने "मौनं सम्मति लक्षणं" कहावतके अनुसार इस विषयमें औरङ्गजेबको सम्मति प्रकट की।

सन्धि करनेमें भी कुछ मतलब था और वह मतलब यही था कि दक्षिणमें मुगल-साम्राज्यकी शक्तिका विशेष विस्तार किया जाय। औरंगजेब इस सन्धिसे शिवाजीको अपने हाथकी कठ पुतली बनाना चाहते थे, उधर शिवाजी भी मुगल-साम्राज्यकी आड़में बीजापुर-राज्यकी शक्ति घटाकर अपनी शक्ति बढ़ाना चाहते थे। अतएव यह सन्धि दोनों ओरसे मतलबसे खाली न थी। इस विचार-दृष्टिसे देखा जाय तो यह सन्धि मुगल-साम्राज्य और शिवाजी दोनोंके लिये बहुत अच्छी हुई। चौथ और सरदेशमुखीके अधिकार मिल जानेसे शिवाजीको बीजापुर राज्यमें मनमाने उपद्रव करनेका अवसर मिला। उधर औरंगजेबको भी शिवाजीसे मित्रता हो जानेके कारण बीजापुर राज्यकी शक्ति नष्ट करनेमें सुगमता हुई।

तेरहवां परिच्छेद

बीजापुरपर मुगलोंका आक्रमण

"चढ़ो है सैं, धाइ घेरो भटाकौं
धरो द्वारपे कुञ्जरें ज्यों घटाकौं।
कहां जोधने मृत्युको जीति पावैं
चलैं सङ्गमें छोडिके कीर्ति पावैं ॥"

शिवाजीसे सन्धि हो जानेके पीछे राजा जयसिंह चुपचाप नहीं बैठे। मिर्जा राजा जयसिंह उन राजाओंमेंसे न थे जो सुस्ती और आलस्यमें अपना समय बिताया करते हैं, उनके दक्षिणमें आनेका उद्देश्य शिवाजीसे सन्धि करनेके अतिरिक्त बीजापुर राज्यका दमन करना भी था। अतएव उन्होंने कुछ दिनों पीछे बीजापुर राज्यपर चढ़ाई करनेकी ठानी। जिसके कई कारण थे—सम्वत् १७१४ वि०—अगस्त सन् १६५७ ई० में मुगल-साम्राज्यकी बीजापुर-राज्यसे सन्धि हुई थी जिसमें बीजापुर दरबारने एक करोड़ रुपया मुगल-सम्राट्को क्षतिपूर्तिके लिये देनेका वचन दिया था। साथ ही परेन्दाका किला और निजामशाही कोंकण देनेका भी वादा किया था। पर शाहजहांकी बीमारीमें बीजापुर राज्यने उपर्युक्त सन्धिका पालन

नहीं किया। जब शाहजहांके चारों लड़कोंमें मुगल-साम्राज्यके तख्तके लिये युद्ध छिड़ा तब बीजापुर दरबारने सन्धिमें किये हुए वचनोंको भंग करना चाहा। औरंगज़ेबके राज्याभिषेकके समय बीजापुरके आदिलशाहने साढ़े आठ लाख रुपया नजराने का भेजा था। जनवरी सन् १६६५ ई० में आदिलशाहने सात लाख रुपया नकद और जवाहरातके ६ बक्स अपने दरबारमें रहनेवाले मुगल दूतको दिये। पर सम्पूर्ण क्षतिपूर्तिकी रकमके सामने यह कुछ गिनतीमें न थे। जब औरंगज़ेबने मिर्जा राजा जयसिंहको शिवाजीपर चढ़ाई करनेके लिये भेजा था, तब बीजापुरके आदिलशाहने भी खवासखांके अधीन एक सैन्यदल मुगलोंकी सहायताके लिये भेजा, पर जयसिंह बीजापुरके आदिलशाहसे सन्तुष्ट न हुए। उन्होंने शिवाजीसे सन्धि कर ली और औरंगज़ेबको एक पत्रमें लिखा कि बीजापुरपर विजय प्राप्त कर लेनेसे समस्त दक्षिण और कर्नाटकके विजयकी नींव पड़ जायगी। औरङ्गज़ेबकी भी जीवनमें समस्त दक्षिणको जीतनेकी प्रबल लालसा रही, इसलिये वे भी राजा जयसिंहके प्रस्तावसे सहमत हुए। अतएव संवत् १७२२ वि०—२० वीं नवम्बर सन् १६६५ ई० में शिवाजी भी अपनी दस हजार सेना जिसमें दो घुड़सवार और आठ हजार पैदल थे तथा नेताजी पालकरके साथ मुगल-सेनामें सम्मिलित हुए। उनकी पहली मुठभेड़ फालटनके बाजाजी नायक निम्बालकरसे हुई। निम्बालकर परास्त हुआ और फलटनका मार

विजेताओंके हस्तगत हुआ। निम्बालकर शिवाजीका निकटस्थ सम्बन्धो था पर वह शिवाजीसे कभी सद्भाव न रखता था, उसे बीजापुर दरबारकी मैत्रीका बड़ा अभिमान था। अतएव शिवाजीसे सदैव विरोध ठानता था। शिवाजीके मावले वीरोंने उसका तसोरा (तथावडा) का किला ले लिया, तत्तोराके मार्गमें निम्बालकरके जितने किले थे, उन सबपर विजेताओंने अपना अधिकार कर लिया।

यहां पाठकोंको फालटनके निम्बालकरका भी कुछ परिचय देना अनुचित न होगा। निम्बालकरकी बहन सायीबाई शिवाजी की स्त्री थी और शिवाजीकी लड़की साबूबाईका विवाह बाजाजी निम्बालकरके लड़के महादाजीके साथ हुआ था। खाफीखांने लिखा है कि शिवाजीकी मृत्युके पीछे जब मुगलोंने सम्भाजीको पकड़ लिया था तब महादाजी निम्बालकर और साबूबाई दोनोंको गिरफ्तार करके ग्वालियरके किलेमें रखा था। फाल्टन दफ्तरके कागजपत्रोंके आधारपर श्रीयुक्त सर० देसाईने अपनी पुस्तक—"मराठी रियासत"के पृष्ठ ४६० में और "इतिहास-संग्रह"के आठवें भागमें लिखा है कि "कुछ पारिवारिक झगड़ोंके कारण बाजाजी कैद करके आदिलशाही दरबारमें पहुंचाया गया और वहां बलपूर्वक मुसलमान कर लिया गया और सन् १६५७ ई० में शिवाजीकी माता जीजाबाईके अनुरोधसे शिघनापुरके मन्दिरमें उसका प्रायश्चित्त करके वह पुनः हिन्दू कर लिया गया। अन्य लोगोंके हृदयमेंसे यह

सन्देह निवृत्तिके लिये कि हिन्दू उसे अपनायेंगे या नहीं, जीजा बाईने अपनी पोती अर्थात् शिवाजीकी लड़कीका विवाह बाजाजी निम्बालकरके पुत्र महादाजीके साथ कर दिया।" सर देसाई महोदयने इस विषयपर कुछ नहीं लिखा है कि बीजापुर राज्यसे इतना सताये जानेपर और शिवाजीकी ओरसे इतना अच्छा व्यवहार किये जानेपर भी निम्बालकरने बीजापुर राज्यका साथ क्यों दिया। हमारी समझमें या तो निम्बालकर मुगलोंके युद्धके पीछे मुसलमानसे हिन्दू हुआ होगा या यह शुद्धिकी बात ही अशुद्ध है। क्योंकि एक बार मुसलमान होकर फिर हिन्दू होनेपर आदिलशाह कभी उसको प्राण-दण्ड दिये बिना न रहता और न निम्बालकर ही एक बार आदिलशाहसे इस प्रकारके अपमान और व्यवहारको सहन करके फिर आदिलशाह के यहां आता और फिर शिवाजीसे विरोध ठानता। हो सकता है कि निम्बालकरकी शुद्धि सन १६५७ ई० में न होकर सन् १६६७ ई० में हुई हो—क्योंकि जैसा ऊपर पाठक पढ़ चुके हैं कि मिर्ज़ा राजा जयसिंहके अधीन शिवाजीने मुगलोंकी ओरसे सन् १६६५ ई० में बीजापुर राज्यसे युद्ध किया और इसी युद्धमें फाल्टनके निम्बालकरका पतन हुआ जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है। अस्तु, जो कुछ हो हम ऐतिहासिक उलझनोंमें विशेष न उलझकर हम अपने मुख्य विषयकी ओर आते हैं।

जब आदिलशाह दूसरेने फाल्टन-पतनके समाचार सुने तो उन्होंने चाहा कि किसी प्रकारसे यह तूफान शान्त हो

आय। उन्होंने मुगल सम्राट् औरङ्गजेबकी सब मांगोंको पूरी करनेके वादे किये। पर जयसिंह और दिलेरखां बीजापुर राज्यके किलोंपर अधिकार करते ही चले गये।

अन्तमें २४ वीं दिसम्बरको बीजापुरी और मुगल सेनाकी मुठभेड़ हुई। बीजापुरके प्रसिद्ध सेनापति शारजाखां और खवासखांके अधीन बीजापुरी सेना थी। कुछ मराठे-सरदार बीजापुरी सेनाकी ओर भी थे जिनमें कल्याणके यादवराव घोर पांडे और शिवाजीके विमातृज भाई व्यङ्कोजी थे। इस युद्धमें शिवाजीने अत्यन्त वीरता प्रकट की। मुगल-सैन्य-संचालनका भार नेताजी पालकरपर था। बीजापुरी सेना परास्त हुई। जयसिंह और शिवाजी बीजापुरके किलेसे सिर्फ दस मीलकी दूरीतक पहुंच गये। इस युद्धमें एक बार मुगल सेनाके कई उच्च कर्मचारी शिवाजीसे बिगड़ गये, वे लोग चाहते थे कि राजा जयसिंह शिवाजीको कैद कर लें अथवा उनको मरवा डालें, पर उन्होंने ऐसा नहीं किया। मुगल सेनाके कुछ अफसरोंको वहम हो गया कि शिवाजी भीतर ही भीतर बीजापुरसे मिले हुए हैं, इसलिये उन्होंने शिवाजीको कैद करने अथवा मार डालनेकी सलाह दी, पर जयसिंहने उन लोगोंकी सलाह नहीं मानी क्योंकि वे अपनी आंखोंसे शिवाजीकी वीरता देख चुके थे। अतएव जयसिंहने मुगल-सेनाके अफसरोंको शान्त करनेके लिये उनको पन्हाला दुर्ग घेरनेके लिये भेजा। क्योंकि पन्हाला उस समय बीजापुर दरबारके हाथमें था। शिवाजी और उनके

साथियोंने पन्हाला दुर्गके लेनेके लिये बहुत चेष्टा की, पन्हाला दुर्गमें स्थित बीजापुरी सेना और शिवाजीका बड़ा भारी युद्ध हुआ, शिवाजीके अनेक वीर मृतलशायी हुए। पर पन्हाला दुर्ग पर विजय प्राप्त नहीं हुई। विजय प्राप्त न होनेका एक कारण यह भी प्रतीत होता है कि शिवाजीके साथी नेताजी पालकर किसी कारण नाराज होकर बीजापुरी सेनाकी ओर चले गये थे। महाराष्ट्र लोग नेताजीको दूसरा शिवाजी समझते थे। बीजापुर राज्यने नेताजीको चार लाख हुण दिये थे, वे चार लाख हुणका लोभ संवरण नहीं कर सके और बीजापुर सरकारसे मिल गये, उन्होंने अत्यन्त वीरतासे मुगलोंके स्थानपर आक्रमण किया। दूरदर्शी जयसिंहने नेताजी पालकरको कई प्रकारके प्रलोभन दिये, उन्हें मुगल-दरबारमें पांच हजारका मनसब देनेका लालच दिया, उन्हें एक जागीर और अड़तीस हजार रुपये देनेका भी लोभ दिया, पर वे न आये। कोई कोई इतिहास-लेखक यह भी लिखते हैं कि नेताजी पालकर जयसिंहकी ओर आ गये थे। प्रसिद्ध मुसलमान इतिहासवेत्ता खाफीखांने लिखा है कि शिवाजीके आगरेसे मुगलोंकी कैदसे छूटनेपर, जयसिंहने सम्राट् औरङ्गजेबकी आज्ञासे नेताजी पालकरको उनके पुत्र सहित पकड़ कर औरंगजेबके पास आगरे भेज दिया। किसी किसी ने इसके विपरीत यह लिखा है कि सन् १६६६ ई० में अक्टूबर मासमें घाटमें मुगल सेनाने उन्हें पकड़ लिया और उनके हाथोंमें हथकड़ी और पैरोंमें बेड़ी डालकर दिल्ली भेज दिया।

सम्राट् औरंगजेबने नेताजी पालकरसे कहा —"अगर तुम इस्लाम मजहब कबूल कर लो तो तुम्हारी जिन्दगी बख्शी जा सकती है।" लाचार होकर सन् १६६७ ई० के फरवरी मासमें नेताजीने अपने प्राण जानेके भयसे इस्लाम मजहब कबूल कर लिया। मुसलमान हो जानेपर नेताजी पालकरका नाम कुली खां रखा गया। पीछे नेताजी पालकरको अफगानिस्तान भेज दिया गया। लगभग दस वर्षतक नेताजी पालकर मुसलमान होकर औरंगजेबके यहां रहे थे। दस वर्ष पीछे सन् १६७६ ई०के जून मासमें वे किसी प्रकारसे औरंगजेबके यहांसे भाग कर महाराष्ट्रमें शिवाजीके पास पहुंचे। शिवाजीने नेताजीका प्रायश्चित्त और शुद्धि कराके, फिर हिन्दू कर लिया और अपने यहां उन्हें फिरसे सेनामें उच्च पद दिया। जो कुछ हो, संवत् १७२३ वि०—जनवरी सन् १६६६ ई० में जयसिंह नेताजीके पराक्रमको देखकर बहुत ही भयभीत हुए, वे सोचने लगे कि यदि शिवाजी ने भी नेताजीका अनुकरण किया तो शत्रुओंकी शक्ति बहुत बढ़ जायगी और फिर मुगल सेनाको और भी कठिनाईसे सामना करना पड़ेगा। उन्होंने सम्राट् औरंगजेबको लिखा कि "अब आदिलशाह और कुतुबशाह दोनों मिल गये हैं, इसलिये यह आवश्यक है कि हर तरहसे शिवाजीका दिल जीत लिया जाय। यह अच्छा होगा कि उन्हें उत्तर भारतमें भेज दिया जाय और वे जहांपनाहसे मुलाकात करें।" बादशाह औरंगजेब मिर्जा राजा जयसिंहके इस प्रस्तावसे सहमत हुए। उन्होंने जयसिंह

का कथन स्वीकार कर लिया। अब जयसिंह शिवाजीसे मुगल दरबारमें आनेके लिये अनुरोध करने लगे। स्वतन्त्रताके उपासक स्वराज्यके संस्थापक, महाराष्ट्र केसरी शिवाजी जयसिंहके प्रस्तावसे कैसे सहमत हुए, सो आगे पढ़िये।

चौदहवां परिच्छेद

मुगलोंकी कैद और छुटकारा

"प्रत्यासन्नेऽपि मरणे रक्षोपायो विधीयते
उपाय सफले रक्षा भवत्येव न संशय ।"*

"आओ! इस दुर्लभ्य, अङ्कमें आदर पाओ!
मातृ लाड़ले, मां की दरशन तृषा बुझाओ।
मातृ-प्रेम-रस तृषित हृदयको अमृत पिलाओ।
बिछुड़े प्यारे बन्धु जनोंसे मिलो, मिलाओ॥
लाल! लाल मम! कह स्मित लाड़ तुम्हारा मां करें।
एक बार फिर देशके हृदय प्रेम-रससे भरें॥"

पाठक भूले न होंगे कि पुरन्दर दुर्गके पतनपर शिवाजीने जयसिंहसे सन्धि करते समय स्पष्ट कह दिया था कि मैं मुगल दरबारमें उपस्थित नहीं होऊंगा और न मैं कोई मनसब (पद) ग्रहण करूंगा। शिवाजीका जयसिंहसे इस प्रकार स्पष्ट कहनेका यही कारण प्रतीत होता है कि वे स्वतन्त्रताके वायु मण्डलमें पले थे। उन्होंने बालकपनसे ही किसी नरेशके आगे

---

* मृत्यु निकट होनेपर भी रक्षाका उपाय किया जाता है। उपायके सफल होनेपर रक्षा होती है, इसमें सन्देह नहीं।

सिर नहीं झुकाया था। न उन्होंने किसीके अधीन अपनी इतनी उन्नति की थी, उन्होंने स्वतन्त्रतापूर्वक अपना राज्य स्थापित किया था। अतएव शिवाजीको मुगल-दरबारमें आनेके लिये राजी करना कुछ हंसी खेल न था। सबसे बढ़कर बात यह थी कि शिवाजी और अन्य मराठे, मुगल-सम्राट् औरङ्गजेब का विश्वास नहीं करते थे, क्योंकि वे अपनी आंखोंसे देख चुके थे कि औरङ्गजेबने अपने बाप और भाइयोंके साथतक कैसी ही धूर्तता और विश्वासघातका परिचय दिया था। परन्तु जयसिंह चाहते थे कि किसी न किसी प्रकारसे शिवाजी एक बार मुगल-दरबारमें अवश्य पहुंचें। उन्होंने शिवाजीको मुगल दरबारमें आनेके लिये अनेक प्रकारकी उन्नतिका स्वप्न दिखलाया। साथ ही जयसिंहने शिवाजीसे यह प्रतिज्ञा की कि "जबतक आप दक्षिण न लौटेंगे, तबतक मैं दक्षिणमें ही रहूंगा और यह देखता-भालता रहूंगा कि आपके पीछेसे मुगल-सेना, आपके किलोंपर आक्रमण न करे और न आपके राज्यमें उत्पात मचाये।" मराठा इतिहास (बखर) लेखक लिखते हैं कि जयसिंहने शिवाजीसे कहा था कि दक्षिणमें मुगल-साम्राज्यका जितना भाग है, उसके आप सूबेदार कर दिये जायंगे। किन्तु फारसीकी पुस्तकोंमें इस प्रकारकी बातोंका कहीं भी वर्णन नहीं मिलता है।

सम्भव है कि शिवाजीने औरङ्गजेबके पास जानेमें एक बात यह भी सोची हो कि स्वयं सम्राट्से मिलनेसे दक्षिणमें उनकी

स्वराज्य-स्थापनकी लालसा किसी अंशमें पूर्ण हो जाय। क्यों कि उन्होंने सम्राट् औरङ्गजेबसे प्रार्थना की थी कि आप सिद्दीको आज्ञा प्रदान कर दीजिये कि वह जञ्जीरा मुझे दे दें। यह पहले लिखा जा चुका है कि बादशाह औरङ्गजेबकी शिवाजीसे जो सन्धिकी शर्तें हुई थीं, उनकी स्वीकृतिका बादशाह औरङ्गजेबने जो पत्र भेजा था, उसमें चौथ और सरदेशमुखीका कुछ उल्लेख न था। शिवाजीने समझा होगा कि बादशाहसे मिलनेपर बीजापुर-राज्यसे चौथ उगाहनेकी भी स्वीकृति हो जायगी—तात्पर्य्य यह है कि ऐसी कितनी ही बातें थीं कि जिनसे शिवाजीने समझा होगा कि बादशाहसे भेंट करनेका परिणाम अच्छा ही होगा।

जयसिंहके विशेष अनुरोधसे शिवाजी मुगल-दरबारमें आनेके लिये प्रस्तुत हुए। मिर्ज़ा राजा जयसिंहने धर्म-पूर्वक शपथ ग्रहण की कि मुगल-दरबारमें उनका बाल बांका नहीं होगा। इसकी ग्यारन्टीके लिये उनके पुत्र कुमार रामसिंहने जो दरबारमें आम्बेर-राज्यकी ओरसे वकील थे, शपथ ग्रहण करते हुए शिवाजीसे कहा कि "राजधानीमें आप जितने दिन ठहरेंगे उतने दिनतक हम आपकी सब प्रकारसे रक्षा करेंगे।" शिवाजीने अपने मंत्रियोंसे इस विषयमें परामर्श किया तो उनमेंसे भी अधिक सम्मति मुगल-दरबारमें आनेके पक्षमें ही थी।

शिवाजी बिना भवानीका ध्यान किये, कोई काम नहीं करते थे, उन्होंने इस अवसरपर भी भवानीका ध्यान किया। ध्याना

चस्थामें भी उन्हें मुगल-दरबारमें आनेमें कोई हानि प्रतीत नहीं हुई। उनके गुरु समर्थ रामदास स्वामीने भी उन्हें मुगल-राजधानीमें जानेका परामर्श दिया। अन्तमें उन्होंने औरङ्गजेबके पास जाना निश्चय कर लिया। औरङ्गजेबके यहां जानेका निश्चय करके उन्होंने अपनी अनुपस्थितिमें किस प्रकारसे राज्य-कार्य चलें, इसका प्रबन्ध किया। उन्होंने यहांतक प्रबन्ध किया कि यदि वे औरङ्गजेबके यहां मारे जायं अथवा कैद किये जायं तो भी किसी प्रकारसे उनके राज्य कार्यमें कुछ गड़बड़ न हो। जिस प्रकारसे उनके मुगल-दरबारमें आनेसे पहले राज्य कार्य चल रहा था, वैसे ही उनके पीछे भी चलता रहे। शिवाजीकी दूरदर्शिता और संगठन शक्तिका इस प्रबन्धमें अच्छा परिचय मिलता है। उन्होंने अपने राज्यके प्रत्येक प्रान्तके मुखियाको यह स्वतन्त्रता प्रदान की कि यदि उनकी अनुपस्थितिमें कुछ संकट उपस्थित हो अथवा अन्य किसी प्रकारकी आवश्यकता पड़े तो वे स्वयं अपनी आवश्यकता और विचारके अनुसार काम करें। इसके अतिरिक्त उन्होंने अपनी माता जीजाबाईको राज-प्रतिपालिका नियुक्त किया और देश प्रान्तका शासन उनके अधीन रखा। कोकण प्रान्तके शासनका भार मोरोपन्त पेशवा, नीलाजी सोनदेव मजुमदार और आणाजी दत्तोपर सौंपा। समस्त किले दारोंको आज्ञा दी गयी कि वे रात दिन किलोंकी देख-भाल करते रहें और जो नियम स्थिर कर दिये गये हैं उनका पालन करें। सैनिक कर्मचारियोंके अतिरिक्त नागरिक (सिविल अर्थात्

मुल्की) कर्मचारियोंको भी यह आज्ञा दी गयी कि वे पहलेके सब नियमोंका अच्छी तरहसे पालन करें। × × ×, उनकी माता जीजाबाईके आज्ञानुसार कार्य करें और राजाराम (शिवाजीके दूसरे पुत्र) के नामसे शासनका कार्य करें। प्रतापराव तथा अपने अन्य कई साथियोंपर उन्होंने अपनी माता जीजाबाई तथा अपने पुत्र राजारामकी रक्षाका भार सौंपा।

चलनेसे पहले शिवाजीने अपने समस्त राज्यमें दौरा किया और प्रत्येक किलेदारको यह परामर्श दिया कि "जिस प्रकारसे पहले मैं काम करता रहा हूं, उसी प्रकारसे तुम लोग भी करना।"

इस दौरा करनेमें उनका एक उद्देश्य यह भी था कि उनकी आज्ञाके अनुसार राज्यका प्रबन्ध ठीक है या नहीं, इसका पता लग जाय। एक रातको वे अपने एक किलेके फाटकके पास अचानक पहुंच गये और किलेमें जो सेना थी उसके अध्यक्षको कहलाया कि शिवाजी अपने एक शत्रुसे लड़ते हुए भाग कर आये हैं, इसलिये उन्होंने किलेका दरवाजा खोलनेकी आज्ञा दी है। परन्तु दुर्गाध्यक्षने किलेका फाटक नहीं खोला और कहा कि "शिवाजीकी सख्त आज्ञा है कि चाहे जैसी परि-स्थिति क्यों न हो, पर किलेका दरवाजा रातको न खोला जाय। और यदि शत्रु समीप आ गया है तो वे किलेके पास खाईमें रहें और जो भगोड़ा सैन्यदल है उसको किलेके परकोटेके पास रखें।" शिवाजीने किलेके अध्यक्षके इस कथनका प्रतिवाद

किया और कहा कि "मैंने ही प्रबन्धके नियम स्थिर किये हैं और अब मैं ही किले खोलनेकी आज्ञा प्रदान करता हूं अगर दुर्गाध्यक्ष इस समय मेरी आज्ञा न मानेगा तो उसका आज्ञाभङ्ग करना अच्छा न होगा। एक राजभक्त सैनिकके लिए इससे बढ़कर और कोई अच्छी बात नहीं हो सकती है कि वह साधारण नियमोंकी परवा न करके उसे जो तत्काल आज्ञा दी जाय उसका पालन करे।" किलेके अध्यक्षने शिवाजीकी धमकीकी कुछ परवा नहीं की और कहा कि "अब रात समाप्त होनेवाली है, दिन निकलनेको है। शत्रुका पीछा करके उसे भगाया जा सकता है। शिवाजीका दल किलेके बाहर सूर्योदय न होने तक ठहर सकता है।" जब प्रातःकाल हुआ तब दुर्गाध्यक्ष और किलेके दूसरे कर्मचारी शिवाजीके सामने आये और हाथ जोड़कर प्रार्थना की कि "हमलोग अवश्य अपराधी हैं, हम लोगोंने श्रीमानकी आज्ञा उल्लङ्घन की है, अब आप जो कुछ उचित समझें हमें दण्ड दीजिये।" शिवाजी अपने कर्मचारियोंके इस कार्यसे अप्रसन्न नहीं हुए। उन्हें अपने प्रबन्ध और आज्ञाका इस प्रकार पालन होते देखकर अत्यन्त हर्ष हुआ और अपने कर्मचारियोंकी और भी उन्नति की तथा सब किलेदारोंको इसी प्रकारसे कार्य करनेका आदेश देकर वे सं० १७३३ वि० सन १६७६ ई० के मार्च मासमें राजगढ़से उत्तर भारतके लिये रवाना हुए। उन्होंने अपने साथ बड़े मदद समभाजी, सात विश्वासपात्र उच्च कर्मचारी, रघुनाथनारायण

कावतोजी गुर्जर, यासाजी फङ्क, त्र्यम्बक पन्त, हीराजी फर्जन्द, बालाजी आवाजी और तानाजी मोलसरेको लिया। इसके अतिरिक्त एक हजार पैदल और तीन हजार घुड़सवार भी अपने साथ लिये। मुगल-साम्राज्यकी ओरसे उनके खर्चके लिये एक लाख रुपया दक्षिणके खजानेसे दिया गया और जयसिंहकी सेनामेंसे एक अफसर गाजीबेग भी शिवाजीके पास मार्ग प्रदर्शकका काम करनेके लिये भेजा गया।

दक्षिणसे चलनेके पहले फिर एक बार शिवाजी मिर्जा राजा जयसिंहसे मिले। मार्गमें उन्हें औरङ्गजेबका एक और पत्र मिला, जिसे ५ वीं एप्रिलको आगरेसे औरङ्गजेबने शिवाजीके पास भेजा था। इस पत्रमें लिखा था कि "आपकी चिट्ठी मिली जिससे ज्ञात हुआ कि आप मेरे दरबारमें आनेके लिये रवाना हो चुके हैं। शान्ति और धैर्य धारण करके जल्दी आइये। मुझसे मिलनेके पीछे आपको शीघ्र ही दक्षिण लौटनेकी आज्ञा मिल जायगी। मैं आपके लिये एक खिलअत भेजता हूं।"

इस समय शिवाजीका अच्छा नाम हो गया था, विशेषतः दक्षिणमें उनकी खूब प्रसिद्धि हो चुकी थी। जिस समय वे औरङ्गाबाद पहुँचे, उस समय उनकी ख्याति सुनकर बहुतसे आदमी उनको देखनेके लिये इकट्ठे हुए। आगरे आते समय प्रत्येक ताल्लुक और जिलामें मुगल-साम्राज्यकी ओरसे शिवाजीका सम्मान और स्वागत किया गया। प्रत्येक ताल्लुक और जिलेके हाकिमोंने उनके प्रति सम्मान प्रदर्शन किया।

औरङ्गाबादके शासक साफ शिकनखाँने समझा कि शिवाजी एक मराठा और जमीन्दार हैं। अपनी इस धारणाके कारण औरङ्गाबादका शासक शिवाजीकी अभ्यर्थना करनेके लिये शहर दरवाजेतक नहीं आया और अपने भतीजेको उनका स्वागत करनेके लिये भेजा। शिवाजीको यह बात बहुत बुरी लगी। वे औरङ्गाबादके शासकसे न मिलकर सीधे अपने ठहरनेके स्थानमें चले गये। इसपर उक्त शासकके आदमियोंने शिवाजीसे कहा कि महलकारी (ताल्लुकेका हाकिम अथवा शासक) आपसे मिलनेके लिये कचहरीमें इन्तजार कर रहे हैं। शिवाजीने उत्तर दिया कि "यदि साफ शिकनखाँ, मुझसे मिलना चाहते तो वे मेरी अभ्यर्थनाके लिये अवश्य आते।" जब औरङ्गाबादके महलकारी (शासक) ने यह बात सुनी तब वह स्वयं और दूसरे मुगल-राजकर्मचारियोंके साथ शिवाजीसे मिलने आया और उनसे अपने इस आचरणके लिये क्षमा मांगी। उसने तथा औरङ्गाबादके दूसरे मुगल-राजकर्मचारियोंने शिवाजीको दावत दी। दूसरे दिन शिवाजीने मुगल राजकर्मचारियोंसे भेंट की और कुछ दिन औरङ्गाबादमें रहकर वे औरङ्गजेबसे मिलनेके लिये चल दिये। मार्गमें मुगल मुख्य स्थानोंपर मुगल कर्मचारियोंने बादशाह औरङ्गजेबके आज्ञानुसार उनका स्वागत किया।

९ वीं मईको शिवाजी आगरे शहरकी सीमापर पहुंचे,* वहां

* [illegible]

शिवाजीने रामसिंह द्वारा अपने आनेका समाचार औरङ्गज़ेबको भेजा। जहां शिवाजी ठहरे हुए थे, वहां रामसिंह लौटकर आये। उन्होंने उनसे कहा कि "बादशाह सलामत दरबारमें हैं और उन्होंने आपको भी दरबारमें चलनेके लिये हुक्म दिया है, वहीं दरबारमें ही उनसे भेंट होगी।" दक्षिणसे आगरेको चलते समय जयसिंहने शिवाजीको यह विश्वास दिलाया था कि उनके स्वागत के लिये बादशाहके यहांसे कोई उच्च राजकर्मचारी आवेगा। परन्तु वहां ऐसा न हुआ, मुखलिसखां नामक निम्न श्रेणीका एक कर्मचारी शिवाजीकी अगवानीके लिये रामसिंहके साथ आया। शिवाजीने कुछ नहीं कहा और अपने साथियों सहित वे रामसिंहके साथ चल दिये और आगरेमें जो स्थान, मुगल दरबारकी ओरसे उनके ठहरनेके लिये नियत किया गया था, उसमें वे अपने साथियों सहित ठहरे। उन्होंने रामसिंहसे शीघ्र ही बादशाहसे भेंट करानेके लिये कहा और साथ ही यह अनुरोध किया

एल्फिन्स्टन आदि लेखकोंने लिखा है कि शिवाजीकी औरङ्गजेबसे दिल्लीमें भेंट हुई थी किन्तु फारसीके इतिहास-लेखक खाफीखांने लिखा है कि शिवाजी और औरङ्गजेबकी भेंट आगरेमें हुई थी। हिन्दू भाषाग्रन्थोंमें भी शिवाजीकी औरङ्गजेबसे भेंट होनेका स्थान आगरा ही लिखा है।—प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता प्रोफेसर यदुनाथ सरकार तथा किनकेड साहब और पारसनीसने भी खाफीखांके इस मतका समर्थन किया है कि आगरेमें ही शिवाजीकी औरङ्गजेबसे भेंट हुई। ऐसा प्रतीत होता है कि जनवरी सन् १६६६ ई० में शाहजहांकी मृत्यु होनेके पीछे औरङ्गजेब आगरे चले आये होंगे। सम्भवतः शिवाजी दिल्लीके लिये रवाने हुए होंगे, क्योंकि उस समय बादशाह दिल्लीमें थे पर पीछे दिल्ली न जाकर आगरेमें ही औरङ्गजेबसे मिले होंगे; क्योंकि शिवाजीके उत्तर भारतमें पहुंचनेके समय बादशाह औरङ्गजेब आगरेमें रहे होंगे।

कि "मेरी बादशाहसे भेंट समानताके रूपमें, जैसे बादशाह बादशाहसे करते हैं, वैसी होनी चाहिये।" इसपर रामसिंहने कहा कि औरङ्गजेब जैसे तोहग समायके बादशाहसे समानताके रूपमें भेंट होना असम्भव है। वे एक छोटे राज्यके स्वामी और राजासे बराबरीकी हैसियतसे भेंट करना कदापि स्वीकार नहीं करेंगे और उनसे ऐसी प्रार्थना करना बड़ी गुस्ताखी समझी जायगी।

वास्तवमें बादशाह औरङ्गजेब बराबरीकी हैसियतसे ही इनकी अभ्यर्थना करना चाहते थे। पर पीछेसे उन्होंने अपना विचार बदल दिया। बर्नियरने अपने सफरनामे (यात्रा विवरण) में लिखा है कि शाही जनानेमेंसे कुछ स्त्रियोंने औरङ्गजेबको भड़का दिया जिससे पुरानी विद्वेषाग्नि प्रज्वलित हो गयी। उन दिनों शाइस्ताखांकी स्त्री आगरेमें ही थी, उसने औरङ्गजेबके जनानेकी बेगमोंमें घृणाका यह भाव फैलाया कि "जिस शिवाजीने मेरे बेटेको मार डाला और मेरे पतिको शत्रु किया, अब वह शिवाजी यहीं है, उसके साथ शाही मेहमानोंकासा बर्ताव न करके मरवा डालना चाहिये।" शाही जनानेमें ऐसी चर्चा होनेसे औरङ्गजेबके हृदयका भाव भी बदल गया। वे भी शाही जनानेकी औरतोंके उपर्युक्त प्रस्तावसे सहमत हो गये। पर मुगल-दरबारके उमरावोंको यह प्रस्ताव पसन्द नहीं आया, उन्होंने जमाअतानेरे प्रस्तावके प्रति घृणा प्रकट करते हुए कहा कि "इस प्रकारके कार्य्य करनेसे साम्राज्यकी प्रतिष्ठामें बट्टा लग

जायगा। हमारी प्रतिष्ठा भी शाही प्रतिष्ठा और मान पर ही निर्भर है। इस विश्वासघातका परिणाम यह होगा कि मिर्जा राजा जयसिंह और दूसरे राजपूत खुल्लमखुला बगावत कर बैठेंगे।" उमरावोंके इस प्रकार प्रतिवाद करनेसे औरङ्गजेबने अपना विचार बदल दिया।

आगरा पहुँचनेपर संवत् १७२३ वि०—१२वीं मई सन् १६६६ ई० को औरङ्गजेबसे भेंट करनेका दिन नियत हुआ। उस दिन सम्राट् औरङ्गजेबकी पचासवीं जन्मगाँठ थी। उस दिन आगरेके दीवाने आमकी खूब सजावट हुई। सम्राट् औरङ्गजेब सज धज और शान शौकतको बिलकुल पसन्द नहीं करते थे। वे सर्व साधारण भेषमें रहते थे। परन्तु उस दिन सादगीपसन्द सम्राट् औरङ्गजेबकी सादगी, आंखोंमें चकाचौंध पैदा करने वाली सजावटमें बदल गयी।

स्वयं सम्राट् औरङ्गजेब बड़े बड़े अमूल्य मोती तथा अप्राप्य मणियोंके आभूषण धारण करके अपने पिता शाहजहांके मयूर सिंहासनपर बैठे, उस दिन मुगल-दरबारके समस्त दरबारी आंखोंमें चकाचौंध पैदा करनेवाली पोशाक पहनकर आये। सोने और चांदीका ढेर लगा हुआ था जो बादशाहके साथ सम्म दिवसकी प्रसन्नतामें तौलकर खैरातमें गरीबोंको बांटा जाता था। मुगल साम्राज्यके अमीर उमराव अपने सैकड़ों, हजारों साथियोंके साथ दीवाने-आममें आये, जो कतार बांधकर दरबारमें तीनों ओर खड़े हुए। दरबारियोंके लिये तीन

श्रेणियाँ रखी गयीं, जिनमेंसे पहली श्रेणीमें सुनहला फर्श, दूसरेमें रूपहला फर्श तथा तीसरेमें संगमर्मरका फर्श था। दरबारमें चिकोंके पीछे शाही जनानेकी स्त्रियोंके बैठनेका भी प्रबन्ध किया गया क्योंकि शाही जनानेकी महिलायें भी शिवाजीको देखनेके लिये बड़ी उत्सुक थीं।

“दीवाने आम” में छत्रपति महाराज शिवाजी कुँवर रामसिंहके साथ अपने ज्येष्ठ पुत्र सम्भाजी और दस सरदारोंको लेकर पधारे। शिवाजीकी ओरसे डेढ़ हजार अशर्फी बादशाहको “नज़र” (भेंट) की गयी और छः हजार रुपये निसार (न्योछावर) के लिये दिये गये। औरङ्गजेब शिवाजीको देखते ही चिल्ला उठे कि “आओ, शिवाजी राजा!” शिवाजी तख्तके पायदान तक गये और तीन सलाम * किये। औरङ्गजेबने इनसे साधारणतया कुशल-क्षेम पूछकर फिर इन्हें तीसरी श्रेणीमें बैठानेका इशारा किया जो पंचहजारी “मनसब” के मनुष्योंके

* खाफीखाँ और फारसीके इतिहास-लेखकोंने लिखा है कि शिवाजीने औरङ्गजेबको तीन बार सलाम किया परन्तु [illegible] लिखता है कि शिवाजीने सलाम नहीं किया। [illegible] लिखता है कि शिवाजीने [illegible]

लिये थी। शिवाजीने रामसिंहसे पूछा कि यह कौनसी श्रेणीके सरदारोंका स्थान है। रामसिंहने उत्तर दिया कि पंचहजारी मनसबका स्थान है। यह सुनते ही वे इस अपमानको सहन नहीं कर सके, उन्हें मुगल दरबारमें इस प्रकारके बर्तावकी आशा न थी। मिर्जा राजा जयसिंहने उन्हें अनेक आशायें दिलाई थीं। पंचहजारी मनसब उनके लड़के सम्भाजीको पुरन्दरकी सन्धिके नियमके अनुसार पहले ही मिल चुका था, उनके अधी नस्थ नेताजीको पांच हजारका मनसब मिला था, अतएव अपनेको पंचहजारी मनसबवालोंके बीचमें देखकर शिवाजीके क्रोधका ठिकाना न रहा। वे दरबारमें खड़े न रहकर बैठ गये जो दरबारके नियमके बिलकुल विपरीत था। उन्होंने भरे दर बारमें अत्यन्त उत्तेजित शब्दोंमें औरङ्गजेबके विश्वासघातकी घोर निन्दा की। इस प्रकार अपमान सहनकर जीवित रहनेकी अपेक्षा उन्होंने आत्मघात करना चाहा। शिवाजीको ऐसा उत्तेजित और क्रोधित देखकर कुँवर रामसिंह डर गये, क्योंकि उनका इस प्रकार चिल्लाना और भावभङ्गी प्रकट करना दरबारके नियम और सभ्यताके विपरीत था।

शिवाजीके क्रोधित और उत्तेजित होनेवाली घटनाका भिन्न भिन्न इतिहास लेखकोंने भिन्न भिन्न प्रकारसे वर्णन किया है, जिससे मालूम होता है कि शिवाजी बिना हथियारके औरङ्गजेबके दरबारमें गये थे, क्योंकि सभासद और चिटनीस आदि मराठा बखरके लेखकोंने लिखा है कि शिवाजीके आगेकी कतारमें

जोधपुर नरेश महाराज जसवन्तसिंह खड़े हुए थे। उन्होंने पूछा कि यह कौन है? कुँवर रामसिंहने कहा कि यह जसवन्तसिंह हैं? इसपर शिवाजी बिगड़ गये और कहा कि जिस जसवन्त सिंहको मेरे सिपाही लड़ाईके मैदानमें भगा चुके हैं वही मेरे सामने खड़ा हुआ है। यह कहकर उन्होंने रामसिंहसे जसवन्त सिंहको मारनेके लिये कटारी मांगी, परन्तु इसके विपरीत "विश्वास" तवारीख और "बुन्देला-मेम्वायर्स" में लिखा हुआ है कि "उदयपुरके भीमसिंहका लड़का, रामसिंह सिसौदिया था। पुरन्दरके किलेके घेरेमें वीरता प्रकट करनेके कारण उसे पंचहजारीका मनसब दिया गया था।" यही ठीक प्रतीत होता है, क्योंकि जसवन्तसिंह सतहजारी और शिवाजी के मित्र थे। "बुन्देला मेम्वायर्स" में यह भी लिखा हुआ है कि शिवाजी इस अपमानके कारण मूर्च्छित हो गये थे और जब गुसलखानेमें उन्हें ले जाकर उनपर गुलाबजल छिड़का गया तब उन्हें होश हुआ। "बुन्देला-मेम्वायर्स" के रचयिताने यह भी लिखा है कि "शिवाजी मुगल-दरबारकी शान शौकत देखकर डर गये और उनके होश हवास जाते रहे।" जब होश, हवास दुरुस्त हुए तब वे अपने प्रवास-स्थानपर पहुँचाये गये। वहां वे फिर मूर्च्छित हो गये। होश हवास ठीक न रहनेके कारण उन्होंने कहा कि मैं कितना मूर्ख हूँ, स्वयं गिरफ्तार करनेको आ गया हूं। उस (बादशाह) ने मुझे मरवा क्यों न डाला?" १

आर्मी (Orme) ने लिखा है कि शिवाजीने सम्राटकी खुश

निन्दा की और कहा कि "शाइस्ताखांके मामले और सूरतकी लूटने मुझे यह शिक्षा प्रदान कर दी है कि मैं कौन हूं।" यह कहकर उन्होंने अपने पेटमें घुसेड़नेके लिये कटार निकाली, पर उनके पास खड़े हुए आदमियोंने उन्हें आत्मघात करनेसे रोक दिया। सम्राट्ने शिवाजीको आश्वासन दिया कि "आपको डरनेकी कोई बात नहीं है" और उनसे शाही सेनामें रहनेके लिये जोर देते हुए कन्धारको मुगल-सेनामें सम्मिलित होनेके लिये कहा। किसी किसी इतिहास-लेखकने यह भी लिखा है कि औरङ्गजेबने शिवाजीसे यह भी कहा था कि दक्षिणमें उनकी जो जागीरें हैं, वे उस जागीरको अपने बेटेके अधीन रख सकते हैं और दक्षिणकी जागीरके अतिरिक्त उत्तर भारतमें उन्हें एक लाख रुपये वार्षिक आयकी जागीर और दी जायेगी और वे अपनी सेना और मुगल-सेनाके पचास हजार सैन्यदल—दोनोंके सम्मिलित हो जानेपर एक लाख सैन्यदलके अध्यक्ष रह सकेंगे।

भूषण कविने इस घटनाका जो वर्णन किया है वह भी सुनने लायक है। उसका भावार्थ यह है कि दरबारके दिन औरङ्गजेब अपने सिंहासनपर ऐसे बैठे हुए थे कि इन्द्र भी आता तो उनकी प्रजाके समान प्रतीत होता। किन्तु यह दृश्य शिवाजीके दिलको दहला नहीं सका उन्होंने बादशाहको सलाम नहीं किया। उन्होंने बादशाहके यहां की बनावटी शान शौकत और सेनाको घृणाकी दृष्टिसे देखा। उन्हें पंजहजारी मनसबमें खड़ा किया गया था। यदि रामसिंहकी कमरमेंसे तलवार उनके

हाथ लग जाती और औरङ्गजेब गुसलखानेमें छिपकर अपने प्राण न बचाते तो वे अवश्य ही औरङ्गजेबको कत्ल कर डालते। गुसलखानेका वर्णन भूषणने अपने ग्रन्थमें कई स्थानोंपर किया है, जिससे यह घटना सत्य प्रतीत होती है। इस घटनाके सम्बन्धमें भूषणके निम्नलिखित कवित्त पढ़ने योग्य हैं —

"पचहजारिन बाच खडा किया,
मैं उसका कुछ भेद न पाया।
भूषन कवि यों कहि औरङ्गजेब,
उमरावन सों यहि भाव रिसाया॥
कम्मरकी न कटारी दई,
इसलामने गोसलखाना बचाया।
जोर शिवा करता अनरत्थ,
भली भई हत्थ हथियार न आया॥"

"मिलतहि कुरुख चकत्ताको निरखि,
कीन्हो सरजा सुरेस ज्यों दुचित ब्रजराजको।
भूषन कुमिस गैर मिसिल खरे किएको किन,
म्लेच्छ मुर्छित करिके गराजको॥
अरे ते गुसलखाने बीच ऐसे उमराव ले चले,
मनाय महाराज सिवराजको॥
दावदार निरखि रिसानो दीह,
दलराय जैसो गड़दार अड़दार गजराजको॥"

"बीर बड़े बड़े मीर पठान खरो,
रजपूतनको गन मारो।
भूषन आय तहां सिवराम,
लयो हरि औरंगजेबको गारो॥
दीन्हों कुज्झाब दिल्लीपतिको,
अरु कीन्हों बजीरनको मुह कारो।।
नायो न माथहिं दक्खिन नाथ,
न साथमैं फौजन हाथ हथ्यारो॥"

"असनके रोज यों जलूम गहि बैठो
जोब इन्द्र आवै सोऊ लागै औरंगकी परजा।
भूषन भनत तहां सरजा शिवाजी गाजी
तिनको तुजुक देखि नेकहू न लरजा॥
ठन्यो न सलाम मान्यो साहिको इलाम
धूमधाम कै न मान्यों रामसिंहको बरजा।
जासौं बैर करि भूप बचै दिगन्त ताके
दन्त तोरि तखत तरे ते आया सरजा॥

भूषणके सम्बन्धमें और भी कवित्त पढ़ने लायक हैं जो स्थानके सङ्कोचके कारण यहां उद्धृत नहीं किये गये हैं।

खाफीखांने लिखा है कि औरङ्गजेब शिवाजीसे मिलते समय मणि-माणिक्यका एक मुकुट, बहुतसे अलङ्कार और एक हाथी भेंट करनेवाले थे पर दरबारमें शिवाजीके क्रोधित और

उत्तेजित होनेके कारण ये चीज़ें भेंट नहीं की गयीं। अस्तु—जो कुछ हो इसमें सन्देह नहीं कि शिवाजी मुगल-दरबारमें अपना ऐसा अपमान देखकर बड़े उत्तेजित हुए। यदि उस समय उनके हाथमें कोई हथियार होता तो वे अपने अपमानका बदला लिये बिना नहीं रहते और अपमानका बदला लेनेमें रक्तपात हुए बिना भी नहीं रहता। जिस प्रकार औरङ्गजेबके बाप शाहजहांके समयमें मारवाड़-नरेश गजसिंहके* ज्येष्ठ पुत्र और महाराज जसवन्तसिंह (जो शिवाजीका सामना करनेके लिये दक्षिण गये थे) के ज्येष्ठ भ्राता राव अमरसिंह राठौरने मुगल-दरबारमें

* [illegible]

शाहजहांके सामने ही, शाहजहांके कृपा पात्र सलावतको बख्शी को मार डाला था, वैसा ही कुहराम शिवाजी भी उपस्थित कर देते। यदि आम्बेरके कुँवर रामसिंह उस समय उनके साथ न होते तो न मालूम शिवाजीके इस अपमानका क्या भयङ्कर परिणाम होता।

इसमें सन्देह नहीं कि कुँवर रामसिंहने शिवाजीको सब प्रकारसे शान्त करनेकी चेष्टा की। शिवाजीके चिल्लाने और भावभङ्गीको देखकर सम्राट् औरङ्गजेबने पूछा कि "क्या मामला है?" रामसिंहने ऐसे ढङ्गसे निम्नलिखित उत्तर दिया कि कहीं बादशाह खफा न हो जायं। उन्होंने कहा—"जहांपनाह! कोई खास बात नहीं है। शेर जङ्गली है, उसे इस जगह गर्मी बहुत मालूम होती है। इससे वह कुछ बीमार हो गया है।" इतना कहकर रामसिंहने बादशाहसे मुआफी मांगी कि शिवाजी, दक्खिनी (दक्षिणी) होनेके कारण दरबारके रङ्ग ढङ्गसे जानकार नहीं हैं। औरङ्गजेबने शिवाजीको पासके कमरेमें ले जाने और उनके मुंहपर गुलाबजल छिड़ककर उनके होश-हवास दुरुस्त

की सुबह-दरबार और कारगुजारियोंका सब करके जब अपने डेरेको लौटे तब उन्होंने किलेका दरवाजा बन्द पाया, वे दरवाजेकी खिड़की तोड़कर किलेके बाहर निकलने की चेष्टा कर रहे थे, तब उनके साथी अर्जुनसिंह इन्होंने पीछेसे उनकी कमरके ऊपर तलवार मारी, जिससे वे मर गये। शाहजहांने उनके मरनेको दुःख करनी चाही तब सब राठौर किलेपर चढ़ आये और किलेका दरवाजा तोड़कर अन्दर ही सबको वे मारे। यह भी अमरसिंह और शाहजहांके कृपापात्र सलावतके बीच झगड़ा हुआ और वे दोनों मारे गये। युक्तप्रदेश और राजपूतानेमें यह घटना अमरसिंह राठौरके नामसे अबतक विख्यात है।

करनेके लिये आज्ञा दी। दरबारकी समाप्तिसे पहले ही वहांसे शिवाजीको विदा कर दिया, उनके ठहरनेके लिये जो स्थान नियत किया था उस स्थानमें उन्हें भेज दिया। म्यानुसी (Manucci) ने लिखा है कि औरङ्गजेब और जयसिंहने शपथपूर्वक यह लिखित वचन शिवाजीको दिया था कि जब वे दरबारमें आवेंगे तब उनको प्रथम श्रेणीके सरदारोंमें ही रखा जायगा, पर पीछे औरङ्गजेबने अपना वचन भङ्ग कर दिया।

शहरसे बाहर राजमहलके पास एक मकानमें शिवाजी ठहराये गये, आगरेके कोतवाल फौलादखांके अधीन उनके प्रवास स्थानपर पहरा बैठा दिया गया। किसी किसी इतिहास लेखक ने लिखा है कि उनके वास स्थानपर औरङ्गजेबने पांच हजार पहरेदार तैनात करनेकी आज्ञा दी। साथ ही यह आज्ञा दी कि बिना शाही आज्ञाके उनके पास न तो कोई जा सके और न भीतरसे कोई आ सके। औरङ्गजेबने यह भी हुक्म दिया कि शिवाजीकी आजकी करतूतका समाचार राजा जयसिंहके पास भेजा गया है, जबतक वहांसे इसका कुछ उत्तर न आवे तबतक शिवाजी दरबारमें न आवें, हां उनके पुत्र शम्भाजी कभी कभी रामसिंहके साथ दरबारमें आ सकते हैं।" इस प्रकार शिवाजीकी समस्त महत्वाकांक्षाओंका मटियामेट हुआ। दक्षिणमें चलते समय मिर्जा राजा जयसिंहने उन्हें जो बड़ी बड़ी आशायें दिलायी थीं सब पर पानी फिर गया।

अब शिवाजी भयङ्कर आपत्तिमें पड़े। अब उनके छुटकारेका

कोई उपाय नहीं रहा। यदि वे वहांसे भागनेकी चेष्टा करते तो यह मानी हुई बात थी कि उन्हें अपने जीवनसे हाथ धोना पड़ता। भला औरङ्गजेब जैसे जालिम और क्रूर बादशाहके यहां उनके लिये और रक्षा ही क्या था ? जिस सङ्गदिलने अपने बूढ़े बापको कैद किया, अपने ज्येष्ठ सहोदर भाई दाराका सिर उड़वानेमें कुछ भी सङ्कोच नहीं किया, अपने कनिष्ठ सहोदर भाई मुरादबख्शको राज्यका लोभ देकर विश्वासघात करके अपना स्वार्थ-साधन करके कैद कर लिया और मरवा डाला, ऐसे नर पिशाचके लिये शिवाजीका मरवा डालना कौन बड़ी बात थी और कौन जानता है कि इस महाराष्ट्र केसरीको अपने चक्रमें फंसाकर औरंगजेबने तड़पा तड़पाकर मारनेकी सोची होगी ? भागनेमें शिवाजीको अपने प्राणोंके जानेका भय था और न भागनेसे भी तो काम नहीं बनता था, क्योंकि फिर जन्मभर उन्हें औरंगजेब की कैदमें ही सड़ना पड़ता।

इसके अतिरिक्त किसी किसी इतिहास-लेखकने यह भी लिखा है कि औरंगजेबकी बेटी जेबुन्निसा शिवाजीकी कीर्त्ति और वीरताकी प्रशंसा पहले सुन चुकी थी और दरबारमें वह स्वयं अपनी आंखोंसे शिवाजीको देखकर बहुत प्रसन्न हुई। उसने अपने बाप बादशाह औरङ्गजेबसे प्रार्थना की कि शिवाजीको किसी प्रकारसे हानि न पहुँचाकर प्रेमसे वशीभूत करके मुगल-दरबारमें रख लिया जाय। इसके अतिरिक्त यह भी हो सकता है कि स्वयं बादशाह औरङ्गजेब, शिवाजीको मुगल-दरबारमें सदैवके लिये

रखना चाहते रहे हों। इसके अतिरिक्त औरङ्गजेबके यहाँ जफरखाँ नामक एक मंत्री था, जो शाइस्ताखाँका बहनोई था, अर्थात् शाइस्ताखाँकी बहिनसे उसका विवाह हुआ था। उसने शिवाजीके विरुद्ध औरङ्गजेबके कान भरे। बस, सब काम चौपट हो गया। किसी किसीने जफरखाँको शाइस्ताखाँका साला लिखा है। जब शिवाजीको यह पता लगा कि औरङ्गजेब जफरखाँकी सलाहसे उन्हें यहीं रोकना चाहता है तब वे जफरखाँके घर मिलने गये, जिस समय शिवाजी जफरखाँसे उसके घरपर बातें कर रहे थे, उस समय उसकी स्त्री भीतरसे शिवाजीको देख रही थी, उसे भय हुआ कि कहीं शिवाजी उसके पतिको मार न डालें। अतएव भीतरसे उसने अपने पतिसे कहला भेजा कि शिवाजीसे बहुत देरतक बातें करना उचित नहीं है, जहाँ जहाँतक हो सके जल्दी ही विदा कर दीजिये। क्योंकि किस वक्त ये क्या कर बैठें, इसका कुछ ठिकाना नहीं है। अपनी स्त्रीसे यह समाचार पाते ही जफरखाँने पानका बीड़ा देकर शिवाजीको विदा किया।

शिवाजीने अपने छुटकारेके लिये पहले उन उपायोंका अवलम्बन किया, जिनको आजकलके शिक्षित राजनीतिक आन्दोलनकर्ता नियमबद्ध (Constitutional) कहते हैं। उन्होंने अपने वकील रघुनाथपन्त कोर्डेके द्वारा बादशाह औरङ्गजेबकी सेवामें एक प्रार्थनापत्र भेजा। उन्होंने उस पत्रमें बादशाह औरङ्गजेबको, उनके नया मिर्जा राजा जयसिंहके उन वचनोंका

स्मरण कराया, जो दक्षिणसे चलते समय उनसे किये गये थे। उन्होंने उचित इस प्रार्थनापत्रके अन्तमें उन्होंने प्रार्थना की कि "यदि मुझे अपने दिया जायगा तो मैं बीजापुर और गोलकुण्डाकी चढाइयोंमें सहायता दूंगा।" रघुनाथपन्तने इस प्रार्थनापत्रको लेकर बादशाहसे भेंट की और अत्यन्त चातुर्य और वाक् पटुतासे अपने स्वामीके पक्षका समर्थन किया। परन्तु मुगल-दरबारमें शिवाजीके दुश्मनोंकी कमी न थी। इससे कुछ न हो सका। संसारमें प्राय जैसे टालमटोल करनेके लिये उत्तर दिया करते हैं, वैसे ही शिवाजीके वकील रघुनाथपन्तको उत्तर दिया गया कि इस विषयपर विचार किया जायगा। शिवाजी भी समझ गये कि यह टालमटोल है। बादशाहका कोरा उत्तर पाकर उन्होंने दूसरे उपायका अवलम्बन किया। उन्होंने बादशाहसे प्रार्थना की कि "मैं आपसे अकेलेमें मिलना चाहता हूं।" मराठा इतिहास बखरके लेखक कहते हैं कि शाइस्ताखांने जफरखांके पास एक पत्र भेजा था जिसमें सम्राट्को शिवाजीसे अकेले न मिलनेका परामर्श दिया। शाइस्ताखांने कोई पत्र भेजा हो या न भेजा हो पर इसमें सन्देह नहीं है कि स्वयं औरंगजेब इतने चतुर और दूरदर्शी थे कि जिन शिवाजीने दस हजार सैनिकोंकी आंखोंमें धूल झोंककर, अफजलखांका वध किया था, जिन शिवाजीने शाइस्ताखांके घरमें घुसकर उनके बीस हजार मुगल-सैनिकोंके सामने ही उसकी दुर्गति की, उन शिवाजीसे उन्होंने एकान्तमें भेंट करना स्वीकार नहीं किया।

रखना छा सम्मथमें यह भी अफवाह फैली हुई थी कि मा ऐसे जादूगर हैं, जिनका हवाई जिस्म (पवन-देह) है और अपने ऊपर किसी प्रकारके संकट आनेपर चालीस पचास गजके फासलेपर छलांग मार सकते और उड़ सकते हैं। चारों ओरसे निराश होकर शिवाजीने अपने मित्र कुंवर रामसिंहको लिखा कि "वे उनके छुटकारेका कोई उपाय करें।" शिवाजीका पत्र पाकर रामसिंहने उनकी रिहाईके लिये चेष्टा की पर औरंगजेबके सामने किसी की चल नहीं सकती थी, अतएव बेचारे रामसिंहको भी इसमें कुछ सफलता प्राप्त नहीं हुई।

इतिहासज्ञ पाठकोंसे यह छिपा हुआ नहीं है कि बादशाह औरंगजेब बड़े वहमी थे। वहमके वशीभूत होकर उन्होंने न केवल बापके साथ ही बुरा बर्ताव किया था, न केवल अपने भाइयों को ही मरवाया था बल्कि अपने पुत्रोंके साथ भी उनका अत्यन्त निष्ठुर व्यवहार रहा था। फिर भला शिवाजीके साथ अच्छा व्यवहार क्यों होता, बारंबार शिवाजीने अपने छुटकारे की जो प्रार्थना की, उसके कारण उन्होंने शिवाजीके डेरेपर और भी कड़ा पहरा बिठला दिया। किसी किसीने तो यहांतक लिखा है कि उनके वास-स्थानको रात दिन पांच हजार सैनिक घेरे रहते थे। बादशाहकी आज्ञाके बिना कोई भी शिवाजीके डेरेमें न जा सकता और न कोई उनसे मिल सकता था। शिवाजीको अपने छुटकारेकी किसी प्रकारकी आशा नहीं रही। बादशाहकी ओरसे उनकी मुक्तिके लिये केवल एक

शर्त पेश की गयी जिसको स्वीकार करना शिवाजीने उचित नहीं समझा। वह शर्त यह थी कि यदि शिवाजी अपने ज्येष्ठ पुत्र सम्भाजीको बादशाहके यहा छोड़ दें तो मजेसे बिना किसी रुकावटके दक्षिण जा सकते हैं। पर शिवाजीने अपने प्राणप्यारे पुत्रको अपने विश्वासघातक शत्रुके हाथमें सौंपना उचित नहीं समझा। यदि शिवाजी सम्भाजीको औरङ्ग-ज़ेबके हाथमें छोड़ आते तो दक्षिणमें उन्होंने स्वाधीनताकी जो पताका फहरानी चाही थी वह कभी न फहराती और यदि वे अपने महाराष्ट्र प्रान्तके लिये स्वाधीनता प्राप्त करनेकी चेष्टा करते तो उन्हें अपने पुत्रका बलिदान करना पड़ता, अतएव उन्होंने अपने पुत्र सम्भाजीको आगरेमें छोड़कर दक्षिण आना स्वीकार नहीं किया। औरंगज़ेबने भी समझ लिया कि महाराष्ट्र केसरी चंगुलमें फंस गया है।

अब शिवाजीको चारों ओरसे निराश होकर अपने छुटकारे का केवल स्वावलम्बनके अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं रहा। औरङ्ज़ेब शिवाजीको अफगानिस्तान भेजना चाहते थे जैसा कि उन्होंने पीछे नेताजी पालकरको भेजा था। परन्तु उनका विचार बदल गया। शिवाजीने अपने छुटकारेके लिये दूरदर्शिता और नीतिसे कार्य प्रारम्भ किया। जो कोई दरबारी उनसे मिलने आता था उससे वे ऐसे ढंगसे बातें करते थे, जिससे प्रतीत होता कि वे बहुत डर गये हैं। उन्होंने अपनी सेना तथा अन्य साथियोंको दक्षिण लौटानेके लिये औरंगज़ेबके

संख्या इससे कम नहीं होती थी। पहले पहरेदार टोकरोंको धरतीपर रखवाकर देख भाल करते कि इन टोकरोंमें कोई शस्त्र या आदमी तो नहीं छिपा है तब बाहर जाने देते थे। कुछ दिनों पीछे पहरेदारोंने यह समझकर कि केवल मिठाई, मेवा आदि जाता है, टोकरोंको देखना छोड़ दिया। प्रति बृहस्पतिवारको वे टोकरे भेजते थे। जिन लोगोंके यहां शिवाजी टोकरे भेजते थे, वे लोग भी बदलेमें शिवाजीके यहां वैसे ही मिठाईसे भरे हुए टोकरे भेजते थे। यह सिलसिला कुछ दिनोंतक रहा। इसके अतिरिक्त शिवाजीने पहरेदारोंसे भी अपना खूब मेलजोल बढ़ा लिया। वे लोग भी शिवाजीके व्यवहारसे अत्यन्त प्रसन्न थे। शिवाजी अपने पद और मान मर्य्यादाका कुछ विचार न करके उन लोगोंसे मिलते और बातें करते, पर कभी अपने छुटकारेके सम्बन्धमें उनसे चर्चा नहीं करते। पहरेदारोंके हाकिमोंने भी शिवाजीसे खूब मित्रता गांठ ली। उनके ऐसे व्यवहार और चाल-ढालसे पहरेदार भी उनकी ओरसे कुछ असावधान हो गये।

थोड़े दिनोंमें ही शिवाजीको यह अनुमान हो गया कि वे अपनी इस चालमें सफलता प्राप्त कर सकते हैं। अतएव इन्होंने कुछ दिनों पीछे एक और चाल चली। जो थोड़ेसे उनके सरदार और राजकर्मचारी तथा अन्य साथी सेनाके साथ दक्षिण नहीं गये थे, अब धीरे धीरे उनको इन्होंने आगरेसे रवाना करना आरम्भ कर दिया। उनके कुछ नौकरों और [illegible]

तो बीमारी और आब-हवा बदलनेके बहानेसे चल दिये । कुछ लोगोंने यह बहाना किया कि हम अपने इस मालिककी सेवा करते हुए थक गये हैं और कहीं नौकरी करना चाहते हैं । ऐसे ही बहाने बनाकर उनके बहुतसे साथी चल दिये और उन्हें आगरेसे दक्षिण जानेके लिये, परवानगी अर्थात् आज्ञा पत्र लेनेमें कुछ दिक्कत नहीं हुई, इसके अतिरिक्त शिवाजीके पास जो निम्न श्रेणीके दक्षिणी नौकर चाकर थे, जैसे खिदमतदार, पानी भरनेवाला इत्यादि, उनको भी उन्होंने अपने यहांसे अलग कर दिया । उनके स्थानमें उन्होंने उत्तर-भारतके नौकर रख लिये । दक्षिणी नौकर चाकर यहांसे चल दिये, केवल शिवाजी अपने पुत्र सम्भाजी तथा हीराजी फर्जन्द और एक-दो साथी सहित रहे । नौकर चाकर और अपने सब सरदारोंके बिदा करनेके कुछ दिन पीछे शिवाजीने अपनी बीमारीका बहाना किया और समस्त आगरे नगरमें यह अफवाह बड़े जोरोंसे फैल गयी कि शिवाजी बीमार हैं । अपना इलाज करनेके लिये उन्होंने अनेक हकीम वैद्य बुलाये और उनकी औषधि करने लगे । कुछ दिनोंतक इलाज होता रहा, फिर एकदम यह अफवाह फैला दी कि "शिवाजी बहुत बीमार हैं । सबसे उन्होंने मिलना जुलना छोड़ दिया" और जो कोई आता तो उससे कह दिया जाता कि "बीमारीके कारण, शिवाजी न तो कोई काम कर सकते हैं न किसीसे मिल सकते हैं । शरीर स्वस्थ होनेपर सब काम किया जायगा और सबसे पहलेके समान ही मिलेंगे।" फिर

टोकरेमें अपने ज्येष्ठ पुत्र सम्भाजीको बिठलाया और
ारोंके बीचमेंसे इन टोकरोंमें बैठकर निकले। इन टोकरों
छे कुछ टोकरे और भी थे जिनमें सचमुच मिठाई थी।
ारोंने समझा कि जिस प्रकार नित्यप्रति मिठाईके टोकरे
हैं, वैसे ही ये टोकरे भी आते हैं। उन्होंने टोकरोंकी देख
ा नहीं की। शहरके बाहर सुनसान स्थानमें टोकरे पहुंचाये
। टोकरे लानेवालोंको जो मजदूरी ठहरी थी, देकर विदा
ा। मजदूरके चले जानेपर शिवाजी और उनके पुत्र सम्भाजी
ोंमेंसे निकले और वहांसे आगरेसे छः मीलकी दूरीपर एक
में चले गये, जहां उनका विश्वासपात्र न्यायाधीश नीराजी
की उनके लिये घोड़ों सहित पहलेसे ही खड़ा था। वहां
चते ही शिवाजीने अपने साथियोंसे परामर्श किया कि
यमें क्या करना चाहिये जिससे सब लोग कुशलपूर्वक
ण पहुंच जायँ। अन्तमें शिवाजी और उनके पुत्र सम्भाजी,
र तीन राजकर्मचारियों—नीराजी रावजी, दत्ता त्र्यम्बक और
ोमित्रा—ने साधु संन्यासियोंके समान अपना वेष धारण
ा और मथुराकी ओर चल पड़े। शिवाजीके जो दूसरे साथी
उनको शिवाजीने दूसरे मार्गसे दक्षिण जानेकी आज्ञा दी।
ब वे लोग दूसरे मार्गसे दक्षिणकी ओर चल दिये।
औरङ्गजेबकी कैदमेंसे शिवाजीके छुटकारेके विषयमें इति
लेखकोंके कथनमें परस्पर कुछ भेद है। "बुन्देला मेम्वार्स"
खा हुआ है कि "प्रति बृहस्पतिवारको शिवाजी फकीरोंको

मिलनेसे पहले ही आगरेसे एक चिट्ठी मिल चुकी थी जिसमें शिवाजीके भागनेका उल्लेख था। उसने शिवाजी तथा उनके साथियोंकी जांच पड़ताल आरम्भ की। शिवाजी जैसे वीर थे, जैसे राजनीतिमें दक्ष थे, जैसे चतुर थे वैसे ही वक्ता भी अपने ढङ्गके निराले थे। जिस प्रकार नीति और तलवारका सहारा उन्हें था, वैसे ही वाणीका भी उन्हें भरोसा था। अनेक अव सरोंपर उन्होंने अपनी मनोमोहिनी वाणीके बलसे ही अनेक कार्य्य किये थे। अतएव आधीरातके समय वे एकान्तमें फौजदारसे मिले और उसे अपना परिचय दिया। उसे एक लाख रुपयेका एक हीरा दिखलाते हुए कहा कि यह एक लाख रुपयेका हीरा है, मगर तुम्हें यह हीरा लेना हो तो मुझे छोड़ दो और नहीं तो मुझे पकड़वा दो, पर तुम्हारे हाथ कुछ नहीं आयेगा। फौजदारने एक लाख रुपयेका हीरा लेना पसन्द किया और शिवाजीको छोड़ दिया।

तीर्थराज प्रयागमें स्नान करके वहांसे वे भगवान विश्वनाथ के त्रिशूलसे रक्षित काशीको पधारे। सूर्योदयसे पहले उन्होंने पतितपावन भागीरथीमें स्नान किया और हिन्दुओंके अनुसार तीर्थमें जो धार्मिक कृत्य किये जाते हैं, वे सब किये। उसी समय आगरेसे वहां एक दरबारी पहुंच गया, जिसने शिवाजीके भाग जाने और उनके पकड़नेके लिये सरकारी घोषणा की। यहां भी वे मुगल साम्राज्यके कर्मचारियोंके चङ्गुलमें फंसते फंसते बच गये। जिसके सम्बन्धमें खाफीखांने "मुन्तखब उल

लुपाय" में लिखा है कि जब मैं सूरतके बन्दरगाहमें था तब मुझसे एक ब्राह्मण वैद्यने जिसका नाम नाना भयया जाता था, नीचे लिखा हुआ वृत्तान्त कहा था कि "जब मैं बनारसके एक ब्राह्मणके यहाँ शिष्यरूपमें सेवा करता था तब उसने मुझे केवल भोजनमात्रमें ही अटका रखा था और मुझे कुछ नहीं देता था। मैं नित्यप्रति गङ्गाजीकी ओर सबेरे ही जाया करता था। अपने नित्य नियमके अनुसार एक दिन सबेरे ही मैं गङ्गा तटपर गया। उस समय सूर्य नहीं निकला था, अंधेरा था। वहाँ एक आदमीने मेरा हाथ पकड़ लिया और मेरी मुट्ठीमें बहुतसे जवाहरात, अशरफी और हुण रखे और मुझसे कहा—"अपनी मुट्ठी मत खोलो परन्तु गङ्गास्नानके समय जो कुछ धार्मिक कृत्य कराने हों, वह शीघ्र ही करा दो।" मैंने भी शीघ्र ही उसका बाल बनवाना तथा स्नान कराने आदिका प्रबन्ध किया कि इतनेमें हल्ला मचा कि शिवाजी भाग गया है और बादशाहके यहाँसे अनेक राजकर्मचारी उसे ढूंढने यहाँ आये हैं। जैसे मैंने यह बात सुनी वैसेही मैं देखता क्या हूं कि जिस आदमीका मैं धार्मिक कृत्य करा रहा था, वह वहाँसे भाग गया। तब मैंने अनुमान किया कि वे शिवाजी ही होंगे। उन्होंने मुझे जो हीरे, जो अशरफी और जो हुन दिये थे। वह धन पाकर मैं अपने गुरुके पास नहीं गया, अपने ग्रामको चल दिया और सूरत पहुँचा। मेरा यह बड़ा मकान जो यहाँपर है, वह इसी धनसे खरीदा गया है।"

काशीजीसे वे गयाजी गये। वहां उन्होंने अपने दो आदमी पहलेसे ही भेज दिये थे। वे दोनों आदमी भी वहां उन्हें मिल गये और उनके साथ उड़ीसामें जगन्नाथजीके दर्शन करने गये।' रात दिन पैदल चलते चलते उनकी इच्छा एक घोड़ा खरीदनेकी हुई। घोड़ा बेचनेवाले एक आदमीसे वे एक घोड़ा खरीदने लगे पर उनके पास घोड़ेका मूल्य देनेके लिये यथेष्ट रुपया न था, उन्होंने बाकी रुपयोंके बदलेमें अशरफी देनेके लिये अपना बटुआ खोला कि वह घोड़ावाला चिल्ला उठा कि "जरूर! तू शिवाजी है जो एक छोटेसे टट्टूके लिये इतना अधिक धन देता है।" यह सुनते ही शिवाजीने अपना समस्त बटुआ उस घोड़ेवालेको दे दिया और वहांसे भाग गये। इस प्रकार शिवाजीको मार्गमें अनेक सङ्कटोंका सामना करना पड़ा, पर वे धैर्य्यच्युत नहीं हुए। "धीरज धर्म मित्र अरु नारी, आपत काल परखिये चारी—" "विपद धैर्य्यमभ्युदय क्षमा"—सचमुच शिवाजीने इस विपत्ति में न केवल अपने धैर्य्यकाही परिचय दिया था किन्तु उनके बन्धु बान्धव स्त्री-माता आदि सभीने असीम धैर्य्य और योग्यता का परिचय दिया।

उड़ीसामें श्रीजगन्नाथजीके दर्शन करके शिवाजी पश्चिमकी ओर मुड़ गये और गोंडवानेके मार्गसे भागानगर, हैदराबाद और बीजापुर राज्यमें होते हुए वे अपने घर पहुंचे। नौ महीने पीछे शिवाजी अपने राज्यमें पहुंचे, तीन महीने वे औरङ्गजेबके यहां कैद रहे और छः महीने उन्हें आगरेसे दक्षिणतक पहुंचनेमें लगे।

जिस समय शिवाजी दक्षिण पहुंचे उस समय उनकी माता जीजाबाई रायगढ़में थीं। ये रायगढ़में बैरागीके वेषमें ही पहुंचे और अपने किलेके पहरेदारोंसे माता जीजाबाईको कहला भेजा कि कुछ साधु आपसे मिलना चाहते हैं। जीजाबाईने यह सूचना मिलते ही साधुओंको भीतर आनेकी आज्ञा दी। शिवाजी अपने साथियों सहित किलेके भीतर पहुंचे और नीराजी पन्तने संन्यासियोंकी भांति जीजाबाईको आशीर्वाद दिया, पर मातृभक्त शिवाजी अपनी माता जीजाबाईको देखकर अपनेको काबूमें न रख सके। शीघ्र ही उन्होंने अपनी माता जीजाबाईके चरण कमलोंमें अपना शीश नवा दिया। जीजाबाई उन्हें न पहचान सकी और वे आश्चर्य करने लगीं कि यह बैरागीने उनके पैरोंमें अपना सिर क्यों रख दिया है। पीछे शिवाजीने अपनी टोपी उतार दी और अपना सिर माताकी गोदमें रख दिया। सिर देखनेपर जीजाबाईने निशानका चिह्न देखकर शिवाजीको पहचान लिया और अपने प्राणोंसे अधिक प्यारे पुत्रको नौ महीने पीछे सकुशल घर लौटा देखकर उनके आनन्द और हर्षका ठिकाना न रहा। संवत् १७२३ वि०—सन् १६६६ ई० के दिसम्बर मासमें आप ये रायगढ़ पहुंचे। शिवाजीके आगमनका समाचार सुनते ही सर्वत्र आनन्द छा गया।

अपनी माताके दर्शन करनेके पीछे उन्होंने अपने सब सरदारों, कारकुनों तथा अन्य अन्य अमीर उमरावोंसे मुलाकात की। समस्त महाराष्ट्रमें शिवाजीकी औरङ्गजेबकी कैदसे मुक्ति,

राष्ट्रकी मुक्ति समझी। जिस किसीने शिवाजीके आगमनका समाचार सुना, वही उनके दर्शनोंके लिये दौड़ा। प्रजा और नौकर-चाकर सब ही उनके दर्शन करनेके लिये आये। एक दिन अत्यन्त समारोहपूर्वक आनन्दोत्सव हुआ। उस दिन ब्राह्मणों को बहुतसा धन दान दिया गया। गरीब दरिद्र व्यक्तियोंको बहुतसा धन दिया गया। अपनी इष्टदेवी भवानीकी शिवाजीने बड़ी धूम धामसे पूजा की। किलोंके ऊपरसे तोपें छूटीं, अपने राज्यके समस्त देव मन्दिर, ब्राह्मण और साधुओंको शिवाजीने खूब धन बांटा। पर इस आनन्दमें एक कमी थी और वह यह थी कि उनके पुत्र सम्भाजी अभीतक नहीं आये थे। शिवाजीने यह समाचार फैला दिया कि मार्गमें सम्भाजी मर गये। वे यह मिथ्या समाचार फैलाकर ही नहीं रहे थे बल्कि सम्भाजीकी मृत्युके उपलक्ष्यमें उन्होंने शोकचिह्न भी धारण करके अत्यन्त शोक मनाया, जब देखा कि मुगल-साम्राज्यके राज-कर्मचारियोंको सम्भाजीके सम्बन्धमें कुछ सन्देह न होगा तब उन्होंने मथुराके तीनों दक्षिणी ब्राह्मणोंको अपने परिवार तथा सम्भाजी सहित दक्षिण आनेकी आज्ञा दी।*

कुछ दिनों पीछे तीनों ब्राह्मण अपने परिवार और सम्भाजी सहित रायगढ़ पहुंच गये। उज्जैनतक तो कृष्णाजी अपने परिवार और सम्भाजी सहित सकुशल पहुंच गये, परन्तु उज्जैनमें

* किसी किसीने लिखा है कि कृष्णाजी विश्वनाथ शिवाजीके साथ पूनातक गये और पूनासे फिर मथुरा जाकर अपने परिवार और सम्भाजीको लेकर रायगढ़ गये।

एक मुसलमान अफसरको सम्भाजीको देखकर सन्देह हुआ कि यह ब्राह्मणका लड़का नहीं है। हो न हो यही सम्भाजी है। मुसलमान अफसरके सम्भाजीके विषयमें पूछनेपर, कृष्णाजी विश्वनाथ और उनके भाई काशीने सम्पूर्ण धैर्य और शान्ति पूर्वक उत्तर दिया कि "यह हमारे परिवारका पुत्र है, मैं इसकी माता और स्त्री सहित प्रयाग गङ्गा-स्नान करने गया था। मेरी माता मार्गमें ही परलोक सिधार गयीं। प्रयागमें मेरी स्त्री बीमार हुई और वह भी मर गयी इसलिये मैं इस अनाथ बच्चेको अपने गांव ले जा रहा हूं।" इसपर उस मुसलमान हाकिमने कृष्णाजीसे कहा—"यदि यह तुम्हारा लड़का है तो इसके साथ एक थालीमें खाओ क्योंकि तुम्हें बच्चेके साथ खानेमें कुछ आपत्ति नहीं हो सकती है।" यद्यपि इन्होंने ब्राह्मण

[illegible]

मराठोंके साथ भोजन नहीं करते हैं तथापि इस अवसरपर कृष्णाजीने कुछ आपत्ति नहीं प्रकट की। उन्होंने चुपचाप शान्ति पूर्वक एक ही थालीमें सम्भाजीके साथ भोजन किया, जिससे मुसलमान अफसरका सन्देह दूर हुआ। इससे उन लोगों को छोड़ दिया और सम्भाजीके जीवनकी रक्षा हुई। सम्भाजीके छिपानेकी घटनाका वर्णन कई इतिहास लेखकोंने ऊपर लिखे हुए वृत्तान्तसे भिन्न प्रकारसे किया है। बुन्देला मेम्वायर्समें लिखा हुआ है कि बालक सम्भाजीके केश बहुत लम्बे बढ़ा दिये गये थे और उनको लड़कीके वेशमें काशीपन्त अपनी स्त्रीके साथ ले गया था। कई बखरोंमें लिखा हुआ है कि जब औरङ्गजेबको काशीपन्तके यहां सम्भाजीके छिपनेका पता लगा तब उन्होंने काशीपन्तके मकानपर पहरा बैठा दिया। काशीपन्त ने सम्भाजीके साथ एक थालीमें भोजन करके पहरेदारोंका सन्देह दूर कर दिया कि यह लड़का सम्भाजी नहीं है।

कहां हैं ब्राह्मणोंको गालियां देनेवाले लोग! जब जब इस देशपर सङ्कट आये हैं तब तब ब्राह्मणोंने अनेक विपत्तियां झेली हैं। उन्होंने देशोद्धारके कामें सदैव अपना पग आगे बढ़ाया है। यदि इस समय ब्राह्मण कृष्णाजी शिवाजीका सहायक न होता तो अवश्य ही शिवाजीको अपने प्यारे पुत्र सम्भाजीके प्राणोंसे हाथ धोना पड़ता। बाबू लोग, ब्राह्मणोंको देशद्रोही और देशका सत्यानाश करनेवाला भले ही कहें परन्तु इतिहास इसका साक्षी है कि जब जब देश विपत्तिमें फंसा है तब तब ब्राह्मणोंने

अपना कर्त्तव्य निभाया है। जिस समय मेवाड़के अधीश्वर महाराणा प्रतापसिंह और उनके अनिष्ट सहोदर शक्तसिंह आपसमें लड़े थे और एक दूसरेके प्राण लेना चाहते थे, उस समय उन दोनों भाइयोंकी प्राणरक्षा केवल एक ब्राह्मणने की थी। यह ब्राह्मण मेवाड़का कुल-पुरोहित था। इतिहासमें देख नहीं ऐसे अनेक उदाहरण मिल सकते हैं।

शिवाजीने कृष्णाजी तथा उनकी माता और भाइयोंको रम्भाजीकी रक्षाके लिये बहुतसा पारितोषिक * दिया, जागीरें दीं और साथ ही तीनों भाइयोंको विश्वासरावकी पदवी प्रदान की। इस सङ्कटमें जिन लोगोंने शिवाजीको सहायता दी थी उनको शिवाजी भूले नहीं। हीराजी फर्ज़न्दको भी उन्होंने बहुत सा पारितोषिक दिया था। कहते हैं कि आगरेसे दक्षिण लौटते समय शिवाजी अपने साथियों सहित सन्यासीके वेशमें एक रातको एक किसानके यहां ठहरे थे। यह किसान गोदावरीके तटपर एक गांवमें रहता था। उसकी बूढ़ी मांने शिवाजी और

[illegible]

[illegible]

उनके साथियोंको भोजनकी थोड़ीसी सामग्री दी और कहा—"क्या करूं, आप लोगोंकी अच्छी तरहसे सेवा नहीं कर सकती हूं, क्योंकि शिवाजीके सैनिकोंने हमारे गांवोंको लूट लिया है, जिससे हमारी बहुत हानि हुई है। सुना है कि वह दिल्ली गया है, बादशाह औरंगजेब उसे दण्ड क्यों नहीं देता, शिवाजी हम किसानोंके लिये बड़ा दुःखदायी है।" शिवाजीको मालूम हुआ कि उनकी अनुपस्थितिमें भी उनके सैनिकोंने दुश्मनोंके राज्यमें उत्पात मचाया है, जिससे उस किसानको हानि हुई है। शिवाजीने उस किसानका नाम एवं पता पूछ लिया और अपनी राजधानीमें पहुंचनेके पीछे उस किसानको बुलाया और उसको जितनी हानि हुई थी उससे कहीं अधिक धन दिया।

शिवाजीके आगरेसे भाग आनेका दुःख बादशाह औरंगजेब जन्मभर नहीं भूले। उन्होंने अपने अन्तिम समयमें जो वसीयत नामा लिखा, उसमें भी निम्नलिखित शब्दोंका उल्लेख किया—"हुकुमत कायम रखनेके लिये सबसे आवश्यक बात यह है कि सल्तनतमें कहां और क्या हो रहा है, इसकी हरएक खबर रखे, जरासी लापरवाहीसे ऐसा बदनतीजा होता है जिसके लिये हमेशा शर्म उठानी पड़ती है। देखो थोड़ीसी लापरवाहीसे कमबख्त शिवाके भाग जानेसे मुझे अपने आखिरी वक्तमें भी इन कमबख्त लड़ाइयोंमें फंसना पड़ा है।" उन्होंने शिवाजीको पुनः पकड़नेके लिये कितने ही दांव-पेंच लगाये पर चतुर चूड़ामणि शिवाजी उनके हाथ न आये। जब मिर्जा राजा जयसिंहने

अपना कर्त्तव्य निभाया है। जिस समय मेवाड़के अधीश्वर महाराणा प्रतापसिंह और उनके कनिष्ठ सहोदर शक्तसिंह आपसमें लड़े थे और एक दूसरेके प्राण लेना चाहते थे, उस समय उन दोनों भाइयोंकी प्राणरक्षा केवल एक ब्राह्मणने की थी। यह ब्राह्मण मेवाड़का कुल-पुरोहित था। इतिहासमें एक नहीं ऐसे अनेक उदाहरण मिल सकते हैं।

शिवाजीने कृष्णाजी तथा उनकी माता और भाइयोंको सम्भाजीकी रक्षाके लिये यथेष्ट पारितोषिक * दिया, जागीरें दीं और साथ ही तीनों भाइयोंको विश्वासरावकी पदवी प्रदान की। इस सङ्कटमें जिन लोगोंने शिवाजीको सहायता दी थी उनको शिवाजी भूले नहीं। हीराजी फर्जन्दको भी उन्होंने बहुत सा पारितोषिक दिया था। कहते हैं कि आगरेसे दक्षिण लौटते समय शिवाजी अपने साथियों सहित संन्यासीके वेशमें एक रातको एक किसानके यहाँ ठहरे थे। यह किसान गोदावरीके तटपर एक गाँवमें रहता था। उसको पूरी भाँति शिवाजी और

उनके साथियोंको भोजनकी थोड़ीसी सामग्री दी और कहा—"क्या करूं, आप लोगोंकी अच्छी तरहसे सेवा नहीं कर सकती हूं, क्योंकि शिवाजीके सैनिकोंने हमारे गांवोंको लूट लिया है, जिससे हमारी बहुत हानि हुई है। सुना है कि वह दिल्ली गया है, बादशाह औरंगज़ेब उसे दण्ड क्यों नहीं देता, शिवाजी हम किसानोंके लिये बड़ा दुःखदायी है।" शिवाजीको मालूम हुआ कि उनकी अनुपस्थितिमें भी उनके सैनिकोंने दुश्मनोंके राज्यमें उत्पात मचाया है, जिससे उस किसानको हानि हुई है। शिवाजीने उस किसानका नाम एवं पता पूछ लिया और अपनी राजधानीमें पहुंचनेके पीछे उस किसानको बुलाया और उसकी जितनी हानि हुई थी उससे कहीं अधिक धन दिया।

शिवाजीके आगरेसे भाग जानेका दुःख बादशाह औरंगजेब जन्मभर नहीं भूले। उन्होंने अपने अन्तिम समयमें जो वसीयत नामा लिखा, उसमें भी निम्नलिखित शब्दोंका उल्लेख किया—"हुकूमत कायम रखनेके लिये सबसे आवश्यक बात यह है कि सल्तनतमें कहां और क्या हो रहा है, इसकी हरवक्त खबर रखे, ज़रासी लापरवाहीसे ऐसा बदनतीजा होता है जिसके लिये हमेशा शर्म उठानी पड़ती है। देखो थोड़ीसी लापरवाहीसे कमबख्त शिवाके भाग जानेसे मुझे अपने आखिरी वक्तमें भी इन कमबख्त चक्करोंमें फंसना पड़ा है।" उन्होंने शिवाजीको पुनः पकड़नेके लिये कितने ही दांव-पेंच लगाये पर चतुर चूड़ामणि शिवाजी उनके हाथ न आये। जब मिर्जा राजा जयसिंहने

सुना कि शिवाजी भाग गये हैं तब वे विशेष चिन्तित हुए, और उनकी चिन्ताका कारण यह था कि सम्राट् औरंगजेबको यह शक हो गया था कि मिर्जा राजा जयसिंहके पुत्र, कुंवर रामसिंहके षड्यन्त्रसे ही शिवाजी यहाँसे भाग निकले हों। दक्षिणमें लगातार युद्धोंमें प्रवृत्त रहनेके कारण, जयसिंहको चिन्ता घेरे हुए ही थी कि शिवाजीके सम्राट् औरङ्गजेबकी कैदमेंसे भागने और सम्राट्का कुंवर रामसिंहपर नाराज होनेसे पुत्रके मिर्जा राजा जयसिंह बड़े दुःखी हुए। उनके इस दुःखका पूरा पता उन चिट्ठियोंसे लगता है जो उन्होंने उस समय मुगल सम्राट्के दरबारियोंको भेजी थीं।

मिर्जा राजा जयसिंह, शिवाजीको पुनः पकड़ने, अथवा उनको मार डालनेके लिये, यहांतक आतुर हुए थे कि वे अपने पुत्रका शिवाजीकी पुत्रीसे विवाह करना चाहते थे। उनकी इच्छा थी कि किसी प्रकारसे शिवाजीका पासंग दूर करके सम्राट औरङ्गजेबके कृपा-पात्र बनें। उन्होंने मुगल साम्राज्यके यहाँके खास—अरकानोंको जो चिट्ठियाँ लिखी थीं, उनके निम्नलिखित भावार्थको पढ़कर पाठक जान लेंगे कि हिन्दू जातिकी दुर्गतिका कारण, मिर्जा राजा जयसिंह जैसे कुछ कुलांगार हिन्दू जातिमें पैदा होना ही है। मिर्जा राजा जयसिंहने अरकानोंको जो पत्र भेजा था, उसका सारांश यह है कि मैं बीजापुर, गोलकुण्डा और शिवाजीके विरुद्ध कोशिश करनेमें सफलमनोरथ नहीं हुआ हूं और आगे भी नहीं होऊंगा। अब मैं

इस ढंगसे कोशिश कर रहा हूं कि वह मक्कार कमबख्त शिवा फिर मुझसे मिलने आवे। उसके यहां आते वक्त या वहांसे लौटते वक्त हमारे चालाक आदमी उस कमबख्तको खतम कर डालेंगे। दरबारका यह गुलाम, (मिर्जा राजा जयसिंह) शाहंशाहके कामोंको किसी तरहकी तारीफ या बदनामीकी परवा न करके पूरा करनेको तैयार है। अगर शाहंशाह मंजूर करें तो मैंने यह तरकीब सोची है कि मैं शिवाजीके सामने उसकी लड़कीके साथ अपने लड़केकी शादी करनेकी तजवीज पेश करूं, जो उसका खानदान और उसकी बिरादरी, हमारे खानदान और बिरादरीसे नीचे हैं, और मेरे जैसे आदमी उसके हाथका छुआ हुआ खाना (मैं उससे शादीके ताल्लुक होनेकी बात नहीं कर रहा हूं) नहीं खा सकते हैं। इस बहानेसे मैं उसकी लड़कीको गिरफ्तार कर लूंगा। मैं उसकी लड़कीको अपने यहां जनानेमें नहीं रखूंगा। वह नीच जातिका है, इस लिये वह इस फंदेमें फंस जायगा। लेकिन इस तजवीजको पोशीदा रखियेगा, यह भेद खुलने न पावे। इसका मुझे जल्दी जवाब दीजियेगा*।" यहां यह लिख देना भी अनुचित न होगा कि शिवाजी मिर्जा राजा जयसिंहके फन्देमें फिर किसी प्रकारसे नहीं फंसे।

हतभाग्य हिन्दू जाति! स्वार्थके कारण सूर्यकुलमें जन्म

* देखो श्री यदुनाथ सरकार कृत शिवाजीका चारित्रिक चरित्र, जिसमें "हफ्त अञ्जुमन" नामक फारसी तवारीखसे यह पत्र उद्धृत किया गया है।

धारण करनेवाले हिन्दू-नरेश जयसिंहके इतने अधम विचार हो गये कि वह अपने पुत्रके विवाहके बहाने ही, स्वाधीनताके उपासक हिन्दू धर्मके रक्षक शिवाजीके प्राणोंका ग्राहक बन पड़े। हिन्दुओंके धर्म-कर्मका भले ही सत्यानाश हो जाय, हिन्दुओंके प्राणप्रिय मन्दिर भले ही तोड़े जायं, गायें [illegible] छुरोंसे कटकर दुःसह अधमके अन्धकूपमें भले ही डाली जायें, जिनमें यवन अपने घोड़ोंकी टापोंसे मातृभूमिको भले ही कुचलें, पर मिर्ज़ा राजा जयसिंहको इसकी क्या परवा, उनसे सम्राट् प्रसन्न रहने चाहिये। हाय! अभागी हिन्दू-जाति! तेरे इतने अधःपतनका कारण तेरे ही कुलाङ्गार कपूत हैं जिनकी बुद्धिपर स्वार्थका इतना गहरा रंग चढ़ गया कि उन्होंने तेरे शत्रुओंके साथ बेगानोंसे भी बढ़कर व्यवहार किया है जिसका फल तू आजतक भोग रही है और ऐसे कपूतोंके कारण न मालूम कबतक तेरी दुर्गति होती रहेगी, क्योंकि न जाने अभी तेरी गोदमें ऐसे कपूत खेल रहे हैं जो अपने पैरोंमें आप कुल्हाड़ी मार रहे हैं, जो तेरी स्वतन्त्रताके शत्रु और धर्म विरोधी हैं। हे सम्राटोंके सम्राट्, चक्रवर्तियोंके चक्रवर्ती राजाओंके राजा, महाराजाओंके महाराजा, परमपिता परमेश्वर! अब तो इस भारत भूमिको ऐसे कुलाङ्गार और कपूतोंसे पवित्र कर, नहीं तो यह भारतभूमि और हिन्दू जाति पर पापी और अत्याचारीके कारण किसी दिन रसातलको चली जायगी। यदि उस समय मिर्ज़ा राजा जयसिंह तथा अन्य

क्षत्रिय, शिवाजीका साथ देते—नहीं नहीं धर्मका साथ देते तो आज भारतवर्षका इतिहास दूसरे रंगमें ही रंगा जाता पर हिन्दूजातिके कपूतोंके कारण ऐसा नहीं हो सका। जिसका दुःखदायी परिणाम हिन्दूजाति और भारत भूमि आजतक भोग रही है और अब भी न मालूम हिन्दुओंकी आंखें कबतक खुलेंगी। न मालूम कबतक हिन्दूजातिके लालोंको अपने भले बुरेका ज्ञान होगा?

इस परिच्छेदको समाप्त करते हुए हमें एक बातका यहां उल्लेख करना अत्यन्त आवश्यक है। यह पाठक पढ़ चुके हैं कि औरंगजेबकी एक पुत्रीका नाम जेबुन्निसा था। औरंगजेब उसको बहुत प्यार करता था। अपने बापके समान ही उसको साहित्य का प्रेम था और वह अत्यन्त विदुषी थी। अरबी, फारसीकी अच्छी ज्ञाता थी। बादशाह औरंगजेबको कविता पसन्द न थी, पर उनकी पुत्री जेबुन्निसाको कवितासे भी अनुराग था। वह जन्मभर अविवाहिता रही थी। जब औरंगजेबके पुत्र अकबरने बगावत की, तब जेबुन्निसाने अकबरका पक्ष लिया था। इसलिये औरंगजेबने उसे दिल्लीके पास सलीमगढ़के किलेमें कैद किया। कुछ मराठी लेखकोंने जेबुन्निसा और औरंगजेबकी दूसरी पुत्री जिन्नतु न्निसाको एक ही समझ लिया है। प्रायः उन्होंने जिन्नतु न्निसाको निस्सा बेगम लिखा है, जिस समय शिवाजी औरंग जेबके दरबारमें पहुंचे थे उस समय जेबुन्निसाकी अवस्था

of the time, no Marathi life of Shivaji mentions that Mughal princess interested herself in the fate of the captive chieftain in her father's Capital None of them gives the smallest hint of the Champion of Hindu revival, having co_netted with a Muslim sweet heart in the enemy's den + + + The whole story is not only un historic, but improbable.'

इसका भावार्थ यह है कि पचास वर्ष हुए कि भूदेव मुकर्जीने बंगभाषामें एक उपन्यास लिखा था, जिसमें यह दिखलाया था कि प्रेमी और प्रेयसीने किस प्रकारसे आपसमें अंगूठी बदली और फिर वे विदा हो गये। किन्तु यह सिर्फ मनगढन्त कहानीके अतिरिक्त और कुछ नहीं है। उस समयके फारसी इतिहासों की बात जाने दीजिये, जिसमें इस विषयमें कुछ उल्लेख नहीं है किन्तु उस समयके शिवाजीके किसी मराठी-चरित्रमें भी इस विषयका कुछ पता नहीं लगता है कि मुगल राजकुमारीने अपने पिताकी राजधानीमें कैदी सरदारके भाग्यके विषयमें किसी प्रकारका अनुराग प्रकट किया हो। किसीने भी इसका तनिक भी जिक्र नहीं किया है कि हिन्दुओंका पुनरुद्धार करने वाले वीरने अपने शत्रुके यहाँ किसी मुसलमान प्रेयसीसे प्रीति की हो। × × × × यह समस्त कहानी केवल इतिहासके विरुद्ध ही नहीं किन्तु असम्भव भी है।" वास्तवमें इस प्रकारकी गप्पें इतिहास-लेखकोंको नहीं उड़ानी चाहिये, चाहे वह हिन्दू हो, चाहे मुसलमान।

पन्द्रहवाँ परिच्छेद

पुन युद्ध और सन्धि

"बहु दु ख सों सोवत सदा जागत रैन बिहाय
मेरी गति अरु चन्द्रकी सैनहि दई यकाय।"

आइये! पाठक!! आइये!!! जब शिवाजी आगरेमें कैद हुए थे तब दक्षिणमें क्या हो रहा था, यह भी देखिये। जब दक्षिणमें शिवाजीके नजरबन्द होनेका समाचार पहुँचा तब शिवाजीके सरदारोंने मुगलोंके प्रान्तमें पुन उपद्रव मचाना शुरू कर दिया जिससे मुगल-सेनाको बड़ी कठिनाई उपस्थित हुई। उन दिनों कारवारमें अङ्गरेजोंकी फैक्टरी थी, उसके अङ्गरेज-कर्मचारियोंने अपने एक पत्रमें शिवाजीकी कैदसे छुटकारेके विषयमें जो भवि ष्यद्वाणी की वह सच निकली। अङ्गरेज कर्मचारियोंने एक पत्रमें लिखा था—"यदि यह सच हो कि शिवाजी कैदसे भाग गये हैं तो औरङ्गजेबको शीघ्र ही इसका फल भोगना होगा और उसके लिये पश्चात्ताप करना होगा।"

शिवाजीके दक्षिण पहुंचनेसे पहले बीजापुरकी सेना और मुगल सेनाके बीच आपसमें कई बार युद्ध हुआ। इन युद्धोंमें मुगल सेना को बहुत हानि उठानी पड़ी। मिर्जा राजा जयसिंहने बीजापुर पर चढ़ाई की पर उन्हें सफलता प्राप्त नहीं हुई, क्योंकि दक्षिणी

ऊपर लिखा जा चुका है कि औरङ्गजेबकी एक और लड़की थी, जिसका नाम जिन्नतुन्निसा था। शिवाजीकी मृत्युके पीछे जब औरंगजेब दक्षिणकी लड़ाइयोंमें लगातार फँसा रहा और शिवाजीके पुत्र सम्भाजीको कैद करके, मुसलमान होनेके लिये कहा, तब सम्भाजीने औरंगजेबसे कहा कि "अगर आप अपनी बेटी जिन्नतुन्निसासे मेरा विवाह कर दें तो मैं मुसलमान होनेको तैयार हूं।" इसपर औरंगजेबने सम्भाजीको अत्यन्त निष्ठुरतापूर्वक हत्या करा डाली। सम्भाजीकी मृत्युके पीछे उनके पुत्र साहूको औरंगजेबने शाही जनानेमें रखा था। यहां औरंगजेबकी लड़की जिन्नतुन्निसाने साहूका लालन पालन अपने पुत्रके समान ही किया। जिन्नत उन्निसा भी जेबुन्निसाके समान आजन्म क्वांरी रही थी। इसपर कुछ मराठी बखरोंके रचयिताओंने लिखा है कि जिन्नतुन्निसाने सम्भाजीके प्रेमके कारण विवाह नहीं किया था—क्योंकि वह सम्भाजीपर अनुरक्त हो गयी थी।

और मुगल सेनाके रणक्षेत्रसे पैर उखाड़ दिये। अन्तमें अपना किसी प्रकारसे वश चलता न देखकर मिर्जा राजा जयसिंहने औरङ्गजेबसे प्रार्थना की कि "मैं बहुत दिनोंतक युद्ध नहीं चला सकता हूँ।" बादशाह औरङ्गजेबने उनकी इस प्रार्थनापर कुछ भी ध्यान नहीं दिया और न उन्हें इस विषयमें किसी प्रकारका उत्तर भेजा। बादशाहसे किसी प्रकारका उत्तर और सहायता न पाकर उन्होंने अपनी सेना बीजापुरसे हटा ली। बीजापुरी सेनाने मुगल सेनाका पीछा किया पर जयसिंहके राजपूत सैनिक मुगलोंके प्रधान स्थान औरङ्गाबाद पहुँच गये। बीजापुरी सेनाने भी मुगलोंका और पीछा करना उचित नहीं समझा।

इस समय मिर्जा राजा जयसिंह बड़ी विपत्तिमें फँसे। बादशाहकी ओरसे उन्हें सहायता मिलनी बिलकुल बन्द हो गयी थी। उन्होंने शिवाजीसे जो किले लिये थे और शिवाजीकी सहायतासे भी जो दूसरे पहाड़ी किले उनके हाथ लगे थे अब उन सब किलोंकी रक्षा करना उन्हें और भी कठिन हो गया। उस समय उनके पास इन पहाड़ी किलोंको रक्षा करने योग्य धन और जन दोनों ही न थे। उन्होंने अपनी इस दिक्कतको मिटानेके लिये एक और उपाय किया कि घाट प्रान्तमें लोहागढ़, सिंहगढ़ और पुरन्दरके पहाड़ी किलोंपर, और कोकणमें माहुली और कर्नाला किलोंमें सेना, रसद और युद्धकी सामग्री रखी। इन पांच किलोंका इस प्रकारसे प्रबन्ध करके अन्य स्थानोंमें जहां कहीं सुगमतासे रसद मिल सकती थी, वहां भी उन्होंने कुछ

घुड़सवारों अथवा सिलेदारोंने मुगल सेनाकी बड़ी दुर्गति की। उन्होंने अपने पुराने ढङ्गसे छेड़छाड़ करके मुगल-सेनाके नाकोंमें दम कर दिया। कभी उन्होंने मुगल सेनाकी रसद लूट ली, कहीं उन्होंने मुगल-सेनाके किसी दलपर अचानक धावा कर दिया। इस प्रकार छेड़छाड़ करके उन्होंने मुगल-सेनाके हाथसे आदिल शाहकी राजधानी बीजापुरकी रक्षा की। बीजापुरके घुड़सवारोंने मुगल-सेनाके रसद आनेका एकदम मार्ग बन्द कर दिया जिससे मुगल-सेनामें बड़ा हाहाकार मचा, मुगल-सेनाका अन्न, अनाज, घास, दाना चारा आदि सब ही चीजोंकी बड़ी तकलीफ हुई। कमबख्तीकी मार—"एक तो करेली और दूसरे नीम चढ़ी।" मुगल-सेना पहले ही बीजापुरके घुड़सवारोंसे तङ्ग हो रही थी कि दूसरे अकालका भी विशेष प्रकोप हुआ। इस साल वर्षा बिल्कुल नहीं हुई। अनावृष्टिके कारण अन्नका पूरा अभाव हुआ, जिससे मुगल-सेनाको पानीकी पूरी तकलीफ हुई। इसके अतिरिक्त एक बात यह भी हुई कि बादशाह औरङ्गजेबको मिर्जा पर विश्वास न था, इसलिये उन्होंने कभी जयसिंह और दिलेर खांको इतनी सैनिक सहायता नहीं दी कि वे शिवाजीको दबा सकें अथवा वे बीजापुरको ले सकें। मुगल-सेनाका सामना करनेके लिये बीजापुर और गोलकुण्डा दोनों राज्य मिल गये थे। गोलकुण्डाने ६ हजार घुड़सवार और पचीस हजार पैदल सेना बीजापुरकी सहायताके लिये भेजी। गोलकुण्डाकी सेनाने बीजापुरकी सेनाके साथ मुगलिया सिपाही बड़ा तङ्ग किया

और मुगल-सेनाके रणक्षेत्रसे पैर उखाड़ दिये। अन्तमें अपना किसी प्रकारसे वश चलता न देखकर मिर्ज़ा राजा जयसिंहने औरङ्गज़ेबसे प्रार्थना की कि "मैं बहुत दिनोंतक युद्ध नहीं चला सकता हूँ।" बादशाह औरङ्गज़ेबने उनकी इस प्रार्थनापर कुछ भी ध्यान नहीं दिया और न उन्हें इस विषयमें किसी प्रकारका उत्तर भेजा। बादशाहसे किसी प्रकारका उत्तर और सहायता न पाकर उन्होंने अपनी सेना बीजापुरसे हटा ली। बीजापुरी सेनाने मुगल सेनाका पीछा किया पर जयसिंहके राजपूत सैनिक मुगलोंके प्रधान स्थान औरङ्गाबाद पहुँच गये। बीजापुरी-सेनाने भी मुगलोंका और पीछा करना उचित नहीं समझा।

इस समय मिर्ज़ा राजा जयसिंह बड़ी विपत्तिमें फँसे। बादशाहकी ओरसे उन्हें सहायता मिलनी बिलकुल बन्द हो गयी थी। उन्होंने शिवाजीसे जो किले लिये थे और शिवाजीकी सहायतासे भी जो दूसरे पहाड़ी किले उनके हाथ लगे थे अब उन सब किलोंकी रक्षा करना उन्हें और भी कठिन हो गया। उस समय उनके पास इन पहाड़ी किलोंकी रक्षा करने योग्य धन और जन दोनों ही न थे। उन्होंने अपनी इस दिक्कतको मिटानेके लिये एक और उपाय किया कि घाट प्रान्तमें लोहागढ़, सिंहगढ़ और पुरन्दरके पहाड़ी किलोंपर, और कोकणमें माहुली और कर्नाला किलोंमें सेना, रसद और युद्धकी सामग्री रखी। इन पांच किलोंका इस प्रकारसे प्रबन्ध करके अन्य स्थानोंमें जहां कहीं सुगमतासे रसद मिल सकती थी, वहां भी उन्होंने कुछ

बार सफलता प्राप्त न होनेसे बादशाहको यह आशङ्का हुई कि कहीं दालमें काला तो नहीं है। जयसिंह भी शायद शिवा जीसे मिले हुए न हों। उन्होंने जयसिंहको दक्षिणसे लौट आनेकी आज्ञा दी और उनके स्थानपर शाहजादा मुअज्जिमको दक्षिणका सूबेदार नियुक्त करके भेजा और जोधपुर नरेश, महाराज जसवन्तसिंहको शाहजादेका नायब (सहकारी) नियत किया। मिर्जा राजा जयसिंहका दक्षिणसे दिल्ली लौटते समय बुरहानपुरमें संवत् १७२४ वि० १२वीं जुलाई सन् १६६७ ई० को देहान्त हो गया। राजस्थानके कई इतिहास लेखकोंने लिखा है कि औरङ्गजेबने बुरहानपुरमें जयसिंहको जहर पिला दिया, जिससे उनका प्राणान्त हुआ। मुगल-सम्राटोंका कुछ ऐसा ही नियम था जो इनकी जी जानसे सेवा करता वही अपने प्राणोंसे हाथ धोता। कर्नल टाडने लिखा है कि बादशाह अकबरने विषैले लड्डू, राजा मानसिंहको खिलाने चाहे थे, जिनको धोखेसे बादशाहने खा लिये और मर गये।

सम्राट् औरङ्गजेबने देखा कि जयसिंह और दिलेरखांके अधीन दक्षिणमें सेना भेजनेमें कुछ भी सफलता नहीं हुई। बीजापुर और गोलकुण्डा दोनों राज्योंमें मुगल सेनाका सामना करनेके लिये मित्रता हो गयी और यदि शिवाजी भी बीजापुर और गोल्कुण्डाके गुटमें शामिल हुए तो दक्षिणमें मुगल-सत्ता रसा तलको चली जायगी। "दबी बिल्ली, चूहोंसे कान कटाती है" यही दशा उस समय औरङ्गजेबकी हुई। उन्होंने जोधपुर नरेश

इस मराठा इतिहास लेखकोंके इस कथनमें कहांतक सचाई है, क्योंकि महाराज जसवन्तसिंहके सम्बन्धमें राजस्थानके अन्य इतिहासोंमें ऐसी बात नहीं मिलती है। जो कुछ हो—इसमें सन्देह नहीं कि जसवन्तसिंह औरङ्गजेबके विश्वासपात्र न थे। जैसा कि पीछे लिखा जा चुका है वे पहले दाराके पक्षपाती थे। पीछे मिर्जा राजा जयसिंहके अनुरोधसे औरङ्गजेबकी ओर हुए थे। इस कारण औरङ्गजेब उनका विश्वास बहुत कम करते थे। पर मराठा लेखकोंने उनकी जैसी चरित्र हीनता का वर्णन किया है, वैसे ही वे चरित्रहीन थे या नहीं इसमें सन्देह है। मराठा लेखक लिखते हैं कि शिवाजीने कुछ धन देकर जसवन्तसिंहको अपनी ओर कर लिया था। जो कुछ हो शाहजादा मुअज्जिम और जोधपुर-नरेश जसवन्तसिंहका दक्षिण में पहुंचना शिवाजीके लिये अच्छा ही हुआ। शाहजादा मुअज्जिम और महाराज जसवन्तसिंहको दक्षिण भेजते समय औरङ्गजेबने शाहजादेसे कहा था कि "न तो शिवाजीसे युद्ध ठानना और न विशेष मित्रता करना—उसकी बातोंमें न आना। उसके साथ द्वेष करनेसे भी काम नहीं बनेगा। उसने आजतक अनेक सरदारोंका नाश कर दिया है। अगर उसने तुम्हारी भी ऐसी दशा की तो बड़ी भारी निन्दा होगी और शाही दबदबे और रोबमें हानि पहुंचेगी।" सम्राट् औरङ्गजेबके इन वचनोंको सुन कर शाहजादा मुअज्जिमने शिवाजीसे सन्धि करनेका मनसूबा कर लिया। क्योंकि आगरेमें शिवाजीका कैद किया जाना उस

जसवन्तसिंह तथा शाहजादा मुअज्जिमके अधीन शिवाजीपर चढ़ाई करनेके लिये सेना भेजना उचित नहीं समझा। वे स्वयं अपने निरीक्षणमें शिवाजीपर चढ़ाई करना चाहते थे पर उस समय उत्तर भारतमें भी उपद्रव आरम्भ हो गये थे। इसलिये वे स्वयं दक्षिण नहीं जा सके और उस समय उन्होंने शिवाजीसे लड़ाई न ठानना ही गनीमत समझा। हमारे चरित्रनायकने औरङ्गजेबकी इस "दूरदर्शिता" और "बुद्धिमत्ता" से भी लाभ उठाया। उन्हें अपनी स्वराज्य व्यापकताके प्रतमें औरङ्गजेबकी इस बुद्धिने सहायता ही पहुँचायी। क्योंकि उन्हें इस समय स्वराज्य विस्तारका अच्छा अवसर प्राप्त हुआ। दुनियामें शिवाजी जैसे मियाशील व्यक्ति कभी अवसर चूकनेवाले नहीं होते हैं।

"चुपड़ी और दो दो।" शाहजादा मुअज्जिमका दक्षिणका सूबेदार होना शिवाजीके लिये और भी अच्छा हुआ, क्योंकि शाहजादा मुअज्जिम लड़ाई झगड़े पसन्द नहीं करते थे। व शान्तिप्रिय थे। भोग विलासमें भी फँसे हुए थे और उनके सहचारी जसवन्तसिंहसे शिवाजीकी आगरामें गहरी मित्रता हो गयी थी। वे शिवाजीसे बड़ा प्रेम रखते थे। आगरामें वे शिवाजीसे मिलकर बड़े प्रसन्न हुए थे। मराठी-ग्रन्थ में कई इतिहास-लेखकोंने लिखा है कि जसवन्तसिंह रास्ते थे, इनमें चाँदीके आगमनादसे उनकी आँखोंमें चकाचौंध आ जाती थी, धर्म अधर्मका कुछ ख्याल न था। धनके लालचमें वे कर्त्तव्यशून्य हो जाते थे। नहीं कह सकते कि

जसवन्तसिंहके द्वारा सन्धिकी मनमानी शर्तें करनेका मौका मिला।

उन्होंने अपने प्राइवेट सेक्रेटरी बालाजी आपजी चिटनीसको अपना दूत नियुक्त करके शाहजादे मुअज्जिमके पास भेजा। उन्होंने बालाजी आपजी चिटनीससे खास हिदायत कर दी कि वह इस बातका पता लगावें कि शाहजादे मुअज्जिमकी दिली मंशा क्या है। उन्होंने दरबारी नियमके अनुसार अपने दूतके हाथ जवाहरात, सुनहला काम किये हुए कपड़े और हाथी आदि शाहजादेकी नज़र करनेके लिये भेजे। जोधपुरनरेश महाराज जसवन्तसिंहने शिवाजीके राजदूतका शाहजादे मुअज्जिमसे परिचय कराया। आपजी चिटनीसने शाहजादेसे भेंट करते ही सन्धि सम्बन्धी बात छेड़ी, क्योंकि शिवाजीके आगरेमें कैद किये जानेसे पहली सन्धि भङ्ग हो गयी थी। शिवाजीके दूतने कहा कि महाराज शिवाजीने मिर्जा राजा जयसिंह द्वारा मुगल-साम्राज्यसे सन्धि की थी और सन्धिकी कई शर्तोंको स्वीकृति लेनेके लिये वे आगरा बादशाहकी सेवामें उपस्थित हुए थे। पर बादशाहको मिर्जा राजा जयसिंह और कुंवर रामसिंह आदि मुगल-साम्राज्य के जैसे सुयोग्य और विश्वासपात्र सरदारोंके मध्यस्थ होनेपर भी विश्वास नहीं हुआ। सम्राट्ने शिवाजीको नज़रबन्द कर दिया। ऐसा करना उन्हें उचित न था।" बालाजी आपजी चिटनीसकी ये बातें सुनकर शाहजादेने उत्तर दिया कि "बादशाह सलामतके मनमें शिवाजीकी ओरसे कोई खोटा विचार नहीं था और अब

शाहजादेको बहुत बुरा लगा था। शाहजादेकी धारणा थी कि शिवाजी जैसे वीर पुरुषको अपनी ओर मिलानेसे बहुतसे काम निकल सकते हैं।

कहा जाता है कि जब शिवाजीको शाहजादे मुअज़्ज़मके दक्षिण आनेके समाचार मिले तब वे एक गरीब देहातीका वेश धारण करके ब्रह्मपुरीके निकट एक गांवमें पहुंचे और दहीसे भरा हुआ एक बर्तन शाहजादेको भेंट किया। दही बहुत अच्छा और स्वादिष्ट था, शाहजादेने उसे बहुत पसन्द किया और नित्यप्रति भोजनके समय दही लानेकी आज्ञा दी। शिवाजीने एक दिन दहीके साथ एक गोली भेजी, जिसमें एक कागजका टुकड़ा चिपका दिया था। उस कागजके टुकड़ेमें शिवाजीने लिखा था—"मैंने सुना कि युद्धमें विजय प्राप्त करनेके लिए पराक्रमी शाहजादा आ रहा है। मैं गरीब देहातीका वेश धारण करके अपनी आंखोंसे यह देखने आया हूं कि शाहजादा कैसा है *।" यदि यह बात सच हो तो कहना पड़ेगा कि शाहजादेके चित्तपर इस चिट्ठीका क्या प्रभाव हुआ होगा। उन्होंने सोचा होगा कि जो आदमी ऐसा चालाक है और इस प्रकार दूसरे पर भेज सकता है, उससे युद्ध न करना ही अच्छा है। औरङ्गाबाद पहुंचकर शाहजादा मुअज़्ज़मने जसवन्तसिंहके द्वारा शिवाजीसे सन्धिकी बातें कीं। मराठा-लेखकोंके कथनके अनुसार शिवाजीने जसवन्तसिंहको रिश्वत दे दी थी। अतएव शिवाजीको

* कैकर इन मराठी भाषा दिवशीच भाग ।

शाहजादे मुअज्ज़िमके इस प्रस्तावको सुनकर बालाजी आवजी चिटनीसने शिवाजीके पास शाहजादे मुअज्ज़िमके विचारोंका समाचार भेजा। यह समाचार पाकर शिवाजी सन्धि करनेको तैयार हुए। दोनों ओरसे सन्धिकी निम्नलिखित शर्तें पेश हुईं—(१) दोनों ओरसे भविष्यमें पारस्परिक स्थायी मित्रता और शान्ति रहे। (२) सन्धिकी पहली शर्तें स्वीकृत की जायें। (३) जबतक दोनों ओरसे परस्पर किसी प्रकार का अविश्वास न हो तबतक शिवाजी अपने सैन्यदलसे मुगलोंकी सहायता करें, पारस्परिक अविश्वास होनेपर, शिवाजी मुगलोंको सहकारिताके लिये अपना सैन्यदल न भेजें और फिर परस्पर मित्रताका कोई भाव नहीं रहे। (४) सेनाके खर्चके लिये कुछ जागीर नियत कर देने पर शिवाजी मुगलोंकी सहायताके लिये पांच हज़ार सैन्यदल भेज दें। (५) पहली सन्धिके प्रस्तावके अनुसार सम्भाजीको पाच हजारका मनसब प्रदान किया जाता है और पांच हज़ार घुड़सवारोंके खर्चके लिये बरार प्रान्तमें आवदा और बालापुर ताल्लुक उन्हें जागीरमें दिये जाते हैं। (६) पिछली सन्धिके अनुसार शिवाजीको चौथ और सरदेशमुखी उगाहनेका पूरा अधिकार रहेगा। (७) निजामशाही और आदिलशाहीके जो किले और जागीर शिवाजीके कब्ज़ेमें हैं, उनपर शिवाजीका ही अधिकार रहेगा *।

ऊपर लिखा हुआ सन्धिका यह मसविदा तैयार हो

*—चिटनीसबखर [illegible] १८ मुगलोंके मदन सन्धिके समय शिवाजीने जो देश लिये मुगलोंको दिये थे, वे ही फिर पुन सन्धिमें मुगलोंको दे दिये।

भी नहीं है। सम्राट्की हार्दिक इच्छा यही है कि उनमें और शिवाजीमें सदैव मैत्री रहे। वे इस मैत्रीको अपने यहाँ शिवाजीको कोई ऊँचा पद देकर सदैव चिरस्थायी रखना चाहते थ। पर शिवाजीने इस बातको पसन्द नहीं किया, अतएव उन्होंने जबरदस्ती शिवाजीको अपने यहाँ रखना चाहा। शिवाजीने बादशाहके इस दयापूर्ण व्यवहारको पसन्द नहीं किया और आगरासे भागकर दक्षिण चले आये। आगे शाहजादेने कहा कि मेरे दक्षिण चलते समय बादशाह सलामतने शिवाजीसे विरोध न ठाननेकी खास तौरपर हिदायत कर दी है। इस बातको बादशाह सलामत भी जानते हैं कि शिवाजी बहादुर और जवांमर्द हैं। उन्होंने कहा कि ऐसा बहादुर आदमी हमने मैंने कभी नहीं देखा और आगे भी ऐसा आदमी जल्दी नहीं मिलनेका। मेरी दिली ख्वाहिश है कि शिवाजी मेरे पास रहें। मुझे अपनी इस ख्वाहिशका पूरी तरहसे कामयाबी हासिल नहीं हुई। बादशाहकी इच्छा शिवाजीको अपने पास रखनेकी है। और उनकी सन्धिकी सब शर्तें स्वीकार करनेकी है।" पर, और, शिवाजी आगरा जाना स्वीकार नहीं करते तो न सही बादशाह उनको दक्षिणमें रखकर ही मुगल साम्राज्यकी सहायता चाहते हैं। यदि बादशाहकी कुछ बुरी नीयत होती तो जब शिवाजी आगरामें थे तभी वे उनके साथ बुरा व्यवहार करते।" इन सब बातों कहकर आगे शाहजादे मुअज्जमने बालाजी आवजी चिटनीससे पूछा कि "अब आगे शिवाजीकी सन्धि विषयक क्या इच्छा है और क्या करना चाहते हैं?"

औरङ्गज़ेबकी ओरसे सम्भाजीको पाँच हजारका मनसब फिर दिया गया और एक हाथी तथा सुनहरी मूठकी तलवार भी उनको भेंट की गयी। साथ ही बरार प्रान्तमें उन्हें एक जागीर दी गयी। शिवाजीकी सेनामेंसे आधी सेना औरङ्गाबादमें रखी गयी और आधी नयी जागीरका राजस्व कर उगाहनेके लिये बरार भेज दी गयी। कुछ दिनों पीछे शाहज़ादा मुअज्ज़िमने सम्भाजीको बालक होनेके कारण उनके पिता शिवाजीके पास भेज दिया। अस्तु, शिवाजीने मुगलोंसे प्राप्त जागीरके प्रबन्धका भार एक ब्राह्मण कारकुनको सौंपा जिसका नाम रावाजी सोमनाथ था। उसे मोकासदार*का नवीन पद भी दिया और उसे योग्य सामग्री देकर नयी जागीरपर भेज दिया।

इस नवीन सन्धिके हो जानेसे शिवाजीके हाथ पूना और सूपाकी जागीर भी आ गयी। केवल पुरन्दर और सिंहगढ़ किलेके अतिरिक्त, समस्त किले उनके हाथ आ गये। सम्राट् औरङ्गज़ेबका इस प्रकार सन्धि करनेसे यही तात्पर्य था कि किसी प्रकारसे शिवाजी पराधीनताकी बेड़ी पहन लें और मुगल-साम्राज्यके अधीन रहें। पर शाहज़ादे मुअज्ज़िमका ऐसा उद्देश्य न था कि शिवाजी किसी प्रकारसे कपट जालमें फँस जावे, वह उदार-हृदय और निष्कपट था।

इस सन्धिके हो जानेपर औरङ्गज़ेबने अपने खरीतोंमें शाहज़ादा मुअज्ज़िमको लिखा था कि वह शिवाजीको बीजापुर और

* बरारको कुछ गाँव इनाममें दिये जाते थे।

जानेके पीछे शाहजादा मुअज्जिमने मसविदेपर दस्तखत कर दिये और शिवाजीसे कहा कि आप दिखाऊ तौरपर, रीति पूरी करनेके लिये एक अर्जी बादशाहके पास भेज दीजिये। मैं इस सन्धिकी स्वीकृतिके लिये सिफारिश कर दूंगा। शाहजादेके इस कथनपर शिवाजीने बादशाहके पास एक लोकदिखाऊ प्रार्थना पत्र भेजा और शाहजादे मुअज्जिमने शिवाजीके प्रार्थनाको स्वीकृत करनेके लिये सिफारिश करते हुए शिवाजीके विषयमें लिखा— "शिवाजी जैसा जवांमर्द थोड़ीसी मेहनतसे ही फिर मिलता है उसकी शर्तें स्वीकार करके उसके साथ मित्रता करना ही उचित है।" शाहजादे मुअज्जिमकी इस सिफारिशके साथ शिवाजीका प्रार्थनापत्र औरङ्गजेबके पास पहुंचा। उसने शिवाजीकी यह प्रार्थना स्वीकार कर ली। अतएव यह सन्धि संवत् १७२५ वि०—सन् १६६८ ई०में शिवाजीका मुगलोंसे हुई। सम्राट् औरंगजेबने शिवाजीको राजाकी उपाधि दी और शिवाजीके जो किले मुगलोंके हाथमें चले गये थे, उन्हें भी लौटा दिये। साथ ही यह निश्चय हुआ कि शिवाजी बीजा पुर राज्यके प्रति स्वतन्त्रतापूर्वक जैसा उचित समझें, वैसा व्यवहार कर सकते हैं। किसी किसी* इतिहास-लेखकने इसके विपरीत यह भी लिखा है कि वास्तवमें किलेके अतिरिक्त और कोई चिन्ह शिवाजीको नहीं दिया गया था। शिवाजीने प्रतापराव गूजरके साथ सम्भाजीको औरङ्गाबाद भेजा, शाहजा

* हैदेकर बहुक्रम बखार।

राज्य प्रति वर्ष तीन लाख रुपये शिवाजीको राजस्व करके दिया करेगा। किसी किसी इतिहास लेखकने तीन लाख रुपयेके स्थानमें सात लाख लिखे हैं। जो हो, आदिलशाहने अपने वजीरद्वारा शिवाजीसे यह सन्धि गुप्तरूपसे की थी। इस गुप्त सन्धिका कारण इतिहास लेखकोंने लिखा है कि बीजापुर मुसलमान राज्य था और खुल्लमखुल्ला हिन्दू राज्यसे—और उस हिन्दू राज्यसे, जिसकी स्थापना हुए बहुत दिन नहीं हुए थे—सन्धि करना अन्य मुसलमानी राज्योंके सामने नीचा देखना था। इस गुप्त सन्धिके हो जानेके पीछे, शिवाजीने श्यामजी नायक पांडेको राजदूत करके आदिलशाहके दरबारमें भेज दिया*।

बीजापुर राज्यसे सन्धि हो जानेके पीछे, शिवाजीकी दृष्टि गोलकुण्डा पर पड़ी। गोलकुण्डा-राज्यमें भी इन्होंने चौथ और सरदेशमुखी उगाहनेके बहाने लगातार कई आक्रमण किये। बीजापुर-राज्यकी भाँति गोलकुंडा राज्य भी शिवाजीके आक्रमणोंको सहन नहीं कर सका। गोलकुण्डाके सुल्तान इस बातसे और भी घबराये हुए थे कि शिवाजीका मुगलोंसे गुपचुप बीजापुर और गोलकुण्डासे चौथ और सरदेशमुखी वसूल करनेका समझौता हो गया है। अतएव गोलकुण्डाके कुतुबशाहने भी

---

* [illegible] सरकार [illegible] सम्बन्धमें कुछ नहीं लिखा है। सिर्फ मराठोंकी बाखरोंमें लिखा हुआ है कि मई सन् १६६० ई० में शिवाजीकी बीजापुरसे सन्धि हुई थी। शिवाजीकी ओरसे बीजापुर दरबारमें श्यामजी पांडे राजदूत था।

नहीं हुई। न मालूम शिवाजीके गोवा आक्रमण और सफलता प्राप्त होनेकी मराठा बखरोंमें कुछ भी चर्चा क्यों नहीं है। गोवा आक्रमणके पीछे शिवाजीने जञ्जीरापर चढ़ाई की, पर उन्हें उसमें भी विशेष सफलता प्राप्त नहीं हुई।

स्थानकी कमीके कारण, यहां शिवाजीके समस्त युद्धोंका वर्णन नहीं हो सकता है। केवल इतना ही कहना है कि शिवाजी और मुगलोंकी सन्धि बहुत दिनतक टिकाऊ नहीं रही। इसका कारण औरङ्गजेबका शिवाजीके प्रति विश्वास घात था जिसके विषयमें आगे लिखा गया है। इस परिच्छेदको समाप्त करते हुए शाहजादे मुअज्जिमके विषयमें भी पाठकोंको दो एक बात सुनाना अनुचित न होगा। शाहजादे मुअज्जिम, औरङ्गजेबके दूसरे पुत्र थे। बीस वर्षकी अवस्थामें दक्षिणके सूबेदार हुए थे और दस वर्षतक दक्षिणके सूबेदार रहे थे। कभी कभी बीचमें उत्तर-भारतमें वे आते और अपने पितासे मिल जाते थे। दक्षिणमें रहते समय उन्होंने शिवाजीसे मित्रता कर ली थी, जैसा पाठक ऊपर पढ़ चुके हैं। अपने पूर्व तीन मुगल सम्राट् अकबर, जहाँगीर, शाहजहांके समान, औरङ्गजेबको भी अपने पुत्रोंसे बहुत तङ्ग होना पड़ा था। औरङ्गजेब अपने पुत्रोंसे बड़े सावधान रहते थे। उनके पुत्रोंने उनके विरुद्ध बगावतका झंडा उठाया था। औरङ्गजेबने अपने बड़े पुत्र मुहम्मद सुल्तानको बारह वर्षतक कैद रखा था। उनका तीसरा पुत्र अकबर उनका विरोध करके, सदैवके लिये ईरान

नहीं हुई। न मालूम शिवाजीके गोवा आक्रमण और सफलता प्राप्त होनेकी मराठा बखरोंमें कुछ भी चर्चा क्यों नहीं है। गोवा आक्रमणके पीछे शिवाजीने जञ्जीरापर चढ़ाई की, पर उन्हें उसमें भी विशेष सफलता प्राप्त नहीं हुई।

स्थानकी कमीके कारण, यहां शिवाजीके समस्त युद्धोंका वर्णन नहीं हो सकता है। केवल इतना ही कहना है कि शिवाजी और मुगलोंकी सन्धि बहुत दिनतक टिकाऊ नहीं रही। इसका कारण औरङ्गजेबका शिवाजीके प्रति विश्वास घात था जिसके विषयमें आगे लिखा गया है। इस परिच्छेदको समाप्त करते हुए शाहजादे मुअज्जिमके विषयमें भी पाठकोंको दो एक बात सुनाना अनुचित न होगा। शाहजादे मुअज्जिम, औरङ्गजेबके दूसरे पुत्र थे। बीस वर्षकी अवस्थामें दक्षिणके सूबेदार हुए थे और दस वर्षतक दक्षिणके सूबेदार रहे थे। कभी कभी बीचमें उत्तर भारतमें वे आते और अपने पितासे मिल जाते थे। दक्षिणमें रहते समय उन्होंने शिवाजीसे मित्रता कर ली थी, जैसा पाठक ऊपर पढ़ चुके हैं। अपने पूर्व तीन मुगल सम्राट् अकबर, जहांगीर, शाहजहांके समान, औरङ्गजेबको भी अपने पुत्रोंसे बहुत तङ्ग होना पड़ा था। औरङ्गजेब अपने पुत्रोंसे बड़े सावधान रहते थे। उनके पुत्रोंने उनके विरुद्ध बगावतका झंडा उठाया था। औरङ्गजेबने अपने बड़े पुत्र मुहम्मद सुलतानको बारह वर्षतक कैद रखा था। उनका तीसरा पुत्र अकबर उनका विरोध करके, सदैवके लिये ईरान

भाग गया। शाहजादे मुअज्जिमने भी भाईके विरुद्ध बगावतका झण्डा उठाया था। कई इतिहास-लेखकोंने लिखा है कि शाहजादे मुअज्जिमने औरंगज़ेबसे राजसिंहासन छीननेकी चेष्टा की थी और इस कार्यमें शिवाजीसे भी सहायता मांगी थी, पर पितृ भक्त शिवाजीने जैसे औरंगज़ेबको बाप शिवा शाह जहाँको राजसिंहासनसे उतारनेमें सहायता नहीं दी थी, वैसे ही उन्होंने अपने मित्र शाहजादे मुअज्जिमको ऐसे अपवित्र कार्यमें सहायता नहीं दी। मराठा इतिहास-लेखक लिखते हैं कि दक्षिणमें कई वर्ष रहनेके पीछे शाहजादे मुअज्जिम एकाएक उत्तर भारतकी ओर रवाने हुए और दक्षिणसे चलनेसे उनकी मंशा औरंगज़ेबसे भारतका राजसिंहासन और राजमुकुट छीननेकी थी। उन्होंने शिवाजीसे इस कार्यमें सहायता चाही। उन्होंने अपने एक उच्च कर्मचारीद्वारा शिवाजीसे इस कार्यमें सहायताकी प्रार्थना की। उन्होंने यह कहकर टाल दिया कि "मैं शाहजादेकी अनुपस्थितिमें दक्षिणकी रक्षा करूंगा।" इसपर शाहजादेने पुनः शिवाजीके पास यह कहला भेजा कि "मैं आपको अपनी सेनाका सेनापति बनाऊंगा।" पर उन्होंने यह बात स्वीकार नहीं की और शाहजादेने शिवाजीसे सहायता न पाकर बादशाह औरंगज़ेबसे क्षमा मांग ली और अपने प्रवास स्थान औरंगाबादकी ओर आया। शिवाजीके सहायता न देनेपर भी शाहजादा मुअज्जिम नाराज़ नहीं हुए, बल्कि इस घटनाके कुछ दिनों पीछे उन्होंने शिवाजीसे और भी अधिक गहरी मैत्री कर ली। पर

भी कहा जाता है कि औरंगजेबको जब शाहजादे मुअज्जिमके षड्यन्त्रका पता लगा तब उन्होंने अपनी स्त्री नवाबबाई अर्थात् शाहजादेकी माताको शाहजादेके पास समझानेके लिये भेजा, जिससे शाहजादेने औरंगजेबसे मुआफी माग ली; पर शाहजादा मुअज्जिम शिवाजीका दमन करनेमें असमर्थ रहा, जैसा कि पाठक आगे पढ़ेंगे। यहां हमने शाहजादे मुअज्जिमके चरित्रका उतना ही उल्लेख किया है जितना शिवाजीसे सम्बन्ध रखता है। शाहजादे मुअज्जिमके चरित्रकी समस्त घटनाओंका यहां वर्णन न करके केवल इतना ही कहना है कि बादशाह औरंगजेबने शाह जादे मुअज्जिमको, उनके पुत्र सहित संवत् १७४४ वि०—२०वीं फरवरी सन् १६८७ ई० को कैद कर दिया, क्योंकि शाहजादेने, गोलकुण्डाके कुतुबशाहसे मिलकर, औरंगजेबके विरुद्ध षड् यन्त्र रचा था। आठ वर्षतक शाहजादे मुअज्जिम कैदमें रहे थे। औरङ्गजेबने कैद करनेसे पहले किसी बातसे प्रसन्न होकर शाहजादे मुअज्जिमको 'शाह आलम' का खिताब दिया था। औरङ्गजेबकी मृत्युके पीछे यही शाहजादा मुअज्जिम उपनाम शाहआलम, बहादुरशाहके नामसे हिन्दुस्तानके तख्तपर बैठे और केवल पांच वर्ष राज्य करके इस दुनियासे कूच कर गये।

सोलहवां परिच्छेद

पुन: मुठभेड़

"कारज उलटो होत है कुटिल नातिके बार
का कीजै सोचत यही जागि होत है भोर"

× × × × ×

"गैराजि गराजि जिन छिनमें गर्भिनि गर्भ गिरायो,
काल सरासि मुख खोलि दांत बाहर प्रगटायो।
मारि थपेड़न गज मुंडको मांस चबायो,
उदर फारि चिक्कारि रुधिर पौसरा चलायो।
फिरि नैन अगिनि सम मोछ फहराइ पोंछ उर्ध्व फरत,
गल केसर लहरावत चल्यौ क्रोधि सिंह दल दल दलत।"

मुगल सम्राट्से शिवाजीकी सन्धि हो गयी थी, पर यह सन्धि चिरस्थायी न थी, शिवाजी और औरङ्गजेब दोनोंकी ओरसे शतरञ्जकी चालें चली जा रही थीं।

करनेमें भीतरी चाल यह थी कि एक बार शेर कटघरेसे निकल गया है, उसको फिर किसी प्रकारसे अपने जालमें फंसाया जावे। दोनों ओरसे इस प्रकारसे भीतरी चालें चली जा रही थीं। दोनों ही एक दूसरेको छकाना चाहते थे। पाठक यह न समझें कि दो ढाई सौ वर्ष पहले इस प्रकार अपने स्वार्थ साधनके लिये ही सन्धिपत्र और सुलहनामे होते होंगे। नहीं, आजकल भी सभ्यता और शिष्टताकी डींग हांकनेवाली जातियां अपनी स्वार्थ सिद्धिके लिये सन्धि करती हैं, जब तनिक भी उनके स्वार्थ पर आघात पहुंचता है तब वे सन्धिपत्र और सुलहनामोंको कागजके टुकड़े बतलाकर फाड़ डालती हैं, तब ऐसी दशामें औरङ्गजेब और शिवाजीको ही क्यों दोष दिया जाय।

यह पहले लिखा जा चुका है कि सम्राट् औरङ्गजेबको अपनी छायातकका विश्वास नहीं था। सन्देहरूपी भूत सदैव उनकी आंखोंके सामने ही नाचा करता था। यहांतक कि वे अपने "लख्ते जिगर" पुत्रोंका भी विश्वास नहीं करते थे। उन्हें अपने पुत्रोंके काममें भी सदैव सन्देहका भूत दिखलायी पड़ता था। जिस प्रकारसे उन्होंने अपने पितासे राजसिंहासन छीना था, उसी प्रकारसे उन्हें अपने पुत्रोंद्वारा अपना राजसिंहासन छिन जानेका भय था और यह डर उन्हें अपने अन्त समयतक बराबर बना रहा था। उनके पुत्रोंने भी उनसे राजसिंहासन छीननेकी वैसे ही चेष्टा की जैसे उन्होंने अपने पिता शाहजहांसे छीना था। शाहजादे मुअज्जिमकी शिवाजीसे मैत्री हो गयी

थी, सम्राट् औरङ्गजेब अपने पुत्रकी शिवाजीसे मित्रता होनेसे भी भयभीत हुए, उन्हें यह प्रबल भय हो गया था कि कहीं शाहजादा मुअज्जिम शिवाजीकी सहायतासे मुगल-साम्राज्यका मुकुट और सिंहासन मुझसे छीन न ले। अतएव उन्होंने शिवाजीको दूसरी बार अपने माया जालमें फँसाना चाहा। उन्होंने सोचा कि यदि इस बार शिवाजी स्वयं मेरे चङ्गुलमें न फँसे तो कमसे कम उनके पुत्र सम्भाजी और उनके सेनापति ही मेरे जालमें फँस जायँगे तोभी बहुत मतलब निकलेगा।

दूसरी बार मुगल-सम्राट् औरंगजेब और शिवाजीमें युद्धभेदके कारण कई इतिहास-लेखकोंने भिन्न भिन्न रूपसे वर्णन किये हैं। कोई कहता है कि दक्षिणमें बादशाही सेनाका खर्च बहुत बढ़ गया था, अतएव सम्राट् औरंगजेबकी आज्ञासे वहां कुछ सेना घटा दी गयी थी। जो सैनिक मुगल-सेनासे अलग कर दिये गये थे, उन्होंने शिवाजीके यहां शरण ली। शिवाजीने उन सबको अपने यहां नौकर रख लिया। दूसरी बात यह भी हुई कि शिवाजीको बरारमें जो नयी जागीर मिली थी, उसमेंसे एक लाख रुपये शाही खजानेके लिये वसूल करनेकी आज्ञा हुई। यह एक लाख रुपये, सन् १६६६ ई० में जब शिवाजी आगरे गए थे तब उनके आतिथ्य-सत्कार, मार्गव्यय आदिमें खर्च हुए थे। शिवाजीको इस बातकी खबर उस समय पहुंची, जिस समय उन्होंने मुगलोंसे लड़नेकी पूरी तैयारी कर ली थी। उन्होंने समाचार पाते ही प्रतापराव गुर्जरको औरंगाबादसे अपने

आदमियों सहित चले आनेके लिये आज्ञा दी और सेनाका जो आधा भाग उस समय बरारमें था उसे भी शिवाजीने बुला लिया। इस सैन्यदलने बरारसे आते समय कुछ गांवोंको भी लूट लिया। इसके विपरीत* किसी किसीकी लेखनीसे यह भी ध्वनि निकलती है कि सन् १६६६ ई०में औरंगजेबने एक मन्दिरको विध्वंस कर दिया था जिसके कारण प्रतिवादस्वरूप औरंगजेबसे शिवाजीने युद्ध ठाना। सभासद लिखता है कि औरंगजेबने अपने पुत्र मुअज्जिमको शिवाजीके कारकुन प्रताप राव और नीराजी पन्तको पकड़नेकी आज्ञा दी थी। मुअज्जिमको इस आज्ञाके मिलनेसे पहले ही अपने दूतसे सम्राट् औरंगजेबके इस विचारका समाचार मिल गया था। शाहजादा मुअज्जिमने इस समाचारको पाते ही नीराजीको वहांसे भाग जानेका परामर्श दिया और वे शाहजादे मुअज्जिमकी सलाहसे प्रतापराव गुर्जर तथा सेना सहित चल दिये। उनके चले जानेके एक सप्ताह पीछे बादशाह औरंगजेबकी उपर्युक्त आज्ञा पहुंची, जिससे कोई भी मराठा-सरदार गिरफ्तार नहीं हो सका। शाहजादा मुअज्जिमने अपने पिता औरंगजेबको इस घटनाके सम्बन्धमें लिखा है कि दगाबाज मराठे, शाही फर्मानके आनेसे पहले ही यहांसे भाग गये हैं। इसलिये उनमेंसे कोई पकड़ा नहीं जा सका।

औरंगाबादसे अपनी सेना लौट आनेके पीछे, शिवाजीने

* मिर्ई इयांकी शाकावकी और ककमराम।

दक्षिणमें मुगलोंके जो स्थान थे, उनमें लूट मार मचा दी, नित्य प्रति दिल्लीके शाही दरबारमें शिवाजीकी लूट-मारके समाचार पहुंचने लगे। सवत् १७२६ वि० —२६ वीं जनवरी सन् १६७० ई० को सम्राट् औरंगजेबने दिलेरखांको देवगढ़से औरंगाबाद जानेकी आज्ञा दी। दाऊदखांको भी आज्ञा भेजी कि "तुम अपने प्रान्त खानदेशकी रक्षाका प्रबन्ध करके शाहजादे मुअज्जिमकी सहायताके लिये औरंगाबाद जाओ।" सम्राट्ने और भी कितने ही उच्च राजकर्मचारियोंको उत्तर भारतसे दक्षिण जानेकी आज्ञा दी। इस आज्ञाके कारण मुगल साम्राज्यके अनेक राजकर्मचारी दक्षिण भारतमें महाराष्ट्र-केशरी शिवाजी की प्रबल गति रोकनेके लिये पहुंच गये। मुगल-सम्राट् औरंगजेबने शिवाजीको अपने अधीन करनेके लिये पूरी तैयारी की।

शिवाजी, सम्राट् औरंगजेबके प्रबन्धसे भयभीत नहीं हुए। उन्होंने पुरन्दरकी सन्धिके समयपर जो किले, मुगल साम्राज्यको दे दिये थे, अब उन्होंने उन किलोंको धीरे धीरे फिर हथियाना शुरू कर दिया। परन्तु उन्होंने जो किले दिये थे, उन सबसे बढ़कर सिंहगढ़का किला था। बादशाह औरंगजेबको सिंहगढ़के किलेका बहुत खटका था कि कहीं शिवाजी इसको न ले लें, अतएव उन्होंने उदयभानु नामक एक राजपूतको सिंहगढ़का अध्यक्ष नियत किया। किसी किसी इतिहास-लेखकका कथन है कि उदयभानु मेवाड़का एक कुल कलंक राजपूत था,

जिसको महाराणा राजसिंह*ने किसी बातपर नाराज होकर मेवाड़से निकाल दिया था। मेवाड़से निकाले जानेपर उदयभानुने सम्राट् औरंगज़ेबके यहां शरण ली।

शासन और भेदनीति आजसे ही नहीं मुद्दतसे चली आ रही है। शासक जाति सदैव शासित-जातिमें भेदनीतिके बलसे ही अपना सिक्का जमाती है। भारतवर्षमें भी समय समय पर इस भेदनीतिके बलसे शासकोंने बड़ा लाभ उठाया है। औरंगज़ेबकी महाराणा राजसिंहसे पहलेसे ही अनबन थी।

---

* मुगल-साम्राज्यकी उन्नतिके दिनोंमें मेवाड़में तीन बड़े प्रबल पराक्रमी महाराणा हुए थे। पहले महाराणा सांगा उर्फ संग्रामसिंह थे जिन्होंने मुगल-साम्राज्यके संस्थापक बादशाह बाबरसे युद्ध किया था। हिन्दू जातिके दुर्भाग्यवश महाराणा सांगा सम्राट् बाबरसे दूसरी बार युद्ध करके शीघ्र ही परलोक सिधार गये, जिससे हिन्दू जातिके उद्धारकी समस्त आकांक्षाएं, उनके हृदयमें विलीन हो गयीं। महाराणा सांगाके पीछे राजस्थान केसरी महाराणा प्रतापसिंह हुए जिनकी अटल प्रतिज्ञा धीरता और वीरताकी कीर्ति आजतक अटल है जिन्होंने सम्राट् अकबरकी कभी अधीनता स्वीकार नहीं की थी, मेवाड़के अन्तिम प्रबल प्रतापी नरेश महाराणा राजसिंह हुए थे जिन्होंने जबरदस्त बादशाह औरङ्गजेबके दांत खट्टे किये थे। महाराणा राजसिंहने संवत् १०१ वि से संवत् १७१७ वि तक मेवाड़का राज्य किया था। जब संवत् १०१० वि में बड़ा भयानक दुर्भिक्ष पड़ा, तब महाराणा राजसिंहने एक बड़ी भारी झील बनवायी, जिसमें निन्नानबे लाख रुपये व्यय हुए। यह झील सात वर्षमें तैयार हुई थी। इस झीलका घेरा अनुमानतः बारह मीलका है यह उदयपुरसे पचीस मील उत्तरमें है इसको राजसमन्द कहते हैं। जब जोधपुर नरेश महाराज जसवन्तसिंहके देहान्त होनेके पीछे औरङ्गजेबने उनके अल्पवयस्क पुत्र अजीतसिंहको पकड़ना चाहा था, तब दुर्गादास राठौरने अजीतसिंहको महाराणा राजसिंहके यहां शरण दी और औरङ्गजेबको मुगल साम्राज्यके अनुरूप इसके बदले उसके पुत्र अकबरको बादशाह बनाना चाहा था। दिल्लीसे एक उर्दू पुस्तक निकली है जिसका नाम "सवानिह उमरीये—तैमूरिया" है,

उदयभानुके शरणागत होनेपर—"घरकाभेदी, लङ्का ढाये"—इस नीतिसे काम करना चाहा था। उन्होंने उदयभानुको प्रसन्नतापूर्वक अपने पास रखा और जिस समय शिवाजीके दमन करनेके लिये उन्होंने बड़े बड़े सरदार दक्षिणको भेजे थे, उस समय उन्होंने उदयभानुको भी सिंहगढ़ दुर्गका अध्यक्ष नियत करके दक्षिणको भेजा था।

सिंहगढ़ विकट पहाड़ी स्थानपर बसा हुआ है। वहांका प्राकृतिक दृश्य देखने ही योग्य है। चारों ओर उच्च पर्वत श्रेणी खड़ी है। इसके पूर्वमें एक ओर सह्याद्रि अपने गगनस्पर्शी

उसके पेज ८८ से पेज ८९ तक—यहां इतिहास आपामें यह [illegible] लिखा गई है कि औरङ्गजेबकी महाराणा राजसिंहकी भतीजीने मारी थी, वे और वे औरङ्गजेबकी उदयपुरी बेगम थी। परन्तु यह बिलकुल गलत है। वास्तवमें उसकी और औरङ्गजेबकी बेगम—उदयपुरी जार्जियाकी रहनेवाली क्रिश्चियन लड़की थी। पहले यह औरङ्गजेबके बड़े भाई दाराशिकोहकी बेगम थी। बादमें उसको किसी गुलामोंके बेचनेवालेने खरीदा था। जब औरङ्गजेबने दाराको मरवा दिया तब वह औरङ्गजेबकी बेगम हुई। यह बात विख्यात मुसलमान इतिहासकार भी स्वीकार करते हैं। मिस्टर मुहम्मद लतीफने भी अपनी पुस्तक में यह इतिहास लिखा है—"He (Aurangzeb) was fascina ed by a Christian Lady a native of Georgia, named Udepuri when a child she ha l been sold to Dara the elder brother of Aurangzeb by a slave dealer and she grew up to be exceedingly beautiful on Dara's death she infatuated Aurangzeb and became his favour queen She was the mother of Kambaksh the Emperor's youngest son"—"History of the Bengal from the remotest antiquity to the present time by Syed Muhammad Latif"—महाराणा राजसिंह तथा औरङ्गजेबके विवाह [illegible] पृष्ठ ५।

शिखरोंद्वारा अपने गाम्भीर्य्यका परिचय दे रहा है। इसके उत्तर और दक्षिणमें भी आकाशसे बातें करनेवाले पहाड़ हैं जिनपर चढ़ना अति कठिन है। आध मीलतक ऊपर चढ़कर, दुर्गकी छोटी पहाड़ियोंको तय करके किलेमें पहुंचना होता है। इस आध मीलकी चढ़ाईके ऊपर चालीस फीटतक काले पत्थरका टीला है, जिसके ऊपर मज़बूत पत्थरकी एक दीवाल है जिसमें स्थान स्थानपर बुर्ज भी हैं। इस बाहरी दीवालके भीतर किला है जो त्रिभुजाकार बना हुआ है। इसके बीचमें तखमीनन दो मीलका मैदान है।

सिंहगढ़का किला कब और किसने बनवाया, इसका कुछ पता नहीं लगता है, परन्तु दक्षिणमें मुसलमानोंके पहुंचनेसे पहले यह किला मौजूद था। इसका प्रमाण दन्तकथाओंसे तथा सिंहगढ़के पूर्व नामसे मिलता है। सिंहगढ़का पहला नाम कोंडाणा था। इस किलेके समीप ही एक छोटासा गांव है, उसका नाम कोंडणपुर है। दन्तकथाओंसे जाना जाता है कि यहांपर कौण्डिन्य ऋषिका आश्रम था। इस किलेके आस-पास जो रहते हैं, वे अब भी यही बात कहते हैं। यह किला कौण्डिन्य अथवा शृङ्गी ऋषिकी तपश्चर्याका स्थान था। कोंडण शब्दके आगे पुर होनेसे यह बात स्पष्ट है कि पहले समयमें कोंडण नाम मुसलमानोंका रखा हुआ नहीं है। सम्भव है कि कोंडणपुरका कुंडिनपुर अथवा कौण्डिन्यपुर बन गया हो। कहनेका तात्पर्य्य यह है कि इस किलेको मुसलमानोंने नहीं

बनाया। दक्षिणमें मुसलमानोंके बहु चलेसे बहुत समय पहले इसको किसी हिन्दू राजाने निर्माण कराया होगा। सम्भव है कि यादव या शिलाहार अथवा इनसे भी पहले किसी पराक्रमी राजाने इस किलेकी बुनियाद डाली हो। इतिहासमें इस किलेका पता सबसे पहले मुहम्मद तुगलकके समयसे लगता है। नागनायक नामक राजाके अधिकारमें पहले यह प्रान्त था और उसीके अधिकारमें यह किला भी था। मुहम्मद तुगलकने इस प्रान्तपर चढ़ाई करके, राजाको परास्त किया। उससे पराजित होकर राजा अपने साथियों सहित किलेमें आकर रहने लगा। किलेके ऊपर शस्त्रास्त्रका प्रयोग करके, उसे अपने अधिकारमें कर लेना असम्भव था और मुहम्मदशाहको इस बातका अनुभव भी प्राप्त हो चुका था। अतएव वह आठ महीने तक किलेको घेरे पड़ा रहा। अतएव जब किलेमें बन्द राजाके पास भोजनकी सामग्री चुक गयी, तब उसने यह किला मुहम्मद तुगलकके हवाले कर दिया।

इसके बाद, अहमदनगर राज्यके संस्थापक मलिक अहमद के अधिकारमें भी यह किला कुछ दिनोंतक रहा था, यह बात इतिहासमें पायी जाती है। अहमदनगर राज्यके अभ्युदयके समय यह किला शाहजीके अधिकारमें था। पीछे भी आपुके आदिलशाहके हाथमें आया। पूना प्रान्तकी रक्षा करनेके लिये इससे बढ़कर और कोई उत्तम दुर्ग नहीं है। इस कारण उस प्रान्तपर अपना प्रभुत्व बनाये रखनेके अभिलाषी पुरुषोंका

ध्यान इस किलेकी ओर सहज ही जाता है। जिस समय शिवाजी महाराजने स्वराज्यकी स्थापना आरम्भ की, उस समय तोरण इत्यादि अन्य किलोंके साथ ही इसे भी अपने अधिकारमें कर लिया। बहुत दिनोंतक यह किला शिवाजी महाराजके अधिकारमें रहा। पाठक यह पीछे पढ़ चुके हैं कि जिस समय पूनेमें आकर शाइस्ताखांने पड़ाव रखा था, उस समय शिवाजीने इसी किलेमें रहकर ही उसका विध्वंस किया था। शाइस्ताखां और जसवन्तसिंहकी अधीनस्थ सेनाने उस समय इस किलेको लेनेकी चेष्टा की, पर सफलता प्राप्त नहीं हुई। अपने पिता शाहजीकी मृत्युके पीछे, इसी किलेमें शिवाजी शोकातुर हो रहने लगे। शिवाजी महाराजने शाहजीका क्रिया कर्म इसी किलेमें किया था*। उस समय इस दुर्गके चारों ओर मछली पकड़नेवाले कहार रहते थे। उदयभानुके आनेसे पहले यह किला रामाजी नामक मनुष्यके अधिकारमें था। उदयभानुने पहुंचकर इस किलेकी बहुत चौकसी की, उसने दुर्गकी रक्षाके लिये अत्यन्त कठोर प्रबन्ध किया। उसकी आज्ञा बिना कोई बाहरी आदमी किलेके भीतर न तो आ सकता था और न किलेसे बाहर जा सकता था। किलेके भीतर जितने बुर्ज तथा बुर्जियां थीं उनपर भी पहरेदार रखे गये। पहरेदारोंके लिये जो नियम बनाये गये थे वे इतने कड़े थे कि बेचारे पहरेदारोंको रातमें सोना भी कठिन हो गया था। इतना कड़ा प्रबन्ध करने

* "शिवदिग्विजय" में परिवर्तित रूपमें उद्धृत।

के पीछे भी उदयभानु स्वयं रातको किलेका निरीक्षण करता था और जिसको वह "ड्यूटी" पर न पाता, उनको बड़ा कठोर दण्ड देता था।

सिंहगढ़के युद्धके सम्बन्धमें मराठी भाषामें एक पोवाड़ा (गीत) प्रचलित है। ढाई तीन सौ वर्ष बीत जानेपर भी मराठे लोग इस गीतको बड़े चावसे गाया करते हैं और महाराष्ट्रका बच्चा बच्चा, सिंहगढ़ विजयके गीतसे परिचित है। यद्यपि ऐतिहासिक पुस्तकोंमें सिंहगढ़का जो वर्णन मिलता है, उसमें और इस गीतमें वर्णित विजयमें कुछ अन्तर है तथापि सिंहगढ़ हस्तगत करनेमें शिवाजीकी सेनाको किस प्रकारकी कठिनाइयोंका सामना करना पड़ा था, इस विषयमें गीत और ऐतिहासिक लेख, दोनोंका वर्णन बहुत कुछ मिलता-जुलता है। परन्तु इस गीतमें सिंहगढ़के घेरकी तैयारी और विजयका वर्णन विस्तारपूर्वक किया गया है, अतएव यहां उक्त गीतके कुछ अंशोंके आधारपर ही सिंहगढ़ विजयका वृत्तान्त पाठकोंकी भेंट किया जाता है।

सिंहगढ़ और पुरन्दरके किलोंमें मुगल-सेनाका रहना, शिवाजी और जीजाबाई दोनोंको खटकता था। औरङ्गजेबने जो पिछली बार शिवाजीके साथ विश्वासघात किया था, उससे शिवाजीको यह प्रतीत हो गया था कि अब मुगलोंसे मिलकर स्थिर रहना कठिन है। अतएव उन्होंने मिर्ज़ा राजा जयसिंहसे सन्धि करते समय जो किले औरङ्गजेबको भेंट किये थे उन

पर फिर अपना कब्जा करना शुरू कर दिया था। शिवाजीके हाथमें अपने कई किले आ जानेपर भी पुरन्दर और सिंहगढ़के किले नहीं आये थे। अतएव जीजाबाईकी दृष्टि सिंहगढ़की ओर विशेष रूपसे लगी हुई थी। मराठी पोवाड़ा (गोत) से प्रतीत होता है कि एक दिन सोमवारको शिवाजी रायगढ़* में थे और उनकी माता जीजाबाई प्रतापगढ़में थीं। जीजाबाई उस दिन प्रतापगढ़में अपने महलपर खड़ी हुई हाथी-दाँतकी कंघीसे अपना सिर झाड़ रही थीं कि उनकी दृष्टि पूर्वकी ओर सिंह गढ़पर पड़ी, जो सूर्य्यकी किरणोंमें चमचमा रहा था। बस फिर क्या था, दिलमें जोश भर आया और सोचने लगीं कि जबतक मेरे बेटेके पास यह किला न होगा तबतक राज्य अधूरा है। बस उन्होंने इस विचारके उत्पन्न होते ही एक सवारको रायगढ़ शिवाजीको बुलानेके लिये भेजा और कहला भेजा कि "यदि शिवाजीने वहाँ भोजन किया हो तो पानी यहां आकर पिये अर्थात् जितनी जल्दी हो सके उतनी शीघ्रतासे यहां आ जाय।" जीजाबाईका यह सन्देश शिवाजीको देनेके लिये दूत रायगढ़ पहुंचा।

शिवाजी अपनी माताकी यह आज्ञा सुनते ही तत्काल प्रताप गढ़को चल दिये। उन्होंने अपने साथ अपने हथियार ढाल

* गोतमें लिखा हुआ है कि शिवाजी रायगढ़में थे परंतु गोतके टीकाकारने शिवाजी जिस मार्गसे अपनी माताके पास पहुंचे थे उसके आधारपर यह साबित किया है कि राजगढ़में थे। अतएव यहां हमने भी रायगढ़ ही लिखा है।

तलवार, बघनख ले लिये और कृष्णा नामक काली घोड़ीपर सवार होकर बहुत शीघ्र प्रतापगढ़ पहुँच गये। जीजाबाई अपने पुत्रके आनेकी बहुत देरसे बाट देख रही थीं, उन्होंने पुत्रके आगमनका समाचार सुनते ही चौसर बिछा दी, जिससे शिवाजीको पता लग जाय कि माताजी चौसर खेल रही हैं। शिवाजी अपनी माताके महलोंमें पहुँचे और वन्दना की। माताने अपने प्यारे पुत्रका खड़ी होकर राज्योचित स्वागत किया और फिर मातृस्नेहसे शिवाजीका सिर अपनी गोदमें रखकर प्यार किया और अपने पास बिठा लिया। शिवाजीने पूछा कि "माता! मुझे इतनी शीघ्रतासे क्यों बुलाया है? शीघ्र आज्ञा दीजिये, जिससे आज्ञा-पालनमें विलम्ब न हो।" माताने शिवाजी के इस प्रश्नका कुछ उत्तर नहीं दिया और इस प्रश्नको बड़ी होशियारीसे टालकर कहा कि "आओ बेटा! पहले चौसरकी एक बाजी खेलें।" शिवाजीने पहले चौसर खेलना स्वीकार नहीं किया, उन्होंने कहा कि खेलमें भी पुत्रको अपनी माताका विरोध नहीं करना चाहिये। परन्तु जब माताने विशेष अनुरोध किया तब वे अपनी माता जीजाबाईके साथ चौसर खेलने खड़े हो गये। शिवाजीने कहा कि "माता! पहले आप पासा डालिये।" माताने कहा—"नहीं बेटा! राजाकी उपस्थितिमें कोई भी अगवानी नहीं कर सकता, क्योंकि यह राजपदवीका अधिकार है। माताके अनुरोधसे शिवाजीने ही पहले पासा डाला, फिर उनकी माताने पासा डाला। पासा डालनेमें

पहले जीजाबाईने भवानीका ध्यान किया और वे जीत गयीं। शिवाजीने कहा—"माता ! मैं हारा और आप जीतीं, जो कुछ आज्ञा हो वह किया जाय। किले, माल और धन सब कुछ मौजूद है, जो चाहिये लीजिये।" माताजीने कहा—"बेटा ! मुझे न तो इन किलोंकी आवश्यकता है, न तेरे धनकी, मुझे केवल सिंहगढ़का किला चाहिये। जबतक तुम किला न जीतोगे तबतक तुम्हारा राज्य अधूरा है।" माताकी यह बात सुनते ही शिवाजी सन्न रह गये, मानों उनपर वज्र पात हुआ, उनके चेहरेपर उदासीनता छा गयी। उन्होंने मातासे बहुत प्रार्थना की कि "सिंहगढ़ मेरा नहीं है, जो आपको दे सकूं। यह किसका साहस है कि शूरवीर उदयभानुका सामना कर सके।" पर जीजाबाईने शिवाजीकी एक न सुनी और अत्यन्त क्षुब्ध होकर कहा—"बेटा ! याद रखो, माताका शाप बहुत बुरा होता है। तेरा सम्पूर्ण राज्य मेरे शापसे भस्म हो जायगा। मुझको तू जो वचन दे चुका है उसका पालन करना तेरा परम धर्म है। मुझे सिंहगढ़के सिवा और किसी वस्तुकी आवश्यकता नहीं।" माताका यह अनुरोध शिवाजी टाल नहीं सके, उन्होंने माताजीसे अपने साथ रायगढ़ चलनेको प्रार्थना की। माताने यह प्रार्थना स्वीकार कर ली, माता और पुत्र दोनों प्रतापगढ़से रायगढ़ पहुंचे। वहां पहुंचकर उन्होंने कई घंटे यह विचार किया कि किला किस प्रकारसे लिया जाय ? वहां उन्होंने अपने दरबारमें उपस्थित सब सरदार, शासक और

मित्रादिको माता जीजाबाईकी सिंहगढ़ विषयक आज्ञा सुनाया। सुनकर सब लोग चुप्पी साध गये, किसीकी हिम्मत सिंहगढ़ विजय करनेकी नहीं हुई। अपने सरदारोंकी ऐसी दशा देखकर अन्तमें शिवाजीने कहा कि कमसे कम एक मनुष्य मेरे राज्यमें है जो इस कामको पूरा कर सकता है। यह कहकर उन्होंने दूतको बुलाया और तानाजीके पास यह लिखित आज्ञा भेजी कि "अपनी बारह हजार सेनासहित रायगढ़ तीन दिनके भीतर शीघ्र ही चले आओ।" पाठकोंको स्मरण होगा कि यह वही तानाजी थे, जो अफजलखाँसे मिलते समय शिवाजीके साथ थे। शिवाजी और तानाजीका बाल्यावस्थासे ही साथ था। अनेक सङ्कटके समय तानाजीने शिवाजीकी सहायता की थी।

शिवाजीकी आज्ञाका पालन करनेके लिये दूत रायगढ़से चल दिया और तानाजीकी जागीरमें पहुंचा तो चारों ओर आनन्द और प्रसन्नताके सामान दिखायी दिये। पूछनेसे ज्ञात हुआ कि तानाजीके बेटे रायबाके विवाहकी तैयारियां हो रही हैं। दूतने तानाजीके समस्त जाति-बन्धु और सेनानियोंके सामने ही शिवाजीका आज्ञापत्र उन्हें दिया। जब यह आज्ञा पत्र पढ़ा गया तब तानाजीका बूढ़ा मामा शलरजी सुन कर तानाजीसे कहने लगा—"तानाजी, सिंहगढ़पर विजय प्राप्त करना कुछ हंसी-खेल नहीं है। आजतक जितने मनुष्य उस किलेपर चढ़कर गये जीते लौटकर नहीं आये। मुझे यह अच्छा नहीं मालूम होता है कि तुम अपने पुत्रके विवाहको

छोड़कर इस युद्धके लिये जाओ। मेरा माथा ठनकता है कि तुम जीते नहीं लौटोगे।" शूरवीर तानाजीको अपने बूढ़े मामा शेलरजीकी यह सम्मति पसन्द नहीं आयी, उन्होंने कहा कि "क्या मैं क्षत्रिय नहीं हूं? क्या मैंने क्षत्राणीका दूध नहीं पिया है जो मुझे आप मौतसे डराते हैं।" तानाजी यह कह ही रहे थे कि उनका इकलौता बेटा रामजी भी उनके सामनेसे आ निकला। तानाजीने पुत्रको बुलाया और उसे धीरज बंधाकर कहा कि मैं राजाकी सेवामें जाता हू और सात दिनका अवकाश लेकर तेरे विवाहके लिये लौट आऊंगा। उसके पीछे घेरेपर जाऊँगा। तानाजीने राजाज्ञा पालन करनेके लिये अपने मण्डलकी समस्त लड़नेवाली जातियोंको एकत्र करनेकी आज्ञा दी। बारह हजार युवा वीर एकत्र करके तानाजी रायगढ़की ओर चले। साथमें तानाजीके भाई सूर्याजी तथा दूरके नातेके मामा शेलरजी भी हो लिये।

गीतमें कहा गया है कि ये बारहों सहस्र मनुष्य ग्रामीण तथा वनवासी थे, जो अपने अपने कम्बल कन्धोंपर रखकर और अपने खेतोंको छोड़कर तानाजीके चारों ओर जमा हो गये थे। न तो उनके पास कपड़े ही थे और न उनके पास हथियार ही थे, किन्तु लाठियां, उनके हथियारोंसे बढ़कर थीं। जब तानाजी अपने गांवसे बाहर निकले तब बहुत अपशकुन हुए। अपशकुन देखकर बूढ़े शेलरजी मामाने तानाजीको वापस लौट चलनेके लिये सलाह दी,

पर वीर तानाजीने मूढ़ेकी यह बात नहीं मानी, वे आगे बढ़े ही चले गये। शकुनोंकी अपेक्षा वे शिवाजीका आज्ञा-पालन करना अपना परम पवित्र कर्त्तव्य समझते थे।

तानाजी अपने दल-बलसहित रायगढ़के किलेके साम पहुंचे। दूरसे जीजाबाईने देखा तो वे सोचने लगीं कि शायद कोई शत्रु चढ़ आया है अतएव उन्होंने उसी समय शिवाजीको बुलाया और आती हुई सेनापर गोले दागनेका परामर्श दिया परन्तु जब शिवाजीने ध्यानपूर्वक देखा तो माताजीको समझा.. कि किसी शत्रुकी सेना नहीं है वरन् तानाजी अपने दलसमेत आ रहे हैं। तानाजीके दलके आगे शिवाजीकी सेनाका ही निशान था, शिवाजीकी ही ध्वजा-पताका फहरा रही थी। तानाजी अपनी समस्त सेना किलेके बाहर छोड़कर अकेले ही शिवाजीके पास पहुँचे और वन्दना करके बोले कि "राजन्! मैंने कौनसा अपराध किया है जो मुझे ऐसे समयमें बुलाया गया है जब कि मैं अपने बेटेके विवाहमें व्यस्त था। क्यों मेरे ऊपर इतनी सख्ती की गयी है।" शिवाजीने शीघ्रही तानाजीको अपने गलेसे लगा लिया और बोले कि "भाई मैंने तुम्हें नहीं बुलाया है पर माताजीने तुम्हें याद किया है।" उधर जीजाबाई भी शिवाजी और तानाजीकी ये सब बातें सुन रही थीं, उन्होंने देखा कि शिवाजीने सब पल्ला मेरे ऊपर टाल दी है तो तत्काल अपने कमरेमें गयीं और चांदीकी थालीमें; एक दीपक जलाया कि इतनेमें ही तानाजी भी उनके पास पहुंच गये। बस, फिर क्या

था, वे दीपक चले हुए थालको लेकर तानाजीके सिरपर घुमाकर आरती उतारने लगीं और कहा कि "बेटा, चिरञ्जीवी रहो।" इतना कहकर भवानी देवीकी हाथ जोड़कर प्रार्थना करने लगीं कि वीर तानाजीकी सब प्रकारसे रक्षा करना। तानाजीने अपनी पगड़ी उतारकर उनके पैरोंपर रख दी और हाथ जोड़कर कहा कि "क्या आज्ञा है, आपका यह सेवक उपस्थित है।" जीजाबाईने कहा—"मेरे प्यारे ताना! मैं और कुछ नहीं चाहती, मैं केवल सिंहगढ़का किला चाहती हू। यदि तुमने यह किला मुझे दिया तो मैं तुमको शिवाजीका कनिष्ठ सहोदर अपना प्यारा बेटा समझूंगी।" तानाजी सिंहगढ़ विजय करनेके लिये शीघ्रही तैयार हो गये और जीजाबाईसे विदा होकर उस स्थानपर पहुंचे जहां वे अपने दलको खड़ा कर गये थे। उनके आते ही बूढ़े मामा शेलरने पूछा—"कहो, कैसी बीती?" तानाजीने सब हाल सुनाकर कहा कि "अब मैं सिंहगढ़ विजय करने जाऊंगा।" शेलर मामा बोला—"अच्छा जाओ पर आओ मास खूब मिलकर भोजन करें।" शिवाजीकी माताने तानाजीके समस्त सैनिकोंको वस्त्र और शस्त्र दिये। तानाजीको भी पुरस्कार देकर सिंहगढ़ विजय करनेके लिये विदा किया।

तानाजीने अपनी सेनाको कई भागोंमें विभक्त किया था और अलग अलग भागोंसे समस्त सेनाको किलेके नीचे पहुंचने की आज्ञा दी। जब समस्त सैन्यदल नियत समयपर किलेके नीचे पहुंचा, तब तानाजीने एक चद्दर बिछायी और उसपर

बीड़े पानके रख दिये और उच्च स्वरसे कहा कि जो वीर अपने प्राणोंको सङ्कटमें डालकर किलेमें जासूसी करनेके लिये जा सकता हो वह बीड़ा उठाये। यदि उसे इस काममें सफलता प्राप्त हुई तो वह मालामाल कर दिया जायगा, उसे बड़ी भारी जागीर मिलेगी, पर किसीका बीड़ा उठानेका साहस न हुआ। अन्तमें तानाजीने स्वयं ही बीड़ा उठाया और अपना वेष बदलकर वहांसे किलेका समाचार जाननेके लिए विदा हुए। आनन्दवाड़ी नामक स्थानपर पहुँचनेपर तानाजीने अपना वेष पटेलका सा बनाया और जङ्गलमें होते हुए वे शत्रुके किलेके बाहर चौकीके पास पहुँच गये। इस चौकीपर रखवारी करनेवाले सब हिन्दू और कोली जातिके थे। उन्होंने तानाजीको पकड़ लिया, तानाजीने उन लोगोंसे कहा—"मैं बाकारा गाँवका पटेल हूं। अभी राहमें मुझे एक शेर मिला जिससे भागकर तुम्हारी शरणमें आया हूं।" कोलियोंने तानाजीकी बातपर विश्वास कर लिया। फिर तानाजीने पान सुपारी तम्बाकू और अफीम कोलियोंमें बांटी। इस प्रकारसे उन्होंने बाहरके पहरेदार कोलियोंके हृदयपर अपना अधिकार जमा लिया*। अन्तमें उन्होंने पहरेदारोंमें कुछ अशर्फियां बांटी और

---

* कई इतिहास-लेखकोंने लिखा है कि तानाजीके साथ केवल एक [illegible] जाते थे। [illegible] तानाजीके [illegible] और [illegible] थे। उन्होंने [illegible] दिन तक [illegible]।

कहा कि मैं शिवाजीका सरदार हूं और किलेके गुप्त समाचार जानना चाहता हूं। उन्होंने तानाजीको किलेकी सब गुप्त बात बतला दीं। जितनी बातें तानाजी चाहते थे, उससे अधिक बातें उन्होंने बतलायीं। उन्होंने कहा कि "किलेका भीतरी घेरा छः मीलका है*। किलेके अध्यक्ष उदयभानुके साथ अठारह सौ पठान और बहुतसे अरब हैं। उदयभानु बड़ा भारी योद्धा है। उसके अठारह स्त्रियां हैं। उसकी खुराक भी कुछ कम नहीं है। वह नित्यप्रति एक समय बीस सेर चावल,† डेढ़ गाय और डेढ़ भेड़का मांस खाता है। उसके पास एक ऐसा हाथी है जो मनुष्यको मार डालता है, उसका नाम चन्द्रावली है। उदय भानुका सहकारी भी कुछ कम वीर नहीं है। उसका नाम सिद्दी हलाल है। उसके भी नौ स्त्रियां हैं, वह भी एक समयके भोजनमें एक भेड़, आधी गौका मांस तथा आधे मन चावल खा जाता है। उदयभानुके बारह लड़के हैं जो उदयभानुसे भी अधिक बलवान हैं।" अन्तमें कोलियोंने तानाजीसे कहा कि किलेकी दाहिनी ओर जो ढलुआं चट्टान है, उसपर सीढ़ियोंसे चढ़ा जा सकता है। यह सुनते ही तानाजी वहांसे उठे और कोलियोंसे कहा कि यदि दुर्गपर विजय प्राप्त हुई तो तुम

---

* किलेका भीतरी घेरा दो मीलसे अधिक नहीं है।

† राजपूत हिन्दू गोमांस कभी भक्षण नहीं करते हैं, उदयभानके मुसल्मानी धर्म [illegible] होनेसे ही सम्भव है कि मराठी ग्रन्थोंमें उदयभानुके लिये ऐसा लिख दिया गया है। किसी किसी इतिहास-लेखकने यह भी लिखा है कि उदयभानु मुसलमान हो गया था।

लोगोंको बहुतसा पारितोषिक दिया जायगा। यहांसे सीधे वे अपने सैन्यस्थलमें पहुंचे और उसी रातको किलेपर चढ़ाई करनेकी तैयारी की। उस दिन तानाजी अपनी सेनासहित किलेके कल्याण दरवाजेकी ओर चले गये। यहां पहुंचकर तानाजी फिर चादर बिछायी और कहा कि यदि कोई क्षत्रियका बेटा हो तो बीड़ा उठाये और रस्सी पकड़कर ऊपर चढ़े। सबके सब इधर उधर झांकने लगे, किसीका बीड़ा उठानेका साहस न हुआ। इस पर तानाजीको अत्यन्त क्रोध हुआ, उनके नेत्रोंसे क्रोधके कारण ज्वाला निकलने लगी और ललकारकर अपने सैनिकोंसे कहने लगे कि उठो, अपने हथियार रख दो और चूड़ी और स्त्रियोंकी साड़ी पहनकर घरका मार्ग पकड़ो। बस इतना कहना था कि मराठोंको जोश आ गया और पांच सौ वीर, ऊपर चढ़नेके लिये तैयार हो गये और महाराज* शिवाजीकी दुहाई देकर, भवानीका

---

* [illegible]

नाम लेकर किलेपर चढ़ गये। चढ़ते समय इन वीरोंने अपनी तलवारें दांतोंसे पकड़ ली थीं। तानाजी अपने पचास आद मियोंसहित ऊपर चढ़ गये। पीछे उनके साथियोंमें किलेपर चढ़नेके लिये इतनी खलबली मची कि रस्सी टूट गयी। उनके बहुतसे साथी गिर पड़े। जब तानाजीको रस्सी टूटनेका समाचार मिला तब वे अत्यन्त दुःखी हुए और कहने लगे कि न केवल रस्सी ही टूट गयी बल्कि हमारे जीवनकी लड़ी टूट गयी। तानाजीके साथ जो पचास आदमी थे वे भी रस्सीके टूटनेसे निराश हुए और इधर-उधर कूदने लगे पर तानाजीने उन सबको रोक लिया और कहा कि मेरे पीछे चले आओ*। तानाजीके कथनानुसार सब लोग कल्याण फाटककी ओर चले गये और वहांपर जरय पहरेदार थे उनको मार दिया, पीछे तानाजीका दल दूसरे फाटककी ओर गया, वहां तानाजीके दलने तीन सौ पठानोंका काम तमाम किया। पीछे ये लोग

* यहां भिन्न भिन्न लेखकोंने भिन्न भिन्न बातें लिखी हैं। किसीने लिखा है कि शेलार मामाने तानाजीको एक बार फिर समझाया कि केवल पचास आदमियोंके साथ उदयभानुका सामना करना ठीक नहीं है पर तानाजीने नहीं माना। किसी किसीने लिखा है कि इस शेलारने किलेके ऊपर चढ़नेकी इच्छा प्रकट की पर ताना-जीने बीचमें आपत्ति की। तब ही इस शेलारको क्रोध आ गया और कहा कि तानाजी! आज मैं इस बातको दिखाता हूं या कि ८० वर्षके इस बूढ़े शरीरमें कितना बल होता है। पर ऐसी वैसी तानाजीने अपने इस मामाको रोका। सूर्याजी कल्याण दरवाजेकी ओर भेजे गये और शेलार तथा तानाजीने दुर्गपर चढ़ना विचारा। उस दिन तानाजीने अन्न पानी ग्रहण नहीं किया। शेलार मामाके पूछनेपर कहा कि आज जबतक दुर्ग हस्तगत न करलूंगा अन्नजल ग्रहण नहीं करूंगा। कोई कोई इतिहासवेत्ता कहते हैं, कि तानाजी अपने तीन सौ आदमियों सहित किलेके भीतर दाखिल हुए हैं।

तीसरे फाटककी ओर गये, वहां चार सौ पठानोंका काम तमाम किया। उन पठानोंमेंसे एक किसी तरह बचकर उदयभानुके पास इस दुःखदायी समाचारको देने गया।

उस समय उदयभानु नशेमें चूर था। उसने अठारह प्याले शराब पी थी और अफीमकी कई गोलियां चढ़ायी थीं। वह उस समय अपनी स्त्रियोंकी रूपसुधाका पान करनेकी तैयारी कर रहा था कि ऐसे समयमें उसको शत्रुओंके आगमनका दुःखदायी समाचार मिला। इस समाचारको पाते ही उसने अपने चन्द्रावली हाथीको तानाजीका सामना करनेके लिये ले जानेकी आज्ञा दी। चन्द्रावली हाथीके महावतने चन्द्रावलीको खूब अफीम और भांग खिलायी और उसको तानाजीके सामना करानेके लिये ले गया। तानाजीको देखते ही हाथी उन पर झपटा, पर वीर तानाजीने हाथीसे युद्ध करनेमें अद्भुत कौशल प्रकट किया। वे उछलकर हाथीकी पीठपर चढ़ गये और अपनी तलवारके एक ही आघातसे हाथीकी सूंड़ काट दी, जिससे हाथी मर गया। उदयभानुके पास जब चन्द्रावली हाथीके मारे जानेका समाचार पहुंचा तब उसने गिर्दोहखानको तानाजीसे लड़नेकी आज्ञा दी। आज्ञा पाते ही गिर्दोहखानने अपनी भी स्त्रियोंको अपने हाथसे ही मार डाला, क्योंकि उसने सोचा कि मेरे पीछे इन स्त्रियोंका किसी प्रकारसे अपमान न हो और न सतीत्व भङ्ग हो। अपनी स्त्रियोंको मारकर उनके रुधिरका टीका अपने मस्तकपर लगाकर गिर्दोहखान

तानाजीसे लड़नेके लिये गया। तानाजी उस समयतक रण क्षेत्रमें डटे हुए थे। सिद्दीहलालको देखते ही लड़नेके लिये तैयार हुए। युद्ध आरम्भ करनेसे पहले सिद्दीहलालने तानाजीसे कहा—"अगर तू अपने मुहमें घास रखकर और अपने सिरको मेरे जूतोंमें धरकर मुआफी मांगे तो मैं तुझे क्षमा कर सकता हूं।" यह वाक्य सुनते ही तानाजीने उसे ललकारा और दोनों वीर आपसमें जुट गये। सिद्दीहलाल भी कुछ कम वीर न था। उसने कई वार बड़ी फुर्तीसे तानाजीपर आक्रमण किया, कहते हैं कि तानाजीने सिद्दीहलालकी तलवारके अठारह आक्रमणोंको रोका और अन्तमें सिद्दीहलालपर अपनी तलवारका ऐसा हाथ जमाया कि उसके दो टुकड़े हो गये और वह इस संसारसे कूच कर गया। जब सिद्दीहलालके मारे जानेका समाचार उदयभानुके पास पहुंचा तब उसने अपने बारह बेटोंको ताना-जीसे लड़नेके लिये भेजा पर दुर्भाग्यवश उदयभानुके बारहों लड़के भी तानाजीके हाथसे मारे गये। अपने लड़कोंके मारे जानेका समाचार सुनकर उदयभानुको अत्यन्त क्रोध हुआ। उसने भी अपनी अठारहों स्त्रियोंको सिद्दीहलालके समान ही मार डाला और अपनी बची खुची सेनाको लेकर कल्याण फाटककी ओर गया। लड़नेसे पहले उदयभानुने किलेकी सब रुई और तेलको निकलवाकर आग लगवा दी जिससे चारों ओर उजाला हो गया। उजालेमें उदयभानुको पता लगा कि तानाजीकी सेना बहुत थोड़ी है। बस फिर क्या था, उदयभानु

शेरके समान गरजा और तानाजीके सामने आ डटा। तानाजी दिनभरके भूखे प्यासे और थके हुए थे, उदयभानुके हाथसे मारे गये। तानाजीको मारकर उदयभानु पीछे हटने लगा और अपनी सेनासे कहा—"बस शेर मार लिया, तुम सब लोग बाकी सबका काम तमाम करो।" इतनेमें ही शेलार मामा तलवार लेकर आगे बढ़ा और उदयभानुको ललकारकर कहा कि कहाँ जाता है, तानाजी मारा गया तो क्या सारा महाराष्ट्र मर गया, जरा सामने तो आ और देख मरे हुए सरदारकी तलवार क्या क्या काम करती है! इतना कहकर शेलार मामा उदयभानुपर झपटा और उदयभानु मारा गया। उदयभानुके सैनिकोंने जोर पकड़ा, मावले हटने लगे, तानाजीके भाई सूर्याजीने देखा कि अपनी सेना पीछे हट रही है तो उन्होंने कमन्द और रस्सोंको काट दिया और अपने सैनिकोंसे कहा कि कापुरुषो! जाओ, अपने प्राणोंको कायरोंकी तरह गंवा दो। तानाजीको खोकर और अपने मुंहमें कालिख पोतकर शिवाजीके सामने जाओ और साथमें यह भी देखते जाओ कि तानाजीकी बोटी बोटी कैसे काटी जाती है। धिक्कार है तुम सबको! सूर्याजीके इन मर्मवेधी शब्दोंने अपूर्व काम किया। मराठे डट गए। मुगल-सेना परास्त हुई*। सूर्याजीने देखा कि पूर्ण विजय प्राप्त हुई है तब उन्होंने शिवाजीकी दुहाई फिरवा दी और [illegible]

---

* [illegible]

किया कि जो हथियार रख देगा, यह मारा नहीं जायगा। इस घोषणाको सुनकर अनेक योद्धाओंने अपने हथियार रख दिये। किलेपरसे शाही झण्डा उखाड़कर फेंक दिया गया और वहांपर शिवाजीकी विजय पताका फहरायी गयी। शिवाजीको सिंहगढ़ विजयकी सूचना देनेके लिये पांच तोपें छोड़ी गयीं और कुछ इमारतोंमें आग भी लग दी गयी। सिंहगढ़ विजयकी सूचना पाकर शिवाजी राजगढ़से चले, कल्याण फाटकसे ही उन्होंने दुर्गमें प्रवेश किया। प्रवेश करनेपर वीर मावलोंने उन्हें प्रणाम तो किया पर किसी प्रकारका हर्ष प्रकट न किया। जो उनको देखता वही गर्दन झुका लेता, शिवाजीने सब ही ओर यही रङ्ग देखा तो उन्हें भी यह भास गया कि कुछ न कुछ अवश्य अशुभ हुआ है। आगे बढ़े तो उनको शेलार मामा मिले। उनके सामने एक शव रखा हुआ था जिसके ऊपर एक जरीका दुपट्टा पड़ा हुआ था। शिवाजीको देखते ही शेलर रोने लगे। इस दृश्यको देखते ही शिवाजीका हृदय विदीर्ण हो गया। तानाजीके शवको देखकर शिवाजी बहुत रोये और कहा—"गढ आला, पण सिंह गेला" अर्थात् गढ तो आ गया पर सिंह चला गया। सिंहगढ़ विजय फाल्गुण कृष्णा नवमी संवत् १७२६ वि० —१७ वीं फरवरी सन् १६७० ई० को हुई।

सिंहगढ़ विजयकी प्रसन्नतामें शिवाजीने अपनी सेनाके वीरोंको पारितोषिक दिया। और तानाजीके भाई सूर्याजीको किलेका अध्यक्ष नियत किया। सिंहगढ़ विजयके सम्बन्धमें भूषण कवि कहता है —

गाँवको लूट लिया। इस लूटमें एक हाथी, १२ घोड़े और मुगल साम्राज्यके कोषके चालीस हजार रुपये उनके हाथ लगे।

सूरतकी दूसरी लूट—संवत् १७२७ वि०—सन् १६७० ई०के एप्रिल मासमें सूरतकी रक्षा करनेके लिये, बहादुरखाँ अपने पाँच हजार घुड़सवारोंके साथ सूरत गया था। क्योंकि उस समय सूरत शहरमें यह अफवाह बड़े ओरोंपर थी कि शिवाजी सूरत पर चढ़ाई करनेवाले हैं। उस वर्ष अगस्त मासमें सूरतमें यह झूठी अफवाह फैली हुई थी कि शाहजादा मुअज्जिम अपने बाप औरङ्गजेबसे बिगड़ा हुआ है और जल्दी ही सूरत शहर और किलेपर अपना अधिकार करना चाहता है। इस अफवाहपर मुगलोंने बीजापुर राज्यसे बारह हजार घुड़सवारोंकी सहायता शिवाजीके विरुद्ध माँगी और कुछ युद्धका सामान भी बम्बईमें जो अङ्गरेज व्यापारी थे, उनसे लिया। किन्तु जनतामें यह अफवाह विशेष फैली हुई थी कि वर्षाऋतुके पीछे जब शिवाजी सूरतपर चढ़ाई करेंगे तब क्या प्रबन्ध किया जायगा। बात भी यही हुई कि शिवाजीने वर्षा ऋतुके बीत जानेपर संवत् १६२७ वि०—१३ अक्टूबर सन् १६७० ई०के सूरतपर चढ़ाई की।

सूरतपर चढ़ाई करनेसे एक मास पहले अर्थात् समस्त सितम्बर मासमें उन्होंने कल्याणमें घुड़सवार सेना इकट्ठी की, जिससे यह प्रत्यक्ष प्रतीत होता था कि शिवाजी गुजरातपर चढ़ाई करेंगे। शिवाजीको सेना भर्ती करते देखकर सूरतके अङ्गरेज व्यापारियोंको यह अनुमान हो गया था कि यदि शिवाजीने

सूरतपर चढ़ाई की तो वे सूरत नगरको सबसे पहले लेंगे, अत,
इस डरके कारण सूरतके अङ्गरेज़ोंने जो उनके गोदाम सूरतमें
थे, उन सबको खाली कर दिया गोदामोंका सब माल उन्होंने
स्वेले नामक स्थानमें भेज दिया। अक्टूबर मासके आरम्भसे ही
अङ्गरेज़ोंकी सूरत-कोठरीका प्रधान मोरेल्ड ऑंगीयर अपनी
काउन्सिलसहित स्वेलेमें ही था। पर जैसे अङ्गरेज़ शिवाजीके
आक्रमणसे सावधान थे और अपनी रक्षाका उपाय कर रहे थे,
ठीक इसके विपरीत सूरतका मुगल सूबेदार असावधान था।
शायद वह यह समझे हुए था कि शिवाजीके आक्रमणके दिन टल
गये। उसने नगरकी रक्षाके लिये सिर्फ तीन सौ आदमी रख
थे। दूसरी अक्टूबरको समस्त सूरत नगरमें यह समाचार फैल
गया कि शिवाजी सूरतपर चढ़ाई करनेके लिये आ रहे हैं,
सूरत नगरसे बीस मीलकी दूरीपर अपनी पन्द्रह हजार घुड़
सवार और पैदल सेनासहित हैं। इस समाचारके सुनते ही
समस्त सूरत शहरमें सन्नाटा छा गया। सूरत नगरके निवासी
"किंकर्तव्यविमूढ़" होकर अपनी रक्षाके लिये व्याकुल और
भयभीत हुए। सूरतके हिन्दुस्तानी व्यापारी और मुगल-साम्राज्य
के बड़े बड़े पदाधिकारी शिवाजीके आगमनको सुनकर दूसरी
अक्टूबरको भाग गये। उनमेंसे कुछ लोग तो दूसरी अक्टूबरको
दिनमें और कुछ रातमें भागे। दूसरे दिन तीसरी अक्टूबरको
शिवाजीने सूरत नगरपर आक्रमण किया। शिवाजीके इस
आक्रमणके पीछे औरङ्गज़ेबकी आज्ञासे [illegible] नगरका परकोटा

बच गया था, पर इस बार शिवाजीके आक्रमणसे परकोटेसे भी सूरत नगरकी रक्षा नहीं हुई। जो लोग सूरत नगरकी रक्षा कर नेके लिये तैनात किये गये थे, वे लोग कुछ थोड़ी देरतक शिवा जीका सामना करके किलेमें भाग गये। उस समय सूरत नगरकी परिस्थिति एक अनाथबालकके समान थी अथवा यों कहिये कि उस समय सूरत नगर एक अनाथ विधवा युवतीके समान था। उसका उस समय कोई रक्षक न था। महाराष्ट्र वीरोंने समस्त नगरपर अपना अधिकार कर लिया, केवल अङ्गरेज, डच और फ्रेंचोंकी कोठियां तुर्की और ईरानी सौदा गरोंकी नई सरायें, उनके हाथ नहीं आयीं। अङ्गरेज और फ्रेंचों की कोठियोंके बीचमें एक तारतम सराय थी। इस सरायमें काशगढ़का भूतपूर्व बादशाह, अबदुल्लाखां रहता था। इन दिनों वह यहाँ मक्का शरीफसे तशरीफ लाया था। बिचारे अबदुल्ला खांको उसके बेटेने गद्दीसे उतार दिया था। वह अपने दुखी बतके दिन उस सरायमें बिता रहा था। फ्रेंचोंने बहुमूल्य पदार्थ मराठोंको भेंट देकर अपनी रक्षा की। यद्यपि अङ्गरेजोंकी कोठी एक खुले हुए मकानमें थी पर उन्होंने उसको मराठोंके हाथमें पड़नेसे बचा लिया। अङ्गरेजोंने अपनी कोठीपरसे इतनी ओरको अग्निवर्षा की कि मराठोंके कुछ आदमी मारे गये। अङ्ग-रेजोंकी कोठीके पीछे मराठोंने काशगढ़के बादशाहकी सराय पर आक्रमण किया। तातारोंने बड़ी वीरता दिखलायी, उन्होंने समस्त दिन मराठोंके हाथसे अपने प्रवास-स्थानकी रक्षा की पर

अन्तमें वे अपना कुछ वश चलता न देखकर समस्त बहुमूल्य सम्पत्ति यों ही छोड़कर अपने बादशाहके साथ किलेमें भाग गये। तातार-सरायसे मराठोंके हाथ अच्छी सम्पत्ति लगी, जिसमें सोनेकी एक पालकी थी। और भी बहुतसे बहुमूल्य पदार्थ जो औरङ्गजेबने तातारके बादशाहको भेंट किये थे मराठोंके हाथ लगे।

दूसरे दिन तातार-सरायसे मराठोंने अङ्गरेजोंकी कोठीपर अभियान करनेकी ठानी। पर थोड़ेसे अंगरेजोंकी दृढ़ता देख कर उन्होंने अङ्गरेजोंकी कोठीपर आक्रमण करनेका विचार परि त्याग कर दिया। डचोंकी कोठीपर भी मराठोंने आक्रमण नहीं किया। मराठोंने डचोंके पास अपना एक दूत भेजा, जिसके द्वारा यह कहलाया कि तुम्हारे ऊपर किसी प्रकार संकट नहीं आयेगा और न हम तुम्हारी किसी प्रकारकी हानि करेंगे अगर तुम हमको यह विश्वास दिला दो कि तुम तटस्थ रहोगे, हमारे किसी कार्यमें दस्तन्दाजी न करोगे और हमारे विरुद्ध खड़े न होगे।

मराठोंने सूरत शहरके बहुतसे मकानोंको लूटा और उनके हाथ बहुतसा धन लगा। लगभग आधे शहरको उन्होंने तहस नहस कर दिया। शहरमें आग लगा दी। सूरतके किलेके पास भी मराठे लोग पहुंचे और किलेको उड़ानेकी भी उन्होंने धमकी दी, पर उन्होंने ऐसा नहीं किया। किले उड़ानेकी उनकी केवल धमकी ही धमकी रही। तीसरे दिन पांचवीं अक्टूबरको वे

लोग अङ्गरेजोंकी कोठीके सामने फिर आये । शिवाजी और उनके आदमी इस बातसे बड़े नाराज थे कि पहले आक्रमणमें उनके कुछ आदमी मारे गये थे । तीसरे दिन उन्होंने अङ्गरेजोंसे इसका बदला लेनेकी ठानी । पर तीसरे आक्रमणके समय अङ्गरेजोंने शिवाजीसे मेल कर लिया । उन्होंने शहरके बाहर शिवाजीके पास अपने दो आदमी भेजे और इन दोनों आदमियोंके हाथ अङ्गरेजोंने बढ़िया कपड़ा, तलवार, बर्छी आदि बहुमूल्य पदार्थ शिवाजीको भेंट किये । शिवाजी अङ्गरेजोंके आदमियोंसे बहुत अच्छी तरह मिले और कहा कि अङ्गरेज और हम मित्र हैं, फिर उनके हाथोंमें अपने हाथ रखकर कहा कि हम अङ्गरेजोंकी किसी प्रकारकी हानि नहीं करेंगे। संवत् १७२७ वि०—३ अक्टूबर सन् १६७० ई० में शिवाजीकी दूसरी बार चढ़ाई हुई थी। सूरतकी लूटमें ६६ लाख रुपये शिवाजीके हाथ लगे। इनके अतिरिक्त बहुतसा सोना, चांदी, जवाहरात आदि भी प्राप्त हुए। उन्होंने चलते समय सूरतके उच्च राजकर्मचारी और प्रधान व्यापारियोंको एक चिट्ठी भेजी, जिसमें लिखा था कि "यदि तुम इस लूटसे बचना चाहते हो तो बारह लाख रुपया वार्षिक देना स्वीकार करो, नहीं तो मैं आगामी वर्ष फिर आऊंगा और सूरत शहरका जो भाग बचा है, उसमें भी आग लगाकर नष्ट कर दूंगा।' शिवाजी ५ वीं अक्टूबरको अचानक सूरतसे चलते हुए। उनके यहांसे जाते ही सूरतके निर्धन आदमियोंने लूट आरम्भ कर दी। इस लूटमें सूरतके वे ही घर बच सके,—

पर पहरा था। यहांतक कि अंगरेज मल्लाहोंने भी शिवाजीके चले
आनेके पीछे सूरतको लूटा।

जब तीन दिनतक सूरतमें लूट मची थी तब ताप्ती नदीके
पश्चिम सूरतसे दस मीलकी दूरीपर, स्वेलेका बन्दरगाह भी
खतरेसे खाली न था। स्वेलेमें अङ्गरेज, डच और फ्रेंचोंने भारी
कोठियाँ बनायी थीं और समुद्रमें जाने आनेवाले जहाजोंके लिये
यह स्थान कर रखा था। जिन दिनों सूरतमें लूट खसोट मची
हुई थी, उन दिनों सूरतकी अङ्गरेजोंकी फैक्टरीके कार्यकर्ताओंने
सूरत फैक्टरीका खजाना स्वेलेमें ही रखा था। विशेषतः यूरोपसे
उन दिनों जो माल आया था, वह भी उन्होंने यहीं रखा था।
यहीं सूरतके शाही बन्दर (बन्दरगाह और चुंगीघरके अफसर
को कहते थे) और काजी तथा सूरतके बहुतसे भागे व्यापा-
रियोंने अङ्गरेजोंकी शरण ली थी। शहरके बहुतसे धनाढ्य
व्यक्ति सूरतके उत्तरकी ओर गाँवोंमें भाग गये थे, जो स्वेलेके
निकट ही थे। तीसरे पहरको उन गाँवोंमें यह अफवाह
बड़ी जोरोंपर थी कि शिवाजी अपने पाँच सौ घुड़सवारोंको
इन गाँवोंको लूटने और धनाढ्य व्यक्तियोंको पकड़नेके लिये
भेजनेवाले हैं। इस अफवाहसे यूरोपियन व्यापारी अत्यन्त
भयभीत हुए। उन्हें डर था कि यदि शिवाजी इन गाँवोंकी ओर
आये तो उनकी कोठियाँ स्वेलेपर भी धावा किये बिना नहीं रहेंगे।
उनके कारखानों और यूरोपियन व्यापारियोंके
माल असबाबको क्षति किये बिना नहीं रहेंगे। पर स्वेलेके यूरोपियन

व्यापारी तथा दूसरे शरणागतोंकी तकदीर अच्छी थी, जिससे नदी चढ़ आयी और मराठोंको नदी पार करके स्वेले पहुंचना असम्भव था। इससे स्वेलेकी रक्षा हुई। स्वेलेमें शिवाजीके आगमनका भय इतना भारी था कि तीसरी अक्टूबरको अङ्गरेजों ने स्वेलेके किनारेसे अपना खजाना हटाकर अपने एक जहाजमें रख लिया। अङ्गरेजोंके दो जहाज उस दिन आनेवाले थे, उन्हें भी उन्होंने १० वीं अक्टूबरतक रोक लिया और वहइयों को सहायतासे उन्होंने बेड़ेके आंगनमें लकड़ियोंका एक ऊंचा चबूतरा बनवाया और उसपर आठ तोपें शिवाजीके आक्रमणको रोकनेके लिये चढ़ायीं। पर शिवाजी उस ओर गये ही नहीं, इससे अङ्गरेजोंको तोपें दागनेकी आवश्यकता नहीं पड़ी।

पहली बार जब शिवाजीने सूरतपर आक्रमण किया था तब अङ्गरेज तथा दूसरे यूरोपियन व्यापारियोंने अपनी कोठियां बचा ली थीं। इसपर खुश होकर बादशाह औरङ्गजेबने यूरो पियन व्यापारियोंको व्यापारसम्बन्धी बहुत सी सुविधायें कर दी थीं। पर इस बार डच, फ्रेंच और अङ्गरेज व्यापारियोंमेंसे किसीको भी बादशाहके यहांसे पुरस्कार नहीं मिला। सूरत नगरके निवासियोंके हृदयमें यूरोपियन व्यापारियोंको रक्षित देखकर स्वभावतः ही यह सन्देह उत्पन्न हो गया कि ये तीनों यूरोपियन जातियां शिवाजीसे मिल गयीं। यह अफवाह केवल सूरत शहरमें न थी बल्कि शाहीदरबारतकमें यह अफ वाह थी। इसलिये विदेशी व्यापारियोंको बादशाहकी ओरसे किसी प्रकारका पुरस्कार नहीं मिला।

शिवाजीका आतङ्क सूरतमें इतना छा गया था कि उनकी दूसरी लूटके पीछे सूरतमें इतनी गड़बड़ रही थी कि एक मास तक न तो वहां कोई शासक ही प्रतीत होता था और न किसी प्रकारका शासन ही। हर रोज यही अफवाह सुनायी पड़ती थी कि शिवाजी आ रहे हैं। शिवाजीके चले जानेके एक मास पीछे ही समस्त नगरमें यह अफवाह फैल गयी कि वे ८ हजार घुड़सवार और दस हजार पैदलोंसहित फिर सूरत आ रहे हैं और सूरत-नगरसे पचीस मीलकी दूरीपर वे पहुंच गये हैं। बस, फिर क्या था, इस अफवाहसे समस्त नगरमें खलबली मच गयी। जिस सूरत नगरमें वाणिज्य व्यवसायके कारण आठों पहर चहल पहल रहती थी, उस सूरत-नगरमें शिवाजीके आगमनका समाचार सुनते ही मुर्दनी छा गयी। तुर्क, अङ्गरेज और फ्रेंचोंने उसी दम अपनी कोठियां छोड़ दीं और दूसरे स्थानोंको चले गये। पर डच व्यापारियोंने हिम्मत नहीं हारी, वे दस बारह आदमी थे। ये लोग अपने जहाजसे अपनी फौजेंसह हाथोंमें झण्डे लिये और ढोल पीटने लग गये। जिसका तात्पर्य यह था कि यदि शिवाजी आयेंगे तो हम थोड़े ही आदमी उनका सामना करेंगे। पाठकोंको स्मरण होगा कि जब पहली बार शिवाजीने सूरतपर आक्रमण किया था तब अङ्गरेजोंने ऐसा ही किया था। इस बार डचोंने अङ्गरेजोंकी पहली बारकी नकल की थी। पर शिवाजी एक मास तक भी सूरत नहीं पहुंचे। इससे सूरत निवासियोंको कुछ ढाढ़स हुआ।

शिवाजीकी दूसरी लूटके पीछे सूरतका व्यापार बहुत कुछ नष्ट हो गया। उसका कारण यह था कि वहांके निवासियोंको शिवाजीके आगमनका बराबर भय बना रहता था*।

सूरतकी लूटका वर्णन समाप्त करके हम अपने पाठकोंको शिवाजीके दूसरे युद्धोंका संक्षिप्त वृत्तान्त सुनाना चाहते हैं, क्योंकि यहां समस्त युद्धोंके वर्णन करनेका स्थान नहीं है।

संवत् १७२७ वि०में ही शिवाजी और दाऊदखांकी मुठभेड़ हुई। कंचनबचन मार्गसे शिवाजी नासिकके पार जाना चाहते थे कि मार्गमें उन्हें पता लगा कि दाऊदखांकी सेना उनका पीछा कर रही है, दाऊदखांके दो सहायक सेनापति, इखलासखां तथा बाँकेखां थे। शिवाजीने अपनी सेनाको चार मार्गोंमें बांटा। एक भागने आगे होकर लड़ाई आरम्भ की, बाकी दो भाग पीछेसे ललकारते रहे और चौथा भाग जिसके पास कोष था, चुपकेसे मुगलिया-सेनाके बराबर होकर निकल गया और मुगल-सेना परास्त हुई।

संवत् १७२७ वि० सन् १६७० के दिसम्बर मासमें शिवाजीने प्रतापरावको खानदेशपर धावा करनेकी आज्ञा दी। उन दिनों खानदेश प्रान्त अत्यन्त समृद्धिशाली था। प्रतापरावने खानदेश विजय करनेमें अत्यन्त वीरता प्रकट की। खानदेश जाते समय प्रतापरावने मार्गमें कितने ही नगरोंसे प्रतिवर्ष चौथ देनेके प्रतिज्ञापत्र लिखवा लिये थे। जिन गांवोंसे चौथ आने

* श्री यदुनाथ सरकारकृत 'शिवाजी चरित्र'से अनूदित।

लगी, उन गांवोंकी शिवाजीकी ओरसे रक्षाका प्रबन्ध किया गया था। इस प्रकारसे मुगलोंका प्रान्त खानदेश भी शिवाजीके अधीन हो गया। खानदेशपर शिवाजीके अधिकार हो जानेका समाचार सुनकर मुगल सम्राट् औरङ्गजेब अत्यन्त क्रोधित हुए, उन्होंने चार लाख सेनाके साथ महाबतखांको शिवाजीका सामना करनेके लिये भेजा और जसवन्तसिंहको दिल्ली बुला लिया।

दक्षिणमें पहुंचकर महाबतखांने जो महापराक्रम प्रकट किया था उससे पहले पाठकोंको शिवाजीके दूर, दो और युद्धोंका भी वृत्तान्त सुनाना चाहते हैं। संवत् १७२८ वि० सन् १६७१ ई० में शिवाजीके वीर सेनापति प्रतापराव गूजर और मोरोपन्त पिङ्गलेने मुगलोंके और भी कई स्थानोंमें चौथ लगायी। जिस प्रकार प्रतापरावने खानदेशमें कर वसूल किया, वैसे ही पिङ्गलेने नासिक जिलेमें कर वसूल किया। व जमींदार और पटवारियोंसे चौथाईका इकरार लिखाकर उन्हें शिवाजीके नामसे रसीद देने लगे और गांव गांवमें उन्होंने घोषणा कर दी कि ये रसीदें जो दिखलावेंगे, उन्हें मराठोंकी ओरसे कुछ भी कष्ट नहीं होगा। इस प्रकार मुगलोंके राज्यमें भी शिवाजीने चौथ वसूल करनी आरम्भ कर दी था। एक युद्धमें पिङ्गलेने मुगल सेनापति दाऊदखांको पराजित किया।

दक्षिणमें आते ही महाबतखांने चौथ और पता जमक दो किले मराठोंसे छीन लिये और अपनी सेनाके दो भाग करके

चाकण और सालेरके किलोंको घेर लिया। अहमदनगरके आसपाससे बहादुरखां भी सूपा नगरकी ओर बढ़ा। दिलेरखांने संवत् १७२८ वि० सन् १६७१ ई०के दिसम्बरके अन्तमें पूना ले लिया। पूनामें दिलेरखांने अत्यन्त निष्ठुरताका परिचय दिया। ९ वर्षकी अवस्थासे ऊपर जितने पूनानिवासी थे उन सबको उसने कटवा डाला। संवत् १७२८ वि० जनवरी सन् १६७२ ई० में शिवाजी महाड्में थे, वहां वे अपने अन्य किलोंके लेनेके लिये सेना इकट्ठी कर रहे थे कि इसी बीचमें उन्हें पूनाकी दुर्गति का समाचार मिला। अतएव इधर तो उन्होंने पूनाके लेनेका विचार किया, उधर बागलानामें शिवाजीकी सेनाने मुगल सेना की बड़ी दुर्गति की। इस प्रकार शिवाजी और मुगलोंका अनेक स्थानोंमें युद्धभेद हुई। अन्तमें महाबतखांने मुगल सेनाके दो भाग किये और इखलासखांको भी दिलेरखांकी सहायताके लिये भेजा। मुगल-सेनाका एक भाग दिलेरखांके अधीन रहा और उसने चाकणपर धावा किया और दूसरे भागने इखलास खांकी अधीनतामें सालेरके किलेको घेरा। शिवाजी सालेरके किलेको लेना चाहते थे और उस समय सालेरके किलेमें न तो इतनी सेना थी और न अन्य किसी प्रकारका इतना सामान था कि मराठे बादशाही सेनासे मोर्चा लेते। यह समाचार पाते ही शिवाजीने प्रतापराव और मोरोपन्तको सालेरके किलेकी मराठी सेनाकी सहायताके लिये भेजा। प्रतापराव और मोरो पन्तके पहुंचनेसे पहले ही मुगल सेनाने किलेके पास, मराठोंके

दो हजार घोड़े काट डाले। मुगल सेना बीस हजार थी। प्रताप रावके पहुंचते ही दोनों सेनाओंमें विकराल युद्ध शुरू हुआ। प्रतापराव जब सेनाको लेकर भागे तब तो उन्होंने देखा कि इखलासखां बड़े उत्साह और साहससे आक्रमणके लिये बढ़ आता है। प्रतापरावने इस समय एक चालाकी चली, वे एक स्थानपर ठहर गये और जिस समय इखलासखां आगे बढ़े उस समय उन्होंने भागना आरम्भ कर दिया। मुगल-सेनाने समझा कि प्रतापराव हार गये और मराठोंका पीछा करना आरम्भ किया। मराठोंका पीछा करनेमें मुगल-सेना छिन्न भिन्न हो गयी। इतनेमें मराठोंकी सेना एकदम उलट पड़ी और मुगल सेनापर ऐसे प्रबल वेगसे आक्रमण किया कि मुगल सेना रणक्षेत्रमें ठहर न सकी। मराठोंको विजय प्राप्त हुई। मुगलिया सेनाके २२ अफसर और दस हजार सिपाही मारे गये और अनेक लोग बन्दी हुए। मराठोंका सूर्यराव काकड़े नामक एक वीर इस युद्धमें काम आया। यह शिवाजीके लड़कपनका साथी था। इस युद्धमें शिवाजीके मावले सिपाहियों और घुड़सवारोंने अवर्णनीय पराक्रम दिखलाया। इखलासखां और राव अमरसिंह चण्डावतका पुत्र मोहकमसिंह तथा मुगल-सेनाके अन्य कितने मुखिया शिवाजीकी कैदमें आये। इस भारी विजयका फल यह हुआ कि मुगलिया-सेना साल्हेरके किलेको छोड़कर औरङ्गा बादकी ओर हट गयी। बन्दी लोगोंको शिवाजीने अपने यहां रख लिया और जिनकी इच्छा उनके यहां रहनेको न थी, उनको

उन्होंने उदारतापूर्वक मुक्त कर दिया। इस लड़ाईमें मुगलोंका बहुतसा सामान मराठोंके हाथ लगा। सालेरका युद्ध संवत् १७२६ वि०—सन् १६७२ ई० में हुआ था। भूषण कविने इस युद्धका वर्णन इस प्रकार किया है —

"उतै पातसाह जूके गजनके ठट्ट छूटे
उमडि घुमडि मतवारे घन कारे हैं।
इतै सिवराज जूके छूटे सिंहराज औ
विदारे कुम्भ करिनके चिकरत कारे हैं।
फौजें सेख सैयद मुगल औ पठाननकी
मिलि इखलास काहू मीर न सम्हारे हैं।
हद हिन्दुवानकी बिहद तरवारि राखि
कयो बार दिल्लीके गुमान झारि डारे हैं।"

"जीत्या सिवराज सलहेरिको समर
सुनि सुनि असुरनके सुसीन धरकत हैं।
देवलोक नागलोक नरलोक गावैं जस
अजहू लौं पर खग दाँत खरकत हैं॥
कटक कटक काटि कीटसे उड़ाय केते
भूखन भनत मुख मोरे सरकत हैं।
रनभूमि लेटे अधकटे फरलेटे परे
रुधिर लपटे पटनेरे फरकत हैं।"

सालेर युद्धके थोड़े दिनों पीछे ही शिवाजीने मुल्हीरका किला ले लिया।

इखलासखाँकी पराजय सुनकर औरङ्गजेबने महाबतखाँ और शाहआदा मुअज्ज़िम दोनोंको दक्षिणसे बुला लिया और महाबतखाँके स्थानपर खानजहाँको भेजा, परन्तु खानजहाँने मराठोंपर आक्रमण नहीं किया, इससे कुछ दिनतक लड़ाई बन्द रही। खानजहाँके पहुंचनेसे पहले ही शिवाजीने बहादुरखाँ और दिलेरखाँको पूनासे बाहर निकाल दिया और पूनापर पुनः अपना अधिकार कर लिया। यह पहले कहा जा चुका है कि खाँनजहाँने मराठोंपर आक्रमण नहीं किया, किन्तु घाटों और मार्गोंको रोककर उन्हें तङ्ग करनेका विचार किया और इस विचारवश उसने बहादुरगढ़ नामक एक किला बनवाया, परन्तु वह यह भूल गया था कि मराठोंको घाटों और इनसे मार्गोंकी आवश्यकता ही न थी, क्योंकि वे अपने प्रान्तकी एक एक ईंटसे परिचित थे। जब खानजहाँ मराठोंको तंग करनेके मनसूबे बांध रहा था तब शिवाजी अवसर पाकर गोलकुण्डाकी ओर जा निकले और वहाँसे बहुतसा धन लाये। इसी बीचमें संवत् १७२६ वि०—२४ वीं नवम्बर सन् १६७२ ई० को बीजापुराधीश अली आदिलशाह दूसरे, इस संसारसे कूच कर गये। उनकी मृत्युके थोड़े दिनों पीछे ही बीजापुर दरबारमें फूट पड़ गयी। चारों ओर अशान्ति और गड़बड़ी मच गयी, इससे शिवाजीको अपने राज्यके बढ़ानेका अवसर मिला। उन्होंने अली आदिलशाहकी मृत्युके थोड़े दिनों पीछे ही पन्हालाका दुर्ग ले लिया, और कुछ महीनों पीछे सितारा का दुर्ग भी उनके हाथ आ

गया। उनके चतुर और स्वामिभक्त कर्मचारी प्रतापराव गुर्जरने बीजापुरी सेनाके बहुतसे भागोंमें लूटमार मचा दी, हुबली तथा अन्य समृद्धिशाली नगरोंको लूटा जो बीजापुर राज्यमें थे। उन दिनों हुबलीमें अङ्गरेज व्यापारियोंकी कोठियां थीं, मराठोंने उनकी कोठियोंको भी लूट लिया। बीजापुर दरबारने मराठोंकी गति रोकनेके लिये बहलोलखांको भेजा। कुछ दिनोंतक पहले बहलोलखांको सफलता प्राप्त हुई, पर पीछे वह मराठोंके सामने ठहर न सका। भूषण कविके शब्दोंमें —

"बचगा न सुमहान बहलोलखां अपाने
भूषन बखाने दिल आनि मेरा बरजा"

बहलोलखां बच न सका। उमरानी नामक स्थानमें बहलोलखां और शिवाजीके सेनापति प्रतापराव गुर्जरकी मुठभेड़ हुई। इस मुठभेड़में बीजापुरी सेनाकी बड़ी दुर्गति हुई, बहलोलखाने प्रतापरावसे सन्धिका प्रस्ताव किया। उत्तरमें प्रतापरावने बहलोलखांसे कहा कि "अगर तुम इस बातका वचन दो कि भविष्यमें शिवाजीके विरुद्ध हथियार न उठाओगे तो मैं तुम्हें यहांसे कुशल पूर्वक चले जाने दूंगा।" बहलोलखांने प्रतापरावके कथनके अनुसार भविष्यमें शिवाजीके विरुद्ध हथियार न उठानेका वादा किया और प्रतापरावने बहलोलखां और उसके अधीनस्थ बीजापुरी सेनाको यहांसे कुशलपूर्वक जाने दिया।

शिवाजीने जब यह बात सुनी तब वे प्रतापरावपर बहुत नाराज हुए, क्योंकि वे बहलोलखांकी कुटिलतासे परिचित थे।

थोड़े ही दिनोंमें बहलोलखांने मराठा-राज्यमें फिर उपद्रव मचाना शुरू किया। इस बार शिवाजीने मावेशमें आकर प्रतापरावको एक पत्रमें लिखा—"बहलोल आ गया है, जाओ, उसको मटिया मेट करके पूर्ण विजय प्राप्त करो और नहीं तो मुझे अपना मुंह मत दिखलाओ।" इस पत्रको पाते ही प्रतापराव बड़े जोशसे बहलोलखांका सामना करनेके लिये आगे बढ़ा। उसने बहलोलपर आक्रमण करनेमें कुछ सोच विचार नहीं किया। उसने दो पहाड़ियोंके बीचमें एक तङ्ग मार्गमें अपने केवल छ घुड़सवार लेकर बहलोलखांपर आक्रमण किया और अपनी सेनाको पीछ छोड़ दिया। इस आक्रमणमें प्रतापराव और उनके साथियोंने अत्यन्त वीरता प्रकट की। वे लोग बहलोलखांको मारनेके लिये आगे बढ़ते ही चले गये। पर अगणित बीजापुरी वीरोंके सामने छ मराठा वीरोंकी कहांतक चलती। अन्तमें प्रतापराव और उनके साथी मारे गये। जब शिवाजीको प्रतापरावके मारे जानेका समाचार मिला तब वे अत्यन्त दुःखित हुए। उन्होंने क्रोधित होकर प्रतापरावको जो पत्र भेजा था, उसके विषयमें उन्हें बड़ा पश्चात्ताप हुआ। उन्होंने प्रतापरावके कुटुम्ब और आश्रितोंके जीवननिर्वाहका प्रबन्ध कर दिया और अपने छोटे लड़के राजारामका ब्याह प्रतापरावकी पुत्रीके साथ विवाह कर दिया।

जब प्रतापरावके मारे जानेपर मराठी सेना, बीजापुरी सेनाके सामने ठहर न सकी और भागने लगी तब प्रतापरावके सहकारी सेनाध्यक्ष आनन्दरावने भागती हुई मराठी सेनाको

बहलोलखांकी सेनासे लड़नेके लिये उत्तेजित किया। आनन्दके प्रभावशाली भाषणको सुनकर मराठी सेना फिर एक बार मैदानमें डट गई और हर हर महादेवकी गर्जना करके शत्रु-सेना पर टूट पड़ी, उस समय रणचण्डीका जो विकट ताण्डव हुआ, उसका वर्णन भूषण कविने इस प्रकार किया है —

> कुद्ध फिरत अति युद्ध जुरत नहिं रुद्ध मुरत भट,
> खग्ग बजत और अग्ग तजत सिर पग्ग सजत घट ॥
> ढुकि फिरत मद झुकि भिरत करि कुम्भ गिरत गनि,
> रङ्ग रत्त हर सग छकत चतुरंग थकत मनि ॥
> इमि करि संगर अति ही विषम भूषन सुजस कियो अचल,
> सिवराज साहि सुख खग्ग बल, दलि अडोल बहलोल दल ॥

इस प्रकार घमासान युद्ध हो रहा था। इसी बीचमें शिवाजीने हंसाजी मोहते नामक एक और दूसरे वीरको प्रतापरावके* स्थानमें प्रधान सेनापति नियुक्त किया और उसे हम्मीररावकी पदवी प्रदान की। हम्मीररावको भेजते समय शिवाजीने उससे कहा कि "शत्रु सेनाको पराजित किये बिना तुम मुझे अपना मुंह मत दिखलाना।" यह कहकर हम्मीररावको शिवाजीने वह

---

* Orme Historical fragments में इस घटनाके सम्बन्धमें इस प्रकार लिखा हुआ है कि उमरानीके मैदानमें प्रतापराव गूजरका युद्ध जिस बीजापुरी सेनापतिसे हुआ था, उसका नाम अब्दुलकरीम था। परन्तु मैंने यहांपर भी यदुनाथ सरकारका मत ग्रहण किया। भूषण ग्रन्थावलीमें भी बहलोलखांका ही नाम है। तथा मराठीकी कई पुस्तकोंमें भी बहलोलखांका ही नाम देखनेमें आता है इसलिये दूसरोंको भूल स्वीकार कोई है।

लोलखाँका सामना करनेके लिये भेजा। हम्मीरराव शीघ्रही अपने सैन्यदलके साथ आनन्दरावकी सहायताके लिये पहुँच गया। उधर दिलेरखाँ भी अपनी मुगल सेना सहित बहलोलखाँकी सहायताके लिये पहुँचा। हम्मीररावने मुगलिया और बीजापुरी दोनों सम्मिलित सेनाओंसे सामना न करके, एक और चाल चली, वे दोनों सेनाओंके सामने न ठहरकर केनाड़ाकी ओर चल दिये, तब तो बहलोल कोल्हापुर पहुँचे और दिलेरखाँ पन्हालामें पांच दिनके लिये ठहर गये। इतनेमें होहम्मीररावका काम बन गया, उन्होंने बहलोलकी जागीरमें पहुँचकर लूट-मार मचा दी, जिसमें डेढ़ लाख हुण उनके हाथ लगे और तीन हजार बैलोंपर लदका दूसरा सामान लादकर लाये। बहलोलसे यह देखा नहीं गया कि हम्मीरराव इस प्रकारसे उनकी जागीरको लूटकर चले जायँ, अतएव उसने खिजरखाँके साथ दो हजार घुड़सवार और बहुतसे पैदल सिपाही लेकर यल्लापुरके निकट हम्मीररावका मार्ग रोकना चाहा। दोनों ओरसे विकट युद्ध हुआ, अन्तमें बीजापुरी सेना हार गयी और खिजरखाका भाई इस युद्धमें मारा गया। हम्मीररावने बीजापुरी सेनाके पांच सौ घोड़े और दो हाथी छीन लिये, इनके अतिरिक्त बीजापुर सेनाका और भी बहुतसा माल हम्मीररावके हाथ लगा। यह घटना संवत् १६३७ वि०—मार्च १६७० ई०में हुई। बहलोलखाँ इस अपमानको सहन नहीं कर सका कि बीजापुरी सेनाके हाथी मराठोंके हाथ लग जायँ। अतएव उसने फिर हम्मीररावकी सेनापर आक्रमण

किया। इस आक्रमणमें मराठी सेनाके एक हज़ार घोड़े बहलोल खाँके हाथ लगे, पर हम्मीररावने इसकी कुछ परवा नहीं की। वे शीघ्र ही लूटका माल लेकर शिवाजीके पास पहुंच गये और दूसरे मासमें बालाघाटपर धावा मारा।

शिवाजीकी शिवनेर किलेके हस्तगत करनेकी प्रबल लालसा थी, क्योंकि उनका जन्म इस किलेमें ही हुआ था, अतएव उन्होंने लगभग संवत् १७३० वि०—सन् १६७३ ई०में इस किलेको घेरा। शिवनेरका किला उस समय मुगलोंसे हाथमें था। उसका दुर्गाध्यक्ष अब्दुल अजीजखाँ था। जन्मसे यह ब्राह्मण था पर पीछे मुसलमान हो गया था। औरङ्गजेबका बड़ा विश्वासपात्र था। शिवाजीने इसे बहुतसे धनका लालच देकर किला लेना चाहा। अब्दुल अजीजखाँ शिवाजीके प्रस्तावसे सहमत हो गया और उनसे कुछ धन भी प्राप्त कर लिया और किला समर्पण करनेका एक दिन नियत भी कर दिया। शिवाजीने किला लेनेके लिये अपने सात हजार घुड़सवार भेजे, पर ठीक समय पर दुर्गाध्यक्ष अब्दुल अजीजखाँने शिवाजीको धोखा दिया, उसने बहादुरखाँको इस बातकी खबर कर दी जिससे उसने मराठी सेनापर आक्रमण किया और दुर्ग शिवाजीके हाथ न लगा। पर इससे शिवाजी निराश न हुए, उन्होंने शिवनेर किले-से अपना ध्यान हटाकर दूसरी ओर लगाया। उन्होंने लगातार चार मासतक दिल्ली, बीजापुर और गोलकुण्डाकी सेनाओंसे युद्ध करके अपने राज्यका विस्तार किया, क्योंकि उस समय ये

तीनों राज्य शिवाजीकी शक्तिको निस्तेज और मन्यिामेट करनेके लिये मिल बैठे थे। लगातार चार मासके युद्धमें दिलेर खाँ बिलकुल निस्तेज हो गये थे। शिवाजीसे लड़ते लड़ते दिलेरखाँका दिल एकदम टूट गया। शिवाजीने दक्षिणमें मुगलोंकी शक्ति बहुत कुछ घटा दी और उधर अफगानिस्तानको खैबर घाटीपर उपद्रव मचने लगा, जिससे औरङ्गजेबने दिलेरखाँ को दक्षिणसे बुलाकर उत्तर-पश्चिम सीमाप्रान्तपर भेजा और स्वयं भी अफगानिस्तानकी ओर गया। इससे शिवाजीको दक्षिणमें अपने राज्यके बढ़ानेमें और भी सुभीता हुआ। मुगल-सम्राट् औरङ्गजेबकी कैदसे छूटकर शिवाजीने अपने राज्यका अच्छा विस्तार किया। बिदनौरके राजाने कर देना स्वीकार कर लिया। उन्होंने बीजापुर दरबारका गर्व खर्व कर दिया, उसने भी तीन लाख रुपया करस्वरूप शिवाजीको देना स्वीकार कर लिया। गोलकुण्डा राज्यने पांच लाख रुपया वार्षिक कर देना स्वीकार कर लिया था। उत्तरमें उनकी प्रभुता सूरततक पहुंच गयी थी और दक्षिणमें बिदनौर तथा हुबलीतक उनकी शक्ति बढ़ गयी थी। बरार बीजापुर तथा गोलकुण्डातक उनके राज्यका विस्तार हो गया था। मुगल प्रान्त जो तासीके दक्षिणमें थे, शिवाजीको "सरदेश मुखी" देने लगे थे। समस्त दक्षिणमें शिवाजीके नामका डङ्का बजने लग गया था।

सतरहवां परिच्छेद

राज्याभिषेक

"पद्माकर जिन सिंहको कियो राज्य अभिषेक,
अपने बल मृगराज भो हनि गजराज अनेक।
जहँ लौं हिमालयके शिखर हिम कनन तें सीतल रहैं,
जहँ लौं विविध मणि खण्ड मण्डित समुद्र दक्षिण दिसि बहैं।
तहँ लौं सबै नृप आइ भय सों तोहि सीस झुकावहीं,
तिनके मुकुटमणि रंगे तुव पद निरखि हम सुख पावहीं।"

यह पहले लिखा जा चुका है कि शाहजीकी मृत्युके पीछे शिवाजीने राजाकी उपाधि धारण कर ली थी और अपने नामका सिक्का भी चलाया था। परन्तु फिर भी उनके विरोधी लोग उन्हें मामूली जागीरदार और लूटेरा ही समझते थे। यद्यपि उन्होंने तीन राज्यों—दिल्ली, बीजापुर और गोलकुण्डाको पछाड़कर अपना स्वतन्त्र राज्य स्थापित किया था, बीजापुर और गोलकुण्डाने उन्हें कर देना स्वीकार कर लिया था, औरंगजेबने भी उन्हें राजाकी उपाधि प्रदान की थी, तिसपर भी उनके विरोधी उन्हें एक साधारण जागीरदारसे अधिक नहीं समझते थे। यह एक साधारण नियम है कि जब अपनेसे बराबरवालेकी

उन्नति होती है तब ऐसे बहुत कम उदारहृदय व्यक्ति होते हैं जो अपने बराबरवालेकी उन्नति देखकर प्रसन्न हों। शिवाजीने भी अपनी सामान्य अवस्थासे ही इतनी भारी उन्नति की थी और स्वतन्त्र राज्य स्थापित किया था। अतएव भोंसलावंशके अनेक व्यक्ति भी उनकी उन्नति देखकर डाह करते थे। भोंसला वंशके अनेक व्यक्तियोंने शिवाजीकी अधीनता स्वीकार नहीं की थी। इसके अतिरिक्त उस समय दक्षिणमें कुछ लोग ऐसे भी थे जो भोंसलावंशको हीन दृष्टिसे देखते थे। ऐसे लोगोंमेंसे कुछ उच्च वंशीय क्षत्रिय थे, वे लोग अपनेको उच्च वंशीय क्षत्रिय समझते थे और भोंसलावंशको अपनेसे नीचा समझते थे। उनमेंसे किसी किसीका यह भी कथन था कि भोंसलावंश क्षत्रिय नहीं शूद्र है। उस समय भोंसलावंशमें द्विजातियोंके कुछ संस्कार कर्मोंका भी लोप हो गया था। उस समय ही क्यों आजकल भी देखनेमें आता है कि बहुतसे वंशोंमें द्विजाति कर्मोंका लोप हो गया है, पर क्या वे शूद्र हैं? सम्भव है उस समय भोंसलावंशमें भी आजकलके कुछ वैश्योंकी भांति ही वैदिक संस्कारोंका लोप हो गया होगा, इसलिये महाराष्ट्रके दक्षिणी ब्राह्मण भी शिवाजीको वर्णाश्रमके अनुसार हीन दृष्टिसे देखते रहे हों। शिवाजीने इन सब सङ्कीर्ण और मलिन विचारोंको हटानेके लिये ही अपना राज्याभिषेक करनेकी सोची हो।

एक दिन दरबारमें भी ऐसी घटना हुई जिससे शिवाजीको शीघ्रही अपने राज्याभिषेक करनेकी तैयारी करनी पड़ी। घटना

यह है कि एक दिन उन्होंने अपने महलमें अपने सभी नामी एवं प्रतिष्ठित सरदारोंको निमंत्रण दिया। सभी निमन्त्रित सरदार नियत समयपर पहुंचे। शिवाजीके कारभारियोंने दीवानखानेमें भोजनकी व्यवस्था की। उन्होंने वहां शिवाजीके बैठनेके लिये मध्यभागमें गद्दीसे कुछ ऊँचा चौरङ्ग चबूतरासा बनवाया। और उस चौरङ्ग चबूतरेके आसपास दाहिनी ओर बाईं ओर आमन्त्रित सरदारोंके बैठनेकी व्यवस्था की। इस भोजमें दक्षिणके प्राय सभी नामी सरदार मोहते, महाडीक, शिरके, निम्बालकर, घाटगे, जाधव प्रभृति सम्मिलित होनेवाले थे। जब वे लोग दीवानखानेमें पहुंचे तो उन्होंने वह चौरङ्ग स्थान देखा। उस स्थानपर उस समय कोई बैठा न था, पर सरदार लोग यह ताड़ गये कि अन्य सरदारोंके बैठनेके स्थानसे यह स्थान ऊँचा क्यों बनाया गया है। उन्होंने स्थान और अवसरका कुछ विचार न करके यह प्रश्न कर ही डाला कि यह उच्च स्थान किसके लिये बनाया गया है? शिवाजीके कारभारियोंसे यह उत्तर पाकर कि यह स्थान शिवाजीके बैठनेके लिये है, सब सरदार बिगड़ उठे और कहा कि "शिवाजी हम सब लोगोंसे वंशपरम्परामें कबसे श्रेष्ठ हुए हैं, जो इतना ऊंचा आसन अपने बैठनेके लिये बनाया है! हमलोग प्राचीन घरानेके हैं, हम वंशपरम्परासे छत्र, चँवर, मोरछलके अधिकारी हैं। शिवाजीके पिता शाहजीको भी कभी यह अधिकार प्राप्त नहीं हुआ था कि वे हमसे ऊँचे बैठें। शिवाजी महाराजने हमारा अपमान

और अप्रतिष्ठा करनेके लिये ही यह ढोंग रचा है। हमलोग प अपमान सहन करनेको तैयार नहीं हैं। अपमान सहनेकी अपेक्षा हमलोग यहाँ न बैठना ही उचित समझते हैं।" यह कहकर सबके सब सरदार उठ खड़े हुए। शिवाजीके कारभारी (प्रबन्ध कर्त्ता) ने उन सब सरदारोंको समझाया कि "इन सब बातोंका यह समय नहीं है। इस समय इन सब बातोंकी चर्चा छेड़ना महाराजको चिढ़ाना और क्रोधित करना है। आप लोग एकान्त में किसी अवसरपर महाराजसे ये सब बातें कहिये।" जब दीवानखानेमें ये बातें हो रहीं थीं, तब इसकी चर्चा शिवाजीके कानतक पहुंची। उन्होंने दूसरी श्रेणीके सरदारोंको बुलाया और पूछा कि आप लोगोंको भोजमें क्या आपत्ति है? दूसरी श्रेणीके सरदारोंने कहा कि "हमें इसमें कुछ आपत्ति नहीं है।" इसके पीछे शिवाजीने उसी समय घोरपाडे, निम्बालकर आदिको एकान्तमें बुलाया और पूछा कि आप लोगोंको इसमें क्या आपत्ति है? इसपर उन लोगोंने कहा कि "हमलोग चार पांच पुश्तसे मुसलमान सुल्तानोंके सरदार हैं। इस तरह पृथ्वीपर बैठनेसे हमारा अपमान होता है। ऐसा अपमान हम सहन नहीं कर सकते। आप ही न्याय कीजिये, यह कहाँतक ठीक है।" इसपर शिवाजीने उत्तर दिया—"व्यर्थके झगड़े बढ़ानेकी कोई आवश्यकता नहीं है, जिनको अपनी वंशपरम्परागत-प्रतिष्ठाका इतना खयाल है, उनके लिये इससे कोई अच्छी बात नहीं है कि वे दरबारमें न आवें। जब उनकी जरूरत होगी तब उन्हें बुला

लिया जायगा।" जिसको भोजनका यह प्रबन्ध उचित प्रतीत न हो, वे खुशीसे चले जायं।" यह कहकर उन्होंने अपने अभिमानी सरदारोंको विदाईके उपलक्ष्यमें पान बीड़ा दिया और दरबार बरखास्त कर दिया। इस घटनासे शिवाजीके दिलपर यह प्रभाव अधिक हुआ कि मेरे अधीनस्थ मराठा-सरदार ही मेरा आदर नहीं करते, इसका कारण राज्याभिषेकका न होना ही है।"

उपर्युक्त घटनाके अतिरिक्त कोई कोई इतिहास लेखक यह भी लिखते हैं कि शिवाजीको उनकी इष्टदेवी भवानीने राज्याभिषेक करनेकी स्वप्नमें आज्ञा दी थी। राज्याभिषेकका विचार उत्पन्न होतेही उन्होंने अपने आध्यात्मिक पथ-प्रदर्शक श्री समर्थ रामदास स्वामीके निकट अपने एक विश्वासी राजकर्मचारीको राज्याभिषेकके विषयमें परामर्श करनेके लिये भेजा। समर्थ रामदास स्वामी शिवाजीके इस प्रस्तावसे पूर्ण सहमत हुए। उन्होंने भी राज्याभिषेक करनेकी पूर्ण अनुमति प्रकट की। रामदास स्वामीकी स्वीकृति और सम्मति प्राप्त करके शिवाजीने अपने राज्यके प्रतिष्ठित और नामी व्यक्तियोंसे सलाह ली। हिन्दू समाजके मुख्य स्तम्भ और हिन्दू-शास्त्रोंके ज्ञाता प्रतिष्ठित विद्वान् और ब्राह्मणोंको भी उन्होंने इस परामर्शके लिये निमन्त्रित किया। विद्वान् ब्राह्मणोंको बुलानेके लिये, उनके पद और मान-मर्य्यादाके अनुसार पालकियाँ अथवा अन्य दूसरी सवारियाँ भेजीं। विद्वान् ब्राह्मणोंको बुलाकर, राज्याभिषेक करना चाहिये या

नहीं, इस विषयपर परामर्श करनेके लिये एक सभा की। इस सभामें उन्होंने अपने राज्यके वीर सेना नायकों, सरदारों और मन्त्रियोंको भी निमन्त्रित किया। इस सभामें इस विषयपर कई दिनोंतक तर्क वितर्क, वाद विवाद होता रहा कि राज्याभिषेक करना चाहिये या नहीं। अन्तमें सभामें सर्व सम्मतिसे यह निश्चय हुआ कि शिवाजीको अपना राज्याभिषेक हिन्दू धर्मशास्त्रोंके अनुसार करना चाहिये। इसके पीछे, सभामें दूसरा प्रश्न यह उपस्थित हुआ कि हिन्दू शास्त्रों के अनुसार, राज्याभिषेककी क्रिया किस प्रकार करनी चाहिये? क्योंकि उस समयतक शिवाजीका यज्ञोपवीत नहीं हुआ था। हिन्दू धर्मके अनुसार, केवल द्विजातियोंको ही शास्त्रोंकी विधिसे राज्याभिषेक करनेका अधिकार प्राप्त था। अतएव उन्होंने संस्कृतके अनेक विद्वानोंको यह अनुसन्धान करनेके लिये नियुक्त किया कि वे शास्त्रोंका अनुशीलन करके, यह बतलावें कि अब उपनयन संस्कार हो सकता है या नहीं, और प्राचीन समयमें राज्याभिषेक किस प्रकारसे होता था? इसके अतिरिक्त उन्होंने अपने यहांके कई चतुर राजकर्मचारियोंको उदयपुर और जयपुर यह अनुसन्धान करनेके लिये भेजा कि वहां उन दिनों किस प्रकारसे राज्याभिषेक होता था?

पाठकोंको स्मरण रखना चाहिये कि राज्याभिषेकके अवसरपर शिवाजीकी अवस्था छियालीस वर्षकी हो गयी थी। उनके कई विवाह हो चुके थे, उनके कई लड़के लड़कियां भी

थे। अतएव इस अवसरपर एक विकट समस्या उपस्थित हुई कि उनका उपनयन संस्कार हो सकता है या नहीं। इस विषयमें उनके प्राइवेट सेक्रेटरी बालाजी आवजी चिटनीसने उन्हें यह परामर्श दिया कि स्थानीय पण्डितोंकी सम्मतिपर निर्भर न रहकर, हिन्दुस्तानके दूसरे प्रान्तोंके विद्वानोंसे भी परामर्श करना चाहिये। किसी किसी बखरमें यह भी लिखा हुआ है कि "बालाजी आवजी चिटनीसने शिवाजीको यह भी सम्मति दी कि मुगल सम्राट्से राजाकी उपाधि लेनेकी अपेक्षा, काशीके किसी विद्वान् ब्राह्मणसे राजतिलक कराना अच्छा होगा।" शिवाजीने भी बालाजी, आवजीकी इस सम्मतिको पसन्द किया।

उन दिनों काशीके गागाभट्ट नामक एक ब्राह्मण विश्वेश्वरमें रहते थे। वे बड़े भारी विद्वान् थे। चारों वेदोंमें उनकी अच्छी गति थी। दर्शनशास्त्रोंके भी प्रवीण पण्डित थे। स्मृति तथा अन्य शास्त्रोंके भी मार्मिक ज्ञाता थे। वे अपनी विद्वत्ताके कारण विख्यात थे। यहाँतक कि लोग उनको ब्रह्मदेव और व्यास कहते थे। धर्मसम्बन्धी विवादग्रस्त विषयोंमें वे जो कुछ व्यवस्था देते थे, वह सबको मान्य होती थी। उनकी सम्मति और व्यवस्था के सामने सब लोग सिर झुकाते थे। बालाजी आवजी चिटनीसने शिवाजीको गागाभट्ट*को बुलाने और उनसे राज्या

*गागाभट्ट—पैठणके रहनेवाले थे। इनके पूर्वजों चार पुश्तोंमें त्रिभुवन-प्रसिद्ध ग्रन्थोंकी रचना की है। गागाभट्टने परिवारमें विद्वत्तामें विशेष ख्याति प्राप्त

भिषेक सम्बन्धी व्यवस्था लेनेकी सलाह दी। उन दिनों गागाभट्ट काशीसे अपने स्थान, गोदावरी नदीके किनारे पैठान नगरमें आये थे। बालाजी आवजी चिटनीसने शिवाजीसे कहा कि ऐसा अवसर चूकना न चाहिये, गागाभट्टके साथ ही पैठानके अन्य पण्डितोंको भी बुलाना चाहिये। इसके आगे बालाजी आवजीने शिवाजीसे प्रार्थना की कि "गागाभट्ट, आपका निमन्त्रण अस्वीकार नहीं करेंगे, वे अवश्य ही आपके यहां आवेंगे – क्योंकि आपके यशसे वे परिचित हैं। आपके नाम और कामका समाचार उनके कानोंतक पहुंच चुका है।" शिवाजी बालाजी आवजी चिटनीसके इस प्रस्तावसे सहमत हुए। उन्होंने गागाभट्टको बुलानेके लिये, अपने मंत्री बालाजी आवजीको केशव पण्डित, भालचन्द्र पुरोहित और सोमनाथ कात्रेयके साथ भेजा। पालकी और घोड़ोंकी सवारीका अच्छा प्रबन्ध कर दिया था। मार्गव्यय के लिये दस हजार रुपये दिये।

बालाजी आवजी अपने साथियों सहित पैठान पहुंचे और गागाभट्टसे शिवाजीके राजतिलकके विषयमें परामर्श किया। गागाभट्टकी सम्मतिसे पैठानके पण्डितोंकी एक सभा, शिवाजीके राज्याभिषेकके विषयमें विचार करनेके लिये हुई। गागाभट्ट तथा कुछ पण्डितोंने यह आपत्ति उठाई कि शिवाजी—क्षत्रिय नहीं, मराठा हैं, इसलिये पुराने समयमें अयोध्या और हस्तिनापुरमें

को है। [illegible] है।

१ S. Jabakha M.A. [illegible]—शिवाजीका चरित्र [illegible]

जिस प्रकारसे राजतिलक होते थे, उस प्रकारसे शिवाजीका नहीं हो सकता। इसपर बालाजी आवजीने गागाभट्टको शिवाजीका वंशवृक्ष दिखलाया, तब उन्होंने शिवाजीका क्षत्रिय होना स्वीकार किया और बालाजी आवजीके प्रार्थना करनेपर गागा भट्ट, पैठानके कई पण्डितोंके साथ शिवाजीकी राजधानी रायगढ़में गये, शिवाजीने मार्गमें सितारा पहुंचकर उनका बड़ी धूमधामसे स्वागत किया।

रायगढ़ पहुंचकर गागाभट्टने यह व्यवस्था दी कि शिवाजी क्षत्रिय हैं, उदयपुरके महाराणाओंको जिस सूर्यवंशमें होनेका अभिमान है उसी सूर्यवंशमें होनेका गौरव भोंसलावंशको प्राप्त है। गागाभट्टकी इस व्यवस्थापर दक्षिणके ब्राह्मणोंको फिर कुछ आपत्ति नहीं हुई।

इसके विपरीत सभासद और चित्रगुप्तने लिखा है कि गागा भट्टको बुलानेके लिये कोई नहीं गया था। शिवाजी महाराजकी कीर्ति सुनकर स्वयं ही गागाभट्ट उनके पास आये थे। शिवाजीने उनका विशेष आदर, सत्कार किया और बहुतसा धन भेंट किया। शिवाजीके सद्व्यवहारसे प्रसन्न होकर गागाभट्टने उनसे कहा—"कलियुगमें धर्मका बिलकुल नाश हो गया है, सम्पूर्ण पृथ्वी यवनमय हो गयी है, यवनोंने भारतका सिंहासन अपना लिया है। सूर्यवंश और चन्द्रवंश शुद्ध नहीं रहे हैं। यज्ञ-याग बन्द हो गये हैं। अनाचार और अत्याचार बढ़ रहे हैं। तीर्थ स्थान भ्रष्ट हो गये हैं। ऐसे कठिन समयमें आपने दक्षिणके

बादशाहोंको पराजित किया है, भारत सम्राट् औरङ्गजेबकी शक्ति निर्बल और क्षीण कर दी है। उसके बड़े बड़े सूबेदार आये, उनको भी आपने हरा दिया। आपने विशाल साम्राज्य स्थापित किया है। आपके पास एक लाख घोड़े और तीन सौ साठ किले हैं, पुष्कल सम्पत्ति है, पर आपका राजसिंहासन नहीं है इसलिये अनेक हिन्दुओंकी इच्छा है कि आप राजसिंहासन ग्रहण करें जिससे हमलोग आपको छत्रपति और राज्याधिपति स्वीकार कर लें। जगत्में सिंहासनपर आरूढ़ हुए बिना, राजसत्ता नहीं होती। मेरी इच्छा है कि आप राजसिंहासन पर बैठकर औरङ्गजेबके भाकों चने चबवायें। मेरी यह इच्छा आप पूरी कर सकते हैं। गागाभट्टकी ये बातें सुनकर शिवाजी की इच्छा अपना राज्याभिषेक करानेकी हुई थी।

रायगढ़में गागाभट्टके पहुंचनेपर शिवाजीने एक सभा और की, जिसमें उन्होंने अपने राज्यके पण्डित, मंत्री तथा प्रसिद्ध प्रसिद्ध नागरिकोंको निमन्त्रित किया। इस सभामें उन्होंने गागाभट्ट तथा पैठानके पण्डितोंका परिचय कराया और फिर राज्याभिषेक तथा उपनयन-संस्कारका प्रश्न पण्डित-मण्डलीके सामने उपस्थित किया। विशेष वाद विवादके पीछे गागाभट्टने ऊपर लिखी हुई अपनी यह सम्मति प्रकट की कि शिवाजी क्षत्रिय हैं, सीसोदिया वंशके हैं। नर्मदा नदीके इस पार होनेके कारण इनके पूर्वज, मराठा कहलाये, पर इससे क्षत्रियत्वका ह्रास नहीं हुआ, जैसे जयपुर उदयपुर, आदि राजवंशोंमें राज्याभिषेक

के पूर्व उपनयन-संस्कार होता है, वैसे ही शिवाजीका होना चाहिये। इसमें सन्देह नहीं कि इतनी बड़ी अवस्थामें शिवाजीका उपनयन संस्कार धर्मशास्त्रके विरुद्ध है क्योंकि उनका विवाह हो चुका है और कई सन्तानें हैं, परन्तु विशेष परिस्थितिके कारण, उनका उपनयन-संस्कार हो सकता है। क्योंकि राज्याभिषेक भी धर्मशास्त्रके अनुकूल होगा। उपनयन संस्कार भी राज्याभिषेकका एक अङ्ग है। अतएव इसमें कुछ आपत्ति प्रतीत नहीं होती है।"
पैठान तथा शिवाजीके राज्यके पण्डितोंने गागाभट्टकी उपर्युक्त व्यवस्थाको स्वीकार कर लिया। इससे फिर किसीको इस विषयमें कुछ आपत्ति नहीं हुई।

शिवाजीको गागाभट्टके इस निर्णयपर अत्यन्त प्रसन्नता हुई। पवित्र नदियों—जैसे गङ्गा, गोदावरी आदि—और समुद्रोंका पानी, शुभचिह्नस्वरूप घोड़े और हाथी, व्याघ्राम्बर, मृगचर्म, एक ऐसा सिंहासन, जिसके पायेके एक स्थानमें सिंह थे, सोने चांदीके बर्तन और कलश मंगवाये। राज-ज्योतिषियोंको आज्ञा दी कि वे राज्याभिषेकके लिये शुभ तिथिका निश्चय करें। इस आज्ञानुसार राज ज्योतिषियोंने ज्येष्ठ कृष्णा त्रयोदशी संवत् १७३१ वि०—६ वीं जून सन् १६७४ ई० का दिन नियत किया।

मुहूर्तके निश्चय होनेपर शिवाजीने महाराष्ट्र प्रान्तके समस्त स्वतन्त्र राजाओं, सरदारों तथा अपने राज्यके मन्त्रियों तथा अन्य कर्मचारियोंको राज्याभिषेकके निमित्त निमन्त्रण पत्र भेजे। इसके अतिरिक्त गागाभट्टकी इस व्यवस्थाके प्राप्त होनेपर शिवा

जीने भारतवर्षके समस्त तीर्थोंके ब्राह्मणोंको राज्याभिषेकके निमन्त्रण-पत्र भेजे। उनका निमन्त्रण प्राप्त होनेपर लगभग ग्यारह हजार ब्राह्मण रायगढ़में पहुंचे। ब्राह्मणगण अपने बाल-बच्चे और स्त्रियोंसहित राज्याभिषेकके उत्सवमें सम्मिलित होनेके लिये पहुंचे थे। स्त्रियों और बच्चोंके कारण पचास हजार संख्या हो गयी थी। ये लोग रायगढ़में चार महीने रहे थे, जबतक ये लोग रायगढ़में रहे थे तबतक भोजन और रहनेका प्रबन्ध राज्यकी ओरसे ही हुआ था। इन ब्राह्मणोंके अतिरिक्त और भी बहुतसे महाराष्ट्र ब्राह्मण सरदार, प्रान्तिक शासक, दूसरे राज्योंके प्रतिनिधि, विदेशी व्यापारी तथा बहुतसे दर्शक भी आये थे। इन सबके आगत स्वागतका प्रबन्ध शिवाजीकी ओरसे हुआ था, पर इस प्रबन्धमें एक विशेषता थी कि इतनी भीड़ होनेपर भी किसी प्रकारकी गड़बड़ नहीं हुई और न किसी प्रकारकी अशान्ति देखनेमें आयी।

इस महोत्सवके अवसरपर शिवाजीकी राजधानी रायगढ़ नगर और रायगढ़ किलेकी शोभा अपूर्व थी। श्री गोस्वामी तुलसीदासजीका यह वाक्य "गिरा अनयन नयन बिनु बानी" चरितार्थ हो रहा था। यह पहले लिखा जा चुका है कि अपने पिताकी आज्ञासे शिवाजीने रायगढ़में राजधानी नियत की थी। रायगढ़में अनेक तालाब और झरने निर्माण कराये थे, जिससे पानीकी कमी न रहने पाये। "शिवदिग्विजय" में लिखा हुआ है कि राज्याभिषेकके कार्य सम्पन्न करनेके लिये शिवाजीने सात बा

बड़े कमरे बनवाये थे। इन बड़े कमरोंके अतिरिक्त अतिथियोंके स्वागत और ठहरनेके निमित्त बहुतसे मकान तैयार करवाये थे। एक सभागृह था। यह सभागृह लम्बाई और चौड़ाईमें बहुत बड़ा था। इसकी सजावट अत्यन्त मनमोहिनी थी। मुख्य मुख्य स्थानों और दीवालोंपर अत्यन्त सुन्दर और चित्ताकर्षक चित्र लटके हुए थे। बीचमें राजसिंहासन रखा गया था। सभागृहमें हजारों ही आदमियोंके बैठनेका स्थान था। सभागृहके अतिरिक्त किले तथा राज्यके अन्य इमारतोंपर भी चित्रकारी की गयी थी। एक विवेक-सभाका स्थान था, जिसमें विद्वान पण्डित शास्त्रसम्बन्धी विषयोंपर विचार करते थे। एक न्यायसभाका स्थान था जिसमें गरीब दीन दुखियोंकी फरियाद सुनी जाती थी। एक स्थान प्रबोध सभाका था, जिसमें कीर्तन, भगवद्भजन और पौराणिक कथायें होती थीं। एक कमरा था जिसका नाम रत्नागार था, जिसमें अलङ्कार, मणि माणिक्य, बहुमूल्य रत्न तथा वस्त्रादिकी परीक्षा होती थी। एक स्थान नीतिसभाका था जिसमें दूसरे राज्योंसे आये हुए लोगोंकी अभ्यर्थना होती थी। इन गृहोंके अन्तर्गत और भी बहुतसे स्थान बने हुए थे। जैसे अन्तगृह, देवालय, भोजनागार इत्यादि। किलेके नीचे भी मण्डप बना था, डेरे, तम्बू आदि ताने गये थे, जिनमें शिवा जीके बहुतसे मित्र, सम्बन्धी, राजकर्मचारी और राज्यके मन्त्री ठहराये गये थे। प्रत्येक कमरेमें रसोइया, खिदमतदार, भोवर सियर आदि तैनात किये गये थे। इन कर्मचारियोंको आज्ञा थी

कि आगन्तुक अतिथियोंको किसी प्रकारका कष्ट न होने पावे। इसका प्रबन्ध ये लोग रखें।

राज्याभिषेकके पूर्व शिवाजीके कितने ही दिन पण्डितोंसे इस परामर्श करनेमें ही बीते कि राज्याभिषेककी क्रिया किस प्रकार से सम्पन्न होनी चाहिये। अन्तमें सब बातें निश्चित हो जानेपर उन्होंने अपने गुरु रामदासस्वामी और अपनी अधिष्ठात्री देवी, माता जीजाबाईके चरण कमलोंमें अपना मस्तक नवाकर प्रणाम किया और आशीर्वाद ग्रहण करके रायगढ़के निकट विख्यात देवालयोंके दर्शनार्थ गये। पहले वे संवत् १७३१ वि०—मई सन् १६७४ ई० में चिपलूण पहुंचे। यहांके सब बड़े मन्दिरमें बड़े ठाट बाट और भक्तिभावसे परशुरामको पूजा की और चौथे दिन राय गढ़ लौट आये। फिर वे प्रतापगढ़ अपनी कुलदेवी भवानीके दर्शन करनेके लिये गये। प्रतापगढ़की भवानीदेवीके मन्दिरमें उन्होंने सवा मन सोनेका एक छत्र चढ़ाया, जिसका मूल्य छप्पन हजार रुपया था। इसके अतिरिक्त और भी बहुतसे बहु मूल्य पदार्थ भेंट किये। सन् १६७४ ई० की २१ वीं मईको वे फिर रायगढ़ आ गये। यहां उन्होंने अपने कुल पुरोहित प्रभाकर भट्टो पाध्यायके पुत्र बालम्भट्टके निरीक्षणमें कई दिन महादेव, भव मो आदिकी उपासना, अर्चना और पूजा की।

राज्याभिषेकस पूर्व शिवाजीका उपनयन संस्कार करना निश्चित हुआ, अतएव इस पूर्व निश्चयके अनुसार ज्येष्ठ शुक्ला ४ तदनुसार २८ वीं मईको शिवाजीका उपनयन होकर

हुआ* । गागाभट्टने उनका उपनयन-संस्कार कराया और गायत्री मंत्रकी दीक्षा दी । गागाभट्टको सात हजार हुण यज्ञोपवीत संस्कार करानेकी दक्षिणामें प्राप्त हुए । अन्य सब पण्डितोंको सत्तर हजार हुण दिये गये । उस दिन एक लाख ब्राह्मणोंको भोजन कराया गया और सबको एक एक रुपया दक्षिणा दी गयी ।

यज्ञोपवीत-संस्कारके दूसरे दिन शिवाजीने तुलादान किया । तुलादान इस प्रकार हुआ कि तराजूके एक पलड़ेमें शिवाजी बैठे और दूसरे पलड़ेमें सोना रखा गया और शिवाजीके बराबर सोना तौलकर दीन दुःखियोंमें बांट दिया गया। पीछे क्रमसे इसी प्रकार चांदी, तांबा पीतल, शीशा, जस्ता और लोहा तौला गया और बांट दिया गया । धातुओंके तुलादान होनेके पीछे सन, कपूर, लवण, लौंग, इलायची, जावित्री, जम्बफल, पान-सुपारी प्रभृतिका तुलादान हुआ । पीछे घी, शक्कर, फल, मेवा और मिठाईका तुलादान हुआ । इस तुलादानमें एक लाख

---

* किसी किसी इतिहासमें लिखा हुआ है कि शिवाजीके यज्ञोपवीत-संस्कारके अवसरपर उनके स्नान करानेके लिये "गङ्गा सागर" नामक एक हौज बनायी गयी थी । एक जादूगरने किसीकी मोरी बन्द करके उस हौजमें पानी भरा । एक मावळे सैनिकने समझा कि जादूगर शिवाजीको डुबोनेके लिये यह काम कर रहा है अत उसने हौजमें जाकर उस जादूगरका सिर तलवारसे काट दिया । जादूगरकी स्त्री और पुत्रोंने इसकी शिकायत शिवाजीसे की । शिवाजीने उस जादूगरके पुत्रों और विधवाको आश्वासन दिया और दो सौ रुपये वार्षिक आयकी जमीन उन्हें दी ।

हुण खर्च हुआ। तुलादान हो जानेके पीछे दो ब्राह्मणोंने शिवाजी से कहा कि "सूरतकी चढ़ाईके समय आपकी सेनासे कितने ही ब्राह्मण, गो, स्त्री और बच्चोंकी हत्या हो गयी थी अतएव आप इस पापका भी प्रायश्चित्त कीजिये। प्रायश्चित्तस्वरूप आठ हजार रुपया देशस्थ और कोकणस्थ ब्राह्मणोंको दान दीजिये।" शिवाजीने ब्राह्मणोंका कथन स्वीकार कर लिया और उसी समय उन्हें आठ हजार रुपया दे दिया।

राज्याभिषेकके एक दिन पहले शिवाजीने व्रत किया। उस दिन भी उन्होंने खूब दान किया। पांच हजार हुण गागाभट्टको दिये और भी बहुतसे ब्राह्मणोंको दान दिया। दूसरे दिन ज्येष्ठ शुक्ला त्रयोदशी मंगलवारको ब्राह्ममुहूर्त्तमें वे उठे। शौचादि कर्मसे निवृत्त होकर उन्होंने शास्त्रोक्त रीतिके अनुसार स्नान किया। पहले मृत्तिका स्नान, फिर पञ्चगव्य स्नान, अन्तमें गङ्गा जल आदिसे स्नान किया। पीछे अपने घरके सब देवी देवताओंकी पूजा की। फिर अपने कुल पुरोहित, गागाभट्ट और दूसरे ब्राह्मणोंके पैरोंकी पूजा की और बहुमूल्य आभूषण और वस्त्र ब्राह्मणोंको भेंट किये। अभिषेककी क्रियाका समय उपस्थित हुआ, शिवाजीने श्वेत वस्त्र धारण किये, कई प्रकारके मणि माणिक्यके अलङ्कार पहने और फिर अभिषेकके स्थानपर चलनेकी तैयारी की। उनके साथमें प्रधान मण्डल था, पीछे माता जीजाबाई थीं, जीजाबाईके पीछे उनकी रानियां थीं। वहां दो गज ऊंचे और दो गज लम्बे सोनेके सिंहासनपर बैठे।

उनकी दाहिनी बगलमें उनकी धर्मपत्नी सोयराबाई बैठीं, शिवाजीके दुपट्टे और उनकी साड़ीकी गांठ बांध दी गयी। राजा और रानीके पीछे युवराज सम्भाजी बैठे। शिवाजीके पास पूर्व दिशामें प्रधान मन्त्री मोरोपन्त पिंगले अपने हाथमें घी भरा हुआ सुवर्ण कलश, दक्षिणमें सेनापति हम्मीरराव मोहते अपने हाथमें दूध भरा हुआ चांदीका कलश, पश्चिममें अमात्य रामचन्द्र नीलकण्ठ* अपने हाथमें दही भरा हुआ ताम्बेका कलश, उत्तरमें पण्डित राव रघुनाथपन्त सोनेके एक कलशमें मधु लिये हुए खड़े थे। उनके पास ही मिट्टीके कुम्भमें समुद्र और महा नदियोंका† जल भरा हुआ रखा था। इसी भाँति उपदिशाओं में—अग्निकोणमें आणाजी दत्ते अपने हाथमें राजकीय छत्र, नैऋत्य कोणमें सामन्त जनार्दन पण्डित हनुमन्ते ‡ अपने हाथमें पंखा, वायव्यकोणमें मन्त्री दत्ताजी§पण्डित और ईशाण कोणमें न्यायाधीश बालाजी पण्डित अपने अपने हाथोंमें चंवर लिये हुए खड़े थे। सामने दाहिनी ओर शिवाजीके प्राइवेट सक्रेटरी अर्थात् पत्र-लेखक बालाजी आवजी और बायीं ओर हिसाब-लेखक चिम्मणाजी आवजी अपने अपने हाथोंमें लेखनपत्र लिये हुए खड़े

* सभासदने इनका नाम नारोनीलकण्ठ लिखा है।

† गङ्गा, कावेरी गोदावरी यमुना और महा

‡ चिटनीसने इनका नाम त्र्यम्बक सोनदेव लिखा है और सभासदने त्र्यम्बक सोनदेवका पुत्र, रामचन्द्रपन्त लिखा है।

§ सभासदने इनका नाम मोरोपन्त लिखा है और चिटनीसने नीराजी रावजी लिखा है।

हुण खर्च हुआ। तुलादान हो जानेके पीछे दो ब्राह्मणोंने शिवाजी से कहा कि "सूरतकी लड़ाईके समय आपकी सेनासे कितने ही ब्राह्मण, गो, स्त्री और बच्चोंकी हत्या हो गयी थी अतएव आप इस पापका भी प्रायश्चित्त कीजिये। प्रायश्चित्तस्वरूप आठ हजार रुपया देशस्थ और कोकणस्थ ब्राह्मणोंको दान दीजिये।" शिवाजीने ब्राह्मणोंका कथन स्वीकार कर लिया और उसी समय उन्हें आठ हजार रुपया दे दिया।

राज्याभिषेकके एक दिन पहले शिवाजीने व्रत किया। इस दिन भी उन्होंने खूब दान किया। पांच हजार हुण गागाभट्टको दिये और भी बहुतसे ब्राह्मणोंको दान दिया। दूसरे दिन ज्येष्ठ शुक्ला त्रयोदशी मंगलवारको ब्राह्ममुहूर्त्तमें वे उठे। शौचादि कर्मसे निवृत्त होकर उन्होंने शास्त्रोक्त रीतिके अनुसार स्नान किया। पहले मृत्तिका स्नान, फिर पञ्चगव्य स्नान, अन्तमें गङ्गा जल आदिसे स्नान किया। पीछे अपने घरके सब देवी देवताओंकी पूजा की। फिर अपने कुल पुरोहित, गागाभट्ट और दूसरे ब्राह्मणोंके पैरोंकी पूजा की और बहुमूल्य आभूषण और वस्त्र ब्राह्मणोंको भेंट किये। अभिषेककी क्रियाका समय उपस्थित हुआ, शिवाजीने श्वेत वस्त्र धारण किये, कई प्रकारके मणि माणिक्यके अलङ्कार पहने और फिर अभिषेकके स्थानपर चलनेकी तैयारी की। उनके साथमें प्रधान मण्डल था, पीछे माता जीजाबाई थीं, जीजाबाईके पीछे उनकी रानियां थीं। वहां दो गज ऊंचे और दो गज लम्बे सोनेके सिंहासनपर बैठ।

छत सुनहरे कपड़ेकी बनी हुई थी, उसमें अनेक बहुमूल्य मणि माणिक्य रत्न जड़े हुए थे, जिनके देखनेसे आँखोंमें चकाचौंध छा जाती थी। फर्श मखमलसे ढका हुआ था। स्थान स्थानपर अत्यन्त मनोहर चित्ताकर्षण करनेवाले चित्र लटके हुए थे, जिनसे उस समयकी भारतकी ललितकलाका अच्छा परिचय मिलता था। जहाँ तहाँ मनोहर परदे लटक रहे थे, जिनपर कारचोबीका अद्भुत काम किया हुआ था। पर्दोंपर सुनहली झालरें लटक रही थीं। मंडपके केन्द्रस्थलमें एक रत्नजटित सिंहासन रखा हुआ था। यह सिंहासन बत्तीस मन सोनेका था, जिसके निर्माण करनेमें चौदह लाख रुपये खर्च हुए थे। यह राजसिंहासन भी शास्त्रोक्त विधिसे ही निर्माण कराया गया था। पहले इस राज सिंहासनकी देही कई पवित्र वृक्षोंकी लकड़ियोंकी बनवायी गयी थी। फिर सोनेसे मढ़वा दी गयी थी और उसमें रत्न जड़ दिये गये थे। सिंहासनमें आठ खम्भे थे, जिनमें बहुमूल्य रत्न और हीरे जड़े हुए थे। सिंहासनमें एक खूबी और भी थी। यह हिन्दुओंकी पुरानी रीतिके अनुसार तो बनाया ही गया था पर उस समयके मुगलोंके तख्तके समान भी उसमें बहुतसी बातें बढ़ा दी गयी थीं। सिंहासनके नीचे बाघाम्बर बिछाया हुआ था और ऊपर मखमल।

यह ऊपर लिखा जा चुका है कि सिंहासन शास्त्रोक्त विधिके अनुसार ही बनवाया गया था। सिंहासनके आस पास आठ खम्भे थे, उन खम्भोंके ऊपर एक एक सोनेका सिंह रखा हुआ

थे। अन्य राजकर्मचारी, सरदार और बहुतसे दर्शक भी वैठ रहे थे। वेदमन्त्रोंके उच्चारण होते ही सब मंत्रियोंने अपने कलशोंमेंसे घी, दूध, दही और मधु महाराज, महारानी और युवराजके मस्तकपर छिड़का, गानवाद्य आरम्भ हुआ। उपस्थित जनतामें चारों ओरसे हर्षध्वनि हुई। इस विधिके पूर्ण होते ही सोलह सौभाग्यवती ब्राह्मणियोंने एक सोनेके थालमें पांच प्रदीप रखकर शिवाजीकी आरती उतारी। पहले शिवाजीने घीसे भरे हुए कांसेके कटोरेमें पीछे दर्पणमें अपना मुख देखा। पीछे उन्होंने विष्णुकी एक छोटीसी मूर्त्तिकी पूजा की और उसको अपने दाहिने हाथमें बांध लिया। अन्तमें उन्होंने अपनी तलवार और ढाल, तीर तथा कमानकी पूजा की।

राज्याभिषेककी ये प्रारम्भिक विधियां समाप्त हुईं। शिवाजीने फिर कपड़े बदले, सुन्दर वस्त्र और अलङ्कार धारण करके उस मण्डपमें पहुंचे जहां राजसिंहासन रखा था।

पाठक! जिस मण्डपमें राजसिंहासन रखा गया था, उसकी तथा राजसिंहासनकी अनुपम छटाका भी कुछ वर्णन सुन लीजिये। आपने महाराज युधिष्ठिरके राजसूय यज्ञका वर्णन पढ़ा होगा। आपमेंसे अनेक व्यक्तियोंने दिल्ली-दरबार भी देखा होगा। परन्तु चलिये थोड़ी देरके लिये शिवाजीके राज सिंहासनवाले मण्डपकी भी सैर करें। मण्डप हिन्दू शास्त्रोक्त विधिके अनुसार ही निर्माण किया गया था। चारों ओर हरे हरे वृक्ष और लता पत्तोंसे सुशोभित किया गया था। मंडपकी

छत सुनहरे कपड़ेकी बनी हुई थी, उसमें अनेक बहुमूल्य मणि माणिक्य रत्न जड़े हुए थे, जिनके देखनेसे आँखोंमें चकाचौंध छा जाती थी। फर्श मखमलसे ढका हुआ था। स्थान स्थानपर अत्यन्त मनोहर चित्ताकर्षण करनेवाले चित्र लटके हुए थे, जिनसे उस समयकी भारतकी ललितकलाका अच्छा परिचय मिलता था। जहाँ तहाँ मनोहर परदे लटक रहे थे, जिनपर जरदोजीका अद्भुत काम किया हुआ था। पर्दोंपर सुनहली झालरें लटक रही थीं। मंडपके केन्द्रस्थलमें एक रत्नजटित सिंहासन रखा हुआ था। यह सिंहासन बत्तीस मन सोनेका था, जिसके निर्माण करनेमें चौदह लाख रुपये खर्च हुए थे। यह राजसिंहासन भी शास्त्रोक्त विधिसे ही निर्माण कराया गया था। पहले इस राज सिंहासनकी वेदी कई पवित्र वृक्षोंकी लकड़ियोंकी बनवायी गयी थी। फिर सोनेसे मढ़वा दी गयी थी और उसमें रत्न जड़ दिये गये थे। सिंहासनमें आठ खम्भे थे, जिनमें बहुमूल्य रत्न और हीरे जड़े हुए थे। सिंहासनमें एक छत्री और भी थी। यह हिन्दुओंकी पुरानी रीतिके अनुसार तो बनाया ही गया था पर उस समयके मुगलोंके तख्तके समान भी उसमें बहुतसी बातें बढ़ा दी गयी थीं। सिंहासनके नीचे बाघाम्बर बिछाया हुआ था और ऊपर मखमल।

यह ऊपर लिखा जा चुका है कि सिंहासन शास्त्रोक्त विधिके अनुसार ही बनवाया गया था। सिंहासनके आस-पास आठ खम्भे थे, उन खम्भोंके ऊपर एक एक सोनेका सिंह रखा हुआ

था। सिंहासनकी दाहिनी ओर दो सोनेकी, घड़े घड़े दाँतोंवाली मछलियाँ रखी हुई थीं और बाईं ओर घोड़ोंकी पूछें थीं*। सिंहासनके ऊपर सोनेकी एक तराजू रखी थी, जो शिवाजीके राज्यकी न्याय-तुलाका सूचक चिह्न थी। मुगल-दरबारकी देखादेखी ऊपर लिखे हुए चिह्न रखे गये थे और हिन्दू शास्त्रके अनुसार द्वारपर दोनों ओर पानी भरे घड़े कलश रखे हुए थे, उनके ऊपर हरे पत्तोंके गुच्छे थे, इनके अतिरिक्त दो हाथी और घोड़े भी द्वारपर थे।

सिंहासन-गृहमें पहुंचते ही शिवाजी राजसिंहासनपर नहीं बैठे। थोड़ी देरतक वे घुटने टेककर राजसिंहासनके सामने झुके, पीछे राजसिंहासनपर चढ़े। उस समय मान

---

* घोड़ोंकी पूछें और नक्कारोंके सिर मुगलोंके राजचिह्न थे। मुगल बादशाह अपने अमीर उमराव और सरदारोंको "माही मरातिब" दिया करते थे, जो एक सम्मान प्रतिष्ठासूचक चिह्न था। "माही मरातिब" के सम्बन्धमें कहा जाता है कि ईरानके बादशाह नौशेरवांके पोते खुसरो परवेजने "माही मरातिब" देनेकी रीति प्रचलित की थी। इसका कारण यह था कि जब खुसरो परवेजको उसके शत्रु बहराम चौबीनने ईरानसे निकाल दिया था तब उसने यूनानमें जाकर मोरीस बादशाह की लड़कीसे विवाह किया और उसकी सहायता ([illegible]) सेनाकी सहायतासे सन् ५९१ ई० में ईरानपर फिर विजय प्राप्त की। उस समय चांद (माह) माही अर्थात् मीन राशिमें था। उसने अपने ज्योतिषियोंके कथनके अनुसार एक बांसपर एक ओर तो चन्द्र और दूसरी ओर मछलीकी शक्ल बनाकर यह प्रतिष्ठासूचक चिह्न अपने सरदारोंमें बांटा। इस घटनाके कुछ दिनों पीछे बादशाह परवेज ईरानको बहीस [illegible] देता। जब यह चन्द्र कि मर्यादाका था, इसलिये उसने एक बांसपर एक ओर चिह्न किया फिर दूसरी ओर चन्द्र और ऐसेमें मछलीकी आकृति बनाकर यह चिह्न अपने सरदारोंको प्रतिष्ठास्वरूप भेंट किया। "माही मरातिब" उसकी ईरानके राज्याभिषेक और विजयके चिह्न थे। तुर्कोंने भी ईरानियोंके पहले ही से बादशाहोंकी "माही मरातिब"की रीति भारतमें प्रचलित की थी।

चांदीके फूल तथा अन्य बहुमूल्य पदार्थोंकी वर्षा की गयी। सोलह सधवा ब्राह्मण स्त्रियोंने उनकी फिर आरती उतारी और उपस्थित जनतामें "छत्रपति शिवाजी महाराजकी जयकी" हर्षध्वनिसे आकाश गुंजा दिया। नृत्य, गान, वाद्य हुआ। रायगढ़के दुर्गसे उसी समय एकसौ एक तोपोंकी सलामी हुई। उसके पीछे शिवाजीके राज्यमें जितने किले थे, उन सब किलोंसे तोपोंकी सलामी हुई। उस दिन सह्याद्रि पर्वतमाला तोपोंकी ध्वनिसे गूंज उठी।

ब्राह्मणोंने आगे बढ़कर शिवाजीको आशीर्वाद दिया। उन्होंने हिन्दू शास्त्रके अनुसार सोलह प्रकारके "महादान" किये। मन्त्रियोंने आगे बढ़कर राजसिंहासनके सामने सिर झुकाकर ताजीम दी। फिर अन्य लोगोंने भी ऐसा ही किया। शिवाजीने अपने प्रत्येक सरदार और राजकर्मचारीको उसके पदके अनुसार पुरस्कार दिया। अष्टप्रधानोंके अमीतक जो फारसी नाम थे, वे बदलकर संस्कृत किये। राज्याभिषेकका संवत् भी चला था।

शिवाजीके राज्याभिषेकमें अङ्गरेजोंकी ओरसे भी एक दूत सम्मिलित होनेके लिये आया था। नारोजीपन्तने अङ्गरेजी दूतको जिसका नाम हेनरी आक्सडन था, शिवाजीके सामने उपस्थित किया। दूतने हीरेकी एक अंगूठी शिवाजीको भेंट की। शिवाजीने दूतको खिलअत दी। पाठकोंसे यह छिपा नहीं है कि उस समय भारतवर्षमें अङ्गरेजोंका कुछ भी प्रभुत्व और महत्व न था। वे एक सामान्य वणिक्‌की हैसियतसे अपने दिन भारतमें

घिता रहे थे। उन्हें उस समय कुछ व्यापारिक स्वतन्त्रता भी न थी, मुगलों और मराठों दोनोंसे वे अपनी व्यापारिक सुविधाके लिये प्रार्थना करते थे। शिवाजीके राज्याभिषेकमें भी अङ्गरेज दूत अपनी व्यापारिक सुविधाकी प्रार्थना करनेके लिये ही पहुंचा था। शिवाजीने अङ्गरेज दूतको अपने राजसिंहासनके निकटतक आनेकी आज्ञा दी। अङ्गरेज दूतने ईस्ट इण्डिया कम्पनीकी ओरसे शिवाजीकी सेवामें बीस प्रार्थनायें उपस्थित की थीं। जिनमेंसे मुख्य ये थीं —

(१) शिवाजीके राज्यमें जो माल आवेगा, उसपर अङ्गरेज शिवाजीको ढाई रुपया सैकड़ा अकात (चुङ्गी) देंगे।

(२) अङ्गरेजोंको राजापुर, दाभोल, चौल तथा कल्याणमें कोठियां खोलनेकी इजाजत दी जाय तथा शिवाजीके अधिकृत सम्पूर्ण राज्यमें अङ्गरेज व्यापार कर सकेंगे। अङ्गरेज, मालका क्रय विक्रय अपनी मनमानी दरसे करेंगे और मालकी दरके मध्यमें किसी प्रकारकी सख्ती शिवाजीकी ओरसे न होगी।

(३) अङ्गरेज और शिवाजीके सिक्के, एक दूसरेके देशमें अपनी कीमतपर चल सकेंगे अर्थात् सिक्कोंकी चलती कीमत नहीं मानी जायगी, पर सिक्कोंकी जो यथार्थ कीमत होगी, वही मानी जायगी।

(४) महाराष्ट्र राज्यके किनारे, जो अङ्गरेजी जहाज नष्ट हो जायँ अथवा लूट जायँ, उनसे होनेवाली हानि पूरी कर दी जाय।

(५) राजापुर और हुबलीमें अङ्गरेजोंकी जो क्षति हो गयी है, वह क्षतिपूर्ण की जाय। दोनोंको एक दूसरेके छीने जहाज वापिस करने होंगे।

शिवाजीने अङ्गरेजोंको अपने राज्यमें व्यापार करनेकी आज्ञा दे दी और ढाई रुपया सेकड़ा महसूल लेना भी स्वीकार कर लिया। पर उन्होंने नं०४ की शर्त स्वीकार नहीं की कि महाराष्ट्र राज्यके समुद्री किनारेपर जो जहाज लुट जाय अथवा नष्ट हो जाय तो उसको क्षतिपूर्त्ति की जाय और न उन्होंने हुबलीकी लूटकी क्षतिपूर्त्ति की। राजापुरकी लूटके सम्बन्धमें दूसरा ही ठहराव किया गया। उस ठहरावके अनुसार वहांकी क्षति १०,००० मोहरें कूती गयी थीं। इसकी रकम अङ्गरेजोंको नकद न देकर इस भांति देना निश्चय किया गया कि अंगरेज तीन वर्षोंतक प्रतिवर्ष पांच हजार मोहरोंके हिसाबसे १५००० हजार मोहरोंका माल शिवाजीसे खरीदें जिसमेंसे सिर्फ साढे सात हजार मोहरें नकद दें और शेष साढ़े सात हजार मोहरें राजा पुरमें अङ्गरेजोंकी कोठी स्थापित होनेपर आनेवाले मालकी जो जकात उन्हें देनी होगी, उसमेंसे कट जायेंगे। छीने हुए जहाज लौटानेकी शर्त शिवाजीने बड़े कष्टसे स्वीकार की, क्योंकि लूट पर राजाका विशेष अधिकार और प्रेम स्वाभाविक ही होता है। शिवाजीने सिक्केकी शर्त भी बड़ी कठिनाईसे मानी। उनका कहना था कि सिक्कोंमें जितनी धातु हो, उसीके अनुसार उनकी कीमत रहे, किसी दूई कीमत न मानी जाय। शायद शिवाजी

यह पहचान गये कि अङ्गरेजोंके सिक्कोंमें जितनी कीमत लिखी होती है, उतनी कीमतको धातु सिक्कोंमें नहीं होती है। सन्धिके नियमोंके अनुसार, राजापुरमें अङ्गरेजोंने फिर कोठी स्थापित की, पर यह पहलेके समान लाभदायक न हो सकी।

अङ्गरेज दूत आक्सडनने शिवाजीको प्रसन्न देखकर अङ्गनी परासे पहुँचायाली कहावत काममें लानी चाही थी,—और शिवाजीसे जञ्जीराके शासकोंसे सन्धि करनेकी प्रार्थना की, पर शिवाजीने स्वीकार नहीं किया।

राज्याभिषेकके पीछे शिवाजीकी सवारी रायगढ़ नगरमें बड़े धूमधामसे निकली। जिसमें जरी पट्टा और भगवा झण्डे मा थे। रायगढ़ नगरके प्रत्येक मन्दिरमें दर्शन करके, शिवाजी रायगढ़ दुर्गमें पहुंचे।

डाक्टर फ्रायर (Fryer) ने अपने यात्रा विवरणमें लिखा है कि राज्याभिषेकके पीछे, जब अङ्गरेज दूत लौट रहे थे तब एक कसाई, जो शिवाजीकी आज्ञासे अङ्गरेजोंको मांस देता था रायगढ़ पहुंचा और अङ्गरेजोंसे मिलनेकी आज्ञा ली। आज्ञा प्राप्त करनेके पीछे वह अङ्गरेजोंके साथ रायगढ़ पहाड़ीपर गया। उसने अङ्गरेजोंको देखकर कहा कि "मैं इन लोगोंको देखकर बहुत प्रसन्न हुआ हूं क्योंकि जितना मांस मैंने दूसरे ग्राहकोंको वर्षोंमें नहीं बेचा है, वह इन्होंने एक मासमें खा लिया है।" शिवाजीके राज्याभिषेकके विषयमें सभासद् लिखता है कि एक करोड़ बयालीस लाख हुण खर्च हुए थे। इस सौदागर पाप

हम लो फेयरन लिखा है कि डेढ लाख पगोड़ा खर्च हुए थे। उच सौदागरके उपर्युक्त कथनपर प्रो० यदुनाथ सरकार लिखते हैं कि इस व्यापारीने ७ वीं जूनसे १८ वीं जूनतक शिवाजीने जो दान पुण्य किया था, उसीका हिसाब लगाया था। इसमें शिवाजीने मंत्रियों, राजकर्मचारियों, ब्राह्मणों और पुरोहितोंको जो पुरस्कार, दान आदि दिया था वह सम्मिलित नहीं है। परन्तु फिर भी दस लाख हुण अर्थात् पचास लाख रुपयेसे अधिक खर्च नहीं हुआ।

राज्याभिषेकके दस-बारह दिन पीछे ही शिवाजीकी माता जीजाबाईका देहान्त हो गया। मरते समय जीजाबाईने अपनी निजी सम्पत्ति पचीस लाख हुणकी छोड़ी थी। माताकी मृत्युसे शिवाजीको अत्यन्त दुःख हुआ। जीजाबाईका अन्त्येष्टि संस्कार रायगढ़में हुआ और उनकी अस्थियाँ शिवाजीने तीर्थराज प्रयागको भेजीं।

वास्तवमें जीजाबाई बड़ी भाग्यवती थीं। उन्होंने अपनी युवावस्थामें, विशेषतः शिवाजीके जन्मके समय जो कष्ट उठाये थे, जो दुःख भोगे थे, जो यन्त्रणाएँ झेली थीं वे खाली नहीं गयीं। उन्होंने अपने जीवित कालमें देख लिया कि उनके पुत्र शिवाजीने स्वतन्त्र हिन्दू-राज्य स्थापित कर लिया। उनकी मनोकामना पूर्ण हुई। उन्होंने शिवाजीकी बाल्यावस्थामें, शिवाजीके हृदयमें जो बीजारोपण किया था, वही स्वराज्यरूपी महावृक्षके रूपमें परिणत हुआ। महाराष्ट्रमें पूर्णरूपसे जागृति हुई। जीजाबाईका

उद्योग खाली नहीं गया। शिवाजीने महाराष्ट्रमें एक नवीन युग उपस्थित कर दिया। जीजाबाईके सामने ही शिवाजीका पूर्णोदय हुआ। जीजाबाईके जीवित कालमेंही महाराष्ट्र-केशरी शिवाजीने कविके निम्नलिखित पद्यको चरितार्थ कर दिखलाया—

"एकेनापि हि शूरेण पादाक्रान्तं महीतलम्

क्रियते भास्करेणैव परिस्फुटित तेजसा।"

अर्थात् एक ही शूर सारी पृथ्वीको पाँवतले दबाकर ऐसे वश मेंकर लेता है, जैसे अकेला ही तेजस्वी सूर्य सारे जगत्को प्रकाशित करता है। जीजाबाईके सामने ही शिवाजीकी पूरी धाक जम गयी थी। महाराष्ट्र प्रान्तमें तो उनका पूरा रोब छाही गया था, परन्तु महाराष्ट्रके बाहर भी उस मरदेमराठेके नामसे लोग थर थर काँपते थे। भारत सम्राट् औरंगज़ेबके उन्होंने अपनी नीतिज्ञता और शूरवीरतासे छक्के छुड़ा दिये थे। दक्षिणके मुसलमानी राज्य—बीजापुर और गोलकुण्डा – के अभिमानको उन्होंने चूर्ण कर दिया था। उत्तर भारतके अनेक राजा भी शिवाजीका नाम सुनते ही भयभीत हो जाते थे। यहाँतक कि पोर्त्तगीज़, डच आदि विदेशी व्यापारियोंको भी अनेक अवसरोंपर उनकी शक्तिके सामने सिर झुकाना पड़ा था। भारतके भविष्य भाग्यविधाता अंगरेज़ोंको भी शिवाजीकी शक्ति और सत्ताके सामने नाक रगड़नी पड़ी थी। जीजाबाईने शिवाजीकी यह शक्ति अपनी आँखोंके सामने देखी। इससे बढ़कर और उन्हें क्या राजमाता

प्राप्त हो सकती थी ? धन्य ! जीजाबाई !! धन्य !!! आपसे बढ़ कर कौनसी माता इस संसारमें भाग्यवान् हो सकती है ।

जीजाबाईकी मृत्युके पीछे शिवाजी चार मासतक रायगढ़में ही रहे। क्योंकि रायगढ़में ही जीजाबाईका देहान्त हुआ था। मातृ वियोगसे शिवाजी इतने व्याकुल हुए थे कि चार महीनेतक वे राजसिंहासनपर नहीं विराजे। चार मास पीछे, पांचवें महीने आश्विन शुक्ला पंचमीको शुभ मुहूर्तमें पुन उन्होंने एक सभा की और राज्यसिंहासनपर विराजे। इसके पश्चात् वे अपने अष्ट मन्त्री और सेनाके साथ प्रतापगढ़में देवीके दर्शन और उपासना करनेके निमित्त गये। प्रतापगढ़से वे अपने गुरु समर्थ श्रीरामदास स्वामीके दर्शन करनेके लिये गये। पीछे वे शिखरमें महादेवजीका दर्शन करनेके लिये गये और फिर जेजूरीमें खंडोबाके दर्शन किये। इसके पश्चात् वे अपनी राजधानी रायगढ़को लौट आये।

अठारहवां परिच्छेद
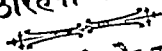
कर्नाटकपर चढ़ाई और अन्य युद्ध

"सूरवीर रणको चढ़त ढूंढे किसका साथ
सांचे साथी ईश सह लिया कटारा हाथ"

× × × ×

"सपनेमें साहन को सुन्दरी सिखावै,
ऐसे सरजासों बैर जनि करो महाबली है।
पेसकसें भेजत बिलायति पुर्तगाल,
सुनिकै सहमि जात करनाटथली है।
भूषन भनत गढ़ कोट माल मुलुक दै,
सिवाजी सलाह राखिए तो बात भली है।
जाहि देत दंड सब डारिकै अदब सोई,
दिल्ली दलमली तो सिहारी कहा चली है।"

कई इतिहासलेखकोंने लिखा है कि राज्याभिषेकके पीछे दो तीन वर्ष शिवाजीने विशेषतः राज्य प्रबन्धमें ही लगाये और फिर राज्य-वृद्धिके प्रयत्नमें लगे। परन्तु यह बात बिल्कुल गलत है। हम देखते हैं कि शिवाजीने राज्याभिषेकके एक मास पीछे ही मुगलोंसे मुठभेड़ आरम्भ कर दी थी। मगर उस समय औरङ्गजेबने दिलेरखांको दक्षिणसे बुला लिया था।

मुगल-साम्राज्यकी ओरसे दक्षिणमें मुगल सैन्यदल बहादुरखाँ की अध्यक्षतामें था। बहादुरखाँ अपनी छावनीसे पचास मीलकी दूरीपर था कि शिवाजीने उसके शिविरपर आक्रमण कर दिया। इस आक्रमणमें उनके हाथ एक करोड़ नकद रुपया और दो सौ घोड़े लगे। बहादुरशाहने ये दो सौ घोड़े सम्राट् औरंगजेबकी भेंट करनेके लिये रखे थे। शिवाजीने बहादुरशाहकी छावनीमें आग लगा दी। बीजापुर दरबारसे भी उनके कई छोटे मोटे युद्ध हुए। सम्वत् १७३२ वि०—जनवरी १६७५ ई० में उनकी सेनाके तीन हजार मराठा घुड़सवारोंने दत्ताजीकी अध्यक्षतामें कोल्हापुरपर चढ़ायी की। कोल्हापुर निवासियोंने डेढ़ हजार हुण देकर अपनी रक्षा की। मराठोंने और कई स्थानोंमें भी लूट मार मचायी। इसी वर्ष कुछ दिनोंके लिये मुगल-सेनाने कल्याण-नगर पर अधिकार जमा लिया था पर पीछे मराठोंने कल्याण-नगर को फिर ले लिया। इसी बीचमें शिवाजी और बहादुरखाँकी सन्धिकी शर्तें हुईं। सन्धिकी शर्तें तय करनेके लिये तीन महीनेतक बातें होती रहीं। शिवाजीने इस सन्धिके अवसरपर मुगल-सेनापति बहादुरशाहको बेढब छकाया। इधर तो वे सन्धिकी बातें करते रहे उधर अपना बल-सञ्चय करते रहे। अन्तमें मुगल-सम्राट् औरंगजेबकी ओरसे सन्धि विषयक यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि "शिवाजी अपने १७ किले औरंग जेबको दे दें और अपने पुत्र सम्भाजीको एक सैन्यदलके साथ मुगल-सेनापतिके अधीन रहनेके लिये भेज दें। बादशाह सम्भा

जीको छः हजारका मनसब देंगे और इसके अतिरिक्त भीमा नदीके किनारेका सब प्रदेश भी शिवाजीको दे दिया जायेगा। इसपर शिवाजीने अपने बेटेको सुरक्षित रखनेके लिये अभीष्ट चाहा था, बादशाहने एक फरमान उनके पास भेजा जिसमें लिखा कि शिवाजीके पुराने सब अपराध क्षमा कर दिये जायेंगे।" शिवाजीने इस समय पोंडाका किला घेर लिया था, इसके पीछे मुगल-सम्राट्का दूत उपरोक्त फरमान लेकर इनके पास पहुँचा। इन्होंने मुगल सम्राट्के दूतको बुरी तरहसे फटकार बतलायी और कहा "कि मुझे ऐसी क्या गरज पड़ी है जो तुम लोगोंसे सन्धि करूं। यहांसे जल्दी चले जाओ नहीं तो तुम्हारी बड़ी फजीहती होगी।" इसपर दूत चला गया। बहादुरखाँ दूतके मुखसे ये सब बातें सुनकर अत्यन्त कुपित हुआ। उसने बीजापुरी वजीर खवासखाँसे मिलकर शिवाजीपर चढ़ाई करनेका विचार किया। औरंगजेबने भी बहादुरखाँके इस विचारके प्रति पूर्ण सहमति प्रकट की। परन्तु "मेरे मन कुछ और है, करताके मन कुछ और" मनुष्य सोचता कुछ है, पर परमात्मा उसके विचारोंके पुतले क्षणमें ही ढा देते हैं। यही दशा बहादुरखाँकी हुई। बीजापुर दरबारमें फूट फैली हुई थी। वहाँ प्रत्येक अमीर उमराव राजशक्ति अपनानेकी चेष्टा कर रहा था कि इसी बीचमें बहलोलखाँने खवासखाँको मन्त्रीपदसे हटा कर स्वयं राज्यप्रतिपालक बन बैठा। बहादुरखाँका शिवाजीपर चढ़ाई करनेका विचार जहाँका तहाँ रह गया।

शिवाजीके समस्त युद्धोंके वर्णन करनेका स्थान इस पुस्तकमें नहीं है अतएव थोड़े शब्दोंमें पाठकोंको स्मरण रखना चाहिये कि शिवाजीका युद्ध मुगल साम्राज्य बीजापुर और गोलकुण्डासे कितनी ही बार हुआ। कभी शिवाजी हारे और कभी जीते, पर अन्तमें शिवाजीका उद्देश्य सफल हुआ। महाराष्ट्रमें वे स्वाधीनताकी पताका फहरानेमें समर्थ हुए।

शिवाजीका केवल बीजापुर, गोलकुण्डा और मुगलोंसे ही युद्ध नहीं हुआ था परन्तु उनका यूरोपियनोंसे भी युद्ध हुआ था। उन्होंने संवत् १७३१ वि० सन् १६७४ ई० में चसीनपर चढ़ाई की। बसीन उस समय पोर्तगीजोंके अधिकारमें था। अपनी दस हजार सेना उन्होंने मोरो पिंगलेके अधीन कल्याणपर आक्रमण करनेके लिये भेजी थी। पोर्तगीज लोग हिन्दुओंपर बहुत अत्याचार करते थे। हिन्दुओंको जबरदस्ती ईसाई बनाते थे और सताते थे*। शिवाजीने पोर्तगीजोंसे दुष्कर्मके प्रायश्चित्तस्वरूप

* पोर्तगीजोंका हिन्दू और मुसलमान दोनोंके प्रति समान निष्ठुरताका व्यवहार था। गोआ, बसई, बंबई आदि समुद्री किनारोंपर पोर्तगीजोंने अपना धर्म फैलानेका विशेष प्रयत्न किया था। वे बलपूर्वक हिन्दुओंको ईसाई कर लेते थे, जिससे हिंदुओंकी जनसंख्या लगातार घटती जाती थी। दिन दिन हिंदुओंकी संख्या कम होती जाती थी। ऐसी दशा देखकर ब्राह्मणोंने हिंदू-क्रिश्चियनोंको गङ्गास्नानसे पवित्र करके पुनः हिंदू बनाना आरम्भ कर दिया था। ब्राह्मण धर्मशास्त्रके हिन्दुओंसे कहते थे कि पर्वके दिनोंमें गङ्गास्नान अथवा समुद्रस्नान करनेसे सब पापोंका नाश हो जाता है अतः तुम लोग इस विधिसे पुनः हिन्दूधर्म स्वीकार करो। पोर्तगीजोंके काम-काजमें ब्राह्मणोंके इस कार्यसे बड़ी भारी बाधा उपस्थित हुई। इसी घटनाके लिये उन्होंने समुद्री घाटोंपर अपने ईसाई धर्मके चिह्न (क्रास) बना दिये। ब्राह्मण लोग ऐसे ही स्थानोंमें [illegible] और नहाते थे जहां क्रास न हो। परन्तु पोर्तगीज [illegible]

चौथ मांगी। पहले तो 'पोर्तगीजोंने चौथ देनेमें आनाकानी की और युद्ध करनेकी ठानी पर पीछे शिवाजीके सामने पोर्तगीजों की दाल गल न सकी। कोकणकी पोर्तगीज़ रियासतोंने चौथ और सरदेशमुखी देना स्वीकार कर लिया। पोर्तगीजोंको परा भव करके शिवाजीने दूसरी बार शिवनेरके किलेपर चढ़ाई की पर उन्हें सफलता नहीं हुई। शिवनेर किलेके अध्यक्ष अब्दुल अजीजखाँने दुर्गकी रक्षा कर ली। शिवाजीने शिवनेर किलेकी ओरसे अपना ध्यान हटाकर और दूसरे किलोंपर अपना अधिकार जमा लिया। सौंधके राजाने भी उन्हें चौथ और सरदेशमुखी देना स्वीकार कर लिया। जब शिवाजी कोकणकी ओर युद्धमें व्यस्त थे तब उनके सेनापति हम्मीरराव मोहतेने गुजरात प्रान्तमें मुगलोंके स्थानोंपर चढ़ाई कर दी। बरोचतक लूट मार करके हम्मीरराव सकुशल लूटका माल लेकर रायगढ़ पहुंच गये। इसी

पहुँचते और उन्हें भ्रष्ट करनेकी चेष्टा करते थे। पोर्तगीजोंके इस अत्याचारोंसे दुःखित होकर ब्राह्मणोंने बस्तीके बाहर एक तालाब ढूँढ निकाला और वहाँ छिपकर हिन्दू-क्रियाओंको पूर्ण करने लगे। जब पोर्तगीजोंको इस तालाबका भी पता चला तब उन्होंने ब्राह्मणोंपर चढ़ाई कर दी। एक बार एक [illegible] जाते हुए हिन्दुओंमें [illegible] सामने खड़ा हो गया। इस घटनाको देखकर [illegible] और भी [illegible] और उन्होंने इस [illegible] नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। इतना ही नहीं बल्कि [illegible] जगहोंपर छिपकर [illegible] हैं। यह घटना सन् १६६८ ई० में हुई थी। [illegible] "[illegible]" [illegible] पढ़ें।

समय अञ्जीरावे सिद्दियोंने भी शिवाजीके राज्यके समुद्री किनारोंपर लूट मार मचा दी थी। इस वर्ष शिवाजीने वर्षाऋतु रायगढ़में बितायी और पलटन प्रदेशमेंसे नायक निम्बालकरको निकालकर स्थर दृढ़ दुर्ग बनवाये। इसके पीछे शिवाजी तीन मासतक सितारेमें बीमार पड़े रहे। इस समय शिवाजी इतने बीमार हुए थे कि उनके शत्रुओंने यहांतक अफवाह फैला दी कि उनके पुत्र सम्भाजीने उनको विष दे दिया है। परन्तु रोग शय्यापर पड़े हुए इस महाराष्ट्र केशरीका मस्तिष्क बेकार नहीं हुआ, रुग्णावस्थामें भी महाराष्ट्र राज्यका शासन ही केवल उनके आदेशसे नहीं होता था, बल्कि कर्नाटकपर चढ़ाई करनेका भी विचार उन्हें इस बीमारीमें ही हुआ था।

प्रथम इसके कि शिवाजीकी कर्नाटककी चढ़ाईका वृत्तान्त लिखा जाय, यह आवश्यक प्रतीत होता है कि गोलकुण्डा, बीजापुर और मुगल साम्राज्यकी उस समय कैसी दशा थी, इसका भी कुछ दिग्दर्शन कराना उचित है, जिससे पाठकोंकी समझमें शिवाजीके कर्नाटक आक्रमणका उद्देश्य आ जाये। इतिहास-रसिक पाठकोंसे यह बात छिपी हुई नहीं है कि दक्षिण विजयकी लालसा औरङ्गजेबको अन्त समयतक रही थी। मृत्यु-समयतक औरङ्गजेबको यही चिन्ता रही थी कि किसी न किसी प्रकारसे समस्त दक्षिण मुगल-राज्यमें मिला लिया जाय। परन्तु बलवान मुगल सम्राट् औरङ्गजेबकी यह इच्छा पूर्ण नहीं हुई। इसका कारण मुगल-सम्राट्की कपटनीति थी। यदि

सम्राट् सच्चे जीसे बीजापुर और गोलकुण्डाके मेल करके शिवा जीको दमन करनेकी चेष्टा करते तो सम्भव था, उन्हें सफलता प्राप्त हो जाती। परन्तु उनकी सदैव यही इच्छा रही कि किसी न किसी प्रकारसे दक्षिणका इन तीनों शक्तियोंको कुचल दिया जाय और समस्त दक्षिण मुगल साम्राज्यमें सम्मिलित कर लिया जाय। इस उद्देश्यको सफल करनेके लिये कभी वे एक शक्तिको दूसरी दो शक्तियोंसे लड़ानेकी चेष्टा करते थे और कभी किसीसे स्वयं लड़ बैठते थे, इसका फल यह हुआ कि सम्राट् औरङ्गजेबकी कपट नीतिसे सभी लोग भलीभांति परिचित हो गये थे। सम्राट् औरङ्गजेबकी इस नीतिसे परिचित हो जाने पर भी आदिलशाह, कुतुबशाह और शिवाजी तीनोंमें परस्पर मैत्री न थी। ये तीनों जहाँ औरङ्गजेबका सामना करते थे, वहाँ परस्पर भी लड़ते झगड़ते रहते थे। इस कपट-नीतिसे न तो औरङ्गजेब संपूर्ण दक्षिणपर अपना आतङ्क जमा सका और न आदिलशाह और कुतुबशाह अपने राज्योंकी रक्षा करनेमें समर्थ हुए। परन्तु यदि किसीने औरङ्गजेबकी कपट-नीतिसे लाभ उठाया तो शिवाजीने ही। उस समय न केवल दक्षिण भारतमें बल्कि समस्त हिन्दुस्तानमें औरङ्गजेबकी कपट नीतिका कोई गूढ़ मर्म समझ सका तो केवल एक शिवाजी ही। वे औरङ्गजेब की कपट-चालके जालमें न फँसकर दक्षिण भारतमें अपना स्वतन्त्र-राज्य स्थापित करनेमें समर्थ हुए।

यह पहले लिखा जा चुका है कि बीजापुरके अली आदिल-

शाहको मृत्युके पीछे, बीजापुर दरबारमें फूट फैल गयी थी। उस समय उनके पुत्र सिकन्दर आदिलशाहकी अवस्था केवल पांच वर्षकी थी। मरते समय अली आदिलशाह खवासखांको राजप्रतिपालक नियत कर गये थे। उस समय बीजापुर दरबारमें खवासखांका एक प्रतिद्वन्दी था जिसका नाम अब्दुल करीम था। खवासखांने मुगल सूबेदार बहादुरखांके छोटे लड़केको अपनी लड़की ब्याह दी और उससे मित्रता कर ली, इसके अतिरिक्त उसने अली आदिलशाहकी लड़की "बादशाह बीबी" का सम्राट्-औरङ्गजेबके पुत्रसे विवाह करनेकी प्रतिज्ञा की और साथ ही मुगल सूबेदार बहादुरखां और खवासखांमें यह समझौता हो गया था कि आगेसे बीजापुर राज्य,मुगल साम्राज्यके अधीन करद राज्य रहेगा। उस समय बीजापुर-दरबारमें मुसलमानोंके भी दल थे, एक दल दक्षिणी मुसलमानोंका था, जिसमें प्राय दक्षिण अथवा हिन्दुस्तानके रहनेवाले मुसलमान थे। इन मुसलमानोंमें बहुतसे ऐसे भी थे कि जिनके पूर्वज या तो स्वयं ही जबरदस्ती मुसलमान कर लिये गये थे अथवा हो गये थे। दूसरा दल अफगान मुसलमानोंका था। अब्दुल करीम अफगान मुसलमानका अगुआ था। उसे तथा उसके साथी अन्य अफगान मुसलमानोंको बहादुरखांका यह समझौता कि मुगल सम्राज्यके अन्तर्गत बीजापुर करद राज्य रहेगा पसन्द नहीं आया। अतएव अब्दुल करीमने धोखेसे खवासखांको मार डाला। मुगल सूबेदार बहादुरखांने औरङ्गजेबको अब्दुल करीमकी करतूतकी खबर दी। इस समा-

न्तारको सुनते ही सम्राट् औरङ्गज़ेब बिगड़ गये और बहादुरखां को अब्दुल करीम और बीजापुरपर चढ़ाई करनेकी आज्ञा दी। इस आज्ञाके पाते ही बहादुरखाने बीजापुरपर चढ़ायी की और भीमा नदीके तटपर बहादुरखां और अब्दुल करीमकी सेनाओंका मुठभेड़ हुई, जिसमें रातके समय अचानक बीजापुरकी सेनाने मुगल सेनापर आक्रमण किया और मुगलसेना परास्त हुई। पराजित होकर बहादुरखां भीमा नदीके उत्तरकी ओर पहुंचा और वहां दिलेरखां भी अपने सैन्यदल सहित आ पहुंचा। दिलेर खां भी अफगान था, उसका झुकाव अब्दुल करीमकी ओर ही था अतएव उसने किसी प्रकारसे अब्दुल करीमसे यह समझौता कर लिया कि बीजापुरी और मुगलिया दोनों सेनायें गोलकुण्डाको जीत लें।

इधर मुगल सूबेदार और बीजापुर-दरबारमें तो ऊपर लिखा हुआ समझौता हो गया पर उधर गोलकुण्डा राज्यकी भी भीतरी दशा अच्छी नहीं थी। संवत् १७२६ वि०—सन् १६७२ ई०में अब्दुल कुतुबशाह इस संसारसे चल बसा था और उसका दामाद आबू हुसेन उसका उत्तराधिकारी हुआ था। गोलकुण्डा की मसनदपर आबू हुसेनका बैठना, औरङ्गज़ेबको भी पसन्द आया। उन्होंने समझा कि अब गोलकुण्डा शीघ्र ही हाथ लग जायगा; परन्तु आबू हुसेन भी मुगलोंके विरोधी निकले। उन्होंने मादण्णा पन्त और आकण्णा पन्त दो ब्राह्मणोंको, जो आपसमें सग भाई थे और संस्कृतके अच्छे पण्डित थे, अपने यहां उच्च पदोंपर

नियत किया। यह बात खिलेरखाँ और अब्दुल करीम दोनोंको बुरी लगी और उन्होंने गोलकुण्डापर चढ़ायी करनेका विचार किया। दूरदर्शी शिवाजी भी अब्दुल करीम और खिलेरखाँकी इस गुटसे असावधान न थे। वे यह अच्छी तरहसे जानते थे कि गोलकुण्डा राज्य नष्ट होनेके पीछे इस गुटकी वक्रदृष्टि महाराष्ट्र राज्यके ऊपर भी पड़ सकती है अतएव उन्होंने गोलकुण्डा राज्यसे मित्रता करनेका विचार किया, जिससे वे बीजापुरी और मुगल-सेनासे समय पड़नेपर समझौता करनेमें समर्थ हो सकें। दूसरे उनकी यह इच्छा अपने राज्यको ठेठ दक्षिण तक विस्तृत करनेकी भी थी। तीसरा कारण कर्नाटक-यात्राका यह भी था कि शिवाजीके पिता शाहजीकी जागीर कर्नाटकमें बीजापुरके दक्षिण और पूर्वमें थी। शाहजीके समय कर्नाटक जागीरकी राजधानी बङ्गलोरमें थी। शाहजीकी मृत्युके पीछे कर्नाटककी समस्त जागीर शिवाजीके सौतेले भाई व्यङ्कोजीके हाथमें आयी और उन्होंने अपनी जागीरकी राजधानी तञ्जौरमें बना दी। शाहजीके समयमें कर्नाटक जागीरके प्रबन्धकर्त्ता रघुनाथ पन्त हनुमन्ते थे। रघुनाथ हनुमन्ते अपने कर्ममें चतुर थे और शाहजीने मरते समय उन्हें व्यङ्कोजीका प्रधान मंत्री नियत किया था। एक दिन रघुनाथ हनुमन्तेने शिवाजीकी प्रशंसा करते हुए, व्यङ्कोजीको उचित रीतिसे अपने कर्त्तव्यपालन करनेका अनुरोध किया। व्यङ्कोजीको रघुनाथ हनुमन्तेकी यह उचित और सत्य बात बहुत बुरी लगी। उन्होंने रघुनाथ पन्त

मारते हुए अंग्रेजोंको फटकारते हुए शिवाजीकी निन्दा की और कहा कि शिवाजी विश्वासघाती और राजद्रोही हैं।

रघुनाथ पन्त हनुमन्ते शिवाजीकी निन्दा सहन नहीं कर सका। उसने उसी दम अपना पद-त्याग कर दिया और काशी जानेका बहाना करके वह तञ्जौरसे चल दिया। काशी न जाकर रघुनाथ पन्त हनुमन्ते कुतुबशाहकी राजधानी हैदराबाद पहुंचा और वहांके प्रधानमंत्री मादन्ना पन्तसे मिला और वहांसे सितारेमें शिवाजीके पास पहुंचा। शिवाजीने रघुनाथ पन्त हनुमन्तेका अच्छा आदर-सत्कार किया। उसने व्यङ्कोजीके सब समाचार शिवाजीको सुनाये इसलिये भी शिवाजीने कर्नाटक यात्राका विचार किया।

कर्नाटक यात्रा करनेके पहले शिवाजीको एक और भी भय था कि कहीं मुगल-सेना उनकी अनुपस्थितिका लाभ न उठाये अर्थात् जब वे कर्नाटकमें हों तब कहीं उनके पीछेसे महाराष्ट्र राज्यपर आक्रमण न करे। इधर जब शिवाजीको यह डर था तब उधर मुगल-सेनापति बहादुरशाह भी शिवाजीसे लगातार दो वर्षसे लड़ता हुआ, थक गया था। इसलिये उसकी भी इच्छा थी कि किसी तरहसे शिवाजीसे सन्धि हो जाय। शिवाजीने उनके पास अपने प्रधान न्यायाधीश नीराजी रावजीको भेजा। शिवाजीकी ओरसे नीराजी रावजीने बहुतसा धन बहादुरखांको भेंट किया और कुछ धन मुगल सम्राट् औरङ्गजेबके लिये भेंट-स्वरूप दिया। फिर मुगल-साम्राज्य और शिवाजीके

सन्धि हुई। मुग़ल-सम्राट् औरङ्गज़ेबने, शिवाजीके पुत्र सम्भाजीको पुनः छः हज़ारका मनसब प्रदान किया। सन्धि हो जानेके पीछे शिवाजीने अपने राज्यका कार्य उनके पीछे किस प्रकारसे होना चाहिये इसका प्रबन्ध किया और कर्नाटक-यात्राकी धूमधामसे तैयारी की। पाठकोंको यहाँ यह स्मरण रखना चाहिये कि कर्नाटक-यात्रामें शिवाजीका मुख्य उद्देश्य गोलकुण्डाधीश कुतुबशाहसे मित्रता करना था, इसलिये उन्होंने अपने इस उद्देश्यको छिपाया कि कहीं मुग़ल-सेनापति अथवा बीजापुर-दरबारको उनके इन विचारोंका पता न लग जाय, जिससे आरम्भमें ही कुछ विघ्न उपस्थित हो और सर्वसाधारणमें यह बात प्रकट की गयी कि कर्नाटकमें शिवाजी अपने सौतेले भाई व्यङ्कोजीसे अपने पिताकी जागीरका आधा हिस्सा लेने तथा मिलनेको जा रहे हैं।

कर्नाटक-यात्रासे पहले ही अब्दुल हुसेन कुतुबशाहके प्रधान मंत्री मादन्ना पण्डितने शिवाजीसे मित्रता कर ली थी और एक लाख वार्षिक शुल्क देना स्वीकार कर लिया था। शिवाजीने प्रह्लाद नीराजीको हैदराबादमें राजदूत नियत किया था। उन्होंने अपने राजदूत प्रह्लाद नीराजीको लिखा कि "हम कुतुबशाहसे मिलना चाहते हैं अतएव उनसे भेंट करनेका प्रबन्ध करो।" प्रह्लाद नीराजीने शिवाजीका यह समाचार कुतुबशाहको दिया। पहले कुतुबशाह, यह सुनकर बहुत घबराये कि मेरी राजधानीमें ही मुझसे शिवाजी मिलने आ रहे हैं। परन्तु

महलाद मीराजीने कुतुबशाहको विश्वास दिलाया कि शिवाजी का इस भेंटमें परस्परकी मित्रता दृढ करनेके अतिरिक्त और कुछ उद्देश्य नहीं है। तब वे शिवाजीसे मिलनेके लिये राजी हो गये। मीराजीसे यह समाचार पाकर संवत् १७३३ वि०—जनवरी सन् १६७७ ई०में शिवाजी अपनी राजधानी रायगढ़से हैदराबादको कुतुबशाहसे मिलनेके लिये चले थे। कुतुबशाहके राज्य-की सीमामें पहुंचते ही शिवाजीने अपनी सेनाको आज्ञा दी कि "कोई महाराष्ट्र वीर न तो कुतुबशाहके राज्यकी प्रजासे किसी प्रकारकी छेड़छाड़ करे और न किसी दूकानदारसे बिना मूल्य दिये कोई वस्तु ले। हां, यदि कोई दूकानदार राजी हो तो उसके पाससे सब सामान जितनी कीमत वह मांगें उतनी देकर ले ले।" शिवाजीकी संगठन-शक्ति और प्रबन्धकी विशेषता यह थी कि उनके साथ इस यात्रामें सत्तर हजार सैनिक थे पर सबने इस आज्ञाका पालन किया और किसी प्रकारकी गड़बड़ नहीं होने पायी।

संवत् १७३३ वि०—फरवरी सन् १६७७ ई०को वे कुतुबशाहकी राजधानी हैदराबादके निकट पहुंचे। उनके आगमनका समाचार सुनकर स्वयं कुतुबशाह उनके स्वागतके लिये तैयार हुए। जब शिवाजीको कुतुबशाहके इस विचारकी खबर मिली कि वे स्वयं उनका स्वागत करनेके लिये आनेवाले हैं तो शिवाजीने कुतुबशाहसे कहला भेजा कि "आप हमारे बड़े भाई हैं अतएव आपका इस प्रकार आना अनुचित होगा। मैं स्वयं ही आपके पास आ

रहा हूं।" अतएव शिवाजीके विशेष अनुरोधसे कुतुबशाह उनकी अगवानीके लिये नहीं आये। उन्होंने अपने मन्त्री मादन्ना और आकन्नाको शिवाजीका स्वागत करनेके लिये भेजा। उन्होंने राजसी ठाठ बाटसे शिवाजीका स्वागत किया। उनके साथ शिवाजीने हैदराबादमें प्रवेश किया।

हैदराबाद नगर निवासियोंने भी शिवाजीका बड़ी धूमधामसे स्वागत किया। शहरके प्रत्येक मार्ग, गली और चौराहोंपर सजावट हुई थी। हजारों ही आदमी दोनों ओर फुटपाथोंपर कतार बांधकर शिवाजीकी सवारी देखनेके लिये खड़े हुए थे। मकानों की खिड़कियों और छतोंपर बहुत सी स्त्रियाँ महाराष्ट्र-केशरी के दर्शन करनेके लिये बैठी हुई थीं। शिवाजीकी सेनाकी शान और सजावट देखने ही योग्य थी। उन्होंने अपनी सेनाके कप्तान और खास सैनिकोंके गलेमें मोतियोंका कंठा और हाथोंमें सोनेके कड़े पहनाये थे। उनके अस्त्र शस्त्र और सैनिक पोशाक भी आँखोंमें चकाचौंध उत्पन्न करनेवाली थी। नियत समयपर शिवाजी अपनी पचास हजार सेना सहित हैदराबाद शहरमें पहुंचे। उपस्थित जनताने शिवाजीको देखते ही करतल ध्वनि करके अपना हार्दिक हर्ष प्रकट किया। सोने और चांदीके फूलोंकी वर्षा शिवाजीपर की तथा मुख्य मुख्य स्थानोंमें स्त्रियोंने उनकी आरती उतारी। शिवाजी भी उदारतामें किसीसे कम न थे। उन्होंने दोनों ओर जो मनुष्य उन्हें देखनेके लिये खड़े हुए, उनको चांदी और सोना बाँटा और

शहरके प्रत्येक स्थानोंके मुख्य-मुख्य आदमियोंको खिलअत बांटी।

कुछ देर पीछे शिवाजीकी सवारी दादमहल अर्थात् न्याय प्रासादमें पहुंची, जहां स्वयं कुतुबशाह शिवाजीसे मिलनेके लिये बैठे हुए थे। वहां शिवाजीकी सवारी ठहर गयी। पचास हजार महाराष्ट्रीय सेना यहां प्रशान्त महासागरके समान शान्तिपूर्वक खड़ा रही। किसी प्रकारका उत्पात नहीं हुआ। शिवाजी अपने पांच साथियों सहित कुतुबशाहसे भेंट करनेके लिये महलोंकी सीढ़ियोंपर चढ़े। कुतुबशाह भी उन्हें आता हुआ देखकर आगे बढ़े और उन्हें अपने गलेसे लगा लिया। पीछे कुतुबशाह और शिवाजी महलमें पहुंचे। कुतुबशाहने शिवाजीको अपनी बगलमें मसनदपर बैठाया। कुतुबशाहका मंत्री मादन्ना भी बैठ गया और सब लोग खड़े रहे। कुतुबशाहके महलकी स्त्रियां भी खिड़कियोंके भीतर बैठी हुई शिवाजीको देख रही थीं।

लगातार तीन घंटेतक शिवाजी और कुतुबशाहमें विविध विषयोंपर बातें हुई। बातों ही बातोंमें शिवाजीने कुतुबशाहको अपने कार्य भी सुनाये कि किस प्रकार उन्होंने शाइस्ताखांपर उसके महलोंमें ही आक्रमण किया था, किस प्रकारसे उन्होंने भरे दरबारमें औरंगजेबको चुनौती दी थी, फिर व वहांसे किस प्रकारसे भगे थे, किस प्रकारसे उन्होंने सूरत लूटा और अफजलखांका वध किया। कुतुबशाह शिवाजीके वीरोचित कार्योंको सुनकर बड़े ताज्जुबमें आये। पीछे उन्होंने शिवाजीके सरदारोंको

आभूषण, रत्न, घोड़े, हाथी आदि दिये और खिलत भी दी। शिवाजीको भी बहुतसे पदार्थ भेंट किये और अपने हाथसे पान दिया और उनके इत्र लगाया। जब शिवाजी चलने लगे तब कुतुबशाह उन्हें सीढ़ियोंतक पहुंचाने आये। शिवाजीसे मिलकर कुतुबशाह बहुत प्रसन्न हुए। कर्नाटकपर चढ़ायी करनेमें उन्हें शिवाजीकी नेक-नीयती प्रतीत हुई। उनके दरबारमें जो मराठा राजदूत था, उसकी भी उन्होंने बहुत प्रशंसा की और उसे इस बातके लिये बहुत सा पारितोषिक दिया कि उसकी कही हुई सब बातें सच निकलीं। शिवाजी भी कुतुबशाहसे मिलकर अपने डेरेपर लौट आये। लौटती बार भी दादमहलसे अपने डेरेतक उन्होंने मार्गमें बहुतसा धन बांटा। दूसरे दिन कुतुबशाहके प्रधान मंत्री मादन्नाने शिवाजी तथा उनके प्रधान प्रधान सरदारोंको एक भोज दिया। मन्त्रीकी माताने शिवाजीके लिये रसोई बनायी। मादन्ना और आकन्ना दोनों भाई शिवाजीको भोजन कराते समय उनके सामने बड़े अदबसे बैठे थे। भोजनकी समाप्तिके पीछे उन्होंने बहुतसे हाथी, घोड़े और कपड़े शिवाजीको भेंट किये।

लगभग एक मासतक शिवाजी कुतुबशाहकी राजधानी हैदराबादमें रहे थे। इस बीचमें उनमें और कुतुबशाहमें यह ठहराव हुआ कि कर्नाटकपर चढ़ाई करनेके लिये कुतुबशाह, शिवाजीको तीन हजार हुण नित्यप्रति अर्थात् साढ़े चार लाख रुपये मासिक दिया करेंगे। इसके अतिरिक्त पाँच हजार

कुतुबशाही सेना भी कुतुबशाहके सराय लश्कर मिर्जा मुहम्मद अमीनके अधीन, कर्नाटककी चढ़ाईपर शिवाजीके साथ जायगा। कर्नाटकमें शाहजीकी जागीरके अतिरिक्त जो कुछ जमीन शिवाजीके हाथ आवेगी वह शिवाजी और गोलकुण्डाके बीचमें बांट दी जावेगी। यदि बीजापुर दरबार अब्दुलकरीमको निकालकर उसके स्थानपर मादन्नाके भाई आकन्नाको नियत करेगा तो उसको भी उसमेंसे कुछ भाग दिया जायगा। साथ ही यह भी प्रतिज्ञा हुई कि दूसरोंके मुकाबिलेमें शिवाजी और कुतुबशाह, एक दूसरेकी सहायता करेंगे। शिवाजी और कुतुबशाह दोनोंने ऊपर लिखी हुई शर्तें स्वीकार कीं।*

हैदराबादसे शिवाजी तुंगभद्रा नदीके किनारे येमल नामक एक स्थानपर आये, यहां आनन्दराय देशमुख उनसे मिलने आये और पांच लाख हुण कर देनेका वचन देकर लौट गये। यहांसे शिवाजी श्रीमल्लिकार्जुन और निवृत्तिग्राम नामक

* किसीने लिखा है कि कुतुबशाहने शिवाजीसे पूछा था कि आपके पास कितने हाथी हैं। इसपर शिवाजीने अपनी मावली पैदल सेनाको दिखाकर कहा कि ये मेरे हाथी हैं। इसी भांति किसी [illegible] सेनापतिने [illegible] जोशीसे पूछा कि तुम्हारा राज्य कहां है जिसको हम जीतनेका उद्योग करें। इसके उत्तरमें [illegible] जोशीने कहा कि जितनी धरतीपर मेरे घुड़सवारोंकी टापें पड़ती हैं उतना ही मेरा राज्य है अगर तुममें शक्ति हो तो जीत लो। किसी किसी इतिहास-लेखकने लिखा है कि [illegible] शिवाजी [illegible] कुतुबशाहको [illegible] युद्ध किया था जिसमें हाथी मारा गया।

तीर्थोंमें आये। वहां बहुतसा दानधर्म किया, घाट बनवाये, मठ स्थापित किये और धर्मशालायें बनवायीं। कई इतिहास लेखकोंने लिखा है कि श्रीशैलके निवृत्तिसंगमकी स्वाभाविक और प्राकृतिक शोभाको देखकर शिवाजी ऐसे मोहित हुए कि उन्होंने सोचा कि इससे बढ़कर और कोई पवित्र स्थान नहीं है, जहां मनुष्यकी मृत्यु हो। इस विचारके उत्पन्न होते ही वे अपना सिर काटकर देवालयको भेंट करनेको तैयार हुए, परन्तु उनके मंत्रियोंने शिवाजीसे ऐसा न करनेके लिये अनुरोध किया और कहा कि इस स्थानपर मरनेकी अपेक्षा आपका अपनी प्रजा और हिन्दुओंके प्रति बहुत भारी उत्तरदायित्व और कर्तव्य है। मन्त्रियोंकी इस प्रार्थनापर शिवाजीने अपना सिर चढ़ानेका विचार बदल दिया। वहांसे फिर वे अपनी सेना सहित जीञ्जी पहुंचे। वेल्लोरको हस्तगत करनेके लिये उन्होंने कुछ सेना पहले ही भेज दी थी। उस समय जीञ्जी बीजापुर-वालोंके अधीन था। बीजापुरके मृत मंत्री खवासखांके दो लड़के रूफखां और नसीर मुहम्मदखां जीञ्जी किलेके अध्यक्ष थे। उन्होंने शिवाजीसे कहला भेजा कि यदि हमको कुछ रुपया तथा अन्य किसी स्थानमें जागीर मिल जावे तो हम यह किला छोड़नेको तैयार हैं। शिवाजीने उनकी यह प्रार्थना स्वीकार कर ली और अपने एक हजार घुड़सवारोंके साथ चक्रवर्ती नदीके किनारे चक्रपुरीमें पहुंच गये। उनके आनेपर किलेदारने किलेका फाटक खोल दिया। शिवाजी अपनी सेना

सहित उस किलेमें दाखिल हुए और जीते हुए प्रदेशका उचित प्रबन्ध करके वे "त्रिवेदी" नामक स्थानपर आये। यहांपर राजा शाहजीका सन्ताजी नामक एक और पुत्र रहता था। शाहजीकी एक रखी हुई औरतसे यह लड़का था। शिवाजीने उसका उचित आदर सत्कार किया और उसको जीञ्जी प्रान्तका शासक नियुक्त किया। जीञ्जीमें भी शिवाजीने महाराष्ट्र शासन प्रणाली तथा कर वगैरहके वसूल करनेके नियम प्रचलित किये। त्रिवेदीमें बीजापुरके एक शासक शेरखांने अपनी पाँच हजार सेना सहित शिवाजीका सामना किया। शेरखांके अधीन विल्लोरका किला भी था। शिवाजीने त्रिवेदी और विल्लोर दोनोंके किले घेरे। शेरखांने त्रिवेदीके किलेसे और उसके अनुगने विल्लोरके किलेसे शिवाजीकी सेनाका सामना किया। शेरखां अत्यन्त वीरतापूर्वक लड़ा, पर अन्तमें विजयलक्ष्मी शिवाजीसे ही प्रसन्न हुई, विल्लोर और त्रिवेदी दोनों दुर्ग शिवाजीके हस्त गत हुए।

इसके पीछे इन्होंने अपने सौतले भाई व्यङ्कोजीको पत्र लिखा कि "तुम विध्वस्त आदमियोंको अलग करके नवीन खुशामदी लोगोंको भरती करते हो और स्वराज्यके विरोधियोंके हाथकी कठपुतली बने हुए हो। पिताजीकी जागीरको नष्ट भ्रष्ट कर रहे हो। ये सब बातें हमको पसन्द नहीं हैं। इसलिये तुम पुराने कार्यकर्ता रघुनाथ पन्तके कहनेके अनुसार चलो और पिताकी उपार्जित जागीरमेंसे आधी हमको दे दो। धन-दौलत

हमको नहीं चाहिये और जो कुछ तुमने स्वयं उपार्जित किया हो यह भी हमें नहीं चाहिये।" पत्रके अन्तमें उन्होंने व्यङ्कोजीको लिखा कि "गोविन्द भट्टको चार * आदमियोंके साथ यह झगड़ा तय करनेके लिये भेज दो।" इसपर व्यङ्कोजीने उद्दण्डताका उत्तर दिया कि "पिताजीके सामने ही तुम बादशाहीसे बिगड़ उठे और तमाम प्रदेश ले लिया, इससे पिताजीको अनेक कष्ट सहन करने पड़े। हम पिताजीके साथ साथ रहे। अब यह जो जागीर, द्रव्यादि है, सब बीजापुरके सुलतानकी है, हम उनके नौकर हैं, इसमेंसे तुमको कुछ भी हिस्सा नहीं मिल सकता।" इसके पीछे शिवाजी और व्यङ्कोजीका इस विषयमें और भी पत्र-व्यवहार हुआ। अन्तमें व्यङ्कोजीने अपने मंत्रियोंको शिवाजीके पास इस झगड़ेका निबटारा करनेके लिये भेजा। उन्होंने व्यङ्कोजीके मन्त्रियोंसे अनेक विषयोंपर विचार किया और उन मन्त्रियोंके साथ अपने तीन मंत्री तथा एक निमन्त्रण पत्र व्यङ्कोजीको अपने यहां बुलानेके लिये भेजा। संवत् १७३४ वि०—सन् १६७७ ई०के जुलाई मासके मध्यमें व्यङ्कोजी अपने दो हजार सवार लेकर शिवाजीके पास पहुंचे, शिवाजीने अपने भाईका स्वागत किया। दोनों भाइयोंने † आठ दिनतक आनन्दपूर्वक मिलने जुलनेमें

* चार आदमियोंके नाम ये हैं —(१) काकाजी पन्त (२) कोंडो नायक, रघनाथ नायक और भीमाजी नायक।

† किनकेड और पारसनीसने "A History of the Maratha People" के पेज २२० में लिखा है कि व्यङ्कोजी कई सप्ताह तक शिवाजीके शिविरमें ठहरे थे। पत्र पुस्तकमें यह भी लिखा हुआ है कि शिवाजीने व्यङ्कोजीको सम्मानपूर्वक विदा किया था।

पिताये। शिवाजीने इस मेल मिलापके अवसरपर व्यङ्कोजीसे पैत्रिक सम्पत्तिमेंसे अपना भाग माँगा। व्यङ्कोजीने दुर्योधनके इन शब्दोंके अनुसार "शूच्यग्रं न दास्यामि विना युद्धेन केशव" एक पैसा भी देना स्वीकार नहीं किया। इसपर शिवाजी अत्यन्त क्रोधित हुए और व्यङ्कोजीको कुछ लानत मलामत दी। उसी रातको व्यङ्कोजी अपने पांच घुड़सवारोंके साथ तञ्जोरको भग गये। यह घटना सन् १६७७ ई०की २५ वीं जुलाईको हुई।

शिवाजीको दूसरे दिन प्रातःकाल अपने भाईके भाग जानेका समाचार मिला। उन्होंने पहले तञ्जोरके मंत्रियोंको कैद कर लिया और उन्हें धमकी दी कि "मैं अभी जनार्दन नारायण हनुमन्तेको तञ्जोरपर चढ़ायी करनेके लिये भेजता हूं।" फिर उन्होंने भरे दरबारमें कहा कि "क्या मैं व्यङ्कोजीको कैद करता? मेरी कीर्त्ति समुद्रके किनारेतक फैली हुई है। मैंने अपने पिताकी सम्पत्तिका भाग केवल इसलिये मांगा था कि प्रत्येकको अपनी पैत्रिक सम्पत्ति अपने पास रखनी चाहिये। अगर व्यङ्कोजीकी उसे देनेकी इच्छा न थी तो उससे कौन जबरदस्ती करता था? उसे व्यर्थ हो भागनेकी आवश्यकता ही क्या थी? व्यङ्कोजी नव युवक है और उसका यह काम लड़कोंका सा हुआ है?" इसके कुछ दिन पीछे उन्होंने व्यङ्कोजीके मन्त्रियोंको छोड़ दिया और उन्हें चलते समय खिलत भी दी।

इसके आगे जो कुछ हुआ थोड़े शब्दोंमें ही सुन लीजिये, व्यङ्कोजीकी यही दशा हुई कि "लातोंके देव, बातोंसे नहीं मानते

हैं।" उन्होंने शिवाजीके विरुद्ध बीजापुरसे आदिलशाहसे सहायता की प्रार्थना की, पर उस समय बीजापुर राज्यकी पूर्ण अधोगति हो चुकी थी और वहांसे उन्हें कुछ सहायता नहीं मिली। परन्तु "मरता क्या न करता" यही दशा व्यङ्कोजीकी हुई। कुछ व्यग्रयी मुसलमानोंकी बातोंमें आकर "डूबतेको तिनकेका सहारा" उन्होंने महाराज शिवाजीके सेनापति हम्मीरराव मोहते के सैन्यदलपर आक्रमण कर दिया। दोनों दलोंमें बड़ी लड़ाई हुई। व्यङ्कोजी बड़ी बुरी तरहसे हारे और उनके बहुतसे आदमी शिवाजीके वीर सेनापतिकी कब्रमें आ गये। जब शिवाजीको यह समाचार विदित हुआ तब उन्हें बड़ा खेद हुआ। उन्होंने एक बड़ा पत्र व्यङ्कोजीको लिखकर उनकी मूर्खताका परिणाम समझाया। इस पत्रको पाकर व्यङ्कोजीका मन अत्यन्त उद्विग्न हुआ। यह देखकर उनकी चतुर स्त्री दीपाबाईने उन्हें बहुत समझाया और रघुनाथ पन्तको मध्यस्थ करके शिवाजीसे सन्धि करनेकी सलाह दी। वास्तवमें देखा जाय तो केवल भारतवर्षमेंही नहीं संसारके सभी देशोंमें यह बात मिलेगी कि जब पुरुषोंका अधःपतन हो जाता है तब केवल स्त्रियां ही उनको अधःपतनके गड्ढेमेंसे निकालनेमें समर्थ होती हैं जब कभी पुरुषोंकी बुद्धि किसी कार्यके करनेमें असमर्थ होती है तब स्त्रियां वह कार्य करनेके लिये कोई न कोई युक्ति निकाल लेती हैं। भारतवर्षके इतिहासमें तो ऐसी महिलाओंकी कमी नहीं है। व्यङ्कोजीकी स्त्री दीपाबाईने भी ऐसे अवसरपर आर्य महिलाओंके समान ही अपने पति देवको सुबुद्धि प्रदान की।

व्यङ्कोजीने अपनी स्त्रीकी सम्मतिके अनुसार ही कार्य किया। उन्होंने रघुनाथ पन्तको बड़े आदरसे बुलाया और सन्धि करनेके लिये शिवाजीके पास भेजा। रघुनाथ पन्तने व्यङ्कोजीकी शिवाजी से सन्धि करा दी। शिवाजीने सन्धिमें निम्नलिखित शर्तें रखीं—

(१) राज परिवारके सम्बन्धी और मानकरी (उपाधि धारी) सरदारोंके स्वत्वोंकी पूरी रक्षा की जावे। उनके पदकी मर्यादा भङ्ग न की जावे। उनका अपमान न किया जावे और न उन्हें उनके पदके प्रतिकूल काम दिया जाय।

(२) महत्वपूर्ण और आवश्यक कामोंमें कामदारों और फौजदारोंसे परामर्श कर लिया करें। विश्वासी और योग्य कर्मचारियोंको राजकार्यका भार सौंपा जाय। योग्यता और कार्य कुशलताके अनुसार राज-कर्मचारियोंकी वेतन-वृद्धि की जाय।

(३) राजा व्यङ्कोजीके निज दलके साथी सेवकोंमें योग्य, विश्वासी और ऐसे ईमानदार आदमी रखे जायँ, जो अपने नेक चाल-चलनकी जमानत दे सकें, सबके साथ एकसा बर्ताव किया जाय, किसीका पक्षपात न किया जाय।

(४) निकटवर्ती राज्योंमें चाहे वे मित्र हों या शत्रु, अपने वकील और दूत रखने चाहिये। गुप्त समाचारोंके जानने का ऐसा प्रबन्ध करना चाहिये कि किसीको कुछ खबर न पड़े।

(५) घुड़सवार, पागा और शिलेदार तीनोंकी पूरी व्यवस्था करनी चाहिये। उनका नित्यप्रति निरीक्षण करना

चाहिये। घोड़ा और सवार हमेशा तैयार रहना चाहिये। शिलेदारके घोड़ा बेचनेपर पागा-दलमें रखने और उसे पागा-दलमें नौकरी देनेकी व्यवस्था करनी चाहिये। नियमित रूपसे सेनाकी कवायद होनी चाहिये। तोपखाना और घुड़सवार सेना दोनोंको सदैव आकस्मिक आक्रमण रोकनेके लिये तैयार रखना चाहिये।

(६) राज्यसे दुष्ट, दुरात्मा, चोर, उत्पाती, शराबी, लुटेरे, राजनियम भङ्ग करनेवाले, घातक आदिको निकाल देना चाहिये। यदि उन्हें अपने राज्यमें आश्रय देना हो तो उनसे नकद अथवा प्रतिभू रूपमें जमानत लेनी चाहिये। वे प्रजाको किसी प्रकारका कष्ट न पहुंचावें, हमेशा इसकी खबर रखनी चाहिये।

(७) छोटे, बड़े आदमियोंमें परस्पर सीमा, ठीके आदि सम्बन्धी झगड़े उपस्थित न होने देना चाहिये। गरीब, अनाथ व्यक्तियोंकी खबरदारी रखनी चाहिये और उन्हें यथायोग्य सहायता देनी चाहिये। कोई जबरदस्त अथवा धनी उन्हें सताने न पावें, इसका पूरा ध्यान रखना चाहिये।

(८) देवस्थान तथा अन्य धार्मिक स्थानोंकी जो आर्थिक सहायता नियत हो, वह कभी बन्द नहीं करनी चाहिये, पहलेके समान ही मिलती रहनी चाहिये। ब्राह्मणोंको जो गाँव दानमें मिले हों, उनको जब्त नहीं करना चाहिये, पहलेके समान ही रहने देना चाहिये।

(९) लेन देनके मामलेका निपटारा जन-समाजकी फरियाद, तकरार आदिक पंचायतसे होना चाहिये। प्रजाकी भलाईके

ध्यान रखकर, मुल्की शासन करना चाहिये। रिश्वत कोई न लेने पाये। न्यायमें किसी प्रकारका पक्षपात न होने पाये। न्याय करनेमें अपने लिये राज्यको गरीबोंका सरपरस्त समझना चाहिये।

(१०) हमारे कुलमें किसीको अपना वचन देकर अथवा किसीकी रक्षाका वचन देकर फिर वह वचन भङ्ग नहीं किया जाता है। आजतक हमारे कुलमें ऐसा नहीं हुआ और भविष्य में भी नहीं होना चाहिये। "रघुकुल रीति सदा चलि आई, प्राण जाय वरु बचन न जाई।"

(११) पिता शाहजीने अरणीका किला और उसके निकटका जिला वेदभास्करको दे दिया था। बिना किसी झगड़े टंटेके वह किला उसके आठ बेटों और उत्तराधिकारियोंके कब्जेमें रहना चाहिये, चाहे वे व्यङ्कोजीके अधीन सेवा करें या न करें।

(१२) बीजापुर राज्यसे कुछ गाँव शाहजीको इनाम मिले थे और दौलताबाद सरकार (निजामशाही) ने शाहजीको कुछ गाँव दिये थे तथा कुछ गाँव उन्होंने स्वयं युद्ध करके प्राप्त किये थे, इन सबका अलग अलग हिसाब रखना चाहिये। जागीरदारकी हैसियतसे, इस जागीरदारीके बदलेमें शाहजीको पाँच हजार सैनिकों सहित बीजापुर राज्यकी नौकरी बजानी पड़ती थी। शाहजीके सामने ही बीजापुर राज्यसे हमारी जो सन्धि हुई थी, उसमें यह ठहराव हुआ था कि हमलोग बीजापुर

राज्यकी नौकरी न करेंगे। पर मौका पड़नेपर सहायता करते रहेंगे, इसमें अन्तर न पड़ेगा, तदनुसार व्यङ्कोजी बीजापुर राज्यके मातहत नहीं हैं। विशेष परिस्थिति उपस्थित होनेपर वे बीजापुर राज्यको सहायता कर सकते हैं। यदि व्यङ्कोजी इस सन्धिके विपरीत कार्य करेंगे तो हमें इसका उत्तर लेनेके लिये आना पड़ेगा और हमारी चढ़ाईका खर्च व्यङ्कोजीको देना पड़ेगा।

(१३) हिंगणी, बरेड़ी, देवलगाँव और दूसरे स्थानोंपर पुश्तैनी पटेल और देशमुखी चली आ रही है। अतएव शाहजीके ज्येष्ठ पुत्र होनेके कारण, इन स्थानोंपर हम अपना अधिकार बिना किसी आपत्तिके रखेंगे।

(१४) जरूरत पड़नेपर यदि हमारा कोई आदमी, व्यङ्कोजीके राज्यमें पहुंचे अथवा व्यङ्कोजीका आदमी हमारे राज्यमें आवे, तो काम हो जानेपर दोनों ओरसे बिना किसी रुकावटके उस आदमीको चले जाने देंगे। दोनों ओरसे कोई किसीके आदमीके साथ छेड़छाड़ नहीं करेगा।

(१५) व्यङ्कोजीको जो जागीरें दी गयी हैं, उनमेंसे बङ्गलोर, बासकोट और सिलेकोटकी आमदनी तीन लाख पगोड़ा है। सुव्यवस्था करनेपर उसकी आमदनी पांच लाख पगोड़ा हो सकती है। हम इन जिलोंको दीपाबाईको सदैवके लिये देते हैं। इन जिलोंकी जो आय होगी, उसपर दीपाबाईका स्वत्व होगा। व्यङ्कोजी या उनके किसी उत्तराधिकारीका उसपर स्वत्व

होगा। दीपाबाईके पीछे भी ये जिले भी धन समझे जायेंगे और इन जिलोंसे जो कुछ आमदनी होगी, उसपर दीपाबाईकी लड़कियोंका स्वत्व होगा। आगे इसी भाँति लड़कियोंकी लड़कीका स्वत्व होगा। व्यङ्कोजीके राज्यकी ओरसे इन जिलोंका शासन होगा और कर वसूल किया जायगा।

(१६) यहींके आस पास जो प्रान्त हैं और जिनकी आमदनी सात लाख पगोड़ा है, वे सर्वदाके लिये राजा व्यङ्कोजीको दिये जाते हैं जो निज सम्पत्तिके रूपमें रहेंगे। व्यङ्कोजीके पीछे उनके उत्तराधिकारियोंका उनपर अधिकार रहेगा। इन जिलोंका एक नकशा हमारे पास भेजनेपर हम इन जिलोंकी स्वीकृति और सनद दे देंगे।

(१७) हमारे कुटुम्बमें रघुनाथ पन्त राजभक्त और वंश परम्परागत स्वामिभक्त सेवक हैं। उच्च कुलका है। अतएव हम तंजोर राज्यसे एक लाख पगोड़ा वार्षिक जागीर उसे वंश परम्परागतके लिये देते हैं।

(१८) हमारे राज्य और व्यङ्कोजीके सस्थानमें पारस्परिक यह सन्धि भी रहेगी कि एक दूसरेके राज्यके चोर डाकू तथा और दूसरे अपराधियोंको एक दूसरेके सुपुर्द करनेमें आना कानी नहीं करेंगे।

(१९) तीर्थस्वरूप शाहजीकी समाधि और छत्रीपर नायक, कारकुन, पहरेदार, घोड़ा हाथी, प्यादा आदिका मासिक खर्च व्यङ्कोजीके जिम्मे रहेगा। इस काममें ढिलाई नहीं होनी चाहिये।

उपर्युक्त सन्धि हो जानेके पीछे शिवाजीने अपने छोटे भाईको क्षमा कर दिया। अपने पिताजीकी सम्पत्तिमेंसे केवल तीन स्थान, जैसा कि उपरोक्त सन्धिकी १२ वीं धारामें लिखा है, ले लिये और कुछ भाग नहीं लिया। उन्होंने अपने छोटे भाईके पास न केवल तञ्जोरका ही इलाका रहने दिया बल्कि उन्होंने अपने भाई व्यङ्कोजीको सात लाख वार्षिककी जागीर और दे दी। इसके अतिरिक्त उन्होंने व्यङ्कोजीकी स्त्री दीपाबाईको बङ्गलोरमें जो उनकी पैत्रिक जागीर थी वह दी। धन्य! शिवाजी!! धन्य!!! सचमुच तुमने रघुकुल शिरोमणि भगवान श्री रामचन्द्रके समान कार्य किया, जिन्होंने अयोध्याकी प्रजाके मना करनेपर भी अपने वैमातृत्र भ्राता भरतके लिये सहर्ष भारतका राजसिंहासन छोड़ दिया था। यदि उस समय व्यङ्कोजी भी राजर्षि भरतका अनुकरण करके शिवाजीसे कहते कि "भ्राता! सारी पैत्रिक सम्पत्ति आपकी है, मैं आपका सेवक हूं, यदि आज्ञा हो तो मैं इस पैत्रिक सम्पत्तिका प्रबन्ध करू और आज्ञा न हो तो न करू !" तो क्या ही अच्छा होता। पर महाराष्ट्रके उस समय ऐसे भाग्य न थे।

शिवाजीको कर्नाटककी चढ़ाईमें अच्छी सफलता प्राप्त हुई। कर्नाटकका बहुतसा भाग उनके हस्तगत हो गया। कर्नाटकसे वे मद्रासकी ओर गये, वहाँसे उन्होंने मैसूर राज्यके कुछ भागोंपर भी अपना अधिकार कर लिया। कोपल, गड़ग आदि और भी किले उन्होंने ले लिये।

वहाँसे लौटती वेर वे बेलगाँव जिलेकी ओर गये। अब वहाँ

शिवाजीकी सेना आ रही थी तब बिल्लारीकी रानी सावित्री बाईने उनकी सेनाके सामान लदे हुए कुछ बैलोंको लूट लिया था। सावित्रीबाईके इस कार्यसे क्रोधित होकर शिवाजीने सावित्रीबाईके राज्यपर धावा किया। सावित्रीबाईने इस समय अपने असीम साहसका परिचय दिया। उसने शिवाजीकी सेनाको रोकनेके लिये, कितने ही स्थानोंपर अपनी सेना नियत कर दी और सेनाकी देख रेख और सम्हालका भार अपने ऊपर लिया। भारतके तत्कालीन महावीर शिवाजीकी बड़ी भारी सेना, सावित्रीको पराधीनताकी जञ्जीरमें जकड़नेके लिये आगे बढ़ी, इससे वह वीर-नारी घबरायी नहीं, वह अपनी शक्तिके भरोसे हाथमें तलवार लिये शत्रुके सामने आ डटी। शिवाजीकी सेनाने प्रबल भीम वेगसे बल्लारी-सेनापर धावा किया। परन्तु वीराङ्गना सावित्रीबाई तनिक भी विचलित नहीं हुई, वह निर्भीक चित्तसे किलेके बाहर खड़ी होकर अपनी रक्षा करने लगी। किन्तु शिवाजीकी रण बांकुरी सेनाके सामने वह अधिक समयतक अपनी सेनाकी शृङ्खला ठीक न रख सकी, उसने विचारा कि किलेके बाहर खड़ा होकर युद्ध करना ठीक नहीं है, इसलिये वह अपनी सेना सहित किलेके भीतर चली गयी। शिवाजीकी सेनाने भी किलेको घेर लिया और किलेपर गोलोंकी वर्षा शुरू कर दी, परन्तु सावित्रीबाई इससे भी न डरी, वह बड़े साहसके साथ किलेकी रक्षा कर [illegible] गी। इसी भांति सत्ताईस दिन बीत गये, [illegible] की [illegible] को घेरे रही। इसमें

समयमें सावित्रीबाई किसी प्रकारसे भी भयभीत नहीं हुई। वह इतनी धीरता और चतुराईसे अपनी सेनाका प्रबन्ध करती रही कि सत्ताईस दिनतक शिवाजीकी सेना उनकी शक्तिको दबा न सकी। सत्ताईसवें दिन बल्लारीकी वीर-नारीका भाग्यचक्र उलट गया। उस दिन किलेके एक भागके टूट जानेसे रक्षाका कोई उपाय न रहा। शिवाजीकी सेना उसी टूटे भागमेंसे किलेके भीतर घुसने लगी। वीर नारीने किलेकी रक्षासे हताश होकर शिवाजीको आत्मसमर्पण कर दिया।

बल्लारी-युद्धका वृत्तान्त किसी किसी इतिहासमें इस प्रकार लिखा हुआ है—"बल्लारी, बेलवाडीका अपभ्रंश है। बेलवाडीका अर्थ बेलपत्रोंका घर है। एक दफ्तरमें सावित्रीबाईका नाम मालबाई दिया है। शिव दिग्विजयमें लिखा हुआ है कि जब शिवाजी सीराकी उत्तरकी ओरसे बेलवत्ती नदीके किनारे बिल्लारी नगरके पास पहुंचे तब बिल्लारी दुर्गाध्यक्षने शिवाजीकी सेनाके चौकीदारपर आक्रमण किया और सामानसे लदे हुए घोड़े और गाड़ियाँ ले गया। इसपर क्रोधित होकर शिवाजीने किलेपर आक्रमण किया। जब बिल्लारी दुर्गाध्यक्ष अपने आदमियोंको शिवाजीकी सेनापर आक्रमण करनेके लिये उत्साहित कर रहा था तब मारा गया। दुर्गाध्यक्षके मारे जानेपर उसकी स्त्री सावित्रीबाई या मालबाईने छब्बीस दिन शिवाजीसे युद्ध किया और सत्ताईसवें दिन आत्मसमर्पण कर दिया।" "बखरीस्ते-शिवाजी"के आधारपर सावित्रीके सम्बन्धमें प्रो० यदुनाथ सर

कारमें एक फुटनोट लिखा है कि बेलवाड़ीकी परेदमी (स्वामिनी) एक स्त्री, जिसका नाम सावित्री था, अपने किलेमेंसे शिवाजीसे एक मासतक लड़ी थी। जब रसद और लड़ाईका सामान कम होने लगा तब उसने किलेके घेरनेवालोंपर धावा किया और उनकी खाइयां बिगाड़ दीं। उनका सेना छिन्न भिन्न कर दी और उनमेंसे बहुतसे लोगोंको मार दिया। एक दिन उसने रणक्षेत्रमें अत्यन्त वीरता प्रकट की और उस दिन यही प्रतीत होता था कि विजय उसे ही प्राप्त होगी। पर अन्तमें युद्ध में वह बहुत दिनतक ठहर न सकी, भागी और पकड़ी गयी। उसकी बहुत बेइज्जती की गयी। साकूजी गायकवाड़ने यह दुष्कर्म किया था। जब शिवाजीको यह समाचार मिला तब उन्होंने साकूजी गायकवाड़को इस दुष्कर्मके लिये कड़ा दण्ड दिया, उसकी दोनों आंखें निकलवा कर, मामौलो गांवमें कैद कर दिया। इसके अतिरिक्त किसी किसी इतिहासमें यह भी लिखा हुआ है कि शिवाजीके पास दादाजी प्रभु नामक एक अत्यन्त स्वामिभक्त सरदार था। उसने विद्रोहियोंका दमन किया, पीछे उसने बेलवाड़ी (विलारी) किला जीत लिया। इस किलेका अध्यक्ष येसजी प्रभु नामक एक मराठा था। उसके मारे जानेपर किलेकी सेना इधर उधर भागी। यह देखकर येसजीकी शूर वीर स्त्री सावित्रीबाई घोड़ेपर सवार होकर मैदानमें आई और अपनी सेनाके लोगोंको दादाजीसे लड़नेके लिये उत्साहित किया और दादाजीसे लड़ने लगी। किन्तु दादाजीने इस वीराङ्गनाके

घोड़ेके पिछले दो पैर काट डाले। तब वह भूमिपर गिर पड़ी और उसका हाथ टूट गया। दादाजी सावित्रीबाईको कैद करके, शिवाजीके पास ले आये और उसकी वीरताका वृत्तान्त शिवाजीको सुनाया। उन्होंने सावित्रीबाईका बड़ा आदर किया और उसकी पेंशन नियत करके, उसे बेलवाड़ी पहुंचा दिया।"
अस्तु—जो कुछ हो, प्राय: अनेक इतिहास-लेखक, इससे सहमत हैं कि शिवाजी वीर नारी सावित्री या मालबाईकी वीरता से अत्यन्त प्रसन्न हुए। उन्होंने सावित्रीबाई अथवा मालबाईके गौरवकी रक्षा करनेमें किसी प्रकारकी कमी नहीं की। उन्होंने सावित्रीबाईका यथोचित सम्मान करके किला लौटा दिया, फिर बल्लारी किलेपर महाराष्ट्रपतिकी जय-पताका नहीं दिखलायी पड़ी। स्वाधीनताके प्रेमी शिवाजीने सावित्रीबाईकी स्वाधीनता अटल रखी। उन्होंने उसकी स्वाधीनताका अपमान नहीं किया। सावित्रीबाई पहलेके समान ही स्वाधीनतापूर्वक अपना राज्य करने लगी।

कृष्णा और तुङ्गभद्रा नदियोंके बीचका प्रदेश बड़ा उजाड़ था। वहांकी प्रजाके लूटमारसे रात दिन नाकों दम रहता था। यह प्रदेश बीजापुर-दरबारके अधीन था। बीजापुर राज्यकी ओरसे उक्त प्रान्तका सूबेदार यूसुफखां नामक एक मनुष्य था। वह प्रजाकी रक्षाका कुछ प्रबन्ध नहीं करता था। उसके अत्याचारोंके कारण प्रजा अत्यन्त दु:खी थी। इन सब कारणोंसे शिवाजीने बीजापुर दरबारको वहांका सन्तोषदायक प्रबन्ध

करनेके लिये लिखा, पर वहांसे कुछ सन्तोषदायक उत्तर न मिला। तब स्वयं शिवाजीने उक्त प्रान्तमें कई किले बनवाकर वहांकी प्रजाके जान-मालकी रक्षाका प्रबन्ध किया। यह देखकर यूसुफखां बहुत चिढ़ा और उसने शिवाजीके सरदार हम्मीररावके सैन्य दलपर आक्रमण किया। महाराष्ट्र-सेना बहुत थोड़ी थी, पर फिर भी विजयलक्ष्मी मराठोंसे ही प्रसन्न हुई। यूसुफखांकी सेना पराजित हुई। इस विजयका समाचार जब जनार्दनने शिवाजीको सुनाया तब वे बड़े प्रसन्न हुए और अपने सरदारोंको यथायोग्य पारितोषिक प्रदान किया। किनकेड और पारसनीसने अपनी पुस्तक "A History of the Maratha People"में इस युद्धके सम्बन्धमें लिखा है कि "यह प्रदेश (कृष्णा और तुङ्गभद्राके बीचका स्थान) विजयनगर राज्यसे बहुत सताया गया था। अतएव शिवाजीसे बचानेके लिये बीजापुर राज्यने यूसुफखां मियांको बड़ी सेनाके साथ वहां रखा था। यूसुफखांने तूरगलके समीप शिवाजीकी सेनापर आक्रमण करनेका विचार किया था। पल्टनके सरदार निम्बालकरने यूसुफखांकी सहायता की। शिवाजीके सरदार भीमोजीके अधीन कुछ घुड़सवारोंने निम्बालकरपर आक्रमण किया। इस युद्धमें निम्बालकर पराजित हुआ। उस समय हम्मीरराव मोहिते भी उसओर गया था, इसलिये हम्मीरराव मोहिते और भीमोजी दोनोंकी सम्मिलित सेनाका यूसुफखांसे युद्ध हुआ जिसमें न केवल यूसुफखां पराजित ही हुआ, बल्कि समस्त तुआब प्रान्त

छोड़कर, यह कृष्णा नदीके उत्तरमें चला गया, जिससे समस्त सुबाव प्रान्त शिवाजीके हस्तगत हुआ।

जिस समय शिवाजी कर्नाटककी विजयोंमें संलग्न थे उस समय उत्तरीय दक्षिणने कुछ और पलटा खाया। जब औरङ्गजेब को यह समाचार मिला कि बहादुरखाँने शिवाजीसे रुपया ले लिया है तब उन्होंने बहादुरखाँको दक्षिणसे उत्तर भारतमें बुला लिया। पाठक यह भूले न होंगे, क्योंकि पीछे लिखा आ चुका है, कि दिलेरखाँने बीजापुरके राजप्रतिपालक अब्दुल करीमसे मिलकर गोलकुण्डाको जीतनेका विचार कर लिया था। शिवाजीकी दक्षिण दिग्विजय और गोलकुण्डासे मैत्री करना, और कुबेरके लिये "घावपर नमक छिड़कने" के समान हुआ। वे शिवाजीसे पहले ही चिढ़े हुए थे, गोलकुण्डासे उनकी मैत्री होना बहुत ही बुरा लगा। उन्होंने दिलेरखाँको गोलकुण्डापर चढ़ाई करनेके लिये आज्ञा दी। दिलेरखाँ और बीजापुरी सेनाने गोलकुण्डापर धावा किया। परन्तु वहाँके चतुर दीवान मादन्ना पन्तने अत्यन्त धीरतासे शत्रुओंकी सेनाका सामना किया। मुगलिया और बीजापुरी सेना मादन्ना पन्तकी सेनाके सामने ठहर न सकी और भाग गयी। इसी बीचमें बीजापुरी दीवान अब्दुल करीम बीमार हो गया और बीजापुरी सेना अपना वेतन न मिलनेसे असन्तुष्ट हो गयी थी। रोगशय्यापर पड़े हुए अब्दुल करीमसे दिलेरखाँने भेंट की। उससे अपना पद परित्याग करनेका अनुरोध किया। अब्दुल करीमने

अपना पद परित्याग कर दिया और उसके स्थानपर सिद्दी मसऊद नामक हब्शीको, जिसने सेनाका पिछला वेतन चुकाने का वादा किया था, नियुक्त किया। अब्दुल करीमका पद प्राप्त होनेके पीछे मसऊदने सेनाको पिछला वेतन देना अस्वीकार किया। इसी बीचमें अब्दुल करीम मर गया। सेनाके बागी सैनिकोंने उसका घर लूट लिया, उसके बच्चे और स्त्रियोंके पास कुछ भी नहीं छोड़ा। पीछे उनमेंसे कुछ लोग तो दिलेरखांकी सेनामें आ मिले और कुछ लोगोंने शिवाजीके पेशवा मोरोपन्त पिंगलेके अधीन सेवा स्वीकार कर ली।

गोलकुण्डा आक्रमणपर सफलता प्राप्त न होनेके कारण औरङ्गजेब दिलेरखांसे भी बिगड़ गया और फिर शाहजादा मुअज्जिमको दक्षिणका सूबेदार करके भेजा और दिलेरखांको शाहजादेका सहकारी नियुक्त किया। दिलेरखांको बीजापुरी सेनाके अवशिष्ट वेतन देकर अपने अधीन करके बीजापुरपर चढ़ाई करनेकी आज्ञा दी। आज्ञा पाते ही दिलेरखांने बीजापुर पर चढ़ाई कर दी।

ग्राण्ट डफने औरङ्गजेबका बीजापुरपर चढ़ाई करनेकी आज्ञा देनेका कारण यह लिखा है कि "पहले मसऊदखांकी अब्दुल करीमसे जो सन्धि हुई थी उसके अनुसार सिकन्दर आदिल शाहकी बहिन और अली आदिलशाहकी पुत्री बादशाह बीबीको, औरङ्गजेबके एक लड़केके साथ विवाह करनेके लिये दिया पर मसऊदने यह बात स्वीकार नहीं की। स्वीकार न करनेका

कारण यह था कि बीजापुरकी जनता नहीं चाहती थी कि बीजापुरके आदिलशाहकी लड़की मुगल-सम्राट्के यहां जाय।" "गङ्गा आनेवाली थी और भगीरथके सिर पड़ी!" दिलेरखांको बीजापुरपर चढ़ाई करनेकी आज्ञा तो मिल गयी पर साथ ही बादशाह बीबीकी शादी न करनेका बहाना भी था। स्काट लिखता है कि जब बादशाह बीबीने देखा कि मेरे पीछे तो युद्ध छिड़ रहा है तब वह अपने दरबारी हकीम शम्सुद्दीनके साथ कुछ थोड़ेसे सवार लेकर मुगल-सेनापतिसे मिलनेके लिये पहुंची। दिलेरखांने बादशाह बीबीका यथोचित आदर सत्कार किया और उसे दिल्ली भेज दिया। किन्तु बीजापुरसे लड़ाई बन्द नहीं की।

इस समय बीजापुरकी दशा बहुत खराब थी, खजाना खाली था, सेना असन्तुष्ट थी अतएव चारों ओरसे निराश होकर मसऊदने शिवाजीसे सहायता मांगी। शिवाजी नहीं चाहते थे कि दक्षिणमें मुगलोंका अधिकार हो, इसलिये वे बहुतसी सेना लेकर बीजापुर दरबारकी सहायताके लिये बढ़े। उन्होंने बीजापुरको बचानेके लिये एकदम मुगल-प्रान्तपर चढ़ाई की और उनका जालना शहर लूट लिया। और मुगलिया-मण्डलको लूटते लूटते वे गोदावरी पार निकल गये। स्वयं मुअज्जिम औरङ्गाबादमें मौजूद था पर उसके रहते हुए भी शिवाजीकी सेना तीन दिनतक जालना शहरको लूटती रही। जालना शहरसे औरङ्गाबाद केवल पचास मील था। जब शिवाजी लूटका माल

अपनी गाड़ियोंपर लादकर चले तब शाहजादा मुअज्जिमने दस हजार सेना रनमस्तखांके अधीन, शिवाजीपर आक्रमण करनेके लिये भेजी।" संगमनेरमें रनमस्तखांने शिवाजीपर चढ़ाई की। दोनों ओरसे विकट युद्ध हुआ। शिवाजीका सेनापति हमीरराव मोहिते घायल हुआ।" मुगलोंकी ओरसे रनमस्तखां शिवाजीकी कैदमें आया। इसी समय शिवाजीको खबर मिली कि मुगलोंका एक और सैन्यदल उनका पीछा करनेके लिये आ रहा है। सौभाग्यवश मराठा सेनाका मोरोजी नायक नामक गुप्तचर वहां आ गया और मुगल-सेनासे मराठी सेनाको चारों ओरसे घिरे हुए देखकर एक ऐसा गुप्त पहाड़ी मार्ग शिवाजीको बतलाया जो उस गुप्तचरके सिवाय किसीको मालूम न था। शिवाजी सकुशल उस गुप्त मार्गसे खानदेशके पट्टा किलेमें पहुंच गये। इस युद्धके थोड़े दिनों पहले ही पट्टा दुर्गको मोरोपिंगलेने लिया था, और उसे सुदृढ़ कर लिया था। मुगलोंने पट्टा दुर्गपर उस समय धावा नहीं किया।

पट्टा दुर्गमें पहुंचनेके पीछे शिवाजीको मसऊदखांका पत्र मिला कि "दिलेरखां किलेकी दीवारोंके इतना समीप आ गया है कि यदि सहायता न करोगे तो सब काम बिगड़ जायगा।" इस पत्रके पहुंचनेके समय हम्मीरराव मोहिते जो पिछले युद्धमें घायल हुआ था, अच्छा हो गया था। शिवाजीने हम्मीररावको तो घुड़सवार सेनाका अफसर किया और मोरोपिंगलेके अधीन पैदल सेना रखी। इन दोनोंको उन्होंने बीजापुरकी रक्षाके लिये

भेजा और आप भी मसऊदखांका पत्र पाकर बीजापुरको मुग लोंके चंगुलसे बचानेके लिये पन्हाला दुर्गको लौट ही रहे थे कि उनको अपने ज्येष्ठ पुत्र सम्भाजीके पन्हाला दुर्गसे भाग जानेका समाचार मिला। उस समय सम्भाजीकी अवस्था केवल इक्कीस वर्षकी थी। वे अपने पिताके समान वीर थे परन्तु विचारशील न थे। उन्होंने एक ब्राह्मण स्त्रीसे व्यभिचार किया था। इससे क्रोधित होकर न्यायप्रिय शिवाजीने उन्हें पन्हाला दुर्गमें कैद कर दिया था। वहींसे वे अपनी स्त्री यसूबाई और कुछ आदमियोंके साथ भागे थे। यह समाचार सुनते ही शिवाजीने उन्हें पकड़ने के लिये कुछ आदमी भेजे पर सम्भाजी दूर निकल गये और हाथ न आये। सम्भाजीने अपने आगमनका समाचार दिलेर खांको एक पत्र द्वारा भेजा। पत्र पाते ही दिलेरखांने इखलासखां और अपने भतीजे मीरतखांके अधीन चार हजार सवारोंको उनके स्वागत करनेके लिये भेजा। सूपाके दक्षिणमें आठ मीलकी दूरीपर ये लोग सम्भाजीसे मिले और उनका बड़ी धूमधामसे स्वागत किया। वहांसे दिलेरखांके पास आये। सम्भाजीके आने पर दिलेरखांको इतना हर्ष हुआ कि मानों उसे समस्त दक्षिण पर विजय प्राप्त हुई। उसने यह खुशी ढोल बजवाकर प्रकट करवाई और सम्राट् औरङ्गजेबको भी सम्भाजीके आनेका समा चार भेजा। सम्भाजीको सात हजारका मनसब, राजाकी पदवी और एक हाथी सम्राट् औरंगजेबकी ओरसे मिला। संवत् १७३६ वि०—सन् १६७८ ई० के नवम्बर मासमें यह घटना हुई।

दिलेरखाँकी सम्मतिसे सम्भाजीने भूपालगढ़पर धावा किया। शिवाजीने भूपालगढ़ बीजापुर-राज्यसे छीन लिया था। उस समय भूपालगढ़का अध्यक्ष फिरङ्गोजी नरसाला था जिसने चाकणके किलेकी वीरतापूर्वक रक्षा की थी। इस समय बड़ी कठिनाईमें पड़ा क्योंकि शिवाजीके पुत्र सम्भाजीने किलेपर चढ़ाई की। उसने एक ब्राह्मण दूत सम्भाजीको समझानेके लिये भेजा। सम्भाजीने क्रोधमें आकर उस ब्राह्मण दूतको काट डाला। इसपर फिरङ्गोजी नरसाळाने कुछ विचार न करके, अपने अधीनस्थ एक कर्मचारीपर किलेका भार छोड़ा और आप शिवाजीके पास यह समाचार कहनेके लिये चला गया। यद्यपि भूपालगढ़की सेनाने, सम्भाजीकी सेनाका सामना किया परन्तु अन्तमें भूपालगढ़का पतन हो गया। शिवाजी फिरङ्गोजी नरसालाके इस कार्यसे इतने क्रोधित हुए कि उसे तोपके मुंह पर उड़वा दिया।

जब सम्भाजी भूपालगढ़को लेनेकी चेष्टा कर रहे थे तब हमीररावने दिलेरखाँकी सेनाको भी बहुत तङ्ग किया। उसने मुगल प्रान्तमें जहाँ-तहाँ लूटमार मचा दी। दिलेरखाँने कृष्णा पार करके कर्नाटकको उजाड़ना आरम्भ कर दिया। शिवाजीने जनार्दन पन्तको कर्नाटक भेजा जिससे दिलेरखाँ परास्त हुआ।

भूपालगढ़के पतन होनेके कुछ दिन पीछे ही सम्भाजी अपने पिताके पास लौट आये। उसका कारण यह हुआ कि दिलेर खाँने बीजापुरको जाते समय मार्गमें कितने ही गांवोंको लूटा,

जो कि बीजापुर राज्यमें थे। एक गांव टीकोटामें कितनी ही हिन्दू और मुसलमान स्त्रियोंने अपने छोटे छोटे बच्चों सहित मुगलिया सेनाके क्रोधसे बचनेके लिये कुंओंमें कूदकर आत्मघात कर डाला था। टीकोटामें लगभग तीन हजार हिन्दू मुसलमानोंको मुगलिया-सेनाने कैद कर लिया था। बीजापुरके निकट एक गांव अथनीमें दिलेरखांने बड़ी लूट मार मचायी और वहां जितने हिन्दू कैदमें आये, उन सबको उसने गुलामोंके रूपमें बेचनेका विचार किया। सम्भाजीको यह बात बहुत बुरी लगी, उनका हृदय इन अत्याचारोंको सहन नहीं कर सका। उधर शिवाजीके दूत भी बराबर सम्भाजीके पास पहुंचते थे और उनसे लौट आनेका अनुरोध करते थे। यहांतक कि मुगलिया-सेनामें जो मराठे वीर नौकर थे, उन्होंने भी सम्भाजीके इस कार्यकी निन्दा की कि वे अपने पितासे बिगड़ कर मुगलोंमें मिल गये हैं। सम्भाजीका साला महादजी निम्बालकर, मुगलिया सेनामें नौकर था। उसने भी सम्भाजीकी अपने पितासे विरुद्ध होनेके कारण बहुत निन्दा की। इन सब बातोंसे दुःखी होकर सम्भाजी अपनी स्त्री यसूबाईको मर्दानी पोशाक पहनाकर अपने दस आदमियोंके साथ एक रातको मुगलिया सेनासे भाग गये और बीजापुर पहुंचे। बीजापुरमें मसऊदखांने उनका अच्छा आदर-सत्कार किया।

मुगलिया-सेनासे सम्भाजी किस प्रकारसे भागे, इस विषय में कई इतिहास-लेखकोंमें पारस्परिक मतभेद है। सभासदने

लिखा है कि दिलेरखाँने औरङ्गज़ेबको, सम्भाजीको मराठोंका राजा बनानेके लिये, लिखा था। पहले तो औरङ्गज़ेबने दिलेरखाँके इस प्रस्तावको स्वीकार कर लिया, पर पीछे सोचा कि कहीं सम्भाजी, मुगलोंकी सहायता न करके, मुगलिया सेनामें जो हिन्दू अफसर हैं, उन्हें बहकाकर, शिवाजीकी ओर न कर लें। औरङ्गज़ेबने सम्भाजीको कैद करके, दिल्ली भेजनेके लिये लिखा। दिलेरखाँने ऐसा विश्वासघात नहीं करना चाहा और सम्भाजीको औरङ्गज़ेबकी आज्ञा सुना दी। परन्तु औरङ्गज़ेबको दिलेरखाँकी ओरसे किसी प्रकारका सन्देह न होने पावे, यह विचार करके लोगोंको दिखानेके लिये खुल्लमखुल्ला सम्भाजीका अपमान किया और उन्हें मुगलिया सेनासे जो खर्च मिलता था, वह भी बन्द कर दिया। सम्भाजीने दिलेरखाँके इस बनावटी-व्यवहारपर नाराजी प्रकट की और शिवाजीसे पत्रव्यवहार किया। शिवाजीने मराठा दूत सम्भाजीके पास भेजे और उनकी सहायतासे सम्भाजी, दिलेरखाँकी सेनामेंसे भागे।

दिलेरखाँको जब सम्भाजीके भाग जानेका पता लगा तब उन्होंने मसऊदखाँके पास बग़ावा अब्दुल रज़ाक नामक एक आदमीको भेजा और उनसे सम्भाजीको कुछ धन देकर पकड़ पानेका अनुरोध किया। सम्भाजीको दिलेरखाँके इनके आनेका समाचार मिल गया अतएव ये बीजापुरसे भी गुप्तचार बन दिये, मार्गमें उन्हें अपने पिताके भेजे हुए सवार मिले, जो उन्हें बुलानेके लिये आ रहे थे। इन सवारोंके साथ सम्भाजी

उन्नीसवां परिच्छेद

अङ्गरेज और सिद्दी

"न भवति तस्य पुर प्रधान
सर्वो जन सुजनतामुपयाति तस्य
च भूर्भवति सन्निधि रत्न पूर्णा
यस्यास्ति पूर्व सुकृत विपुलं नरस्य।"*

१७ वीं शताब्दीके पहले चतुर्थांशमें भारतवर्षके पर दो घटनायें ऐसी हुई जो उस समय साधा- न पड़ती थीं। उसमें एक यह थी कि सन् १६१२ (१६६९ वि०) में अङ्गरेजोंने अपने व्यापारकी कोठी थी और दूसरी यह हुई कि सन् १६२७ ई० (संवत् ०) में शिवनेरके किलेमें, अहमदनगरके निजामशाही क छोटेसे जागीरदार, शाहजीकी स्त्रीके एक बालक आ। यह बालक और कोई नहीं, हमारे चरित्र वाजी थे। उस समय ये दोनों घटनायें साधारण थीं। उस समय यह कि

१ सिपि
मी

करनेके अतिरिक्त और कोई चारा ही न था। उसने उत्तरमें शिवाजीको लिखा कि "यदि आप बीजापुरमें आवें तो बालक बादशाह सिकन्दर अलीशाह अपने हाथसे आपको इस प्रान्तके प्रदान करनेकी सनद देंगे।" यह उत्तर पाकर शिवाजी बीजापुर पहुंच गये। वहाँ उनका बड़े आदरसे स्वागत किया गया और कृष्णा नदीसे तञ्जोरतकका समस्त प्रान्त उनके अधीन कर दिया गया। यहाँ वे थोड़े दिन रहकर अपने राज्यमें लौट आये।

हुआ। आप मुझे शिवाजीके विरुद्ध सहायता दें। परन्तु सूरतके तत्कालीन अङ्गरेज गवर्नरने यह शर्त स्वीकार नहीं की। क्योंकि उन्हें भय था कि इन शर्तोंको सुनते ही शिवाजी हमपर आक्रमण कर देंगे और फिर सम्हालना कठिन हो जायगा। अत अङ्गरेजोंने सिद्दीके प्रस्तावको स्वीकार नहीं किया। उन्होंने यह सोचा कि यह बैठे बिठाये शिवाजीसे झगड़ा मोल लेना है, क्योंकि उस समय शिवाजी भी अङ्गरेजोंके लिये हौवा हो रहे थे। शिवाजीके नामसे उस समय अंगरेज कैसे डरते थे, इसका अनुमान पाठक केवल इससे ही कर लें कि जब संवत् १७३७ वि०—सन् १६८० ई० में शिवाजीकी मृत्यु हुई तब बम्बईके प्रेसीडेण्टने उनकी मृत्युका समाचार कलकत्ते भेजा था। कलकत्तेके अंगरेजोंने शिवाजीकी मृत्युके सम्बन्धमें जो पत्र भेजा था, वह सुनने लायक है। उन्होंने लिखा कि "शिवाजी इतनी बार मर चुका है कि उसके मरनेपर विश्वास ही नहीं होता, उसे लोग अमर ही समझते हैं। उसके मरनेके समाचारोंपर विश्वास न होनेका कारण यह है कि उसे जहाँ तहाँ विजय ही मिली। अब हम उसे तब मरा हुआ समझेंगे, जब कि उसके समान साहस पूर्ण काम करनेवाला मराठोंमें कोई न होगा और हमें मराठोंके पंजेसे छुटकारा मिलेगा।" जब अंगरेजोंके हृदयपर शिवाजीका ऐसा आतङ्क छा रहा था तब भला अंगरेजो सिद्दी याकूबखाँकी शर्त कैसे स्वीकार करते। अतएव उन्होंने सिद्दी याकूबखाँको छिपे छिपे कुछ धन देकर

दिया है, जिससे पाठकोंको स्मरण रहे कि अंगरेज़ोंका शिवाजी से जो प्रथम सम्बन्ध हुआ, वह इस प्रकार हुआ कि जिससे उनका रोब अंगरेज़ोंपर छा गया। अंगरेज़ लोग शिवाजीके नामसे कांपते थे।

उस समय सभी यूरोपियन जातियाँ भारतमें अपने व्यापार और अधिकार विस्तारकी प्राणपणसे चेष्टा कर रही थीं, इस कारण भारतमें रहनेवाली प्रायः सब ही यूरोपियन जातियोंमें आपसमें खटपट रहती थी। डच और अंगरेज़ोंकी भी अनबन थी। अंगरेज़ चाहते थे कि डचोंका हिन्दुस्तानसे नामनिशान मिट जाय और डच चाहते थे कि हिन्दुस्तानमें अंगरेज़ोंके पैर जमने न पायें। संसारमें बिना स्वार्थके बहुत कम मैत्री होती है। जिस प्रकार अंगरेज़ और डचोंको अपने स्वार्थरक्षाकी चिन्ता थी, उसी प्रकार जंजीराके सिद्दी अपना मतलब गाँठनेकी चिन्तामें थे। सम्वत् १७१३ वि०—सन् १६५६ ई० में सिद्दी याकूबखाँने अंगरेज़ोंसे सन्धि विषयक शर्तें आरम्भ कीं। क्योंकि शिवाजीका डर उसको भी अंगरेज़ोंके समान ही था। उसने अंगरेज़ोंकी सहायतासे शिवाजीको राजापुरमें आनेसे रोकना चाहा, क्योंकि उसने सन्धिमें अंगरेज़ोंसे यह शर्त पेश की थी कि आप लोग चाहते हैं कि राजापुरमें डच लोग अपनी कोठी न बनपायें और मैं चाहता हूं कि शिवाजी मेरे राज्यमें पैर न जमाने पायें, अतएव हमलोग आपसमें तय कर लें कि मैं (सिद्दी याकूबखाँ) तो डच लोगोंको राजापुरमें अपनी कोठी न खोलने

दूंगा। आप मुझे शिवाजीके विरुद्ध सहायता दें। परन्तु सूरतके तत्कालीन अङ्गरेज गवर्नरने यह शर्त स्वीकार नहीं की। क्योंकि उन्हें भय था कि इन शर्तोंको सुनते ही शिवाजी हमपर आक्रमण कर देंगे और फिर सम्हालना कठिन हो जायगा। अतः अङ्गरेजोंने सिद्दीके प्रस्तावको स्वीकार नहीं किया। उन्होंने यह सोचा कि यह बैठे बिठाये शिवाजीसे झगड़ा मोल लेना है, क्योंकि उस समय शिवाजी भी अङ्गरेजोंके लिये हौवा हो रहे थे। शिवाजीके नामसे उस समय अंगरेज कैसे डरते थे, इसका अनुमान पाठक केवल इससे ही कर लें कि जब संवत् १७३७ वि०—सन् १६८० ई० में शिवाजीकी मृत्यु हुई तब बम्बईके प्रेसीडेण्टने उनकी मृत्युका समाचार कलकत्ते भेजा था। कलकत्तेके अंगरेजोंने शिवाजीकी मृत्युके सम्बन्धमें जो पत्र भेजा था, वह सुनने लायक है। उन्होंने लिखा कि "शिवाजी इतनी बार मर चुका है कि उसके मरनेपर विश्वास ही नहीं होता, उसे लोग अमर ही समझते हैं। उसके मरनेके समाचारोंपर विश्वास न होनेका कारण यह है कि उसे जहाँ तहाँ विजय ही मिली। अब हम उसे तब मरा हुआ समझेंगे, जब कि उसके समान साहस पूर्ण काम करनेवाला मराठोंमें कोई न होगा और हमें मराठोंके पंजेसे छुटकारा मिलेगा।" जब अंगरेजोंके हृदयपर शिवाजीका ऐसा आतङ्क छा रहा था तब भला अंगरेजी सिद्दी याकूबखाँकी शर्त कैसे स्वीकार करते। अतएव उन्होंने सिद्दी याकूबखाँको छिपे छिपे कुछ धन देकर

उससे यह स्वीकार करा लिया कि हम राजापुरमें इन लोगोंको कोठी खुलने न देंगे।

राजापुरके पीछे शिवाजी और अङ्गरेजोंकी भेंट सूरतमें हुई, जिसके विषयमें "सूरतकी लूट" शीर्षकमें विशेषरूपसे लिखा जा चुका है। इस परिच्छेदको पढ़कर पाठकोंने जान लिया होगा कि पहले पहल सूरत नगर ही अंगरेजोंके व्यापार का प्रधान स्थान था और यह बहुत माल उतरा करता था। अतएव मुगलोंको भी चुङ्गी (महसूल) की आमदनी अच्छी होती थी। शिवाजीने सूरतपर संवत् १७२१ वि०—सन् १६६४ ई० में आक्रमण किया था, पर "मराठा और अङ्गरेज" नामक पुस्तकमें श्रीयुक्त नरसिंहचिन्तामणि केलकरने लिखा है— "मालूम होता है कि १६६३के फरवरी मासकी चौथी तारीखको दूकानों या कोठियोंके अङ्गरेज गवर्नरने अपने पत्रमें लिखा था कि 'लायल मर्चेन्ट' और 'आफ्रिकन' नामक दो जहाज ता० २१ जनवरीको रवाना हुए हैं। इनके देरीसे रवाना होनेका कारण यह है कि शिवाजीने सूरतपर चढ़ाईकर नगर लूटा था, इस लिये बहुत दिनोंतक काम काज बन्द रहा था और नावों परसे माल उतारना कठिन हो गया था। हमारे पहले पत्रके पश्चात् फिर एक बार शिवाजीके आनेकी अफवाह उड़ी थी और इससे पहलेकी अपेक्षा इस बार अधिक गड़बड़ी हुई। लोग गांव छोड़ छोड़कर चले गये। उन्होंने अपनी सम्पत्ति और व्यापारी माल किलेमें रख दिया। कुछ लोगोंने तो किलेकी चारों

को मालसे पूर दिया था। बड़े बड़े बर्तन नदीमें डाल दिये थे। शिवाजीके द्वारा हाथ पांव तोड़े जानेकी खबर उड़नेके कारण, लोग उसकी क्रूरतासे बहुत डरने लगे हैं और नगरकी रक्षाके लिये बादशाही सेनाके न आनेपर शिवाजीके आनेकी अफवाहसे ही लोग बस्ती छोड़कर भाग जाते हैं।''

हमने ऊपर जो अवतरण उद्धृत किया है, वह श्रीयुक्त केलकर रचित पुस्तकके हिन्दी अनुवादसे है। अतएव यह नहीं कहा जा सकता कि मूल पुस्तकसे हिन्दी अनुवाद करनेमें कुछ भूल हुई है अथवा मूल पुस्तकमें सन् १६६३ ई० है। क्योंकि जब शिवाजीने दूसरी बार संवत् १७२६ वि० सन् १६७२ ई०में सूरतपर आक्रमण किया था, उस समय कई अङ्गरेजी जहाज कुछ दिन रुक गये थे। अतः सन् १६७३ ई०के स्थानमें छापेखानेकी भूलसे सन् १६६३ ई० हो जाना साधारण बात है। अतएव यहां इस विषयपर विशेष वाद विवाद न करके यह यह कहना है कि सन् १६६४ ई०से पहले, शिवाजीकी सूरत नगरपर चढ़ाई का कोई वृत्तान्त नहीं मिलता है। हां, यह निर्विवाद सिद्ध है कि सूरतकी पहली चढ़ाईसे पूर्व ही शिवाजीका रोब अङ्गरेजोंपर गालिब हो गया था।

यह पीछे लिखा आ चुका है कि शिवाजीकी सूरतपर पहली चढ़ाईके समय, अङ्गरेजोंने अपनी कोठियोंकी रक्षा की थी। उस समय नगर रक्षाके कार्यमें सूरत शहरके मुगल सूबेदारको अङ्गरेजी तोपोंसे बड़ी भारी सहायता मिली। यद्यपि विचारपूर्वक

देखा जाय तो शिवाजीकी चढ़ाई अङ्गरेज अथवा दूसरे यूरोपियन व्यापारियोंपर न थी, वरन् मुगलोंपर थी। तो भी यूरोपियन व्यापारियोंने अपने बचावका प्रबन्ध किया और मुगलोंको भी सहायता दी। कोठीकी रक्षा कर सकनेके कारण सूरतमें कम्पनीकी ओरसे जो सर जार्ज आक्सडेन प्रेसीडेण्ट था, उसको मुगल-सम्राट् औरङ्गजेबने बहुमानसूचक खिलअत दी और सूरतके अङ्गरेज व्यापारियोंपर जकातमें भी कुछ रियायत कर दी। कम्पनीने भी एक सुवर्ण-पदक तथा दो सौ मुहरोंकी थैली पारितोषिक स्वरूप आक्सडेनको दी।

संवत् १७२१ वि०—सन १६६४ ई०में शिवाजीने ८५ छोटे और तीन बड़े जहाज लेकर कारवारपर चढ़ाई की। यहां भी अङ्गरेजोंकी कोठी थी। कारवार सुदृढ़ स्थान न था, अतः उसका शीघ्र ही पतन हुआ और शिवाजीसे सन्धि की गयी। सन्धिके अनुसार शिवाजीको ही आनेवाली पाउण्डमेंसे अपने हिस्सेके ११२ पौण्ड अङ्गरेजोंने उसी समय दे दिये। दूसरी बार जब शिवाजीने सूरतपर चढ़ाई की तब उनकी अङ्गरेज तथा दूसरे यूरोपियन व्यापारियोंसे कैसी मुठभेड़ हुई, इस विषयमें पीछे लिखा जा चुका है। यहां उसका पुन उल्लेख करनेकी आवश्यकता नहीं है।

पर यहां यह कहना आवश्यक है कि जबतक अङ्गरेजोंका प्रधान स्थान (हेडक्वार्टर) सूरतमें रहा तबतक शिवाजीको उनसे विशेष सहायता मिलनेकी आशा न थी। परन्तु जब सूरतसे

हटाकर अङ्गरेजोंने बम्बईके पश्चिमी किनारेपर अपना हेड क्वारटर नियत किया तब शिवाजी और अङ्गरेजोंका आपसमें अच्छा सम्बन्ध हो गया। इसका बहुत कुछ श्रेय कम्पनीके तत्कालीन गवर्नर औंजियरको था। सूरतसे गैराल्ड औंजियर संवत् १७२८ वि० सन् १६७१ ई०में पहुंचा था और संवत् १७३२ वि० सन् १६७५ ई०में वह सूरत लौट आया था। औंजियर दूरदर्शी और बुद्धिमान था, उसने शिवाजीसे मेल करनेमें ही ईस्ट इण्डिया कम्पनीके स्वार्थकी भलाई समझी थी। इसलिये उसने ऐसी चेष्टा की कि अङ्गरेजोंका शिवाजीसे कुछ बिगाड़ न होने पावे। ऊपर लिखा जा चुका है कि जंजीराके सिद्दी भी अङ्गरेजोंसे मैत्री रखते थे। उन्होंने अङ्गरेजोंकी सहायतासे शिवाजीके राज्यमें उत्पात करना चाहा, यहांतक कि औंजियरसे सूरतके मुगल सूबेदारने भी सिद्दियोंकी ओरसे इस विषयकी प्रार्थना की परन्तु औंजियरने यह प्रार्थना स्वीकार नहीं की। शिवाजी अङ्गरेज गवर्नरकी इस तटस्थता और निरपेक्षतासे बहुत सन्तुष्ट हुए।

संवत् १७३० वि०—सन् १६७३ ई०में शिवाजी और अङ्गरेजों की भेंट हुबलीमें हुई। यहां भी अङ्गरेजोंकी कोठी थी। अङ्गरेजों का कहना था कि शिवाजीकी इस चढ़ाईमें उन्हें पौन लाख रुपयोंकी हानि उठानी पड़ी। इस क्षति पूर्त्तिके लिये अङ्गरेजोंने शिवाजीसे कहा, परन्तु उन्होंने उत्तर दिया कि यदि हानि हुई भी होगी तो फुटकर हुई होगी। इसलिये भरी नहीं जा सकती। हुबली और राजापुरकी क्षति-पूर्त्तिके लिये गवर्नर औंजियरने

बहुत प्रार्थना की, पर शिवाजीने क्षति पूर्ति करना स्वीकार नहीं किया।

जब शिवाजीने अपने राज्यमें पोर्तगीजोंके स्थान वसीमके पास सिद्दियोंसे सदैवके लिये निबटारा करनेके लिये किले बनाने आरम्भ किये तब अङ्गरेज बहुत भयभीत हुए, क्योंकि ऑंजियरको डर हुआ कि कहीं शिवाजी अङ्गरेजोंको भी तङ्ग न करें। यह सोचकर औंजियरने लेफ्टिनेन्ट उस्कट साहबको शिवाजीके पास सन्धि करनेके लिये भेजा। उस्कट साहबने शिवाजीसे वही राजापुरकी क्षति निवारण स्वरूप बत्तीस हजार पगोडा मांगा, पर इस बार भी शिवाजी राजी नहीं हुए। प्रो॰ यदुनाथ सरकारने सूरत फैकृरी रिकार्ड्सके आधारपर लिखा है कि "शिवाजीने अङ्गरेजोंसे युद्धके सामानकी सहायता चाही थी, जो अङ्गरेजोंने मंजूर नहीं की। इसपर उन्होंने क्रोधित होकर अपने कोकण राज्यसे ईंधन लकड़ी वगैरह जो पदार्थ मिलते थे, बन्द करवा दिये, इससे अङ्गरेजोंको बड़ी तकलीफ हुई। अङ्गरेजोंका उस्कट साहबको उनके पास भेजनेका यही प्रयोजन था कि अङ्गरेजोंका शिवाजीसे कुछ बिगाड़ न होने पावे। उस्कट को यह इशारा कर दिया गया था कि शिवाजीको बातों ही बातोंमें बहलावे कि हम (अङ्गरेज) सिद्दियोंसे लड़नेके लिये लड़ाईका सामान आप (शिवाजी) को देंगे, पर युद्धका सामान देनेके विषयमें शीघ्र ही सन्धि न की जाय। शिवाजीसे मराठा राज्यमें जो रुपये सैकड़े अकातपर व्यापार करनेके लिये सन्धि कर लो

जाय। प्रेसीडेन्टने सूरतसे उस्कटको यह भी लिखा कि सिद्दीके विरुद्ध युद्धके सामान अथवा अन्य किसी प्रकारकी सहायता देनेकी निश्चयात्मक सन्धि शिवाजीसे न की जाय, उन्हें बातें ही बातेंमें रखा जाय जो पीछे पूरे नहीं किये जायगे।" इस प्रकार अङ्गरेज लोग शिवाजीको सिद्दियोंके विरुद्ध सहायता देनेके लिये झांसे दे रहे थे तब शिवाजीने अङ्गरेजोंसे एक बार नहीं अनेक बार स्पष्टरूपसे कह दिया कि हम राजापुर और हुबलीकी क्षति-पूर्ति नहीं करेंगे।

उपर्युक्त भेंटके पीछे औंजियरने दूसरे वर्ष संवत् १७३० वि० सन् १६७३ ई०में निकोलस नामक अपना वकील, शिवाजीके पास सन्धि करनेके लिये भेजा। उसने शिवाजीके पुत्र सम्भाजीकी मार्फत शिवाजीसे सन्धि विषयक बातें कीं। उस समय भी अङ्गरेजोंने राजापुर और हुबलीकी क्षति पूर्तिका राग अलापा, पर उसका कुछ फल न हुआ। राजापुर और हुबलीकी क्षति पूर्तिके लिये, अङ्गरेज अपना सा मुँह लेकर रह गये।

संवत् १७३१ वि०—सन् १६७४ ई०में शिवाजीने यथाविधि अपना राज्याभिषेक किया। यह पीछे लिखा जा चुका है कि इस अभिषेकोत्सवमें बम्बईके डिप्टी गवर्नर हेनरी आक्सडन उपस्थित थे। ईस्ट इण्डिया कम्पनीकी ओरसे अन्य दो अङ्गरेज व्यापारियोंको साथ लेकर वे उक्त उत्सवके समय रायगढ गये। उस समय मौका लग जानेसे शिवाजीसे इनका सन्धि करनेका विचार था। इस सन्धि विषयक इच्छासे ये लोग संवत् १७३१

यि०—सन् १६७४ के एप्रिल मासके अन्तमें बम्बईसे जहाज द्वारा रवाना हुए। पहले चौल जाकर ये दूसरे दिन रोहा पहुंचे, रोहासे पालकी करके निज़ामपुर आये। पांचवें दिन रायरी पर्वतके नीचे पाचाड़ नामक गांवमें आकर ठहरे। उस समय शिवाजी प्रतापगढ़में थे, अत इन्हें कुछ दिनोंतक यहां ही रह रना पड़ा। नारायणजी पण्डित नामक एक चतुर कामदार पाचाड़में अंगरेजोंसे मिला। शिवाजीका उद्देश्य उसने अङ्गरेजोंको अच्छी तरह समझा दिया। अङ्गरेजोंका कहना था कि अंजीराके सिद्दियोंसे युद्ध न करके, शिवाजी उससे सन्धि कर लें और हमें व्यापारिक सुभीते दे दें, जिससे हम दोनोंको लाभ हो। नारायण पण्डितने अङ्गरेजोंसे कहा कि "यदि शिवाजीके सम्मुख आप सिद्दीकी बात निकालेंगे तो आपका कुछ भी काम न होगा। क्योंकि शिवाजी सिद्दीका मूलोच्छेदन करना चाहते हैं। इस लिये वे आपका कहना कभी न मानेंगे। व्यापारके सम्बन्धमें आपका कहना उचित है और शिवाजी भी अपने राज्यमें व्यापार बढ़ाना चाहते हैं। अभीतक इन झगड़ोंके कारण उन्हें इस ओर जैसा चाहिये वैसा ध्यान देनेका समय नहीं मिला, परन्तु अब राज्याभिषेक हो जानेके बाद वे राज्य-व्यवस्थाका काम हाथमें लेंगे। नारायणजीकी इन बातोंको सुनकर अंगरेज वकील समझ गये कि नारायण एक अधिकार विशेष रखनेवाला चतुर पुरुष है, अत उन्होंने उसे एक अंगूठी भेंटमें दी।

तारीख १५ मईको जब शिवाजी रायगढ़ लौट आये तब

अंगरेज वकील किलेको गये। राज भवनसे एक मीलकी दूरीपर उन्हें ठहरनेके लिये बंगला दिया गया और वे वहां बड़े आनन्दसे रहने लगे। शिवाजी उस समय बड़ी गड़बड़ीमें थे, तो भी चार दिन बाद नारायणजीकी मार्फत वे इन अङ्गरेज वकीलोंसे मिले। व्यापार-वृद्धिके सम्बन्धमें शिवाजीका अभिप्राय अङ्गरेजोंको मालूम हो गया। अभिषेकके दिन बड़े दरबारमें अङ्गरेजोंका प्रधान वकील उपस्थित था। उसने इस उत्सवका हृदयग्राही वर्णन लिखा है। अभिषेकके कुछ दिनों बाद अङ्गरेजोंसे शिवाजीकी सन्धि हुई और उसपर सम्पूर्ण अधिकारियोंके हस्ताक्षर हो गये। तब अङ्गरेज वकील बम्बईको* लौटे और वे रक्षाबन्धनके समयके लगभग वहां पहुंचे।†

बीजापुरसे लौटकर शिवाजीने जंजीराके सिद्दियोंपर फिर चढ़ाई की। यह पीछे कहीं लिखा जा चुका है कि जंजीराके शासक सिद्दी (हब्शी) थे, पीछे मुगलोंकी अधीनता स्वीकार कर ली थी। जिस समय शिवाजीने कर्नाटकपर चढ़ाई की उस समय सिद्दी सरदार (जिसका नाम संबल था) ने मुगलोंकी स्वीकृति और जल-सेनाकी सहायतासे कोंकणके पश्चिमी घाट पर चढ़ाई की और अकस्मात् जयतपुरपर धावा किया, उसने जयतपुरमें आग लगा दी। शिवाजीकी सेनाने उसका सामना

---

* इंगलैण्डके राजा द्वितीय चार्ल्स का विवाह पोर्चुगालकी राजकुमारीके साथ हुआ था, तब पोर्तगालवालोंने बम्बईको दहेजमें इंग्लैण्डके राजा चार्ल्स को दे दिया। चार्ल्सने प्रतिवर्ष दस पाउण्ड पौण्डपर बम्बई ईस्ट इण्डिया कम्पनीको दे दिया।

† "मराठा और अङ्गरेज" से उद्धृत।

किया और शिवाजीका जहाजी बेड़ा भी पहुंच गया, जिससे सिद्दी सरदार आगे नहीं बढ़ सका। उसने बम्बई बन्दरमें शरण ली। बम्बई उन दिनों अङ्गरेजोंके हाथमें था। वहांसे वह मंझ गांव आया। इस स्थानपर आर्मेने लिखा है कि दोनों सिद्दी सरदार सम्बल और कासिममें इस स्थानपर आपसमें झगड़ा हो गया। मुगलोंने समस्त जहाजी बेड़ा कासिमके अधीन कर दिया। सम्बल मुगलोंकी अधीनता स्वीकार करनेके लिये तैयार न था, पर उसे लाचार हो अधीनता स्वीकार करनी पड़ी। इसके कुछ दिनों पीछे वह शिवाजीकी सेवामें चला आया।" जो कुछ हो, मंझगांवमें आनेके पीछे या पहले संवत् १७३३ वि०—सन् १६७६ ई० के जुलाई मासमें सिद्दी कासिम जंजीराका शासक हुआ और उसने पूर्णरूपसे मुगलोंकी अधीनता स्वीकार कर ली।

देश-द्रोहियोंकी न तो उस समय भारतवर्षमें कमी थी और न इस समय है। कुरेलासे एक विश्वासघाती, देशद्रोही ब्राह्मण सिद्दी कासिमके पास आया और कासिमको ब्राह्मणोंके दमन करनेमें सहायता देनेका वचन दिया। उसने अपने जिलेके कुछ प्रतिष्ठित ब्राह्मणोंको पकड़वानेका भी वादा किया। इस बातका कारण यह था कि सिद्दियोंका उस समय ब्राह्मणोंपर प्रकोप था। कारण, शिवाजीको ब्राह्मणोंसे स्वराज्य-स्थापनमें प्रचुर सहायता मिलती थी। सिद्दी कासिम उक्त देशद्रोही ब्राह्मणके उपर्युक्त प्रस्तावसे सहमत हो गया और वह

स्टीमरमें अपने कुछ आदमियोंको उस ब्राह्मणके साथ इस ढँगसे कर दिया कि कम्पनीके कर्मचारियोंको इस षड्यन्त्रकी कुछ खबर ही नहीं हुई। उक्त देशद्रोही ब्राह्मण अपने चार साथियों को पकड़ लाया, जिनको सिद्दीने अपने समर जहाजोंमें कैद रखा। जब शिवाजीके चेउलके सूबेदारको यह खबर लगी तब उसने बम्बईके अङ्गरेज कर्मचारियोंको चारों ब्राह्मणोंको शीघ्र ही मुक्त करनेके लिये लिखा कि ये चारों तुम्हारे राज्यकी सीमामें धोखे और अन्यायसे पकड़े गये हैं। साथ ही शिवाजीके सूबेदारने अंगरेजोंको यह धमकी दी कि अगर तुम ब्राह्मण कैदियों को सिद्दियोंके यहांसे मुक्त न कराओगे तो अन्न, रसद, ईंधन आदि शिवाजीके राज्यसे कुछ भी न दिया जायगा। शिवाजीके सूबेदारके इस पत्रको पाकर बम्बई गवर्मेण्टने तहकीकात करना आरम्भ किया। पहले तो सिद्दियोंने टालमटोल किया, पर पीछे चारों कैदियोंको छोड़ दिया। ब्राह्मणोंको पकड़नेवाले, सिद्दियों के जहाजी बेड़ेके ग्यारह आदमियोंको अंगरेजोंने पकड़ा, जिनमें से तीन आदमियोंको फांसी दी और बाकी लोगोंको सेण्ट हेलेना नामक टापूमें भेज दिया, जहां पीछे उन्होंने फ्रांसके सम्राट् नेपोलियन बोनापार्टको रखा था।

इस बीचमें शिवाजी कर्नाटकसे लौट आये। मोरोपन्त तथा दूसरे महाराष्ट्र कर्मचारियोंने उनसे सिद्दी कासिमकी सब शरारत कही। जब शिवाजीने अपने राज्यके ब्राह्मणोंके कैद किये जानेका वृत्तान्त सुना तब वे बहुत बिगड़े। उन्हें यह भी

किया और शिवाजीका जहाजी बेड़ा भी पहुंच गया, जिससे सिद्दी सरदार आगे नहीं बढ़ सका। उसने बम्बई बन्दरमें शरण ली। बम्बई उन दिनों अङ्गरेजोंके हाथमें था। वहांसे वह मंझ गांव आया। इस स्थानपर ग्रांटने लिखा है कि दोनों सिद्दी सरदार सम्बल और कासिममें इस स्थानपर आपसमें झगड़ा हो गया। मुगलोंने समस्त जहाजी बेड़ा कासिमके अधीन कर दिया। सम्बल मुगलोंकी अधीनता स्वीकार करनेके लिये तैयार न था, पर उसे लाचार हो अधीनता स्वीकार करनी पड़ी। इसके कुछ दिनों पीछे वह शिवाजीकी सेवामें चला आया।" जो कुछ हो, मंझगांवमें आनेके पीछे या पहले संवत् १७३३ वि०—सन् १६७६ ई० के जुलाई मासमें सिद्दी कासिम जंजीराका शासक हुआ और उसने पूर्णरूपसे मुगलोंकी अधीनता स्वीकार कर ली।

देश-द्रोहियोंकी न तो उस समय भारतवर्षमें कमी थी और न इस समय है। कुरैलासे एक विश्वासघाती, देशद्रोही ब्राह्मण सिद्दी कासिमके पास आया और कासिमको ब्राह्मणोंके पराजय करनेमें सहायता देनेका वचन दिया। उसने अपने जिलेके कुछ प्रतिष्ठित ब्राह्मणोंको पकड़वानेका भी वादा किया। इस वादेका कारण यह था कि सिद्दियोंका उस समय ब्राह्मणोंपर प्रकोप था। कारण, शिवाजीको ब्राह्मणोंसे स्वराज्य-स्थापनमें बहुत सहायता मिलती थी। सिद्दी कासिम उक्त देशद्रोही ब्राह्मणके उपर्युक्त प्रस्तावसे सहमत हो गया और एक

स्टीमरमें अपने कुछ आदमियोंको उस ब्राह्मणके साथ इस ढंगसे कर दिया कि कम्पनीके कर्मचारियोंको इस षड्‌यन्त्रकी कुछ खबर ही नहीं हुई। उक्त देशद्रोही ब्राह्मण अपने चार साथियों को पकड़ लाया, जिनको सिद्दीने अपने समर-जहाजोंमें कैद रखा। जब शिवाजीके चेउलके सूबेदारको यह खबर लगी तब उसने बम्बईके अङ्गरेज कर्मचारियोंको चारों ब्राह्मणोंको शीघ्र ही मुक्त करनेके लिये लिखा कि ये चारों तुम्हारे राज्यकी सीमामें धोखे और अन्यायसे पकड़े गये हैं। साथ ही शिवाजीके सूबेदारने अंगरेजोंको यह धमकी दी कि अगर तुम ब्राह्मण कैदियों को सिद्दियोंके यहांसे मुक्त न कराओगे तो अन्न, रसद, ईंधन आदि शिवाजीके राज्यसे कुछ भी न दिया जायगा। शिवाजीके सूबेदारके इस पत्रको पाकर बम्बई गवर्मेण्टने तहकीकात करना आरम्भ किया। पहले तो सिद्दियोंने टालमटोल किया, पर पीछे चारों कैदियोंको छोड़ दिया। ब्राह्मणोंको पकड़नेवाले, सिद्दियों के जहाजी बेड़ेके ग्यारह आदमियोंको अंगरेजोंने पकड़ा, जिनमें से तीन आदमियोंको फांसी दी और बाकी लोगोंको सेण्ट हेलना नामक टापूमें भेज दिया, जहां पीछे उन्होंने फ्रांसके सम्राट् नेपोलियन बोनापार्टको रखा था।

इस बीचमें शिवाजी कर्नाटकसे लौट आये। मोरोपन्त तथा दूसरे महाराष्ट्र कर्मचारियोंने उनसे सिद्दी कासिमकी सब शरारत कही। जब शिवाजीने अपने राज्यके ब्राह्मणोंके कैद किये जानेका वृत्तान्त सुना तब वे बहुत बिगड़े। उन्हें यह भी

पता लगा कि सिद्दीका जहाजी बेड़ा बम्बईके बन्दरगाहमें ठहरा हुआ है और मुगल-साम्राज्यके भयसे अंगरेजोंने सिद्दीके जहाजी बेड़ेको वर्षा ऋतुमें मंझगांवमें ठहरने दिया है। शिवाजीके मंत्रियोंने शिवाजीको सिद्दी बेड़ेपर आक्रमण करनेकी सलाह दी। उन्हें अपने मन्त्रियोंका यह प्रस्ताव पसन्द आया। उन्होंने संवत् १७३५ वि०—सन् १६७८ ई० के जुलाई मासमें अपने अमीरुल बहर अर्थात् समुद्री सेनापति दौलतखां और दरियासरंगके साथ चार हजार सेना पनवेलको भेजी और आज्ञा दी कि पनवेलसे बम्बईके बन्दरगाहको जायँ। लेकिन पनवेलमें पहुंचकर उन्हें न तो कोई स्टीमर ही मिले और न बम्बई जानेके लिये और कोई सुविधा हुई। वर्षा भी बड़े ओरोंपर थी इसलिये उन्हें और दूसरे स्थानोंसे भी स्टीमर वगैरह न मिल सके। ऐसी परिस्थिति उपस्थित हो जानेके कारण दौलतखां और दरियासरंगको अकस्मात् मंझगांवमें पहुंचनेका अपना विचार त्याग करना पड़ा। दौलतखांको इस प्रकार निराश होकर बेकार बैठना पसन्द न था, यहांसे वह कल्याण चला गया और पोर्चगीज सरकारसे उसके थाना जिलेमें होकर जानेके लिये आज्ञा मांगी। उसकी धारणा थी कि थानासे महीमकी खाड़ीमें होकर बम्बई बन्दर पहुंचकर, मंझगांवके किनारेपर सिद्दियोंके जहाजी बेड़ेपर आक्रमण करें और किनारेके कुछ आदमियोंको इकट्ठा करके, सिद्दियोंके जहाजी बेड़ेपर आग लगा दें।

पेनवलमें शिवाजीकी सेना पहुंचनेपर बम्बईके अङ्गरेजोंमें बड़ी घबराहट फैली। उन्होंने अपनी सेना मंझगांवके किनारे भेज दी। फिर जब उन्होंने कल्याणमें दौलतखांके पहुंचनेकी खबर सुनी तब उन्होंने अपनी सेना महीम पहुंचा दी और एक सामरिक नौका (फ्रिगेट) महीमकी खाड़ीमें रखी। पर सौभाग्य वश बम्बईके अङ्गरेजोंको इस अवसरपर विशेष बखेड़ेमें नहीं फंसना पड़ा, क्योंकि शिवाजीकी सेनाके समीप आनेपर पोर्चुगीजोंको यह भय उपस्थित हुआ कि कहीं शिवाजीकी सेना, साष्टी प्रान्तपर आक्रमण न करे। अतएव पोर्चुगीज गवर्नर अपने चुने हुए सैन्यदलके साथ थाना गया और चालीस अच्छी जहाज खाड़ीकी ओर भेजे। जब दौलतखांने देखा कि उसका मार्ग थानेमें रोका गया है तब उसने अपने पूर्व विचारोंके अनुसार कार्य क्रम कर दिया और पोर्चुगीज राज्यके गांवोंमें खूब लूट मार मचाई, कई गाँव नष्ट कर डाले। पीछे उसने अपनी सेनाका कुछ भाग धामम और सूरतकी ओर धावा करनेके लिये भेजा। इतनेमें ही उसे रायगढ़ आनेकी आज्ञा हुई, जिसका वह उल्लङ्घन नहीं कर सकता था और शीघ्र रायगढ पहुंचा।

शिवाजी इस बातपर बहुत बिगड़े हुए थे कि बम्बईके अङ्गरेजोंने अपनी पूर्व सन्धिको भङ्ग करके सिद्दियोंके जहाजी बेड़ेको वर्षा ऋतुमें मंझगांवमें ठहरने दिया है। उस समय अङ्गरेजोंके सन्धिभङ्गका कारण यह था कि औंजियरकी मृत्यु हो गयी थी। उनके पीछे बम्बईके अङ्गरेज कर्मचारियोंमें इतनी दूरदर्शिता

न थी कि वे शिवाजीसे मेल रख सकें। दूसरी बात यह थी कि उन्हें मुगल सम्राट् औरङ्गजेबका भी भय था। अतएव लाचार होकर, मुगल-सम्राट्के भयके कारण अंग्रेजोंने सिद्दियोंके जहाजी बेड़ेको मंझगांवमें शरण दी। शिवाजी भी अंगरेजोंकी इस कमजोरीको खूब अच्छी तरहसे जानते थे। अतएव उस समय उन्होंने अंगरेजोंपर आक्रमण करनेका विचार त्याग दिया। उन्होंने सोचा कि सूरत या जंजीरा जैसे दृढ़ स्थानोंको मुगलों और सिद्दियोंसे छीन लेना चाहिये जिससे "न रहेगा बांस न बाजेगी बांसुरी।"

इस विचारवश उन्होंने संवत् १७३५ वि०—सन् १६७८ ई० में दौलतखांके अधीन एक जहाजी बेड़ा जंजीराके घेरके लिये तैयार किया और जंजीराके समुद्री तटपर भयङ्कर अग्निवर्षा की। उस समय सिद्दी कासिम बम्बईमें था। उसके कर्मचारियोंमें पिछले वेतनकी रकम न मिलनेसे असन्तोष फैल रहा था। उस समय सिद्दी कासिमको आर्थिक कष्ट था, उसके पास धन न था। उसने सूरतके सूबेदारसे कुछ रुपया उधार मांगा पर वह भी समयपर नहीं पहुंचा। सिद्दोंके यहां इस प्रकार असन्तोष तथा आर्थिक कष्ट होनेपर भी जंजीराका पतन नहीं हुआ। शिवाजीको इस बार जंजीराके घेरेमें असफलता प्राप्त हुई और उन्होंने जञ्जीरासे घेरा उठा लिया।

जञ्जीरा आक्रमणमें सफलता प्राप्त न होनेके कारण शिवाजीने एक और तरकीब सोची। उन्होंने बम्बई बन्दरसे थोड़

मीलकी दूरीपर दाहिनी ओर दो छोटे टापू खांदेरी और उँदेरी पर आक्रमण करनेका विचार किया। खांदेरी और उँदेरीको अंगरेज केनरी और हेनरी कहते थे। खांदेरी और उँदेरी एक दूसरेसे दो या तीन मीलकी दूरीपर हैं। इन दिनों इन टापुओंमें आबादी न थी, लकड़ियां बहुत होती थीं। जब अंगरेज बम्बईमें आये, तब वे इन्हीं टापुओंसे ईंधन लेते थे। उन्हें उस समय इस बातका विचार नहीं हुआ कि ये टापू और भी किसी काम आ सकते हैं। दूरदर्शी शिवाजीने देखा कि ये दोनों स्थान बम्बई के पास हैं, नाके तथा मोर्चेकी जगह हैं, विशेषतः खांदेरीमें यह काम अच्छा हो सकता है। बम्बईमें आने जानेवाले जहाजोंका पता मिलता रहेगा। उन्होंने उक्त दोनों टापुओंको अपने अधि कारमें लाने और वहां एक मजबूत किला बनानेकी सोची। अतएव उन्होंने तीन सौ सैनिक और उतने ही मजदूरोंको उनके औज़ारों, युद्धके सामान तथा बारूद गोलेके साथ पहले खांदेरीकी तटबन्दी और मरम्मत करनेके लिये भेजे। जब अंग रेज़ोंने यह सुना तब उनके छक्के छूट गये, क्योंकि वे जानते थे कि खांदेरी उंदेरीमें तटबन्दी होनेसे उनकी स्वतन्त्रतामें बाधा उपस्थित होगी और भविष्यमें उन्हें बड़ी कठिनाइयोंका सामना करना पड़ेगा। अंगरेज़ोंने यह बहाना किया कि ये दोनों टापू हमारे हैं। पोर्तगीज़ोंने बम्बईके साथ ये दोनों टापू हमें दे दिये हैं। इसपर पोर्तगीज़ोंने भी अंगरेजोंकी देखा देखी कहा कि हमने ये दोनों टापू अंगरेज़ोंको नहीं दिये थे, बल्कि ये दोनों

टापू हमारे अधिकारमें रहे हैं। हम वहांपर अपनी बस्ती बसा नेका विचार ही कर रहे थे। पर यहां अच्छा पानी पीनेको न मिलनेसे हमने अपना यह विचार परित्याग कर दिया। शिवा जीने इन झगड़ोंकी ओर कुछ भी ध्यान नहीं दिया और वे तटबन्दीके काममें लगे रहे।

बम्बईके अङ्गरेजोंने देखा कि अब चुपचाप बैठनेसे काम नहीं चल सकता। उन्होंने शिवाजीसे युद्ध करनेकी ठानी। उन्होंने तीन लड़ाऊ जहाज और चालीस गोरे, शिवाजीको रोकनेके लिये भेजे, पर वे कुछ न कर सके। दस बारह दिनों तक खाड़ीके आसपास घूमकर वे जहाज वापिस लौट आये। किसी किसी इतिहास-लेखकने लिखा है कि शिवाजीके कर्मचारियोंने पहले तो बिना सामना किये अङ्गरेजोंको द्वीपमें आने दिया और जब वे घुस आये तब उन सबका शिरच्छेद कर डाला। लेकिन अङ्गरेजोंने हिम्मत न हारी, उन्होंने एक फ्रिगेट (लड़ाईके जहाजोंका बेड़ा) "रेवेंज" सोलह तोपोंके साथ भेजा। यह जहाज टापूके आसपास फिर चक्कर लगाने लगा। एक दिन एक अङ्गरेज लेफ्टिनैन्ट मदमें चूर होकर बिना किसी बातका आगा-पीछा सोचे हुए अपने कुछ साथियोंके साथ टापूके किनारे आ गया और अपने कुछ मल्लाहोंके साथ उतरा। शिवाजीके और अङ्गरेज लेफ्टिनेन्ट*के आदमियोंमें मुठभेड़ हुई। अङ्गरेज लेफ्टिनैन्ट अपने छः साथियों सहित मारा गया और बाकी उसके साथी कैद

* इस [illegible] [illegible] नाम थोरपे (Thorpe) था।

किये गये। मराठोंने अङ्गरेजी जहाजको खींचकर तटपर बांध लिया। अङ्गरेजी बेड़ेके दूसरे जहाज इस जहाजको बचानेके लिये पहुंच नहीं सके; क्योंकि उस समय पवनवेग अंगरेजोंके अनुकूल न थे। तूफानका बड़ा ज़ोर था। समुद्रकी उत्ताल तरंगका भी बड़ा वेग था, अतएव अंगरेजोंको खांडेरीके पास पहुंचनेकी हिम्मत नहीं हुई।

उस समय अंगरेजोंके सामरिक जहाज समुद्रमें गश्त लगाने और मराठोंके छोटे छोटे जहाजोंको रोकनेमें समर्थ नहीं हो सके। मराठोंके छोटे छोटे जहाज रातके समयमें टापूमें चक्कर लगाते थे और जितनी जल्दी हो सकती थी, युद्धका तथा तद्-बन्दीका सामान लेकर पहुंच जाते थे। पर अंगरेज इससे विचलित नहीं हुए, उन्होंने कम्पनीकी स्वीकृतिसे मराठोंको खांडेरी उंदेरीसे हटानेके लिये कुछ जहाज भाड़ेके भी लिये थे। अन्तमें उन्होंने आठ जहाज, एक फ्रिगेट और दो सौ यूरोपियन सैनिक और कुछ मल्लाहोंको मराठोंका सामना करनेके लिये भेजा। कप्तान मिञ्चिन और केग्विन इस जहाजी-बेड़ेके मुखिया थे।

शिवाजीकी भी जल-सेना, खांडेरीके सामने चौलमें, दौलत खाँकी अध्यक्षतामें ठहरी हुई थी। यहांसे छोटी छोटी डोंगियोंमें मराठे सैनिक नित्यप्रति अङ्गरेजी सेनासे छेड़छाड़ किया करते थे। एक बार दौलतखाँ चौलसे अपनी नाविक सेनाका लंगर उठाकर धीरे धीरे इस सूबेसे खांडेरीकी ओर बढ़ा कि अङ्गरेजों

सेनाको इतनी देरीसे खबर मिली कि वह मराठी सेनाका पीछा नहीं कर सकी और लौटती समय दौलतखाँने अङ्गरेजोंके एक जहाजको छीन लिया और उस जहाजको रस्सेमें बाँधकर खींच लाया। इससे अङ्गरेजोंमें बड़ी घबराहट फैली। अङ्गरेज और मराठोंमें विकट युद्ध हुआ। सम्वत् १७३६ वि०—१६ अक्टूबर सन् १६७८—६०को यह युद्ध हुआ। दौलतखाँकी अधीनतामें मराठोंके जहाजी बेड़ेने अत्यन्त दृढ़ता और वीरतापूर्वक अङ्गरेजी बेड़ेपर आक्रमण किया। पहले पहल अङ्गरेजोंको हारना पड़ा,परन्तु 'रिवेंज' नामक अङ्गरेजोंके अगो जहाजके विशेष ज़ोर लगानेपर मराठे लोग पीछे हटे और नागोथान की खाड़ीमें घुस गये। यद्यपि इस युद्धमें मराठोंकी नाविक सेना परास्त हुई तो भी उसमेंसे कुछ लोग अन्धेरेमें अङ्गरेजोंसे छिपाकर खांडेरीके मराठोंको अपनी छोटी छोटी डोंगियोंसे भोजनकी सामग्री पहुंचाते थे।

इस युद्धमें मराठोंकी नाविक सेना अङ्गरेजोंसे कैसे परास्त हुई? इस विषयमें हम अपनी ओरसे कुछ न कहकर आर० ओ० स्ट्रेची (R O Strachey) ने अपनी पुस्तक Keigwin's Rebellion में जो कुछ लिखा है उसका संक्षिप्त भावार्थ हम यहाँ प्रकाशित करते हैं। उक्त पुस्तक लेखकने लिखा है कि "कप्तान मिञ्चिन और केग्विनने मराठोंसे बड़ी दगाबाज़ी की। उन्होंने अपने जहाजोंकी चाल ऐसी कर दी कि मराठोंने समझा कि "रिवेंज" जहाज टकरा गया है। शिवाजीके सैनिक

अध्यक्षने अङ्गरेजी जहाजोंकी ऐसी गति देखकर समझा कि अङ्गरेज आत्मसमर्पण करना चाहते हैं। यह खयाल करके उसने अपनी डोंगियाँ अङ्गरेजोंको लेनेके लिये, उनके जहाजोंके पास भेजीं। जिस समय डोंगियाँ अङ्गरेजोंके जहाजोंके पास पहुंची, उन्होंने डोंगियोंमें बैठे हुए मराठोंपर तोपें दाग दीं, जिससे मराठोंको पीछे हटना पड़ा।" शिवाजीकी सेना चाहे जैसे परास्त हुई हो पर यहां हम यह कहे बिना नहीं रह सकते हैं कि यदि शिवाजी अङ्गरेजोंके साथ ऐसी धोकेबाजी करते तो न मालूम ग्रोट डफ आदि अंगरेज इतिहास-लेखक शिवाजीकी निन्दामें जमीन आसमान एक कर देते। पर इस दगाबाजीके बारेमें किसी अंगरेज इतिहास-लेखकने अपने भाइयोंकी निन्दामें एक शब्द भी लिखना पाप समझा है।

शिवाजी भी उन लोगोंमेंसे न थे जो किसी अड़चनके आ जानेपर अपने कर्त्तव्यसे विमुख हो जाते हैं। उन्होंने अपने पांच हजार सैन्यदलको कल्याणसे होकर बम्बईपर चढ़ाई करनेकी आज्ञा दी। परन्तु पोर्त्तगीजोंने पहलेके समान मराठी सेनाको थानेमें होकर जानेकी आज्ञा नहीं दी। जब बम्बईके अङ्गरेजोंने सुना कि शिवाजीकी सेना उत्तरसे बम्बईपर आक्रमण करनेके लिये आ रही है तब वे बहुत घबराये। अंगरेज सोचने लगे कि यदि पोर्त्तगीजोंने मराठोंको थानेमेंसे मार्ग दे दिया अथवा मराठोंने ही किसी प्रकारसे अपना मार्ग कर लिया तो बड़ी कठिनाई पड़ेगी। पर ै प्रकारसे भी रक्षा

सकेगी। उस समय अंगरेजोंकी ऐसी परिस्थिति थी कि "दुविधामें दोऊ गये, माया मिली न राम।" क्योंकि उस समय अंगरेजोंकी जल और स्थल—दोनों सेनायें खांडेरीके घेरेमें लगी हुई थीं। उनके पास उस समय इतनी सेना भी न थी कि वे मझीमकी खाडीमें पहले वारके समान भी दिखावटी तौरपर अपनी रक्षाके लिये कुछ सेना रखते। ऐसी परिस्थितिमें उन्हें सिवा इसके और कोई चारा न था कि वे शिवाजीके पास रायगढ़ अपना वकील सन्धि करनेके लिये भेजते, अतएव उन्हें ऐसा ही करना पड़ा।

इस बीचमें खांडेरीकी सदबन्दी दृढ़ हो गयी, जिससे मराठोंका बल और भी बढ़ा। उन्होंने खांडेरी किलेपर तोपें चढ़ाकर अंगरेजोंके बेड़ेपर गोले चलाये, तब अंगरेजोंका बेड़ा वहांसे उठकर नागो थानाजी खाड़ीके मुहानेपर आकर ठहर गया। नवम्बरमें सिद्दियोंका बेड़ा भी सूरतके अधिकारियोंसे मैत्री करके और सामान आदि लेकर खांडेरीके पास अंगरेजोंसे आ मिला। परन्तु अंगरेज और सिद्दी दोनों ही अपने स्वार्थसाधनमें जुटे हुए थे। दोनों ही खांडेरीको अपने पास रखना चाहते थे। इसलिये दोनोंका मिलकर खांडेरीपर आक्रमण करनेका विचार बहुत दिनोंतक स्थिर न हो सका। सिद्दी कासिमने देखा कि खांडेरीपर आक्रमण करनेमें अंगरेज उसका साथ नहीं दे रहे हैं तब उसने ही खांडेरीपर आक्रमण किया। मराठोंने ऐसी विकट प्रतिक्रिया की कि सिद्दियोंको कुछ

भी दाल न गल सकी। अंगरेजी बेड़ा इस युद्धमें तटस्थ रहा। उसने सिद्दियोंका साथ नहीं दिया। इस बीचमें कासिमको पता लगा कि अंगरेजोंने अपना एक वकील रायगढ़ शिवाजीके पास सन्धि करनेको भेजा है। तब उसने चुपचाप बम्बई बन्दरकी ओरका रास्ता पकड़ा। वहांसे वह शिवाजीके राज्यमें उत्पात मचाने लगा। वहाँ उसने चार गावोंमें आग लगा दी और बहुतसे आदमियोंको पकड़ कर बम्बई लाया।

इस समय दौलतखां नागो थानाकी खाड़ीमें था। वहांसे वह खांडेरीको युद्ध सामान रसद आदि भेजता था। जब उसने सिद्दी कासिमके बम्बई आगमनका समाचार सुना तब वह उसका सामना करनेको तैयार हुआ। उसने कुछ थोड़ेसे जहाज खाड़ीके मुहानेपर सिद्दी और अंगरेजोंके जहाजोंको रोकनेके लिये रखा। सिद्दीने देखा कि कहीं मराठे उसके जहाजी बेड़ामें आग न लगा दें, अतएव वह वहांसे चुपचाप अपने जहाजी बेड़ा समेत खिसक गया। वहां खाली अंगरेजी बेड़ा रह गया। सिद्दी फिर खांडेरीकी ओर आया और अग्नि वर्षा की पर कुछ फल नहीं हुआ। मराठे अपने स्थानसे टलसे मस न हुए, सिद्दीको विजय लाभ नहीं हुई।

खांडेरीमें अपनी दाल गलती न देखकर सिद्दी कासिमने अपनी सेना ऊंडेरीमें उतारी और उसे अपने अधिकारमें ले लिया। नागो थानामेंसे दौलतखां भी सिद्दी कासिमका सामना करनेको पहुंच गया। यद्यपि अंगरेजोंके जहाज लड़ाईकी समाप्ति

पर पहुंचे। दौलतखांने उँदेरी टापूके एक ऊंचे स्थानपर अपनी सेना रखी और सिद्दियोंकी सेनापर गोले बरसाये। उधर खांडेरीके किलेसे भी मराठोंने सिद्दियोंकी सेनापर अग्नि वर्षा की पर इस युद्धमें मराठोंको सफलता प्राप्त नहीं हुई। चार घण्टेतक युद्ध हुआ, कई इतिहास लेखकोंने लिखा है कि इस युद्धमें जय पराजयका कुछ भी निश्चय नहीं हुआ कि कौन जीता और कौन हारा। पर इसमें सन्देह नहीं कि इस युद्धमें मराठोंकी विशेष क्षति हुई। सिद्दियोंने मराठोंके चार बड़े और कई छोटे जहाज छीन लिये। मराठोंके पांच सौ आदमी सिद्दियोंकी कैदमें आए। स्वय दौलतखां इस युद्धमें बुरी तरहसे घायल हुआ। कहा जाता कि इस युद्धमें सिद्दियोंकी विशेष क्षति नहीं हुई। उँदेरीसे मराठोंका जहाजी बेड़ा राजपुरकी ओर चला गया।

इस समय रायगढ़में अंगरेज़ोंके एलचीकी और शिवाजीकी सन्धि विषयक बातें होने लगीं। शिवाजीका भी एक वकील उन दिनों रायगढ़से बम्बईके अंगरेज़ोंके पास पहुंचा हुआ था। उसने बम्बईके अंगरेज़ोंसे कहा कि तुम हब्शी लोगों (सिद्दियों) से मिलकर काम करते हो और इसका उदाहरण खांडेरी का युद्ध है। इसपर बम्बईके गवर्नरने अपना जहाजी बेड़ा खांडेरीसे वापिस मंगवा लिया और शिवाजीके वकीलको विश्वास दिलाया कि सिद्दी मराठोंपर आक्रमण न करनेकी प्रतिज्ञा करेंगे, तभी उन्हें हम बम्बई बन्दरमें स्थान देंगे, अन्यथा नहीं।

सिद्दीने देखा कि अंगरेजोंकी मराठोंसे सन्धि हो गयी है तब उसने सन्धिमें विघ्न उपस्थित करनेकी चेष्टा की। उसने मराठोंके जो जहाज छीन लिये थे, उन जहाजोंको बम्बई-बन्दरमेंसे ले जानेके लिये अंगरेजोंसे आज्ञा मांगी। बम्बईके अंगरेजोंने सिद्दीकी यह प्रार्थना मंजूर नहीं की। उन्होंने उसे बम्बई-बन्दरमें होकर जहाज ले जानेकी आज्ञा नहीं दी। इसपर सिद्दी अत्यन्त क्रोधित हुआ और वह पेनकी खाडीमेंसे जबरदस्ती अपने जहाजोंको ले गया। पेन खाडीके किनारोंके गांवोंमें उसने खूब लूट मार मचायी। कहते हैं कि इस लड़ाईमें सिद्दी एक हजार आदमियोंको पकड़ ले गया।

सिद्दियोंके इस उत्पातके कारण सम्वत् १७३७ वि०—सन् १६८० ई० के मासमें शिवाजीकी बम्बईके अङ्गरेजोंसे फिर सन्धि हुई। इन सन्धिमें सन् १६७१ ई० की सन्धि न दोनों ओरसे स्वीकार की गयी। इस सन्धिके अनुसार अङ्गरेजोंने प्रतिज्ञा की कि "वर्षा ऋतुमें हम बम्बई-बन्दरमें सिद्दियोंके जहाजी बेड़ेको कभी न ठहरने देंगे और यदि सिद्दियोंके जहाजी-बेड़ेके ठहरनेकी आवश्यकता होगी तो इसका उचित प्रबन्ध करेंगे और विशेष सावधान रहेंगे कि सिद्दी शिवाजीके राज्यमें किसी प्रकारका उत्पात न करें।"

इस सन्धिके थोड़े ही दिनों पीछे शिवाजी इस संसारसे चल बसे, जिससे वे सिद्दियोंको पूर्ण रूपसे हरा न सके। उनकी मृत्युके पीछे मराठे, अङ्गरेज और सिद्दियोंमें पारस्परिक अनेक

युद्ध हुए, जिनके विषयमें यहां उल्लेख करनेकी आवश्यकता नहीं है। "मराठा और अंगरेज" नामक पुस्तकमें लिखा हुआ है कि बम्बईके अंगरेजोंने कई बार डाइरेक्टरोंसे खांडेरी उँदेरीके लिये युद्ध करनेकी आज्ञा मांगी, पर डाइरेक्टरोंकी ओरसे प्रत्येक बार उन्हें यही उत्तर मिलता था कि "खांडेरी-उँदेरीके लिये हमें युद्ध करनेकी जरूरत नहीं है, यह कई बार लिखा जा चुका है। इसके सिवा इस प्रकार युद्ध करनेका हमारा व्यवसाय भी नहीं है और न उसमें लाभ ही है, इसलिये हम बार बार यही कहते हैं कि जिस तरहसे भी हो युद्ध बन्द करो।" डाइरेक्टरोंके इस उत्तरसे बम्बईके अंगरेजोंको बड़ा दुःख हुआ। उन्होंने विलायतको एक पत्र भेजा और उसमें लिखा कि "यहांके लोग इन कारणोंसे हमें घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं कि तुम (अंगरेज) इतनी शेखी किस बातपर मारते हो? तुमने कौनसी ऐसी विजय प्राप्त की है? तुम्हारी तलवारने कौनसा ऐसा बड़ा काम किया है? कौन तुम्हारी आज्ञा मानता है? तुम्हारे पास है ही क्या? डच लोगोंने तुम्हें शह (परास्त) दी ही थी। पोर्तगीजोंने कुछ पुरुषत्वके काम भी किये थे, परन्तु तुम्हारी तो जो देखो सो हंसी उड़ाता है। बम्बई भी तो तुमने जीतकर नहीं ली और फिर उसके रखनेका भी तुममें सामर्थ्य नहीं है। इतना होनेपर भी तुमलोग जो लड़ाई करनेकी शेखी बघारते हो और हमारे राजाकी बराबरी करते हो, सो किस बीरतापर?" पाठक अंगरेजोंके इन शब्दोंको पढ़कर सोच लें कि उनकी उस समय कैसी परिस्थिति थी और शिवाजी और मराठोंका उनपर किस प्रकारका रोब छा गया था।

बीसवां परिच्छेद

शासन और सेना

"नृप प्रताप ते देशमें, रहे दुष्ट नहिं कोय,
प्रगटै तेज दिनेशको, तहां तिमिर नहिं होय।
× × × × × ×
"राम राजा राम परजा राम साहूकार है,
बसे नगरी जिये राजा धर्म्मका व्यवहार है।"

मृत्युके समय शिवाजीने चार सौ मीलका लम्बा और चौड़ा राज्य छोड़ा था। कर्नाटकका दक्षिणी अर्द्धभाग भी उनके अधिकारमें आ गया था। तञ्जोर भी उनके राज्यमें सम्मिलित था, नर्मदासे कोकणतक उनकी विजय पताका फहराती थी। परन्तु इतने बड़े राज्यका प्रबन्ध भी उन्होंने अनुपम किया था। शिवाजीमें अनेक गुण थे, उनमें सैन्य प्रबन्धादि शासनकी योग्यता भी थी। प्रथम नेपोलियनकी भांति, शिवाजी भी अपने समयके संगठन विधिके एक अद्वितीय वेत्ता और शासनकी प्रबन्धकारिणी संस्थाओंके निर्माण करनेवाले हुए थे और यह प्रबन्ध-सम्बन्धी योग्यता ही उनकी सफलताकी कुञ्जी थी। उनके शासनसे सम्बन्ध रखनेवाली संस्थाओंमें एक और विशेषता थी कि उन्होंने अपने जमानेकी, मुसलमान अथवा हिन्दुओंकी, शासन प्रणालियोंसे शिक्षा ग्रहण नहीं की थी। क्योंकि उन्होंने जिस

प्रकारकी शासन प्रणाली प्रचलित की थी, वैसी न तो उस समय हिन्दुओंमें प्रचलित थी और न मुसलमानोंमें ही थी। शिवाजी पौराणिक कथाओंके बड़े प्रेमी थे, इसलिये सम्भव है कि उन्होंने हिन्दुओंकी पुरानी शासन पद्धतिसे अपनी तत्कालीन परिस्थितिके अनुसार शिक्षा ग्रहण की हो। पर यह बिना किसी सङ्कोचके कहा जा सकता है कि उनकी शासन प्रणाली अनुपम थी। प्राचीन और अर्वाचीन इतिहासमें शिवाजीकी शासन प्रणालीके ढंगकी शासन प्रणालीके बहुत कम उदाहरण मिलते हैं। उनकी स्थापित प्रबन्ध प्रणाली और विविध शासन संस्थाएं विशेषकर अध्ययन और ध्यान देनेके योग्य हैं। ये शासन संस्थाएं उनके भावकी गम्भीरता और अनुपम बुद्धि चातुर्यका अच्छा परिचय देती हैं। अतएव इनके विषयमें भी यहां कुछ लिखना अनुचित न होगा।

शिवाजीने राज्यप्रबन्ध सम्बन्धी चार संस्थाएं नियत की थीं। १—अष्ट प्रधान-मण्डल। २—फौज और जहाज। ३—किले। ४—भूमिकरकी पद्धति।

राज्यरक्षा और राज्य-वृद्धिके उद्देश्यको ध्यानमें रखकर शिवाजीने प्रधान-मण्डलकी रचना की थी। राज्यके भिन्न भिन्न काम भिन्न भिन्न अधिकारियोंको सौंप रखे थे। ऐसे अधिकारी आठ थे। ये लोग शिवाजीकी देख-रेखमें राज्यका सब प्रबन्ध करते थे। शिवाजीके राज्याभिषेकसे पहले प्रधान मण्डलके नाम फारसीके थे, राज्याभिषेकके अवसरसे उनके संस्कृत नाम

फ़ारसी नाम,	संस्कृत नाम,	काम
१—पेशवा—	पन्त प्रधान—	मुख्य दीवानगीरी
२—मजूमदार—	पन्त अमात्य—	राज्यका वसूल और हिसाब
३—सुरनीस—	पन्त सचिव—	राज्यके दफ्तरकी सँभाल
४—वाकनीस—	मन्त्री—	राजाके खानगी कार्यकी देखभाल
५—दबीर—	सुमन्त—	परराज्यसे व्यवहार रखना
६—सरनौबत—	सेनापति—	समस्त फौजकी व्यवस्था रखना
७	न्यायाधीश—	न्याय विभागका मुखिया
,,	पण्डितराव—	धर्मविभागका मुखिया

इन आठों पदोंपर क्रमसे निम्नलिखित व्यक्ति शिवाजीके समयमें थे। [१] मोरो त्रिमल पिंगले [२] आवजी और नीलो सोनदेव [३] आणाजी दत्तो [४] दत्ताजी पन्त वकील [५] सोमनाथ पन्त [६] प्रतापराव गुजर और हम्मीरराव मोहिते [७] बालाजी पन्त और नीराजी रावजी [८] रघुनाथ पन्त उपाध्याय। इनका वेतन इस प्रकार था—पेशवाको १५००० हुण वार्षिक, पन्त अमात्यको १२०००, पन्त सचिव तथा अन्य पदाधिकारियोंको १०००० हुण वार्षिक। हुण सिक्का लगभग साढ़े तीन रुपयेका था।

(१) इस प्रधान मण्डलका प्रधान पेशवा था। शिवाजीके नीचे पेशवाका ही पद था। पेशवा राज्यके सब कर्मचारियोंके कामकी देखभाल करता था। वह राजसिंहासनके पास दाहिनी ओर प्रथम स्थानपर बैठता था। मुल्की और सैनिक व्यवसायपर

उसकी देख भाल रखती थी और राज्यकी प्रत्येक घटनाके लिये यह उत्तरदायी होता था।

(२) सेनापति अथवा सरनौबतके हाथमें समस्त सेनाका सञ्चालन था और यह सिंहासनकी दाईं ओर प्रथम बैठकपर बैठता था। सेनापति दो होते थे, एक अश्वारोही सेनाका सेनापति और एक पैदल सेनाका सेनापति। घुड़सवार सेनापतिकी देख रेखमें ही पैदल सेना होती थी। पैदल-सेनाके सेनापतिको प्रधान मंडलमें स्थान नहीं दिया जाता था।

(३) प्रधान अमात्य और मजुमदार, अर्थ-विभागका प्रधान होता था। यह मुल्की और सैनिक हिसाबकी और प्रत्येक किलेके हिसाबकी जांच पड़ताल करता था। राज्यके समस्त प्रान्तोंके हिसाब परीक्षकोंके कार्यकी यह जांच करता था। राज्यके समस्त जमा खर्च उसके अधीन थे। राज्यके समस्त प्रान्तोंके आय-व्ययमें घटाने-बढ़ाने, भूल-चूक सुधार नेमें उसे पूर्ण अधिकार था। यदि किसी प्रान्तको किसी विशेष व्ययकी आवश्यकता होती अथवा किसी व्ययके घटान की जरूरत पड़ती तो इस अमात्य द्वारा ही शिवाजीसे मंजूरी लेनी पड़ती थी। पन्त अमात्यके नीचे कितने ही फड़नीस सहायक हिसाब लेखक और परीक्षक होते थे। सहायक हिसाब लेखक और परीक्षकोंके अतिरिक्त उसके अधीन पदुवल फ़ड़ होते थे। प्रत्येक जिले, किले और रेजीमेण्टके हिसाब परीक्षकोंका नियन्त्रण उसके अधीन था।

(४) पन्त सचिव अथवा सुरनीसका कार्य राज्यके समस्त दफ्तरोंके कागज-पत्रों, रजिस्ट्रार आदिकी देख भाल करना था। केन्द्र राजधानीसे राज्यके अन्य प्रान्तोंके शासक अथवा जिलेश्वरोंके अध्यक्ष आदिको जो चिट्ठी पत्री अथवा खरीता भेजे जाते थे, अथवा इनके यहांसे जो चिट्ठी पत्री और खरीते केन्द्रस्थानमें आते थे, उन सबकी जांच पड़ताल यह करता था। पन्त सचिवका पद एक रजिस्ट्रारके समान था। मुल्की नागरिक अथवा सैनिक किसी कर्मचारीको जो इनाम, सनद और कमीशन दिया जाता था, इन सबका ब्यौरा पन्त सचिवके कार्यालयमें रहता था। पन्त सचिवका दफ्तर भी बहुत बड़ा था उसके अधीन भी बहुतसे क्लर्क रहते थे। कोई भी सरकारी कागज-पत्र उसकी मुहर और दस्तखत बिना प्रामाणिक नहीं समझा जाता था। पन्त अमात्य और पन्त सचिव दोनों ही अपने प्रतिनिधि मराठा-राज्यके दूसरे प्रान्त और किलोंमें अपने अपने अधीनस्थ विभागोंका निरीक्षण करनेके लिये भेजते थे। इन निरीक्षकोंको अधिकार था कि वे अपने अधीनस्थ कर्मचारियोंको उनके दोष और त्रुटियोंके लिये जुर्माने आदिका दण्ड दे सकते थे। पन्त अमात्य और पन्त सचिव भी अपने अधीनस्थ विभागोंके प्रान्तिक केन्द्रस्थानोंका निरीक्षण करनेके लिये जाते थे।

(५) मंत्री अथवा वाकनीसका काम प्राइवेट सेक्रेटरीका था। यह खानगी (निजी) कागज पत्र, चिट्ठी पत्री आदि रखता

था और व्यवस्था करता था। यह शिवाजीकी निजी सेना और खानगी कार्योंकी भी देख-भाल करता था। इसके मधीन कई प्रकारके कारखाने थे। जैसे खानगी मालगोदाम और खानगी कोष (खजाना) इत्यादि थे। सब कारखाने, शाला गार, राजकीय मालगोदाम, कमसरियट इत्यादि अठारह कार खाने और सरकारी खजाना, टकसाल, घुड़साल, तोपखाना आदि बारह महाल या कोषोंसे अलग थे।

(६) सुमन्त और दबीरका कार्य परराष्ट्र सचिवके सम न था। दूसरे राज्योंको चिट्ठी पत्री भेजना, उनके यहाँ राजदूत आदि भेजना और उनके यहाँसे जो चिट्ठी-पत्री आवे अथवा राजदूत आयें सबकी देख भाल और सम्हाल करना इसका काम था।

(७) न्यायशास्त्री और पण्डितरावका कार्य धार्मिक विषयोंमें परामर्श देना और आवश्यकता होनेपर शिवाजी महाराजको शास्त्रोंका मर्म समझाना था। राज्यकी ओरसे देव स्थानों आदिको जो दान दिया जाता था, उसकी व्यवस्था रखनी पड़ती थी। राज्यकी ओरसे जो धार्मिक कृत्य होते थे, उनका भी निरीक्षण करना पड़ता था। न्यायशास्त्री अथवा पण्डितरावपर यह भी भार था कि फौजदारी मामलोंमें जो दण्ड दिया जाय, उसके विषयमें वे विचार करें कि वह शास्त्रोंके अनुकूल है या प्रतिकूल।

(८) न्यायाधीश प्रत्येक मुकदमे—दीवानी और फौजदारी

मामलोंकी देख भाल और जांच करता था। पञ्चायतों और सूबेदारोंके यहांके फैसलोंके विरुद्ध जो अपीलें शिवाजी महाराजके यहां होतीं, उनपर न्यायाधीश विचार करता था। साक्षियोंके हो जानेपर फैसलोंके अनुकूल या प्रतिकूल वह निर्णय करता था। अमात्य, सचिव और मन्त्री ये तीनों क्रम से पेशवाके पास बैठते थे। पण्डितराव, सेनापति, सुमन्त और न्यायाधीश आदि बाई ओर बैठते थे।

ऊपर लिखे हुए विभागोंके अनुसार शिवाजीके राज्यका प्रबन्ध होता था। प्रत्येक प्रधान अपने कार्यको परिश्रम और ईमानदारीसे करता था। प्रत्येक प्रधानकी यही इच्छा रहती थी कि उसे अपने कार्यमें सफलता प्राप्त हो। प्रत्येक प्रधानको अपने अधीनस्थ विभागकी व्यवस्था करनेमें पूर्ण स्वतन्त्रता थी। पर जब कभी कोई गम्भीर विषय उपस्थित होता तो प्रधान लोग शिवाजीसे परामर्श करते थे। यदि शिवाजी और किसी प्रधानकी सम्मति न मिली अथवा कोई गम्भीर विषय उपस्थित होता तो प्रधान-मण्डलमें विवादग्रस्त विषय पूर्णरूपसे विचारार्थ उपस्थित किया जाता था। प्रधान-मण्डलमें वाद विवाद हो जानेके पीछे जो कुछ निर्णय होता था, उसीके अनुसार कार्य किया जाता। यदि कोई ऐसा मामला उपस्थित होता, जिसका सम्बन्ध समस्त राज्यसे होता तो उसका विचार प्रधान-मण्डल में होता था। अष्ट प्रधानोंकी कौंसिलके निर्णयके अनुसार कार्य होता था। शिवाजीको अपने अष्ट प्रधान मण्डलमें पूर्ण

खरीते भावे उनका मराठी अनुवाद करे अथवा शिवाजी जिस किसीको फारसीमें चिट्ठी पत्री और खरीते भेजें, उनको फारसी में लिखे। शिवाजीका पोतनीस अर्थात् खजानची श्रीगोंदके शेपया नायक पांडेका पौत्र था। पाठक यह भूले न होंगे कि शिवाजीके पितामह मालोजीको जो गड़ा हुआ धन मिला था, वह उन्होंने श्रीगोंदके शेपया नायकके यहां ही रखा था। उस समय राजा मालोजी और श्रीगोंदके शेपया नायक पांडे दोनोंमें यह तय हो गया था कि यदि किसी समय राजा मालोजी किसी के राज्यके स्वामी होंगे तो शेपया नायकको कोषाध्यक्ष अवश्य बनायेंगे। राजा मालोजी और राजा शाहजी स्वाधीन नरेश नहीं हुए, जो इस वचनको निभाते। परन्तु शिवाजी स्वाधीन नरेश हुए और उन्होंने अपने पितामह मालोजीके इस वचनको निभाया और श्रीगोंदके शेपया नायकके पौत्रको अपना कोषाध्यक्ष नियत किया।

ऊपर लिखे हुए विभागोंके अतिरिक्त और भी कई विभागों की व्यवस्था थी जो मन्त्री अथवा वाकनीसके अधीन थे। ये विभाग दो श्रेणीमें विभक्त किये गये थे। एक श्रेणीमें बारह महालय और दूसरी श्रेणीमें अठारह कारखाने अथवा शालाएं थीं। निम्नलिखित बारह महालय अर्थात् कोष थे —

अन्तःपुर (जनाना) द्रव्य मण्डल, धान्यागार, पशुधन, गोधन आरामक्षेत्र, टंकशाल महाल, शिविका आदि यान महाल, इमारत (राज्यकी ओरसे मकान तथा अन्य इमारतोंको बनानेका काम

रत्नशाला विभाग), शस्त्रागार (तोशखाना), महाल सौदागरी (इसमें जो माल खरीदा आता था, उसका खाता रहता था), प्राइवेट वाडी गार्ड (निज शरीर-रक्षकदल) ।

इन बारह महालयोंके अतिरिक्त अठारह शालायें थी — गजशाला (फीलखाना), मल्लशाला, धान्यसंग्रह शाला (अनाजकी वस्तियाँ), भेरी दुंदुभिशाला (नगाड़खाना), यन्त्रशाला (तोपखाना) वैद्यशाला (शरबतखाना), पानीशाला, उष्ट्रशाला (शुतुरखाना), शिबिरशाला (फरासखाना,) आखेट शाला (शिकारखाना), रत्नशाला (जवाहरातखाना) पाकशाला (रसोईखाना), शस्त्रशाला (हथियारखाना), तांबूलशाला (पान, तम्बाकू आदिका प्रबन्ध), रथशाला, लेखनशाला, नाटकशाला और सामग्रीशाला । इन तीसों विभागोंपर दारोगा रहते थे, जो इनका प्रबन्ध करते थे। दारोगाके अतिरिक्त इन विभागोंमें बहुतसे क्लर्क और पहरेदार भी काम करते थे ।

माता जीजाबाईपर शिवाजीके घर गृहस्थीके प्रबन्धका भार था। बहुतसे होशियार, योग्य नौकर, दासियाँ जीजाबाईके अधीन थीं। घरेलू काम करनेके लिये भी बहुतसे प्यादे, पैदल सिपाही, पुजारी, कथा और हरिकीर्त्तन करनेवाले पौराणिक तथा धर्म सम्बन्धी कृत्य करानेवाले कर्मकाण्डी ब्राह्मण थे। शिवाजी महाराजकी जो निजी सम्पत्ति थी, उसके प्रबन्धका भार उनकी माता जीजाबाईपर ही था। जीजाबाईका भी एक दीवान अथवा जेनरल मैनेजर रहता था। दीवानके अतिरिक्त

उनके एक चिटनीस (सेक्रेटरी,) फड़नीस (बहीखाता-लेखक) और एक पटनीस (खजानची) आदि कर्मचारी थे। इन कर्मचारियोंके अधीन और भी सहायक कर्मचारी थे। शिवाजी इस बातका बहुत ध्यान रखते थे कि उनकी माता जीजाबाईको किसी प्रकारका कष्ट न हो।

भिन्न भिन्न कार्योंके लिये भिन्न भिन्न विभाग थे और प्रत्येक विभागके लिये एक एक अधिकारी उत्तरदायी होता था। शिवाजी के समयमें सब अधिकारी योग्यतानुसार मिलते थे, परंपरागत कोई भी पद किसीको नहीं मिलता था। वे इस प्रथाके बहुत विरोधी थे कि जिस पदपर बाप हो उसी पदपर उसका पुत्र नियुक्त किया जाय। उस कुटुम्बका भी कोई आदमी उस पदपर नहीं रखा जाता था। शिवाजीके समयमें वेतन नगद मिलता था, वेतनके बदले जागीर बहुत कम मिलती थी, इसका कारण यह था कि जागीरदार लोग राज्यकी भलाईकी ओर कम ध्यान देते हैं, अपने स्वार्थकी ओर उनका विशेष ध्यान रहता है। समय पाकर वे लोग स्वतन्त्र हो जाते हैं। भारतके इतिहासमें ऐसे बहुतसे उदाहरण मिलते हैं। अतएव जागीर देनेकी प्रथा उनके राज्यमें बहुत कम थी, किसी विशेष महत्वके कार्यके लिये ही कभी कभी किसी सरदारको जागीर मिलती थी, देवालय अथवा अन्य दान पुण्यके कार्योंके लिये अवश्य ही जागीर दी जाती थी।

किले—सह्याद्रिके पहाड़ी प्रदेशोंमें,

और पूर्व ओर मैदानमें अनेक टूटे फूटे किले पाये जाते हैं। इन मेंसे लगभग तीन चार सौ किले शिवाजीके बनवाये हुए अथवा मरम्मत कराये हुए हैं। इन किलोंमें अनाज, गोलाबारूद आदि सामान यथेष्ट रहता था। किलेपर जानेके मार्ग बहुत ही पेचीदे और बेढब हुआ करते थे। ये कठिन पहाड़ियोंपर बनवाये जाते थे, जिससे सहजमें ही शत्रु उनमें पहुँच न सकते थे। किलोंमें सब प्रकारका प्रबन्ध रहता था, इस कारण घेरा पड़नेपर भी शत्रुका कुछ बस नहीं चलता था। इन किलोंमें ऐसे गुप्त मार्ग थे कि सङ्कटके समयमें भीतरसे लोग बाहर निकल आते और शत्रुको इसका बहुत कम पता लगता था। थोड़ीसी सेनासे शत्रुके हाथसे राज्य बचानेकी युक्ति इन किलोंके कारण सफलीभूत हुई। शिवाजीकी मृत्युके पीछे जब महाराष्ट्र-राज्यपर अनेक सङ्कट आये थे तब ये किले सङ्कट निवारणमें विशेष सहायक हुए थे। प्रत्येक गढ़पर एक मराठा हवलदार रहता था। उसके नीचे ब्राह्मण सबनीस और परभू (प्रभु) कारखानीसका काम करते थे। उन तीनोंके जिम्मे किला और उसके नीचेके प्रदेशकी रक्षा वालीका काम, वसूलीका काम, गोलाबारूद और मरम्मत वगैरहके, सामान पहुंचानेका काम अलग अलग बंटा हुआ था। इस कारण सब अपना अपना काम प्राणपणसे करते थे।

समासदने लिखा है कि शिवाजीके राज्यमें नये और पुराने किले दो सौ चालीस थे, जिनमें ७६ मैसूर और मद्रासमें थे। चिटनीसने २८० लिखे हैं।

मुल्की प्रबन्ध प्रणालीके अनुसार स्वराज्य कई प्रान्तोंमें विभाजित था। पूनाके आसपासकी पैत्रिक जागीरके अतिरिक्त (१) मावलका प्रान्त था, जिसमें मावल, सासवड़, खेडके आधुनिक ताल्लुके शामिल थे और ये अठारह बड़े बड़े पहाड़ी गढ़ोंसे सुरक्षित थे। (२) वाई, सतारा और कराडके प्रान्त थे जो वर्त्तमान सतारा ज़िलेके पश्चिमी भागोंके नाम थे और जिनकी रक्षा पन्द्रह किलोंके द्वारा होती थी। (३) पन्हालाका प्रान्त था, जिसमें कोल्हापुरके पश्चिमी हिस्से शामिल थे और जिसमें तेरह किले थे (४) दक्षिण कोंकणका प्रान्त जो अब रत्नागिरीके नामसे प्रसिद्ध है। इस प्रान्तमें अट्ठावन पहाड़ी किले और सामुद्रिक गढ़ थे। (५) थानाका प्रान्त जिसमें उत्तरी कोंकणका ज़िला शामिल था और जिसके अन्तर्गत बारह किले थे। (६-७) त्र्यम्बक और बागलणके प्रान्त जो नासिकके पश्चिमी भागोंमें सम्मिलित थे। ये दोनों प्रान्त बासठ पहाड़ी किलोंसे सुरक्षित थे। निम्न लिखित प्रदेश छावनियोंपर सैनिक बन्दोबस्तोंके अन्तर्गत थे। (८) वनगढ़का प्रान्त जो आजकलके धारवाड़ ज़िलेके दक्षिण भागोंका नाम था और उसमें बाईस किले थे—(९ १० ११) वेदनोर, कोल्हर और श्रीरङ्गपट्टनके प्रान्त थे जो आधुनिक मैसूर राज्यके नामसे विख्यात हैं, इन प्रान्तोंमें अठारह किले थे। (१२) कर्नाटकका प्रान्त जो कृष्णानदीके दक्षिण मद्रास प्रान्तके संग्रहीत ज़िलोंसे बना था। इस प्रान्तमें भी अठारह किले थे। (१३) वेल्लोर प्रान्त, जो आजकल ज़िला अरकाटके नामसे

पुकारा जाता है। इसमें पचीस किले थे और (१४) तञ्जौरका प्रान्त जिसमें ६ किले थे। इन किलोंका प्रबन्ध कैसे होता था सो ऊपर लिखा जा चुका है।

पहाड़ी किलोंके अतिरिक्त शिवाजीकी शक्तिका मूल पैदल सेना भी थी। ये पहाड़ी किले एक प्रकारसे शिवाजीके राज्यके पहरेदार थे और उनकी पैदल सेना मानों इन किलोंकी जान थी। घाट और कोंकण इन दो प्रान्तोंके निवासी ही पैदल सेनामें भर्ती होते थे। घाटके रहनेवाले मावले और कोंकण प्रान्तोंके रहनेवाले 'हेटकरी" जातिके होते थे। ये लोग परम विश्वासी थे और विकट पहाड़ी स्थानोंमें लड़नेमें बड़े चतुर होते थे। ये लोग अपने हथियार आप लाते थे, राज्यसे केवल लड़ाईका सामान मिलता था। जंघिया, कमरबन्द और साफा यही उनकी पोशाक थी। कभी कभी सिपाही दुपट्टा भी रखते थे। हेटकरी निशाने बाज अच्छे होते थ परन्तु मावलोंके समान ये लोग अपने प्राणोंकी परवा न करके युद्ध नहीं कर सकते थे।

पैदल सेना अधिक थी। दस पैदल सिपाहियोंपर एक नायक, पांच नायकोंपर एक हवल्दार, दो हवलदारोंपर एक जुमलेदार और दस जुमलोंपर अर्थात् एक हजार सिपाहियोंपर, "एक हजारी" नामक एक सरदार रहता था। इस प्रकारकी पांच हजार सेनापर सरनोबत या मुखिया रहता था। जुमले दारोंको वार्षिक सौ हुण और एक हजारी सरदारको पांच सौ हुण वेतन मिलता था। इसके सिवाय कितनोंहीके लिये पालकी

आदि नियत थी। हवलदारका काम होता था कि प्रत्येक दिन सूर्यास्तके समय किलेके चारों दरवाजे बन्द कर दे और प्रातःकाल खोले। दरवाजोंकी कुञ्जियां अपने पास तकियाके नीचे रखकर सोवे। रातको समय समयपर किलेके पहरेदारोंकी जांच करता रहे और सर्नौयत रातके समय सेनाकी जांच करता रहे।

घुड़सवार दो तरहके होते थे—बरगीर और शिलेदार। शिलेदार अपना घोड़ा रखते थे और बरगीरको राज्यसे घोड़ा मिलता था। कुछ बरगीर "पांगा" कहलाते थे। शिवाजी इन "पांगा" घुड़सवारोंका बड़ा विश्वास करते थे। मराठे-सवार चुस्त पायजामा अथवा धोती, रूईदार कुरता, साफा और कमरबन्द लगाते थे, उनकी तलवार कमरबन्दमें लटकती रहती थी। प्रत्येक सवार ढाल तलवार रखता था। कुछ सवार तोड़ेदार बन्दूक भी रखते थे। मराठे-सवारोंका जातीय अस्त्र भाला था, जिसके चलानेमें मराठे बड़े दक्ष होते थे। मराठा घुड़सवारोंके पास विशेष सामान नहीं होता था। एक घोड़ा, घोड़ेकी जीन और एक भाला—बस इतना ही सामान उनके पास होता था। इसके अतिरिक्त और सामान उनके पास रहे या न रहे, इसकी उनको चिन्ता नहीं होती थी। इसी सीधेसादेपनसे उनको विजय प्राप्त होती थी। भोजन और वस्त्र इतने सारे रहनेसे, इसके सम्हालनेमें कुछ दिक्कत नहीं होती थी। घोड़ोंकी पीठ परकी जीन जमीनपर रख दी, इसके ऊपर बैठना और सोना

भी हो सकता था। इस व्यवस्थासे घोड़ेका सामान ही विस्तरेका काम देता था। बाकी रहे दो कुरते, धोती और लंगोट, वे हमेशा शरीरपर ही रहते थे। जहां सोना या बैठना होता था, वहां ही भालेको जमीनमें गाड़कर उसके साथ घोड़ा बांध देते थे। शत्रुकी आहट पाते ही झट जीन जो बिस्तरेका काम देती थी, घोड़ेपर रखकर दूसरे स्थानपर चले जाते थे। उन्हें न किसी नौकरकी आवश्यकता थी और न किसी सामानकी। वैसी अवस्था मुगलिया-सेनाकी न थी, क्योंकि मुगल सैनिक अपने काम आप नहीं कर सकते थे। उन्हें नौकर, चाकर और बड़े भारी सामानकी आवश्यकता होती थी। मुगल सरदार अपने घोड़ोंकी खूब सजावट करते थे। उनके घोड़ोंकी सजावट देखिये, दुम और बालें बिलकुल रंगी हुई, सोने चांदीके साज सिरसे पैरतक लदे हुए, कलँगियां बहुत लम्बी लम्बी, पैरोंमें झांझनें बजती हुई, और जितने लम्बे, करीब करीब उतने ही चौड़े और फिर चार जामे, उनपर मखमली जरदोजी बड़े भारी पड़े हुए, और उनमें सुरागायकी दुमके चँवर दोनों तरफ लटकते हुए, सवार घोड़ेसे भी ज्यादा देखने लायक, कोई अपनेसे ज्यादा भारी बगला और जिरहबख्तर पहने हुए, कोई घेरदार जामा और शाल दुशाले लपेटे हुए लेकिन चेहरे जर्द, रातके जागे, नशेमें चूर या दवा खाते पीते,दस कदम घोड़ा चला घोड़ेको पसीना आया, सवार बेहोश हो गया, अगर दूर चलना पड़ा, दोनों बदम होकर गिर पड़े। जैसे सरदार वैसे ही उनके

प्यादे और सवार, लश्करमें जहां तक सिपाही तो सौ बनिये दूकानदार, भांड भगतिये, रण्डी छोकरे, नौकर खिदमतगार और खानसामां। रसद काहेको मिल सकती। डेरे डंडेमें ऐश इशरतके साज सामान इतने कि कभी अच्छी तरह चार पांचकी तदबीर न हो सकती, तलवार पीछे रह जाय मुजायका नहीं, पर तम्बूरा साथ रहना चाहिये। दुश्मन वार किये जाय परवा नहीं, पर चिलम न जलने पावे। उन वक्तका एक फरासीसी इस फौज की खूब तारीफ लिखता है—"तनख्वाहें बहुत बड़ी बड़ी और चाकरी कुछ भी नहीं, न कोई पहरा चौकी देता है न दुश्मनसे मुकाबला करता है। बड़ीसे बड़ी सजा हुई तो एक दिनका तनख्वाह कट जाती है।" जिनेलो करेरी (Genelle Curren) ने मार्च सन् १६९५ ई० में औरङ्गजेबकी छावनी गलगलेमें देखी थी, वह लिखता है कि "दस लाखसे ऊपर आदमी थे और ३०" कोसमें तो केवल बादशाह और शाहजादोंके डेरे खड़े थे, इनका काम पड़ा उन मरहठोंसे, जो अंगरखा, जांघिया, एक पेची पगड़ी पहने, कमर कसे, हाथमें भाला, दुबिलमी घोड़ोंपर सवार, तीस कोसतक तो हवाखोरीको घूम आते थे, न थकते न मांदे होते थे, जो बाजरेकी रोटी प्याजके साथ उनका खाना था और घोड़ेका जीन तकिया, जमीन बिछौना, और आसमान शामियाना था।" *

शिवाजीको घुड़सवार सेना तो भी प्रबल पैदल सेनाके

* [illegible]

समान ही था।* पचीस सवारोंपर एक हवलदार, पाँच हवलदारोंपर एक जुमलेदार रहता था। पाँच जुमलेदारोंपर एक सूबेदार होता था। प्रत्येक जुमलेदारके पास एक हिसाब लिखने और परीक्षा करनेवाला रहता था जो ब्राह्मण अथवा प्रभु (कायस्थ) जातिका होता था। दस सूबेदारोंपर एक "पाँच हजारी" रहता था। पाँच हजारीके साथ एक मजुमदार अर्थात् ब्राह्मण हिसाब परीक्षक और एक अमीन प्रभु जातिका हिसाब किताब लिखनेके लिये रहता था। ये सब सरकारी नौकर थे। पांच हजारीके ऊपर "सरनौबत" था। शिवाजीकी सेनामें एक जासूसी विभाग भी था, जिसका मुखिया भैरोजी नायक था। नये सैनिक भर्ती करते समय स्वयं शिवाजी उनकी जांच करते थे और अपनी सेनाके किसी पुराने सैनिक की जमानतपर नये सैनिक भर्ती करते थे।

---

* मराठोंके समान ही युद्ध-सम्बन्धी पतन कालमें सिक्खोंका अभ्युदय हुआ था। मेजर फौलकिनने सिक्खोंके युद्ध करनेका जो वर्णन किया है उसका सारांश यहाँ प्रकाशित किया जाता है। स्वाधीन सिक्ख सैनिकोंके वर्णनको पढ़कर पाठक जान लेंगे कि मराठे-से सिक्खोंके युद्ध कितने मिलते जुलते थे। सिक्ख सैनिक होते थे। मेजर फौलकिनने लिखा है कि सिक्खोंके हथियार भाला, बन्दूक और तलवार हैं। उनके युद्ध करनेका ढंग भी निराला है। स्नान, प्रार्थना इत्यादि आवश्यक धार्मिक कर्म कामोंको पूरा करके, वे एक विचित्र सावधानीके साथ अपने सिर तथा दाढ़ीमें कंघी करते हैं। फिर अपने घोड़ोंपर सवार हो वे शत्रुकी ओर जाते हैं और कभी आगे बढ़ते हुए और कभी पीछे हटते हुए उनके साथ लगातार युद्ध करते रहते हैं। यहाँ तक कि घोड़ा और सवार दोनों एक समान थक जाते हैं। फिर वे अपने डेरोंसे कुछ दूर निकल जाते हैं और खेतोंमें अपने घोड़ोंको स्वच्छन्द चरनेके लिये छोड़ देते हैं और स्वयं अपने लिये कुछ चना चबैना भुना लेते हैं और उन्हींमेंसे घोड़ोंका दा

चौमासेके समय वे लौट आते थे। यदि किसी घुड़सवारका सामान सरकारी काममें नष्ट हो जाता था, यदि उसका घोड़ा सरकारी लड़ाईमें मारा जाता अथवा बेकाम हो जाता था तो पक्का सबूत मिलनेपर उसकी हानिकी पूर्ति कर दी जाती थी। शिवाजीकी कड़ी आज्ञा थी कि लूटका सब सामान सरकारी खजानेमें पहुंचे। यदि इस आज्ञाके विपरीत किसी सैनिकके पास कुछ लूटका माल मिलता था और वह सन्तोषजनक उत्तर न दे सकता तो लूटका माल जब्त किया जाता था अथवा उस सिपाहीको उसका मूल्य देना पड़ता था। सेनाके किसी भी आदमीको अपने साथ स्त्री, दासी और वेश्या ले जानेकी आज्ञा नहीं थी। यदि किसी योद्धाके साथ कोई औरत, लौंडी या वेश्या होती तो उसको कठिन दण्ड मिलता था अर्थात् उसका सिर उड़वा दिया जाता था। सैनिकोंको आज्ञा थी कि कोई सैनिक गाय, किसान, बच्चों और स्त्रियोंको न सतावे, न लूटे और न उन्हें कैद करे। ब्राह्मणोंको लूटने और सतानेकी भी बिलकुल आज्ञा न थी। हां, सांड और भैंसे रसद आदि ढोनेके लिये आते थे। जो सैनिक साहस और वीरताके कार्य करते थे, उनका विशेष सम्मान होता था, उन्हें सम्मान सूचक उपाधियां दी जाती थीं।

जलसेना—स्थल-सेनाकी भांति महाराज शिवाजीने जल सेनाका भी प्रबन्ध किया था। उनके राज्यके एक ओरकी सीमा समुद्रतटसे मिली हुई थी। इसलिये उन्होंने नौकाशक्तिको भी सुदृढ़

इनमा आवश्यक समझा था। शिवाजीकी नाविक सेना कितनी थी, इसका जो उल्लेख कारवारके अङ्गरेज व्यापारीने संवत् १७२२ वि०—सन् १६६५ ई०में किया था, उससे पता लगता है कि उस समय कमसे कम ८५ छोटे और तीन बड़े जहाज शिवाजीके पास थे। अङ्गरेज ऐतिहासिकोंका ऐसा अनुमान है कि शिवाजीका जहाजी बेड़ा बहुत बड़ा न रहा होगा, परन्तु उस समयके कागज पत्रोंके देखनेसे पता लगता है कि उस समय शिवाजीकी इतनी भारी नाविक शक्ति थी, जिससे उस समयका यूरोपका सबसे बलिष्ठ राज्य भी उनकी नाविक शक्तिसे भयभीत हो सकता था। सभासदने अपने बखरमें लिखा है कि शिवाजीके यहां विविध प्रकारके चार सौ जङ्गी जहाज थे। चिटनीसने शिवाजीके जहाजी बेड़ाका जो उल्लेख किया है उससे प्रतीत होता है कि उनके यहां ६४० जङ्गी जहाज थे जिनमेंसे तीस बड़े जहाज, हिन्दुस्तानके पश्चिमी किनारेपर थे। जिनको "गुराब" कहते थे। तीन सौ जहाज मध्यम आकारके थे। और छोटे आकारके भी जङ्गी जहाज थे। अंगरेज व्यापारियोंने शिवाजीके जहाजी बेड़ेका अनेक स्थानोंपर उल्लेख किया है। कारवारके अङ्गरेज व्यापारियोंने एक स्थानपर लिखा है कि शिवाजीके ८५ जहाज एक मस्तूलके हैं जो तीस टनसे डेढ़ सौ टनतकके दिखलायी पड़ते हैं। शिवाजीने अपने जहाजी बेड़ेके बनानेमें दस लाख रुपये खर्च किये थे। बेसुस्करकृत मराठी भाषाके शिवाजीके चरित्रमें लिखा हुआ है कि जैसे ही उन्होंने जहाजी

बेड़ा बनानेकी ठानी, वैसे ही उन्होंने पोत निर्माता कारीगरों को बुलाया। सब प्रकारके आकारके लगभग चार पांच सौ जहाज बनवाये थे। पर जिन लोगोंको शिवाजी चोर,लुटेरे, डाकू प्रतीत होते हैं उन्हें शिवाजीका जहाजी बेड़ा भी कुछ न जँचे तो कुछ आश्चर्यकी बात नहीं है। मालवन और कुलाबा शिवाजीके जहाजी सेनाके प्रधान स्थान थे। उनकी समुद्री सेना चार, पांच हजारके लगभग थी। मालाबारके समुद्री डाकू अङ्गरेजोंके लिये हौआ थे। उनसे अङ्गरेज भी कांपते थ। उनको शिवाजीने अपनी समुद्री सेनामें भर्ती कर लिया था। इनके अतिरिक्त और भी बहुतसे मुसलमान उनकी समुद्री सेनामें थे। समुद्री सेनाके अध्यक्षकी उपाधि दरियासरग थी। कान्होजी आंग्र नामक मनुष्य नौका नयन शास्त्रमें अत्यन्त निपुण था, वह भी समुद्र सेनाका मुख्य अध्यक्ष रह चुका था। इसके अतिरिक्त मियाँ नायक, सिद्दी मुसलमान, मिसरी तथा दूसरे मुसलमान दौलतखाँ, इब्राहिमखाँ आदिने भी समय समयपर समुद्री सेनाके अध्यक्ष पदपर काम किया था।

कान्होजी आंग्रे नौका-नयन शास्त्रमें इतना निपुण था कि शिवाजीकी मृत्युके दस बारह वर्ष पीछे कोंकण प्रान्तके किनारोंपर अङ्गरेजोंका दिल दहला दिया था। कान्होजी अपनी ही हिम्मतपर समुद्री काम करता था। वह अङ्गरेजोंकी निगाहमें बड़ा खटकता था। उसे अङ्गरेज विघ्नरूप समझते थे।

शिवाजीके समुद्री युद्धोंका वृत्तान्त इस पुस्तकमें यथास्थान कई बार वर्णन किया जा चुका है। यद्यपि शिवाजीने अपना जहाजी बेड़ा जंजीराके सिद्दियोंसे युद्ध करनेके लिए ही तैयार किया था परन्तु उनका अङ्गरेज और पोर्तगीजोंसे भी युद्ध हुआ। यह पीछे लिखा जा चुका है कि सिद्दियोंके जंजीरेपर आक्रमण करनेमें शिवाजीको जब सफलता प्राप्त नहीं हुई थी तब उन्होंने मालवन टापूको अपनी जल-सेनाके लिये प्रधान स्थान नियत किया। कहते हैं कि जिस समय शिवाजीने जलमें किला बनानेका निश्चय करके, मल्लाह कोली आदिपर, कौनसा दिशामें कितना जल है, इसकी जांच करनेका भार सौंपा। उन लोगोंने अपने प्राणोंके सङ्कटकी कुछ परवा न करके यह पता लगाया कि किस स्थानमें कितना पानी है और कहांपर किला बनना ठीक होगा। शिवाजी इसके कामसे बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने उनमेंसे कितने ही आदमियोंको अपने जङ्गी जहाजोंके कप्तान पदपर नियुक्त किया और उन लोगोंको एक गांव वंश परम्परागतके लिये पारितोषिकमें दिया। इस समुद्री किलेके बनानेमें तीन हजार आदमी लगे थे। यह भी कहा जाता है कि स्वयं शिवाजीने इस किलेके बनानेमें कारीगरों और मजदूरोंके समान कई दिनतक काम किया था। इस किलेके बनाते समय उन्होंने अपनी जल-सेना अर्थात् जहाजी बेड़ा और स्थलकी ओर पांच हजार मावली सेना तैयार रखी थी कि कोई दुश्मन किलेके बनानेमें बाधा उपस्थित न करे। पर कोई बाधा नहीं हुई, किन्तु

कारण यह था कि उन्होंने सावन्तोंका पराभव करके अपनी अधी नता स्वीकार करा ली थी और पोर्तगीजोंसे भी उनकी मित्रता हो गयी थी। जंजीराके सिद्दियों और मुगलोंने भी शिवाजीके दुर्ग निर्माणमें किसी प्रकारका विघ्न उपस्थित नहीं किया।

शिवाजीकी इस किलेके बनानेमें कितनी दिलचस्पी थी, यह हम ऊपर लिख चुके हैं। वे स्वयं मजदूरोंके समान काम करते थे। किलेकी नींव शिवाजीकी सम्मतिके अनुसार ही रखी गयी। उन्होंने समुद्रके भीतर किलेकी बड़ी मजबूत नींव रख वायी थी। जब किलेके नीचेका भाग तैयार हो गया और केवल ऊपरका भाग बनाना बाकी था तब वे वहां गोविन्द विश्वनाथ प्रभु सूबेदारपर किलेके शेष भागके बनानेका भार सौंपकर रायगढ चले आये। यह दुर्ग तीन वर्षमें पूरा बना था। जिस समय इस दुर्ग निर्माणका काम समाप्त हुआ उस समय शिवाजी पन्हालेके दुर्गमें थे। वे पन्हाला दुर्गसे बड़ी धूमधामसे इस दुर्गमें प्रवेश करनेके लिये आये और बड़े ठाट बाटसे दुर्ग प्रवेशका उत्सव मनाया। दुर्ग प्रवेशका उत्सव हिन्दू धर्मके अनु सार किया गया। ब्राह्मणोंको भोजन कराया गया और दक्षिणा बांटी गयी। गरीब आदमियोंको मिठाई बांटी गयी। शिल्पी और कारीगरोंको सोनेके कड़ूरु और सम्मान सूचक वस्त्र प्रदान किये गये। उस समय मालवान बन्दरमें जितने जहाज थे उन सबमेंसे सम्मान-सूचक तोपें छूटीं। गोवाके पोर्तगीजोंने भी दुर्ग निर्माण करनेमें सहायता देनेके लिये अपने यहांके चतुर

शिल्पकारोंका दल भेजा था। इसके लिये शिवाजीने गोवाके गोसाइयोंके प्रति कृतज्ञता प्रकाश की और शिल्पकारोंके नायकको उसके पदके अनुसार पारितोषिक प्रदान किया। गोविन्द विश्वनाथ प्रभुको भी उन्होंने बहुतसा पारितोषिक दिया। वस्त्र एक बहुमूल्य पगड़ी मोतियोंकी झालरदार तथा विशेष सम्मान सूचक एक तलवार प्रदान की।

इस नये किलेका नाम उन्होंने सिन्धु दुर्ग अर्थात् समुद्रका किला रखा। कहते हैं कि उक्त किलेके बनानेमें एक करोड़ पगौड़ा व्यय हुआ था। सिन्धु दुर्गमें तीन हजार नाविकोंका एक सैन्यदल एक मामलतदारके अधीन रखा गया। इसके अतिरिक्त नायक (फौजदार), सिरनायक (प्रधानशासक) और तटसिरनौबत (परकोटेका प्रधान शासक) नियत किये। किलेके पास एक समुद्री लाट समुद्रोंकी लहरोंको रोकनेके लिये बनायी जिसका नाम दरिया-बुर्ज था। इस प्रकारके शिवाजीने और भी समुद्री किले अञ्जनवेली, रत्नागिरि, पद्मदुर्ग, सरजाकोटो, गावन दुर्ग कांकेरी और राजकोटमें भी बनवाये थे।

यहां यह लिखना भी अनुचित न होगा कि अभी कुछ दिन हुए कि मालवनमें सिन्धु दुर्गमें कुछ चिह्न मिले थे, इसपर वहांके निवासियोंने एक गुम्बज बनाया और शिवाजीकी एक मूर्ति स्थापित की जिसकी नित्यप्रति वहांके निवासी पूजा करते हैं और कोल्हापुर दरबारसे इस पूजाके लिये कुछ वार्षिक सहायता भी मिलती है।

शिवाजीने कोकणघाटपर भी कई समुद्री दुर्ग बनवाये थे। कोलाबाके दुर्गपर अपना अधिकार जमा लिया और अपनी जल शक्तिका यहाँ केन्द्र-स्थान नियत किया। यहांपर विदेशी और देशी छोटे छोटे जहाज (डोंगा) आते थे, उनके मालकी जांच की जाती थी। इसके अतिरिक्त उन्होंने और भी कितने ही समुद्री टूटे फूटे दुर्गोंकी मरम्मत करायी थी जिनमें सुवर्ण दुर्ग और विजय-दुर्ग बहुत विख्यात थे। विजय दुर्गका मुसलमान और यूरोपियन इतिहासवेत्ताओंने विशेष उल्लेख "घेरिया" नामसे किया है। इन किलोंसे शिवाजीका जहाजी बेड़ा सुरक्षित रहता था। मक्केको जो यात्री जाते थे अथवा व्यापार करनेके लिये जो जहाज बहुमूल्य सामानसे लदे आते थे लूट लिये जाते थे। इनकी रिपोर्ट जल-शक्तिके हेड क्वार्टर (केन्द्र-स्थान) कोलाबाको भेजी जाती थी।

शिवाजीकी जल शक्तिको देखकर पहले पोर्त्तगीज घबड़ाये, उन्होंने पहले अपना राजदूत शिवाजीके दरबारमें भेजा और व्यापार करनेकी आज्ञा मांगी। दोनों ओरसे सन्धि हुई। पोर्त्तगीज शिवाजीको प्रति वर्ष युद्धका सामान देनेको राजी हो गये और शिवाजीने भी पोर्त्तगीजोंके जहाजोंको बिना किसी रुकावटके अपने बन्दरगाहमें आना जाना स्वीकार कर लिया। यह सन्धि प्रति वर्ष दुहरायी जाती थी। अङ्गरेजोंसे भी शिवाजीकी वैसी ही सन्धि हुई थी।

स्वयं शिवाजी महाराजने जहाजी बेड़ेपर सवार होकर सिर्फ

एक बार बारसीलोर शहरपर चढ़ाई की थी। फिर वे स्वयं कभी जहाजपर सवार हो जल-युद्धमें नहीं गये। क्योंकि एक बार उन्हें जल-युद्धमें अनुभव हो गया कि समुद्र-यात्रामें बड़ी कठिनाई है। वे स्वयं और उनके बहुतसे साथी बीमार हो गये थे। उन्हें प्रतीत हुआ कि समुद्र-यात्रा सबसे खाली नहीं है। अतएव उनके चतुर कार्याध्यक्ष ही जल सेना और जल-युद्धका काम करते थे।

मुल्की इन्तजाम और भूमि-करकी प्रणाली—शिवाजी के राज्यके दो मुख्य भाग थे जो "स्वराज्य" और "मुगलाई" कहलाते थे। देशका जितना भाग उनके हाथमें आ गया था वह स्वराज्य कहलाता था, पर देशका जो भाग दूसरोंके हाथमें था, परन्तु उससे शिवाजीको चौथ और सरदेशमुखी प्राप्त होती थी वह मुगलाई कहलाता था। उन्होंने अपने राज्यकी भूमिका विभाजन वैसा ही किया था जैसा आजकलके ताल्लुकोंका है। प्रत्येक महालकी मालगुजारी पचहत्तर हजारसे सवा लाख रुपयेतककी होती थी। दो या तीन महालोंका एक सूबा या जिला होता था। साधारणतः प्रत्येक सूबेदारका वार्षिक वेतन चार सौ हुण अथवा लगभग सौ रुपया मासिक होता था। शिवाजीने मालगुजारीका प्रबन्ध गांवके पटेल, कुलकर्णी अथवा जिलेके देशमुख या देशपाण्डेके हाथमें मुगलोंकी भांति नहीं रहने दिया था। किन्तु इन लोगोंको उनके नियत वेतन पूर्वकी भांति मिला करते थे और सारा प्रबन्ध उनके द्वारा

निकलकर सूबा या मुहालके सूबेदार या महालदारको सौंप दिया गया था। प्रत्येक दो या तीन गांवपर मालगुजारी उगाहनेके लिये एक एक पटवारी या कारकुन नियत थे। इससे पहले जमींदारोंको ठेका देकर भूमि कर वसूल करनेकी प्रणाली थी पर इससे किसान लोगोंको बड़ा कष्ट होता था, क्योंकि जमींदार लोग मनमाने तौरपर अत्याचार करके किसानोंसे बहुतसा द्रव्य वसूल कर लेते थे और सरकारमें बहुत कम जमा करते थे। परन्तु शिवाजी महाराजने इस प्रणालीको बिलकुल उठा दिया और उपर्युक्त सरकारी वेतनिक अधिकारियोंको इस कार्यके लिये नियत किया। ये अधिकारी जमीनकी माप करके और फसलकी जांच करके किसानोंसे भूमि-कर दो पंचमांशसे अधिक नहीं वसूल करते थे। शिवाजीसे पहले भूमि करमें अनाज लिया जाता था पर शिवाजीने सिक्केके रूपमें भूमि-कर लेनेकी प्रणाली प्रचलित की थी, इन बातोंसे प्रजा और सरकार दोनोंको बहुत सुभीता हो गया था। फसलपर दैवी आपत्तियोंके आ जानेपर किसानोंको तकावी भी बांटी जाती थी, जो कि धीरे धीरे किसानोंकी सुविधाके अनुसार वसूल की जाती थी।

बाहरसे आकर कोई नयी रैयत उनके राज्यमें बसती थी तो उसको खेती करनेके लिये बीज और पशुओंके खरीदनेके लिये रुपया दिया जाता था जो फसल अच्छी होनेपर कभी दो किश्तमें और कभी चार किश्तमें वसूल कर लिया जाता था।

जिस साल फसल नष्ट हो जाती थी उस साल भूमि कर नहीं लिया जाता था। जो जमीन्दार उनके राज्यमें थे, उन्हें अपनी प्रजाके ऊपर किसी प्रकारके राजनीतिक अधिकार न थे।

न्याय—शिवाजीने ऐसा अच्छा प्रबन्ध कर रखा था कि जिससे उन्हें तुच्छसे तुच्छ घटनाओंकी भी खबर हो जाती थी। उनके प्रधान-मण्डलमें न्यायविभागका बड़ा अधिकारी रहता था। उनके निरीक्षणमें न्याय निपटानेका विशेष कार्य हुआ करता था। दीवानीका कोई स्वतन्त्र प्रबन्ध न था। उस समय आजकलकी भाँति अदालतोंकी भरमार न थी। महाराष्ट्रोंकी ग्रामसंस्थाएं उस समयतक नष्ट नहीं हुई थीं। इन ग्रामसंस्थाओंमें अर्थात् पञ्चायत द्वारा ही न्याय निपटानेका कार्य होता था। विशेष प्रसङ्गपर आसपासके गाँवके मुखिया लोग पञ्च बनाये जाते थे और उनका फैसला अमलमें लानेके लिये सरकारी अमलदार मदद दिया करते थे। उस समयके कानून हिन्दू धर्म शास्त्रके अनुसार थे और कई बातोंमें मुसलमानी प्रचलित रीतियाँ भी स्वीकार की गयी थीं।

धर्मानुयायी—शिवाजी महाराज पूर्ण हिन्दू धर्माभिमानी थे। इसी धर्माभिमानके जोरपर उन्होंने राष्ट्रको जाग्रत किया था। महाराज शिवाजीकी "गो ब्राह्मण प्रति-पालक" यह विरद थी और यह विरद उन्होंने सुवर्णाक्षरोंसे लिख रखी थी। परन्तु इससे उन्होंने अन्य समयके ब्राह्मणोंसे डरकर या किसीसे प्रेरित होकर ऐसे नहीं लिया था। वे स्वभावतः ही गो-

ब्राह्मणोंके भक्त थे। उनके गुरु श्रीसमर्थ रामदास स्वामीने धर्म और नीतिका प्रचार करनेके लिये अनेक मठ स्थापित किये थे। इन मठोंको शिवाजीके राज्यसे बहुत कुछ सहायता मिलती थी। अनेक मठ, तीर्थस्थान और देवालयोंकी सहायताके लिये जागीरें मिली हुई थीं, जिनकी रक्षाका प्रबन्ध राज्यकी ओरसे होता था। शिवाजी किसी धर्मसम्प्रदायसे विद्वेष भाव नहीं रखते थे। अपनी प्रजाके धार्मिक भावोंकी सदैव रक्षा करते थे। इस विषयमें हिन्दू मुसलमान सबको वे एक दृष्टिसे देखते थे। जहाँ उन्होंने हिन्दुओंकी धार्मिक संस्थाओंकी सहायता की थी वहाँ उन्होंने मुसलमान धार्मिक संस्थाओंकी भी सहायता बन्द नहीं की। उन्होंने कभी किसी मसजिद् अथवा कुरानका अप मान नहीं किया। हिन्दुओंकी धार्मिक संस्थाओंके समान ही वे मुसलमानी धार्मिक संस्थाओंके प्रति पूज्य भाव और सम्मान प्रदर्शन करते थे।

शिक्षा—यह पहले कहा जा चुका है कि उस समय भारतमाताके बच्चे किसी विश्व विद्यालयके द्वारपर अपना स्वास्थ्य बलिदान करनेकी अपेक्षा कर्त्तव्यशील बनना अधिक पसन्द करते थे। उस समय वे "कलम-शूर" बननेकी अपेक्षा रणशूर बनना अधिक चाहते थे। उस समय भारतमाताके बच्चोंकी तिल्ली इतनी नहीं बढ़ गयी थी कि तनिक चोटसे ही फट जाती और न भारतके बच्चे अपनी तिल्लीका फटना चुपचाप सहन करते थे। उस समय भारतमाताके बच्चे ऐसी शिक्षा

प्राप्त करते थे जिससे वे सच्चे मनुष्य बनें, उन्हें आत्मगौरव और आत्मसम्मानका विशेष ज्ञान प्राप्त हो। इसलिये शिवाजीके समयमें आजकलकी भाँति गुलामखाने (स्कूल, कालेज आदि) नहीं बने हुए थे, न आजकलकी भाँति विद्यार्थी अपने अध्यापकोंके प्रति 'भाड़ेके टट्टू' कहकर सम्बोधन करते थे। उस समय गुरुगृहोंमें विद्यार्थी पढ़ते थे, गुरुओंको राज्यकी ओरसे दक्षिणा मिलती थी। इस दक्षिणा प्रणालीसे संस्कृत पठनपाठनका पुनरुद्धार हुआ। प्रत्येक वर्ष श्रावण मासमें विद्वान लोग इकट्ठे हुआ करते थे, उनकी जाँच पण्डितराव किया करते थे, जो पण्डित एक वेदका ज्ञाता होता था उसे एक मन चावल मिलता था और जो पण्डित दो वेद पढ़ा होता था उसे दो मन चावल मिलते थे। इसी प्रकार तीनों और चारों वेदोंके ज्ञाताओंका सम्मान किया जाता था। सालभरमें जो कोई जिस प्रकार पठन पाठनकी उन्नति अथवा अवनति करता था, उसी प्रकारसे उसकी धनसे सहायता की जाती थी। विदेशी विद्वानोंको अनेक प्रकारके पदार्थ भेंटमें दिये जाते थे। महाराष्ट्रके पण्डितोंको भोजनकी सामग्री भेंट की जाती थी। जो पण्डित अपनी विद्वत्ताके कारण विशेष प्रसिद्ध होते थे, उनका विशेष रूपसे सम्मान होता था। उनकी विद्वत्ताके लिये उन्हें बहुतसा धन मिलता था। चिटनीस लिखता है कि शिवाजीके राज्यमेंसे कभी किसी ब्राह्मणको निराश होकर भीख माँगनेके लिये किसी दूसरे राज्यमें नहीं जाना पड़ा था। उस

लिखा जा चुका है कि जिस समय शिवाजी महाराष्ट्रकी रङ्ग-भूमिपर आये थे उस समय महाराष्ट्रमें संस्कृत शिक्षा बहुत ही गिरी दशामें थी। पर शिवाजीने ऐसी उत्साहवर्द्धक रीतियों और व्यवस्थाओंका आश्रय लिया, जिससे शीघ्र ही दक्षिणप्रदेश धुरन्धर संस्कृत विद्वानोंके लिये ख्यात हो गया। दक्षिणके विद्वान अध्ययन करनेके लिये काशी जाने लगे थे और जब वहांसे वे उपाधि और प्रतिष्ठा प्राप्त करके महाराष्ट्रमें लौटते थे तब छत्रपति शिवाजी उन्हें पारितोषिकादि देकर सन्तुष्ट करते थे। संस्कृत शिक्षाके अतिरिक्त शिवाजीका मराठी भाषाकी उन्नतिकी ओर भी ध्यान था। उन्होंने मराठी भाषाके पठन पठनको भी उत्तेजना दी थी। परन्तु इस पठनपाठनमें एक यह कमी थी कि उस समयके महाराष्ट्रों तथा अन्य भारत वासियोंको दूसरे देशोंकी जानकारी बहुत कम प्राप्त होती थी और इतनी कम प्राप्त होती थी कि वे "कूपमण्डूक" ही बने रहते थे।

सिक्का—पाठक पीछे पढ़ चुके हैं कि अपने पिताकी मृत्युके पीछे शिवाजीने राजाकी उपाधि धारण की थी। उस समय उन्होंने रायगढ़में टकसाल स्थापित की और तांबे और चांदीके सिक्के ढलवाये थे। तांबेके सिक्केके एक ओर "श्रीराज शिव" और दूसरी ओर "छत्रपति" खुदा हुआ था। यह शिवरये पैसे कहलाते थे। पेशवाओंके पीछे उनके उत्तराधिकारियोंने भी पैसे ढलवाये थे पर "शिवरये" नाम इतना विख्यात हुआ कि

शिवाजीके डेढ़ सौ वर्ष पीछे उनके उत्तराधिकारियोंके पैसों तकको लोग "शिवरये" पैसे ही कहते थे। पैसा दस मांस का था और डबल बाईस मांसेका। पैसेसे कम दामका कोई सिक्का न था, कौड़ियाँ खूब चलती थीं। फारसी अक्षर खुदे हुए पैसे भी मिलते थे परन्तु प्रचार देवनागरी अक्षरवालोंका ही अधिक था। उस समयके जितने पैसे मिलते हैं उनमें लेखकी भिन्नता पायी जाती है। किसीपर "शिव" है, किसीपर "शीव" है। "सिव" और "सीव" भी मिलते हैं। "श्रीराजा शिव छत्रपति" में "पति" और "पती" दोनों प्रकारसे लिखे हुए सिक्के मिलते हैं। इस प्रकार लेखमें भेद होनेका कारण उन सुनारोंकी मूर्खता थी जो टकसालोंमें छापा बनाते थे।

शिवाजीके समयमें जो रुपये ढाले जाते थे उनपर शायद फारसी अक्षर भी रहते थे। उनके सिक्कोंपर दो प्रकारके संस्कृत लेख भी मिलते हैं—(१) महासूनोरियं मुद्रा शिवराजस्य राजते (२) शाहासुतस्य मुद्रेयं शिवराजस्य राजते।

दिनचर्या—शिवाजीकी शासन प्रणालीका संक्षिप्त वर्णन किया जा चुका है। उनके शासन-सम्बन्धी और भी बहुत सी बातें हैं, जिनके विषयमें स्थानके अभावसे यहाँ नहीं लिखा जा सका है। इस पोथीके लेखककी दूसरी पुस्तक—"मराठोंका उत्थान और पतन" जो अभीतक प्रकाशित नहीं हुई है उसमें इस विषयकी विशेष आलोचना की गयी है। यहाँ उनकी दिन चर्याके सम्बन्धमें कुछ बातें पाठकोंको सुनाना चाहते हैं।

शिवाजी प्रातःकाल जब बिस्तरेसे उठते थे, नौबत बजती थी। गवैया लोग मृदङ्ग, वीणा आदि बाजे बजाते और भगवानकी स्तुति करते थे। इस गान वाद्यके साथ स्वयं शिवाजी भी भगवानका प्रातःस्मरण करते थे। इसके पीछे शौचादिसे निवृत्त होकर गोदर्शन और तुलसी-दर्शन करते थे। फिर गङ्गा आदि पवित्र नदियोंके जलसे स्नान करके जप तथा देवार्चन करते थे। पीछे कुछ देरतक पुराणोंकी कथा सुनते थे। प्रातःकालके साढे सात बजेतक इन सब कार्योंसे निवृत्त होकर वे वस्त्र अलङ्कार धारण करते, फिर तीर चलाने और निशाना मारनेका अभ्यास करते। एक घंटेतक कसरत करके दरबारमें आते। यहाँ वे अपने मंत्रियों और कार्यकर्त्ताओंसे मिलते, उनके कार्य्योंकी देखभाल करते थे। आवश्यक कार्य्योंके करनेकी आज्ञा प्रदान करते थे। यदि किसी सरदारकी कोई प्रार्थना होती तो उसपर विचार करते। अगर उस समय कोई भेंट करने उनके पास आता तो उससे भी मिलते थे। यदि उस समय कोई गुणी आता और उसके किसी कार्य्यसे प्रसन्न होते तो उसे पारितोषिक प्रदान करते थे। प्रातः समयके दस बजेतक यह कार्य्य समाप्त करके किसी मंत्री अथवा कर्मचारीसे कोई गोपनीय बात करनी होती तो एकान्तमें उससे परामर्श करते। ग्यारह बजनेपर ब्राह्मणोंको भोजन कराया जाता था और आप भी स्वयं कुछ अतिथियोंके साथ भोजन करते थे। पान सुपारी और भोजनके पीछे वे पुनः मंत्री-सभाके

कार्यालयमें आते और अपने प्राइवेट सेक्रेटरीसे चिट्ठियोंका उत्तर लिखवाते थे। कोई आवश्यक कार्य्य होता तो उसपर भी विचार करते थे। पिछले दिनके हिसाबकी जांच करते थे और अगले दिन क्या क्या करना चाहिये इसकी व्यवस्था करते थे। इसके अतिरिक्त दूसरे दिनके लिये विशेष व्ययकी भी स्वीकृति प्रदान करते थे। इतना काम करनेके पीछे महाराज शिवाजी अन्तःपुर में थोड़ी देर आराम करते थे। दोपहरके आरामके पीछे फिर वे दरबारमें आते और कारखाने तथा महालोंका निरीक्षण करते। इस समय वे न्याय विभागके फैसलोंकी अपील देखते थे और उनपर जैसी उचित आज्ञा होती थी, प्रदान करते थे। सूर्यास्तके एक घंटा पहले शिवाजी अपने राजमहलसे बाहर चले जाते थे। उस समय वे कुछ महल तथा कारखानोंका निरीक्षण करते और और देवालयोंमें दर्शन करने जाते, उपवन (बाग) में भी भ्रमण करते थे। फिर आराम वाटिकामें आकर मुद्गर फेरते तथा और भी कई प्रकारकी कसरत करते थे। इसके पीछे फिर सन्ध्याका दरबार होता था। सन्ध्याके सात बजे पीछे फिर पौराणिक कथा और कीर्त्तन होते थे। इसके पश्चात् भोजन करके वे फिर दरबारमें आते थे और एक या दो मंत्रीसे किसी विशेष विषयपर परामर्श करके, एकान्त स्थानमें गुप्तचरोंको बुलाते और उनसे बहुत सी गुप्त बातें करते। उनसे गुप्त समाचार सुनते तथा उनसे किसी समाचारका गुप्तरूपसे पता लगवाना होता तो उन्हें उसके विषयमें सुझाते और समझाते

थे। इस प्रकार उनका सब काम व्यवस्थित और नियमित होता था।

शिवाजीके यहां भूषण कवि भी था, जिसके विषयमें आगे लिखा गया है। वे भूषण तथा राज्यके अन्य कवियोंसे वीररस की कविता भी सुना करते थे। अन्य राजाओंके समान वे आमदरोंकी बोली अथवा खुशामदियोंकी चोचलेबाजी और दिल्लगीकी बातोंमें समय व्यतीत नहीं करते थे। किसी प्रकार का अश्लील हास्य विनोद उन्हें पसन्द नहीं था। उनका मन बहलाव वीररसकी कविताओं और प्राचीन राजाओंके वृतान्त सुननेमें होता था।

पशुपालन—यह पहले कहा जा चुका है कि शिवाजी बड़े भारी गोभक्त थे। राज्यकी ओरसे भीमाकी घाटी, मानदेश तथा अन्य स्थानोंमें गोचरभूमि थी। जिनमें गौये तथा अन्य पशु चरते थे। पशुओंको रखवालीके लिये राज्यकी ओरसे प्रबन्ध था। राज्यकी ओरसे गोचरभूमिमें बैल भी रखे जाते थे। सरकारी पशुशालासे किसानोंको खेती करनेके लिये पशु भी दिये जाते थे। राज्यकी ओरसे बहुतसी भैंसें भी रखी जाती थीं। इनके चरनेके लिये भी गोचरभूमिके समान ही प्रबन्ध था। भेड़ बकरियां भी गौ और भैंसोंके समान रखी जाती थीं। इन पशुओंकी रखवालीके लिये जो गड़ेरिये, ग्वाले आदि नियत होते थे, उनके अधीन बीस पचीस आदमी रखे जाते थे। गोशाला महिषीशाला तथा अन्य पशुशालाओंके हिसाबकी प्रति वर्ष

जांच होती थी। ये रखवाले पशुशालाओंके आसपास गांवोंमें रहते थे। इन चरवाहों और रखवालोंको पशुशालायें देते समय राज्यकी ओरसे एक तादाद मुकर्रर कर दी जाती थी कि सालभरमें राज्यकी ओरसे इतनेमोज होंगे। उस समय इतना घी देंगे और सालभरमें दूध इतना देंगे। इन पशुशालाओंका आजकलके डेरी फर्मका सा ही कुछ ढङ्ग कहा जाय तो अनुचित न होगा।

इक्कीसवां परिच्छेद

साधु-सन्तोंकी सेवा

"अधिगत परमार्थान्पण्डितान्मावमंस्था
स्तृणमिव लघु लक्ष्मीर्नैव तान्संरुणद्धि।
अभिनव मदलेखाश्यामगण्डस्थलानाम्,
न भवति बिसतन्तुर्वारण वारणानाम्॥"

श्रीसमर्थ रामदास स्वामी—शिवाजी साधु सन्यासियों का बड़ा आदर करते थे। उनके धार्मिक गुरु श्री समर्थ रामदास स्वामी थे। ये बड़े भारी धर्मोपदेशक हुए थे। श्रीसमर्थ रामदास स्वामीके पिताका नाम सूर्याजी पन्त और माताका नाम रेणुबाई था। रेणुबाईके बहुत दिनोंतक कोई पुत्र नहीं हुआ था, इसलिये इन्होंने पुत्र प्राप्तिकी लालसासे सूर्यकी उपासना की। कुछ दिनों पीछे उनसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम गङ्गाधर था। तीन वर्ष पीछे उनके एक और पुत्र हुआ, उसका नाम उन्होंने नारायण रखा। आगे चल कर यही नारायण, समर्थ रामदास स्वामीके नामसे विख्यात हुए। * स्वामी

---

* जिन पण्डितोंको परमार्थका ज्ञान है उनका अपमान मत करो। तृणके समान लघु लक्ष्मी उनको ऐसे नहीं रोक सकती जैसे नवीन मदधारासे भीगित श्याम मस्तक वाले हाथियोंको कमलकी डण्डी।

रामदासका जन्म संवत् १६६५ वि०—शाका १५३०—चैत्र शुक्ला रविवार—एप्रिल सन् १६०८ ई०में हुआ था। जब श्रीसमर्थ रामदास स्वामी अपने अनेक शिष्योंके साथ धर्ममूलक, राज्य क्रान्तिका उद्योग कर रहे थे, तब उनकी कीर्त्ति शिवाजीके कानोंतक पहुंची और शिवाजीने लगभग संवत् १७०७ वि० सन् १६४९ ई०में श्रीसमर्थ रामदास स्वामीसे भेंट की थी।

पहले शिवाजी साधु तुकारामसे मंत्र दीक्षा लेना चाहते थे पर साधु तुकारामकी मृत्यु हो जानेसे उन्होंने श्रीसमर्थ राम दास स्वामीसे दीक्षा ग्रहण की थी। श्रीसमर्थ रामदास स्वामी एक स्थानमें नहीं रहते थे, प्राय वे भ्रमण करते थे। इससे शिवाजीको उनसे भेंट करनेमें बड़ी दिक्कत पड़ी। जहां कहीं वे सुनते कि यहां समर्थ रामदास स्वामी हैं, वहीं वे उनके दर्शन करनेके लिये पहुंचते थे। पर समर्थसे उनकी भेंट नहीं होती थी। उन्होंने सुना कि श्रीसमर्थ रामदास स्वामीने चाफल की घाटीमें श्रीरामचन्द्रजीका मन्दिर बनवाया है और यहीं उनका आश्रम है। वे अपने आश्रममें ही हैं, यह सुनते ही शिवाजी उनके दर्शन करनेके निमित्त चाफलकी घाटीमें पहुंचे पर उनको समर्थके दर्शन न हुए। यहां शिवाजीके पहुंचनेपर उनके मामलतदार मद सोमलनाथने कहा कि सदैव स्वामीजी अपने मठमें नहीं रहते हैं, वे बहुत करके जङ्गलमें रहते हैं। इस समय वे कोंडपणके मैध्यगड़के पास मिलेंगे। जब शिवाजी समर्थके सम्बन्धमें विशेष अनुसन्धान कर रहे थे, तब समय

के दो शिष्य—विट्ठल गुसाईं और मानजी गुसाईं शिवाजीके पास आये और मन्दिरका प्रसाद फल फूल आदि उन्हें भेंट किये। उन्होंने मन्दिरका प्रसाद भक्ति-पूर्वक स्वीकार कर लिया। पीछे इन्होंने समर्थके दोनों शिष्योंसे पूछा कि यह मन्दिर किसने बनवाया है। इसपर दोनों शिष्योंने उत्तर दिया कि यद्यपि आप कभी हमारे गुरुजीके पास नहीं पधारे हैं, पर यह मन्दिर आपके धनसे ही निर्मित हुआ है। यह सुनकर शिवाजी बड़े ताज्जुबमें आये और कहा कि यह आप लोगोंकी कृपा और उदारता है जो ऐसा कहते हैं। मैंने कब मन्दिर निर्माणके लिये धन दिया था। इसपर उक्त दोनों शिष्योंने उनको स्मरण कराया कि एक बार पूनामें आपके पुरोहितघरमें गिरि गुसाईं नासिककरका कीर्तन हुआ था, उस समय आपने कीर्तनसे प्रसन्न होकर तीन सौ पगौड़ा दिये थे, जिनको उक्त गुसाईंने स्वीकार नहीं किया था। गुसाईंके धन स्वीकार न करनेपर आपने कहा था कि दान किया गया धन मैं वापिस नहीं ले सकता हूं। इस को आप चाहें जिस धार्मिक कार्यमें लगा सकते हैं। आपकी इस मार्थनापर गिरि गुसाईंने आज्ञा दी कि इस धनको रामदास स्वामीके पास भेज दिया जाय जो चाफलमें श्रीभगवान रामचन्द्रका मन्दिर बनवा रहे हैं। आपका वही धन नरसोमल नाथ मायलवार द्वारा प्राप्त हुआ और उसी धनसे यह मन्दिर बना है। यह सुनकर शिवाजीको तीन सौ पगौड़ाके दानकी याद आ गयी और वे समर्थके दोनों शिष्योंके साथ मन्दिरको देखने

गये। मन्दिरके उत्तरी नींवकी ओर एक नाला बह रहा था, जिससे उस ओरकी नींवको हानि पहुंचनेकी सम्भावना थी। शिवाजीने उसी क्षण अपने कामलतदारको उस ओर पुल बांधनेकी आज्ञा दी और पांच सौ पगोडा पुल-बंधाईके लिये मंजूर किया।

शिवाजी यह आज्ञा देकर श्रीसमर्थ रामदास स्वामीके दर्शनके लिये कोंडवणके किनारे पहुंचे। पर वहां भी उन्हें स्वामीजीके दर्शन न हुए। वहांसे वे प्रतापगढ़ चले आये और प्रतापगढ़से महाबलेश्वर पहुंचे और महाबलेश्वरसे वाई, फिर वहांसे माहुली आये। माहुलीमें कृष्णा और वेण्णा नदीका सङ्गम है। उस सङ्गममें उन्होंने स्नान किया और बहुत सा दान पुण्य किया। यहां उन्हें श्रीसमर्थ रामदास स्वामीका पत्र मिला। पत्र पद्यमें था। श्रीस्वामीजीने इस पत्रमें शिवाजीकी प्रशंसा की थी। इस पत्रको पढ़कर शिवाजी अत्यन्त प्रसन्न हुए और पत्रका उत्तर लिखवाया, जिसमें अबतक स्वामीजीके दर्शन न करनेकी क्षमा मांगी और यह भी लिखा कि कई दिनसे मैं आपके दर्शन करनेके लिये विशेष उत्सुक हो रहा हूं, क्या आप मुझे दर्शन देकर मेरी हार्दिक इच्छाको पूरी कर सकते हैं? यह उत्तर लिखाकर शिवाजीने पत्रवाहकसे पूछा कि इस समय स्वामी जी कहां हैं? उसने उत्तर दिया कि "आजकल वे चाफलमें हैं। फिर ठीक ठीक कह नहीं सकता कि वे किस समय किधर चले जायें।" यह कहकर श्रीसमर्थका पत्र लानेवाला शिष्य चला गया।

दूसरे दिन शिवाजी अपने दलसहित चाफलमें पहुंचे और वहां रामचन्द्रजीके दर्शन किये। समर्थके शिष्योंसे उनके बारेमें पूछा कि वे आजकल कहां हैं? शिष्योंने उत्तर दिया कि स्वामीजी शिङ्गणवाड़ीके हनुमानजीके मन्दिरमें हैं। आपने जो पत्र फल भेजा था, वह आज सवेरे कल्याण गुसाईं वहीं उनके पास ले गये हैं। आगे शिष्योंने कहा कि आपको वहां जानेकी जल्दी नहीं करनी चाहिये। नैवेद्य तैयार किया गया है, देवमूर्त्तिके प्रसाद लग जानेके पीछे आप और आपके साथी यहां भोजन करें, पीछे हम लोग स्वामीजीके पास आपके आगमनका समाचार पहुंचा देंगे। शिवाजीने उत्तर दिया कि "आज गुरुवार (बृहस्पति) है, मैंने यह निश्चय कर लिया है कि मैं स्वामीजीके दर्शन किये बिना भोजन नहीं करूंगा।" इसपर श्रीसमर्थ स्वामीजीके उपस्थित शिष्योंने निवेदन किया कि आप अपने इतने दलके साथ उनके दर्शन करनेके लिये न जाइये। इतनें बड़े दलके होहल्ला होनेपर वे वहांसे चले जायँगे। शिष्योंके परामर्शके अनुसार शिवाजी अपने आदमियों और स्वामीजीके शिष्य दिवाकर भट्टके साथ शिङ्गणवाड़ीके हनुमानजीके मन्दिरमें पहुंचे। वहां उन्हें पता लगा कि रामदास स्वामीजी एक बागमें गये हैं। अत वे उनके दर्शन करनेके लिये वहां पहुचे और देखा कि एक अंजीरके पेड़के नीचे बैठे हुए श्रीसमर्थ, शिवाजीका पत्र पढ़ रहे हैं और हँस रहे हैं, क्योंकि शिवाजीका पत्र लेकर कल्याण गुसाईं उसी समय पहुँचे थे।

दिवाकर भट्टके साथ शिवाजी श्रीसमर्थके पास पहुँचे और उन्होंने उनको एक श्रीफल (नारियल) भेंट किया तथा साष्टांग प्रणाम करके चुपचाप उनके सामने खड़े हो गये। स्वामीजीने उनसे कहा—"शिवाजी राजा, तुम अपने पत्रके साथ ही आप यहां आ पहुँचे हो, आज तुमने इतनी जल्दी की। मैं तुम्हारे राज्यमें बहुत दिनोंसे रहा हूं, तुमने मेरी सेवा बहुत की है, मुझे आश्चर्य है कि आज तुम मेरे पास क्यों आये हो!" शिवाजी महाराजने उत्तर दिया कि "मैं आपके दर्शनोंके लिये बहुत दिनोंसे चेष्टा कर रहा हूं, परन्तु मुझे श्रीमानके दर्शन नहीं हो सके। इसके लिये मैं आपसे क्षमा चाहता हूं। अब मैं यही चाहता हूं कि आप मुझे उपदेश दें और अपना शिष्य करें। यह मेरी उत्कट कामना है और इसको पूर्ण करना आपके हाथ है।" श्रीसमर्थ रामदास स्वामीने शिवाजी की यह प्रार्थना स्वीकार कर ली। कल्याण गुसाईंने गुरु पूजाकी सामग्री जुटायी। शिवाजीने स्नान किया, दिवाकर भट्टने गुरु पूजा करायी। पूजा करलेके पीछे शिवाजीने श्रीसमर्थके चरणोंमें अपना मस्तक रखके साष्टांग प्रणाम किया। फिर श्रीसमर्थने उन्हें उपासना मंत्रकी दीक्षा दी। यह कहा जाता है कि समर्थरचित दासबोधके तेरहवें अध्यायके छठे समास में "लघुबोध" नामक जो कविता है, यह वही दीक्षा है जो उन्होंने शिवाजीको दी थी।

श्रीसमर्थके दर्शनों और दीक्षासे शिवाजी महाराजके हृदय

पर विलक्षण प्रभाव पड़ा। वे राज्यकार्य्य त्याग करके साधु संन्यासियोंके समान श्रीसमर्थके साथ रहना चाहते थे। कहते हैं उन्होंने श्रीसमर्थसे यह कहा भी था कि अब मेरा जी राज्यके कामधन्धोंमें नहीं लगता है। अब मैं अपना शेष जीवन आपकी सेवामें बिताना चाहता हूं। शिवाजीके यह वाक्य सुनकर श्रीसमर्थ रामदास स्वामी बहुत बिगड़े और कहा कि "क्या तुम इसीलिये हमारी शरणमें आये हो। तुम क्षत्रिय हो, क्षत्रियका कर्त्तव्य अपने देश और जातिकी रक्षा करना है। क्षत्रियका कर्त्तव्य देव-ब्राह्मणोंकी सेवा करना है। तुम्हें अभी बहुतसे कार्य्य करने हैं। इस भारतभूमिका म्लेच्छोंके हाथसे उद्धार करना है। श्रीरामकी यही इच्छा है कि तुम इस कार्य्यको करो। श्रीकृष्णने श्रीमद्भगवद्गीतामें क्षत्रियोंके जो कर्त्तव्य अर्जुनको बतलाये थे, वही कर्त्तव्य तुम्हारा है। तुम्हें अपने हृदयमें इस तरहके विचार भी नहीं लाने चाहिये।" यह उपदेश सुनकर शिवाजीने वैराग्यसे अपना चित्त हटा लिया।

इसके पीछे प्रायः शिवाजी श्रीसमर्थसे मिलने जाते थे और धर्मसम्बन्धी उपदेश ग्रहण करते थे। कहते हैं कि श्रीसमर्थने उन्हें तीन कार्य्य करनेका उपदेश दिया था। शिवाजी शैव थे। अतएव श्रीसमर्थने उनसे कहा कि श्रावण मासमें एक करोड़ पार्थिव निर्माण करके शिवलिङ्गकी पूजा किया करो और ब्राह्मणको भोजन कराया करो। दूसरे—श्रावण मासमें अपने राज्यके विद्वान ब्राह्मणोंको बुलाकर आदर-सत्कार

करो जिसके विषयमें पीछे लिखा जा चुका है—अपने पत्र व्यवहारमें हिन्दुओंको "राम, राम" लिखा करो और आपसमें मिलते समय भी "राम,—राम" कहा करो। श्रीसमर्थ रामदास स्वामीसे पहले भी "राम,—राम" कहनेकी रीति प्रचलित थी। इससे यही प्रतीत होता है कि श्रीसमर्थने इस रीतिका महाराष्ट्रमें विशेष प्रचार किया होगा। इतिहासमें श्रीसमर्थ रामदास स्वामीका भगवा झण्डा बहुत प्रसिद्ध है। कहा जाता है कि श्रीसमर्थ रामदास स्वामी जैसे रङ्गके वस्त्र पहनते थे उस रङ्गका ही भगवा झण्डा होता था। कुछ भूरा और नारङ्गी रङ्गका भगवा झण्डा होता था। भगवे झण्डेकी उत्पत्ति के विषयमें नीचे लिखी आख्यायिका विख्यात है कि सितारा विजय प्राप्त करनेके पीछे शिवाजी सितारा पहुंचे हुए थे। वहां श्रीसमर्थ अपनी शिष्य-मण्डली सहित भिक्षाके निमित्त गये थे। उन्हें सितारामें शिवाजीकी उपस्थितिकी कुछ खबर न थी। नगरके प्रत्येक गृहस्थके द्वारपर भिक्षा मांगते हुए वे वहां पहुंचे जहां शिवाजी ठहरे थे। शिवाजीको "जय जय रघुवीर समर्थ"की आवाज सुनायी पड़ी। बाहर आये तो देखा कि स्वयं रामदास भिक्षार्थी हो द्वारपर खड़े हैं। शिवाजीने समर्थ योग्य ही भिक्षा प्रदान की। उन्होंने अपने राज्यका दानपत्र लिखकर भिक्षार्थीकी झोलीमें डाल दिया। दानपत्रको देखकर समर्थ रामदास स्वामीने कहा—"क्यों शिवाजी, यह कैसी भिक्षा! मुझे गर चावल डालते तो दोपहरका समय कटता! आज क्या

कागजका टुकड़ा ही समर्पित करके हमारा आतिथ्य करते हो? इतना कहकर जब उन्होंने वह कागज निकालकर पढ़ा तब उन्हें मालूम हुआ कि शिवाजीने अपना समस्त राज्य अर्पण कर दिया है। यह देखकर स्वामीजीने शिवाजीको समझाया कि राज्य करना क्षत्रियोंका ही धर्म है, हम संन्यासियोंको इसे लेकर क्या करना है। परन्तु शिवाजीने अपना आग्रह न छोड़ा। तब समर्थ रामदास स्वामीने कहा—"अच्छा यह राज्य मेरा ही सही, परन्तु मुझे मन्त्री चाहिये। आप मन्त्रीके तौरपर इस राज्यकी रक्षा कीजिये। शिवाजीने रामदास स्वामीसे उनकी पादुका (खड़ाऊं) माग ली और खड़ाऊं स्थापन करके राज्य करने लगे। श्रीसमर्थके भगुए वस्त्रके रङ्गके समान ही उन्होंने अपने राष्ट्रीय झण्डेका रङ्ग रखा। इसी समयसे महाराष्ट्र राज्यमें समर्थ रामदास स्वामीका भगवा झण्डा फहराने लगा जो इतिहासमें चिरप्रसिद्ध है।* सितारा विजयके पीछे शिवाजीने पारली (जिसको सज्जनगढ़ भी कहते हैं) में श्रीसमर्थ रामदास स्वामीके आश्रमकी व्यवस्था की।

श्रीसमर्थ रामदास स्वामी शिवाजीके धर्मगुरु थे अथवा उनसे उन्हें राजनीतिक कार्य्योंमें भी सहायता मिलती थी। इस विषयमें आजकल इतिहासलेखकोंमें बड़ा मतभेद है। कई इतिहास-लेखक कहते हैं कि शिवाजीको स्वराज्य-स्थापनमें भी

* श्री कृष्णराव अर्जुन केलुसकर लिखते हैं कि इस घटनाका किसी ग्रन्थमें उल्लेख नहीं है।

श्रीसमर्थ रामदाससे सहायता और सम्मति प्राप्त होती थी। स्वर्गीय श्रीरानाडे आदि कई इतिहास-लेखकोंका कहना है कि समर्थ रामदास स्वामी तथा महाराष्ट्रके अन्य साधुओंके उपदेशोंमें धर्ममूलक राज्यक्रान्तिका आवेश है। पर आजकलके महाराष्ट्र इतिहास-लेखक यह स्वीकार नहीं करते। इन इतिहास लेखकोंका कथन है कि शिवाजी भी समर्थ रामदास स्वामीके हाथकी कठपुतली न थे, उन्होंने केवल उनसे धर्मोपदेश ग्रहण किया था और वे समय समयपर उनसे धर्मशिक्षा ग्रहण करते थे। राजनीतिक विषयोंमें शिवाजी उनसे परामर्श नहीं करते थे। प्रोफेसर यदुनाथ सरकारने भी लिखा है—

"An attempt has been made in the present generation to prove that the Maratha national hero's political ideal of an independent Hindu Monarchy was inspired by Ramdas but the evidence produced is neither adequate nor free from Suspicion The holy man's influence on Shivaji was Spiritual, and not political"

इसका भावार्थ यह है कि वर्त्तमान समयमें इस बातको प्रमाणित करनेका उद्योग किया गया है कि रामदासने मराठा राष्ट्रवीर (शिवाजी) को स्वतन्त्र हिन्दू राज्य स्थापित करनेमें उत्साहित किया था, परन्तु इस विषयके जो प्रमाण दिये जाते हैं न तो वे यथेष्ट ही हैं और न सन्देहसे रहित हैं। शिवाजीपर इस श्रेष्ठ व्यक्ति (रामदास स्वामी) का प्रभाव धार्मिक था राजनीतिक नहीं।"

इस विषयमें कई बातें विचारने योग्य हैं। श्रीसमर्थ, शिवाजीसे १८ १६ वर्ष पहले इस धराधाममें आये थे। उन्होंने धर्मका प्रचार शिवाजीकी स्वराज्य कल्पनासे पूर्व किया था। हिन्दुओंके धार्मिक तत्त्वोंसे राजनीति अलग नहीं है। हिन्दुओंके साम्प्रदायिक ग्रन्थोंमें राजनीतिक और धार्मिक सिद्धान्त दोनोंका मिश्रण इस प्रकार है कि राजनीति और धर्म अलग अलग होनेपर भी एक ही प्रतीत होते हैं। श्रीसमर्थके दासबोधमें भी धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक सुधारों का उपदेश है। हो सकता है कि विशेष राजनीतिक विषयों मे शिवाजी श्रीसमर्थसे परामर्श लेते हों और यह भी हो सकता है कि श्रीसमर्थ, राजाओंके कर्त्तव्य आदि विषयोंपर शिवाजीको उपदेश देते हों, प्राचीन राजनीतिके तत्त्व समझाते हों। हिन्दुओंके धार्मिक ग्रन्थोंमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदि सभीके कर्त्तव्य कर्मका निरूपण किया गया है। राजाओंके कर्त्तव्यका उल्लेख करते समय अनेक ग्रन्थोंमें यहांतक लिखा हुआ है कि किला कैसा बनाना चाहिये, सेना कैसी रखनी चाहिये, वैरीके साथ किस प्रकारका व्यवहार करना चाहिये। ऐसी बातें वर्त्तमान परिस्थितिकी दृष्टिसे देखें तो राजनीतिके सिवा और कुछ प्रतीत नहीं होतीं, पर हिन्दुओंके धार्मिक ग्रन्थोंमें ये सब राजाओंके कर्त्तव्य वर्णित हैं। अतएव श्रीसमर्थ भी उस समयके क्षत्रियोंको उनका कर्त्तव्य सुझाते थे, इसमें आश्चर्य ही क्या है? कठिन समस्याएं उपस्थित होनेपर

धर्म क्या था ? यह कर्तव्य और धर्म महाराष्ट्रोंका स्वराज्य स्थापन और स्वराज्य-रक्षा ही थी। श्रीसमर्थ रामदास स्वामीका निर्वाण—संवत् १७३८ फाल्गुण कृष्ण—शाके १६०३ माघकृष्ण—सन् १६८२ ई० को हुआ था।

साधु तुकाराम—साधु तुकाराम महाराष्ट्रमें बड़े भारी महात्मा और त्यागी उपदेशक हुए हैं। अनेक लोगोंका तो यहां तक कथन है कि महाराष्ट्रमें साधु तुकारामका अपने समका लीन साधु-महात्माओंमें सर्वोच्च स्थान था। ये जैसे उच्चकोटिके महात्मा, त्यागी और उपदेष्टा थे, वैसे ही कवि थे। इनके रचित भक्ति और वैराग्य विषयक अभङ्ग (भजन) आजकल भी महाराष्ट्र लोग बड़े चावसे गाते हैं। शिवाजीकी इनपर पूर्णभक्ति थी। यह ऊपर लिखा जा चुका है कि पहले शिवाजी इन्हींसे दीक्षा लेना चाहते थे, परन्तु उनके देहान्त हो जानेके कारण शिवाजीने समर्थसे दीक्षा ग्रहण की थी। साधु तुका राम जातिके वैश्य थे, देहू नामक गाँवके रहनेवाले थे। यह गाँव पूनासे पूर्व उत्तरकी ओर १५ मीलकी दूरीपर बसा हुआ है। तुकारामके एक पूर्वज विश्वम्भर, भगवान कृष्ण और रुक्मि णीके बड़े भारी भक्त हुए थे, उन्होंने इन्द्रायणी नदीके तटपर भी भगवानकृष्ण और रुक्मिणीका मन्दिर बनवाया था। तुका रामके पिताका नाम बाल्होजी और माताका नाम कंकी था। तुकाराम तीन भाई थे, इनके बड़े भाई सवजी थे, बाल्यावस्थामें ही विरक्त हो गये थे। तुकारामके छोटे भाईका नाम कन्होबा

था। तुकारामके जन्मके वर्षके विषयमें मतभेद है। श्री राजवाड़ेके मतसे उनका जन्म शाके १४९० (सन् १५६८ १५६९ ई०) में हुआ था और सर रामकृष्ण भण्डारकरके मतसे तुकारामका जन्म शाके १५३० (सन् १६०७ १६०८ ई०) में हुआ था। सिक्खमतके जन्मदाता और आदिगुरु श्रीनानक देवके चरित्रके समान तुकारामके चरित्रकी बहुतसी घटनायें हैं। जिनका यहाँ उल्लेख करनेकी आवश्यकता नहीं है। कई पारिवारिक घटनाओंके कारण साधु तुकारामको वैराग्य हो गया था। वे भगवद्भजनमें लीन रहते थे। उनके कीर्त्तनको सुनकर अनेक व्यक्ति मुग्ध हो जाते थे। शिवाजी भी साधु तुकारामका कीर्त्तन सुनकर मुग्ध हो जाते थे। एक बार तुकारामके भक्तोंने पूनाके कई स्थानोंमें उनके कीर्त्तनकी व्यवस्था की। उन दिनों शिवाजी सिंहगढ़के किलेमें थे। वे नित्य रातको कीर्त्तनके समय पूना आते और कीर्त्तनकी समाप्तिपर पूनासे लौट जाते थे। शिवाजीके मुसलमान वैरियोंको यह पता लगा कि नित्य रातके समय शिवाजी पूना आते और लौट जाते हैं तो उन्होंने शिवाजीको पकड़नेकी सोची। चाकणके मुसलमान सूबेदारने शिवाजीके पकड़नेका प्रबन्ध किया। पूनामें एक बनियाके घरमें एक दिन कीर्त्तन था। शिवाजी नित्यप्रतिके नियमके अनुसार उस दिन भी कीर्त्तन श्रवण करनेके लिये पूना पहुँचे। सूबेदारने दो हजार पठान शिवाजीको पकड़नेके लिये भेजे। पठान लोग नियत समय पर पूना पहुँचे और जिस बनियेके यहाँ कीर्त्तन था उस बनियेके

घरको चारों ओरसे घेर लिया। पठान, शिवाजीको पहचानते न थे, इसलिये वे जो कोई आदमी आता उसीको पकड़ते थे। इससे कीर्त्तनमें उपस्थित सभी मनुष्य अत्यन्त भयभीत हुए। यह देखकर तुकारामने उपस्थित जनतासे ऐसी घबराहट और डरनेका कारण पूछा। उपस्थित मनुष्योंने उत्तर दिया कि शिवाजीको पकड़नेके लिये पठान आये हैं, यदि आप आज्ञा दें तो हम लोग भाग जायँ जिससे शिवाजीके जीवनकी रक्षा हो। यह सुनकर साधु तुकारामने कहा कि पठानोंके डरके मारे कीर्त्तनके बीचमेंसे उठकर जाना ठीक नहीं है। विशेषतः एकादशीके दिन जो भगवानके स्मरण और भजन करनेका दिन है। ऐसे दिन भगवद्भजन करते हुए जो मृत्यु होती है, वह मुक्ति प्रदायिनी होती है। और इस संसारके मायाजालके फन्देसे सदैवके लिये छुटकारा हो जाता है। इतना कहकर वे मौन धारणकर भगवद्भजनमें लीन हो गये थे। उन्हें इस प्रकार भगवद्भजन करते देखकर उपस्थित जनता—"विट्ठल, विट्ठल" कहकर चिल्लाने और करतलध्वनि करने लगी। शिवाजीने ऐसी दशामें कीर्त्तन-स्थानसे न चलने और जो कुछ परिणाम हो, उसको भुगतनेकी ठान ली कि इतनेमें शिवाजीके एक सरदारने शिवाजीकी पगड़ी पहन ली और एक घोड़ेपर सवार होकर पठानोंके बीचमें होकर निकल गया। पठानोंने समझा कि ये शिवाजी जा रहे हैं, वे उस मराठा सवारके पीछे दौड़ गये। वह मराठा-सरदार बहुत दूर निकल गया,

पठानोंके हाथ नहीं आया। कुछ थोड़ेसे पठान कीर्त्तन स्थानपर रहे। पर जब रात बहुत हो गयी तब वे लोग भी चले गये। पठानोंके चले जानेके पीछे शिवाजी भी कीर्त्तन स्थानसे अपने स्थान सिंहगढ़ सकुशल लौट आये।

एक बार शिवाजीको तुकारामके कीर्त्तनका श्रवण करके वैराग्य उत्पन्न हो गया था। लोहगाँवमें तुकारामने कई दिवस तक कीर्त्तन किया था। शिवाजी नित्यप्रति कीर्त्तन सुनने आते थे। एक दिन साधु तुकारामका वैराग्य विषयक कीर्त्तन अत्यन्त प्रभावशाली था। शिवाजी भी इस कीर्त्तनमें पधारे थे। उनके हृदयपर भी इस कीर्त्तनका अद्भुत प्रभाव हुआ और उन्हें एकदम वैराग्य हो गया। सब सरदारोंने उन्हें समझाया कि आपको ऐसा करना उचित नहीं है। आप पहलेके समान ही राज काज कीजिये। पर उन्होंने किसीकी भी नहीं सुनी। यह देखकर शिवाजीके सरदारोंने शिवाजीकी माता जीजाबाईसे शिवाजीको समझानेकी प्रार्थना की। सरदारोंसे जीजाबाई सब हाल सुनकर पालकीमें सवार होकर लोहगांव आयीं और साधु तुकारामसे मिलीं। उन्होंने तुकारामसे शिवाजीके राज काजसे विरक्त होनेका सम्पूर्ण वृत्तान्त कहा जिसको सुनकर तुकारामने उन्हें आश्वासन दिया कि आज शिवाजी कीर्त्तन सुनने आवेंगे तो मैं ऐसा उपदेश दूँगा कि वे दूने उत्साहसे अपने राज काजमें लग जावें। यह कह उन्होंने जीजाबाईको विदा किया।

उसी दिन रातको फिर कीर्त्तन हुआ। जीजाबाई भी कीर्त्तन

आगे उन्होंने पुराणप्रसिद्ध, अम्बरीष, जनक, धर्म आदिकी कथाएं सुनायीं कि वे किस प्रकारसे राज्यकाज करते हुए और गृहस्थाश्रममें रहते हुए भी भगवद्भजनमें लीन रहते थे और इस प्रकार अपने कर्त्तव्य पालन करनेके कारण वे राजर्षि कहलाये। हरिभक्तिके निमित्त किसी राजाको अपने राज्य परित्याग करनेकी आवश्यकता नहीं है। शिवाजीने साधु तुकारामका यह उपदेश सुनकर अपनी पूज्य माता जीजाबाई तथा साधु तुकारामके चरणोंमें अपना मस्तक नवा दिया। फिर वे कीर्त्तनके बाद अपने घर चले आये और पहलेसे भी अधिक उत्साहसे राजकाज करने लगे।

शिवाजीकी साधु तुकारामपर अत्यन्त भक्ति थी। उन्होंने साधु तुकारामको अपने यहाँ आनेके लिये अत्यन्त आदरभावसे पालकी आदि भेजकर निमन्त्रण दिया पर साधु तुकाराम नहीं आये। उन्होंने अपने न आनेका कारण निम्नलिखित पद्योंमें लिखा —

"अरण्यवासी आम्हा फिरों उदासीन
दर्शन हें हीन अमंगळ ॥१॥
सत्त्वाक्षीण काया म्हातीसे मळीन
अन्नरहित जाण फळाहारी ॥२॥
रोड हातपाय दिसे अवकळा
काय तो सोहळा दर्शनाचा ॥३॥
तुका म्हणे माझी विनंती सद्गीर्षी

वार्ता हे भेटीची करूँ नका ॥४॥
तुम्हां पाशीं आम्ही येऊनियां काय
वृथा आहे शीण चालायाचा ॥५॥
निद्रेसी आसन उत्तम पाषाण
वरी आवरण आकाशाचें ॥६॥
ते थें काम करूँ कवणाची हे आस
वाया होय नाश आयुष्याचा ॥७॥
राजगृहा यावें माना चिये आसे ।
त थें काय वसे समाधान ॥८॥
दखो नियां वस्त्रभूषणाचे मन ।
तत्काल मरण येतें आम्हां ॥९॥
एकोनियां मानी उदास महाल जरी ।
तरी आम्हां हरि उपेक्षीना ॥१०॥
मुक्त म्हणे आम्ही श्रीमन्त मनाचे ।
पूर्वीस दैवाच दरीम ॥११॥

इन पद्योंका भावार्थ यह है कि हे शिवभूपति! हम उदासीन होकर जङ्गलमें घूमते फिरते हैं। हमारा दर्शन आनन्ददायक नहीं है, वस्त्र न रहनेसे हमारा शरीर मलिन है, अन्नरहित फल खानेसे हाथपांव कृश हो गये हैं। ऐसे विरूपाकृतिके दर्शनसे क्या लाभ होगा? इसलिये कहता हूं कि मेरे दर्शनकी इच्छा मत कर। तेरे पास आकर मुझे क्या मांगना है? स्वयं जङ्गलेका

दुःखमात्र होगा। निद्राके लिये पत्थर उत्तम है और ओढ़नेके लिये आकाश विस्तृत है। ऐसी अवस्थामें कौनसी आशा करके मैं आपके पास आऊं! सम्मानके लिये राजगृहको लोग जाते हैं, परन्तु उससे मुझे समाधान नहीं होता। वस्त्राभूषणाच्छादित जन देखकर मुझे मरण आता है, इसलिये मेरे दर्शनकी इच्छा मत रखो। यदि यह सुनकर तुम उदास हो जाओगे तो मेरी उपेक्षा परमेश्वर नहीं करेगा। हम जो परमेश्वरभक्त हैं वे मनके श्रीमन्त हैं। यहां द्रव्यकी आवश्यकता नहीं है। साधु तुकारामका यह उत्तर पाकर शिवाजी क्रोधित नहीं हुए और किसी प्रकारसे उनके दर्शन किये। वे बराबर साधु तुकारामके कीर्तन श्रवण करनेके लिये आते थे, जिसके विषयमें ऊपर लिखा जा चुका है। साधु तुकारामका देहान्त संवत् १७०६ वि० सन् १६४९ ई० में हुआ।

महात्मा तुकारामके अतिरिक्त शिवाजी और भी कितने ही साधु महात्माओंके भक्त थे। कविवर महीपतिने अपने "भक्त विजय" नामक काव्यमें लिखा है कि एक बार शिवाजी पेढ़ापुरमें थे। वहां उन्हें पता लगा कि उज्जैनके साधु गणेशनाथजी कहीं जङ्गलमें ठहरे हुए हैं। यह पता पाते ही शिवाजी साधु गणेशनाथजीके दर्शनके लिये गये। बड़ी कठिनतासे उन्हें साधु गणेशनाथजीके दर्शन हुए और गणेशनाथजीको अपने साथ शिवाजी अपने डेरेमें लाये। रातके समय साधु गणेशनाथजीके सोनेका प्रबन्ध किया गया। बहुत बढ़िया पलङ्ग, उसपर अत्यन्त मुला

यम विस्तर बिछाये गये और ओढनेके लिये भी बढ़िया बढ़िया वस्त्र पलङ्गपर रख दिये गये थे। साधु गणेशनाथ जब सोनेके लिये पहुंचे तो इस प्रकारके ओढ़ने बिछानेके वस्त्र देखकर इन्हें भोग विलाससे घृणा हुई। त्यागमूर्त्ति गणेशनाथको इस प्रकारके विस्तरपर सोना पसन्द नहीं हुआ। उन्होंने अपने विस्तरपर कङ्कड़, पत्थर बखेर लिये और उसपर सोये। शिवाजी यह देख कर बहुत ही चकित स्तम्भित हुए। उन्होंने साधु गणेशनाथके इस कार्यसे भी शिक्षा ग्रहण की और अपने बहुमूल्य पलङ्ग, बिस्तर आदि बेच दिये, इनका जो कुछ मूल्य आया, उसे गरीब आदमियोंमें बांट दिया और उस दिनसे वे साधारण बिछौने और पलङ्गपर सोते थे। यदि आजकलके राजाओंके समयमें साधु गणेशनाथ ऐसा कार्य करते तो राजा लोग उन्हें जङ्गली कहकर घृणाकी दृष्टिसे देखते। यह शिवाजी थे जिन्होंने साधु गणेशनाथके इस कार्यसे भी शिक्षा ग्रहण की थी।

शिवाजीके यहां साधु सन्तोंका समागम बराबर रहता था, कङ्कलके देवभारती, वामदेवके तपोनिधि देवभारती और कोंकणके सिद्धेश्वरभट्ट मुक्तेश्वर, वामन पण्डित, जयराम स्वामी, रङ्गनाथ स्वामी, आनन्दमूर्त्ति, केशव स्वामी आदि अनेक साधु महात्माओंसे उनका समागम होता था। वे इन साधु महात्माओंके उपदेश सुनते थे और उनका यथोचित आदर सत्कार करते थे।

बाईसवां परिच्छेद

भूषण और छत्रसाल

"सदा बीज सखि पीलको सबन तज्यो मन ध्यान।
धनि सरजा तू जगतमें ताको हरयो गुमान॥
तू ही सांच द्विजराज है तेरी कला प्रमान।
तो पर सिवा किरपा करी जानत सकल जहान॥"

शिवाजीके दरबारमें कोई गुणी जाता तो खाली नहीं जाता था। वे जिस प्रकार साधु सन्तोंके प्रति श्रद्धा और भक्ति प्रकट करते थे, वैसे ही वे विद्वान् ब्राह्मणोंका आदर-सत्कार करते थे, शूरवीरोंकी प्रतिष्ठा करते थे, उसी प्रकारसे अन्य गुणियोंका भी मान करते थे। कोई भी गुणी जो उनके दरबारमें पहुंचता निराश नहीं होता था। संवत् १७२४ वि०—सन् १६६७ ई० में प्रसिद्ध कवि भूषण, शिवाजीके राज्यमें पहुंचे और शिवाजीके यहां ही रहे। भूषण कानपुर जिलेके तिकवांपुर गांवके रहनेवाले कान्यकुब्ज ब्राह्मण कहे जाते हैं। संस्कृत और हिन्दीके प्राचीन कवियोंमें ऐसे बहुत थोड़े कवि हुए हैं जिन्होंने अपने विषयमें कुछ लिखा हो, उन्होंने दूसरोंकी प्रशंसामें बड़े बड़े पोथे लिख डाले पर अपने सम्बन्धमें किसी किसीने एक अक्षर भी नहीं लिखा है। इससे उनके चरित्र, कुल आदिके वृत्तान्त जाननेमें

यम विस्तर बिछाये गये और ओढ़नेके लिये भी बढ़िया बढ़िया वस्त्र पलङ्गपर रख दिये गये थे। साधु गणेशनाथ जब सोनेके लिये पहुंचे तो इस प्रकारके ओढ़ने बिछानेके वस्त्र देखकर उन्हें भोग विलाससे घृणा हुई। त्यागमूर्त्ति गणेशनाथको इस प्रकारके बिस्तरपर सोना पसन्द नहीं हुआ। उन्होंने अपने बिस्तरपर कङ्कड़, पत्थर बटोर लिये और उसपर सोये। शिवाजी यह देख कर बहुत ही चकित स्तम्भित हुए। उन्होंने साधु गणेशनाथके इस कार्यसे भी शिक्षा ग्रहण की और अपने बहुमूल्य पलङ्ग बिस्तर आदि बेच दिये, उनका जो कुछ मूल्य आया, उसे गरीब आदमियोंमें बांट दिया और उस दिनसे वे साधारण बिछौने और पलङ्गपर सोते थे। यदि आजकलके राजाओंके समयमें साधु गणेशनाथ ऐसा काम करते तो राजा लोग उन्हें उद्दण्ड कहकर घृणाकी दृष्टिसे देखते। यह शिवाजी थे जिन्होंने साधु गणेशनाथके इस कार्यसे भी शिक्षा ग्रहण की थी।

शिवाजीके यहां साधु-सन्तोंका समागम बराबर रहता था, कर्णाटकके देवनारली, खानदेशके तपोनिधि देवमारली और कोंकणके सिद्धेश्वरभट्ट मुकाश्वर, वामन पण्डित, जयराम स्वामी, रघुनाथ स्वामी, आनन्दमूर्त्ति, केशव स्वामी आदि अनेक साधु महात्माओंसे उनका समागम होता था। वे इन साधु महात्माओंके उपदेश सुनते थे और उनका यथोचित आदर सत्कार करते थे।

बाईसवां परिच्छेद

भूषण और छत्रसाल

"बड़ा डील मति पीलको सबन तज्यो बन थान।
धनि सरजा तू जगतमें ताको हरयो गुमान॥
तू ही सांच द्विजराज है तेरी कला प्रमान।
तो पर सिव किरपा करी जानत सकल जहान॥"

शिवाजीके दरबारमें कोई गुणी जाता तो खाली नहीं आता था। वे जिस प्रकार साधु सन्तोंके प्रति श्रद्धा और भक्ति प्रकट करते थे, वैसे ही वे विद्वान् ब्राह्मणोंका आदर-सत्कार करते थे, शूरवीरोंकी प्रतिष्ठा करते थे, उसी प्रकारसे अन्य गुणियोंका भी मान करते थे। कोई भी गुणी जो उनके दरबारमें पहुंचता निराश नहीं होता था। संवत् १७२४ वि०—सन् १६६७ ई० में प्रसिद्ध कवि भूषण, शिवाजीके राज्यमें पहुंचे और शिवाजीके यहां ही रहे। भूषण कानपुर जिलेके तिकवांपुर गांवके रहनेवाले कान्यकुब्ज ब्राह्मण कहे जाते हैं। संस्कृत और हिन्दीके प्राचीन कवियोंमें ऐसे बहुत थोड़े कवि हुए हैं जिन्होंने अपने विषयमें कुछ लिखा हो, उन्होंने दूसरोंकी प्रशंसामें बड़े बड़े पोथे लिख डाले पर अपने सम्बन्धमें किसी किसीने एक अक्षर भी नहीं लिखा है। इससे उनके चरित्र, कुल आदिके वृत्तान्त जाननेमें

बड़ी कठिनाई उपस्थित होती है। उनकी रचनाओंके आधारसे अथवा अन्य किसी प्रकारकी अटकलसे जो कुछ वृत्त ज्ञात होता है, उसीपर निर्भर रहना पड़ता है। भारतके प्राचीन इतिहासके समान भारतके प्राचीन कवियोंका भी वृत्त प्राप्त नहीं होता।

भूषणजीके जन्म संवत् आदिका कुछ पता नहीं चलता। भूषणजीके दो और भाई, चिन्तामणि और मतिराम भी थे। ये दोनों भाई भी कवि थे। अबतक भूषणके चरित्रका जो कुछ पता चला है, उससे ज्ञात होता है कि युवावस्थाके आरम्भिक समयमें ये बिल्कुल अपढ़ और निकम्मे थे, कुछ रोजगार धन्धा न करते थे। उनके ज्येष्ठ सहोदर द्रव्योपार्जन करते थे और उन्हींके ऊपर सब कुटुम्बके भरण-पोषणका भार था। शायद चिन्तामणिकी स्त्रीको यह बुरा लगता होगा कि "मेरा पति कमावे और सब कुटुम्ब मौज उड़ावे।" क्योंकि कहा जाता है कि एक दिन भोजन करते समय भूषणने अपनी भावजसे नोन (लवण) मांगा तो उसने ताना मारते हुए कहा—"हां, कमा कर नमक तुमने रख दिया है न, जो उठा लाऊं।" यह व्यंगकी बात भूषणको असह्य हुआ। उन्होंने कहा—"जब नमक कमाकर लावेंगे तब ही भोजन करेंगे।" ऐसा कहकर वे अपने घरसे चल दिये।

सच तो यह है कि भूषणकी भावजका वाग्वरूपी बाण ही भूषणके जीवन-स्रोतको बदलनेवाला हुआ। उन्होंने कुछ विद्या और कवित्व-शक्ति प्राप्त की, फिर कई राजा, महाराजाओंके

दरबारमें गये, खूब धन और मान प्राप्त किया। कतिपय लेखकोंका कथन है कि भूषण औरङ्गजेबके दरबारमें भी रहते थे। कहते हैं कि एक दिन औरङ्गजेबने अपने कवियोंसे कहा कि आप लोग मेरी सदा प्रशंसा ही करते हैं, सो क्या मुझमें कुछ दोष नहीं है? यह सुनकर भूषणने कहा—"मेरे भाई चिन्तामणि की शृङ्गाररसकी कविता सुनकर आपका हाथ ठौर कुठौर पड़ता होगा पर मेरी कविता सुनकर आपका हाथ मूछोंपर पड़ेगा। अतएव मैं सच बात कहूं तो मुझे क्षमा की जाय।" बादशाहने उन्हें क्षमा वचन दे दिया और भूषणने निम्नलिखित दो कवित्त पढ़े —

"किबेेके ठौर बाप बादशाह साहिजहां ताको कैद किये मानो मक्के आगि लाई है। बड़ा भाई दारा वाको पकरिकै कैद कियो मेहरहु नाहिं वाको जायो सगो भाई है। बन्धु तौ मुरादबक्स बादि चूक करिबेको लै कुरान खुदाकी कसम खाई है। भूषन सुकवि कहै सुनो नवरंगजेब एते काम कीन्हे फेरि बादसाही पाई है।"

"हाथ तसबीन लिये प्रात उठि बन्दगीको आप ही कपट-रूप कपट सुजपक। आगरेमें जाय दारा चौकमें चुनाय लीन्हों छत्र ही छिनायो मनो बूढ़े मरे बपक॥ कीन्हों है सगोत घात सो मैं नाहिं कहौं फेरि पील पै तोरायो चार चुगुलके गपके। भूषन भनत छर छन्दी मतिमन्द महा सौ सौ चूहे खाय कै बिलारी बैठी तपके॥"

इन कवित्तोंको सुनकर भूषणसे बादशाह औरङ्गजेब बहुत

नाराज हुए और भूषण उनके दरबारसे चल दिये। इसके पीछे ये अपनी कबूतरी घोड़ीपर चढ़े चले आते थे कि सामने उन्हें औरङ्गजेब, जुम्मा मसजिदको नमाज पढ़नेके लिये आते हुए दिखलायी पड़े। उन्होंने बादशाहको सलाम न करके उनके साथी कर्मचारियोंको प्रणाम किया। इसपर बादशाह बहुत चिढ़े और उन्हें पकड़नेकी आज्ञा दी। पर ये अपनी कबूतरी घोड़ीको दौड़ाकर चल दिये और बादशाहके आदमियोंके हाथ नहीं आये। ये शिवाजीके दरबारमें पहुंचे। यहां इन्हें १८ लाख रुपये मिले जिनमेंसे एक लाख रुपयेका नमक उन्होंने अपनी भावज को भेज दिया। श्रीयुक्त श्यामबिहारी मिश्र एम० ए० तथा पं० शुकदेव बिहारी मिश्र बी० ए० भूषण ग्रन्थावलीकी भूमिकामें भूषणकी औरङ्गजेबको कवित्त सुनानेवाली घटनाको मनगढन्त और कल्पित बतलाते हैं। वास्तवमें उपयुक्त घटनामें दो बातें आश्चर्यजनक हैं। एक तो यह कि बादशाह औरङ्गजेब कविता प्रेमी न थे, उन्हें गाना बजाना भी पसन्द न था। ऐसी हालतमें यह विश्वास नहीं किया जाता कि उन्होंने भूषणसे कवित्त सुने होंगे, पर इससे यह तात्पर्य भी नहीं है कि उनके दरबारमें कवि न रहते हों। मुसल्मान बादशाहोंके राज्यमें हिन्दी कवियोंके रहनेका पता लगता है। अतएव भूषण भी औरङ्गजेबके दरबारमें कुछ दिनोंतक रहे हों तो आश्चर्य ही क्या है? यह हो सकता है कि स्वराज्यप्रेमी भूषण औरङ्गजेबके दरबारमें बहुत दिनोंतक न रहे हों और वहांसे अलग किये गये हों। दूसरी घटना

औरङ्गज़ेबको सलाम न करने और कबूतरी घोड़ीपर सवार होकर भागनेकी है। यह भी सन्देह जनक प्रतीत होती है, क्योंकि औरङ्गज़ेब बड़े क्रूर बादशाह थे। वे कदापि ऐसी बेअदबी सहन नहीं करते। पर इससे यह तात्पर्य्य नहीं है कि उन दिनों ऐसी घटनाओंका होना असम्भव था। सम्राट् शाहजहाँसे अमर सिंहका भरे दरबारमें झगड़ा हुआ था। जोधपुर-नरेश जसवन्त सिंह सरदार दुर्गादास औरङ्गज़ेबको चकमा देकर बालक अजीतसिंहको लेकर दिल्लीसे चला गया था। शिवाजीने भी औरङ्गज़ेबको आगरेसे भागनेमें बेतरह छकाया था। इसी तरहसे औरङ्गज़ेबके नाराज़ होनेपर भूषण भी किसी तरहसे औरङ्गज़ेबके यहाँसे भाग आये हों तो इसमें असम्भवकी कौनसी बात है।

शिवाजी और औरङ्गज़ेबकी भेंट भी विचित्र ढङ्गसे हुई। भूषण शिवाजीकी राजधानीमें सन्ध्या समय पहुंचे थे और एक देवालयमें ठहरे और कुछ रात बीते महाराज शिवाजी भी अकेले उक्त देवालयमें पूजनार्थ पहुंचे। भूषणने यह न पहचान कर कि ये कौन हैं उनसे शिवाजीके दरबारका वृत्तान्त पूछा और शिवाजीसे भेंट करनेकी इच्छा प्रकट की। इसपर शिवाजीने कहा कि दरबारमें पहुंचनेसे पहले हमें भी कोई छन्द सुनाइये। भूषणने बड़ी भड़कसे निम्नलिखित कवित्त पढ़ा।

"इन्द्र जिमि जम्भ पर बाड़व सुअम्भपर
रावन सदम्भपर रघुकुलराज है।
पौन बारिबाहपर सम्भु रतिनाहपर

ज्यों सहसबाहुपर राम द्विजराज है।
दावा द्रुमदुण्डपर चीता मृगझुण्डपर।
भूषन वितुण्डपर जैसे मृगराज है।
तेज तम अंसपर कान्ह जिमि कंसपर
त्यों मलिच्छ बंसपर सेर सिवराज है।"

शिवाजी इस कवित्तको सुनकर बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने भूषणसे १८ बार * उक्त कवित्त सुना और जब १९ वीं बार उन्होंने कवित्त सुननेकी प्रार्थना की तब भूषणजी थक गये। तब शिवाजीने† अपना परिचय दिया और कहा कि हमने प्रतिज्ञा की थी कि जितनी बार आप यह छन्द पढ़ेंगे, उतने ही लक्ष मुद्रा, उतने हाथी और उतने ही गौ हम आपको देंगे, सो अधिक मिलना आपके भाग्यमें न था। भूषण इतना ही धन प्राप्त करके बहुत प्रसन्न हुए और अपने भाग्यको सराहा।

उन दिनों शिवाजीकी कीर्त्ति भारतवर्षमें दूर दूरतक फैल गयी थी। हिन्दू-जातिका सौभाग्य सितारा डूब चुका था, औरङ्गजेबकी क्रूरता और धार्मिक कट्टरतासे हिन्दू भयभीत हो

* कोई कोई कहते हैं कि १८ नहीं ५२ बार भूषणने ५२ भिन्न भिन्न छन्द पढ़े और वे ही छन्द शिवबावनीके नामसे प्रसिद्ध हुए। कुछ लोगोंका इसके विरोधमें मत है कि एक ही छन्द ५२ बार पढ़ा गया था।

† किसी किसीका कहना है कि शिवाजीने इस प्रकार अपना परिचय नहीं दिया, केवल भूषणसे इतना ही कहा कि अब [illegible] बहुत [illegible] शिवाजीके [illegible] [illegible] हैं। भूषण [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] कि अब [illegible] [illegible] करता था, वही शिवाजी हैं।

रहे थे। मुसलमानोंके लगातार आक्रमणोंके कारण हिन्दू निस्तेज हो गये थे। राजपूताने तथा भारतवर्षके अन्य स्थानोंके क्षत्रिय वीरगण औरङ्गजेबके षड्यन्त्रके कारण—"किंकर्त्तव्य विमूढ़" होकर, कर्त्तव्यशून्य हो गये थे। ऐसे समयमें शिवाजीने महाराष्ट्रको पराधीनताकी बेड़ीसे मुक्त करनेकी जो चेष्टा की थी, उससे प्रत्येक हिन्दूके हृदयमें नवीन आकांक्षा और आशा पल्लवका उदय हुआ। उस समय समस्त भारतवर्षमें औरङ्गजेबके दांत किसीने खट्टे किये थे तो केवल एक शिवाजीने। वीरता, धीरता, कुटिलनीति आदि सब बातोंमें ही शिवाजी महाराज औरङ्गजेबसे बाज़ी मार ले गये थे। जिनका राज्य औरङ्गजेबकी नीतिके कारण हरण हो गया था अथवा जो स्वतन्त्रतादेवीकी उपासना करना चाहते थे और अपने देशकी दुर्दशासे दुःखी थे, उनके सामने उस समय जीता जागता उदाहरण और आदर्श सिवा शिवाजीके और कोई नहीं था। क्योंकि उस महाराष्ट्र-केशरीकी गर्जनासे गोलकुण्डा, बीजापुर और मुगल साम्राज्यके छक्के छूट गये थे। यह उस नर केशरीका ही यह कार्य्य था कि तीनों मुसलमानी राज्योंको अनेक प्रकारके नाच नचाकर एक दुर्जेय हिन्दू राज्यकी स्थापना की थी। इसलिये उस समय स्वभावतः ही उत्साही युवकोंको शिवाजीके छत्रतले अपने भाग्यकी परीक्षा करनेकी लालसा उत्पन्न हो गयी थी।

दूर दूरसे उत्साही युवक आ आकर शिवाजीके यहाँ नौकरी करते थे। उस समय उनके सिवा ऐसा और रा

था जो देशप्रेमी, यवनद्रोही हिन्दुओंको आश्रय दे सके और स्वतन्त्रता प्राप्तिका मार्ग बता सके।

स्वतन्त्रताके ऐसे उपासकोंमें बुन्देलखण्ड केशरी महाराज छत्रसाल थे। छत्रसाल, महोबा (बुन्देलखण्ड) के सरदार चम्पतरायके पुत्र थे। चम्पतराय भी बड़े स्वाधीनता प्रेमी थे। इतिहासप्रेमी पाठकोंसे यह छिपा हुआ नहीं है कि बादशाह शाहजहांके समयमें बुन्देलों और मुगलोंमें घोर युद्ध हुआ था। उस समय ओरछाके राजा जुझारसिंह थे। संवत १६०२ (सन् १६३१ ई०में बुन्देलखण्डपर चढ़ाई की। बुन्देलोंने भी मुगलसेनाके खूब दांत खट्टे किये। अन्तमें मुगलसेनाने ओरछा ले लिया। अनेक अत्याचार किये। उस समय जिन बुन्देलोंने बुन्देलखण्डकी रक्षाके निमित्त मुगल सम्राट् शाहजहांसे युद्ध ठाना था उनमें एक चम्पतराय भी थे। परन्तु चम्पतरायके पास बलशाली सैन्य अहौंका मुकाबिला करके बुन्देलखण्डको स्वतन्त्र करनेके साधन नहीं थे। अतएव उन्होंने मुगलोंकी अधीनता स्वीकार कर ली और दाराके साथ एक युद्धमें अत्यन्त वीरता प्रकट की, जिससे प्रसन्न होकर दाराने उन्हें अच्छी जागीर दी, किन्तु थोड़े दिनों पीछे ही चम्पतरायके भाग्यने फिर पलटा खाया। इनपर शाही महलमें चोरी करनेका इल्जाम लगाया गया, जिससे रुष्ट होकर बादशाहने इनकी जागीर छीन ली। कुछ इतिहास लेखक इनकी जागीर छिन जानेका कारण यह भी बतलाते हैं कि इन्होंने एक युद्धमें दाराके साथ मरुणामोंके विरुद्ध ऐसी वीरता दिखायी थी

कि दाराको इनसे द्वेष हो गया, जिसके कारण इनकी जागीर जब्त की गयी। खैर, चाहे जो कुछ हो, जिस समय भारतके राज-सिंहासनके लिये मुगल सम्राट् शाहजहाँके पुत्रोंमें युद्ध ठना था, उस समय ये औरङ्गजेबसे मिल गये और उन्हें सहायता दी थी।

चम्पतरायकी औरङ्गजेबसे भी बहुत दिनोंतक मित्रता नहीं निभी। किसी कारणसे औरङ्गजेबकी इनकी भी खटपट हो गयी। कोई कोई इतिहास-लेखक यह भी कहते हैं कि औरङ्ग-जेबने इनको बहुतसी जागीर दी थी पर इनके दिल्ली न रहनेसे उन्होंने जागीर जब्त कर ली। इस कारण अथवा और किसी कारणसे औरङ्गजेबसे यह बिगड़ गये। शाही सेना इनका जगह जगहपर पीछा करती रही। अन्तमें संवत् १७१२ वि० में चम्पत राय अपने कुछ साथियों सहित मुगलोंद्वारा घेर लिये गये। इनके बहुतसे साथी मारे गये और ये भी घायल होकर गिर पड़े। इनको रानीने देखा कि ये मुगलोंके हाथ पड़ जायँगे। यह सोचकर उसने इनको पिस्तौल मार दी और दूसरी गोली रानीने स्वयं अपने मार ली। इस प्रकार स्वाधीन-चेता चम्पतरायका अन्त हुआ।

चम्पतरायकी मृत्युके विषयमें किसी किसीका यह भी कहना है कि ये अपनी बहिनके यहाँ बीमारीकी दशामें गये परन्तु जब इन्हें ज्ञात हुआ कि इनकी बहिनके नौकर इन्हें पकड़ कर मुगलोंके यहाँ भेजना चाहते हैं तब इन्होंने संवत् १७२१ — सन् १६६४ ई० में आत्मघात कर लिया।

चम्पतरायकी मृत्युके कुछ दिनों पीछे छत्रसाल और अङ्गद रायने आमेराधिपति मिर्जा राजा जयसिंहके अधीन मुगल सेनामें नौकरी कर ली थी। मिर्जा राजा जयसिंहके अधीन छत्रसाल और उनके भाई अङ्गदरायने वीरता प्रकट की थी। पर इन्हें मुगल-सम्राट्से वीरताके लिये कुछ पुरस्कार नहीं मिला। इससे ये दोनों भाई मुगलोंकी सेवासे उदासीन हो गये थे और शिवाजीसे भेंट करनेका मनसूबा बांधा।

छत्रसाल और शिवाजीकी आपसमें भेंट कैसे हुई, इस विषयमें इतिहास-लेखकोंके पारस्परिक कथनमें कुछ मतभेद है। कोई कोई इतिहास-लेखक लिखते हैं कि दक्षिण जाते समय छत्रसाल अपने साथियोंसहित देलवारेमें ठहर गये। यहांके अमर ठाकुरकी लड़की देवकुमारीसे छत्रसालका विवाह हुआ। फिर अपने सारे कुटुम्बके साथ ये लोग दक्षिणको ओर चल पड़े।

परन्तु उस समय शिवाजीतक पहुंचना कुछ खेल न था। कई राजनीतिक कारणोंसे शिवाजीने अपने राज्यकी सीमाओं पर चौकियां बिठा रखी थीं पर छत्रसाल अपने कुटुम्बके साथ थियोंसहित किसी प्रकारसे इन चौकियोंसे निकल गये और शिवाजीतक पहुंच गये।

कहा जाता है कि शिवाजीसे इनका परिचय बड़े विचित्र ढङ्गसे हुआ। इन्होंने सुना था कि शिवाजीको लवा लड़ानेका बड़ा शौक है। इनके पास भी एक लवा था। दोनों चलो लड़ गये और इनके लवेने शिवाजीके सभी प्रधान लवोंको

हरा दिया। इसपर शिवाजी बहुत प्रसन्न हुए। इनकी वीराकृति देखकर और मुखमण्डलकी प्रभाने उनके चित्तको अपनी ओर आकर्षित कर लिया था। उन्होंने इनसे परिचय पूछा, इन्होंने अपना परिचय दिया और बुन्देलखण्डकी तत्का लीन परिस्थिति, अपने पिताकी आत्मबलि आदिका वर्णन करके अपने उच्च विचारोंको भी शिवाजीपर प्रकट किया। वे इनसे मिलकर बहुत प्रसन्न हुए। कुछ दिनों इन्होंने शिवाजीके यहाँ रहकर कई उपयोगी बातें सीखीं। जो काम इनको बुन्देल खण्डमें स्वराज्य स्थापन करनेके निमित्त करने थे, उन सब कामोंमें शिवाजी दक्ष थे। सेनाका प्रबन्ध, राज्यका शासन, प्रजाका पालन पोषण, युद्धकी सामग्रीका एकत्र करना, मुगलोंके साथ लड़नेकी रीति, विजित राज्योंसे कर लेना आदि अनेक विषयोंकी शिक्षा इन्होंने शिवाजीके यहा ग्रहण की थी।

इसके विपरीत कई इतिहास लेखकोंने यह लिखा है कि दक्षिणमें जब मुगल-सेना शिवाजीसे लड़ रही थी तब छत्रसाल भी मुगल-सेनामें थे और ये मुगलोंसे असन्तुष्ट होकर शिवा जीसे मिले थे। शिकारके बहाने अपनी स्त्रीको साथ लेकर भीमा नदीको पार करके ये शिवाजीसे मिले थे और बुन्देल खण्डको स्वाधीन करनेके विषयमें इन्होंने उनसे परामर्श किया। औरङ्गजेबसे लड़नेके लिये भी ये उनकी सेनामें रहना चाहते थे। इसपर उन्होंने इनको जो उत्तर दिया, वह लाल कविके शब्दोंमें सुनिये—

"सिया किसा मुनि के कहाँ, तुम छत्री सिरताज।
जीत अपनी भूमि को, करो देशको राज॥
करौ देशको राज छतारे, हम तुम तें कबहूँ नहिं न्यारे।
दौरि देस मुगलनके मारो, दबटि दिलीके दल सहारो॥
तुरकनकी परतीत न मानो, तुम केहरि तुरकन गज जानो।
तुरकनमें न बिबेक बिलोक्यो, मिलन गए उनको उन रोक्यो॥
हमको भई सहाइ भवानी, भय नहिं मुगलनकी मनमानी।
छल बल निकसि देशमें आये, अब हम पै उमराइ पठाये॥
हम तुरकनि पर कसी कृपानी, मारि करैंगे कीचक घानी।
तुम हू जाइ देस दल जोरो, तुरक मारि तरवारिन तोरो॥"

× × × ×

"हुलनिको यह वृत्त बनाई, सदा तेगकी खाइ कमाई।
गाइ बेद बिप्रन प्रतिपाले, घाउ एडभारिन पै घाले॥
तेगधारमें जो तन छूटे, तो रबि भेद सुरत सुख लूटे।
जैतपत्र जो रनमें पावै, तो पुहमीके नाथ कहावै॥
तुम हो महाबीर मरदाने, करिहो भूमि भोग हम जाने।
जो इत ही तुमको हम राखैं, तो सब सुजस हमरे भाखैं॥
ताते जाइ मुगल दल मारौ, सुनिय श्रवननि सुजस तिहारो।
यह कहि तेग मगाइ बधाई, बीर बखत दूनी दुनि धाई॥"

देखा पाठक! शिवाजीने वीर छत्रसालको अपने राज्यका उद्धार करनेके लिये किस भाँति उत्साहित किया। उन्होंने छत्रसालको जो बोलचिली उत्तर दिया, उसका सारांश यह है

कि "आओ तुम अपने देशको जीतो, क्षत्रियोंका सदासे यही काम रहा है कि वे अपनी तलवारकी कमाई खाते हैं। तुम वीर हो, अपने शत्रुओंको मार भगाओ। इसमें मैं तुमसे अलग नहीं हूं। मुगलको मारो और दिल्लीके सैन्य दलका संहार करो। तुर्कोंका विश्वास मत करो, तुम अपनेको सिंह समझो और उन्हें हाथी जानो। तुर्कोंका भरोसा मत करो, जो बुन्देले उनमें मिल रहे हैं उनको रोको। भवानीकी कृपासे हमें मुगलोंका कुछ भय नहीं है। भवानी ही हमें सहाय हुई है। जब हमें धोखेसे कैद कर लिया और हम धोखेसे निकलकर अपने देशमें आ गये तब हमारे ऊपर चढ़ाई करनेके लिये बादशाहने बड़े बड़े उमराव भेजे हैं। हमने अब तुर्कोंपर अपनी तलवार उठायी है, अब हम उन्हें मजा चखा देंगे। तुम अपने देशमें जाकर सैन्य दल इकट्ठा करके तुर्कोंसे युद्ध करो और उन्हें मार भगाओ।"

क्षत्रियोंकी सदैवसे यही रीति चली आती है कि वे नित्य प्रति अपनी तलवारकी कमाई खाते हैं। किसीके आसरे नहीं रहते हैं। गो, वेद और ब्राह्मणोंकी रक्षा करते हैं। अभिमानियोंका अभिमान चूर्ण करते हैं। युद्धमें मृत्यु प्राप्त होनेपर वे सीधे स्वर्गको सिधारते हैं। इस प्रकार उन्होंने बुन्देला वीर छत्रसालको उत्साहित करके एक तलवार मंगायी और छत्रसालकी कमरमें बांध दी।

शिवाजीके ओजपूर्ण और उत्साहवर्द्धक परामर्शका जो प्रभाव छत्रसालके हृदयपर हुआ, वह भी लाल कविके शब्दोंमें सुनिये —

"आदर सों किन्हे बिदा, सिवा भूप सुख पाइ।
मिली मनो उर उमगमें, भूमि भावति भाइ॥"

इतिहास-रसिक पाठकोंसे छिपा हुआ नहीं है कि बुन्देला वीर छत्रसालने शिवाजीके उपदेशके अनुसार अपना राज्य मुगल सम्राट् औरङ्गजेबके चङ्गुलसे निकाल लिया था और आज भी बुन्देलखण्डमें ३२ देशी रियासतोंमेंसे आठ रियासतें महाराज छत्रसालके वंशधरोंके हाथमें हैं। अतएव शिवाजीका उपदेश खाली नहीं गया।

पगसन (Pagson) ने बुन्देलोंके इतिहासमें शिवाजी और छत्रसालकी भेंटका वर्णन लाल कविकृत छत्र प्रकाशसे मिलता जुलता ही किया है। प्रोफेसर यदुनाथ सरकारने भीमसेनके फारसी इतिहास "नुसखा व दिल कास" से एक पैरा छिपा है जिसका तात्पर्य यह है कि "शिवाजी उत्तर भारतके भाइ मियोंको अपने यहां कोई उच्च पद नहीं देते थे। छत्रसाल रायगढ़से अत्यन्त निराश होकर लौटे थे।" "नुसखा-व दिल कास" के लेखकके कथनमें सचाईकी मात्रा कितनी है, यह कहना कठिन है, पर इसमें सन्देह नहीं कि उस समय उत्तर भारतके प्रायः निवासी औरङ्गजेबको सदा हुड़ बर्त्ताव किया करते थे। इससे सम्भव है, वे उत्तर-भारतके निवासियोंको उपेक्षाकी दृष्टिसे देखते हों। लाल कविके छत्र प्रकाश अथवा पगसनके इतिहासमें शिवाजीके यहांसे छत्रसालके निराश होकर लौटनेकी बात नहीं लिखी है। इससे "नुसखा व दिल कास" के

कथनकी सच्चाईमें सन्देह प्रतीत होता है। लाल कवि और पगससने शिवाजी और छत्रसालकी भेंटका जो वृत्तान्त लिखा है उससे तो यही प्रतीत होता है कि शिवाजीने छत्रसालको निस्स्वार्थ और यथोचित परामर्श दिया था। शिवाजीके स्थानमें अगर कोई दूसरा स्वार्थी व्यक्ति होता तो वह छत्रसालको अपने यहाँ नौकर रख लेता और उनके सेनापतित्वमें बुन्देलखण्डमें सेना भेजकर अपना राज्य बढ़ाता। पर शिवाजीकी ऐसा नीयत न थी। शिवाजीके अधीन छत्रसाल चाहे जितनी वीरता प्रकट करते, चाहे जितनी विजय प्राप्त करते, मुगलोंके चाहे जैसे दाँत खट्टे करते पर न तो उनको वह महत्व प्राप्त होता जो स्वतन्त्र कार्य करनेसे प्राप्त हुआ था और न बुन्देलखण्डको स्वतन्त्रता प्राप्त होती। बहुत सम्भव था कि बुन्देलखण्डके गलेसे मुगलोंकी पराधीनताका जुवा उतर जाता पर मराठोंकी पराधीनताका जुआ, उसके गलेमें पड़ जाता। पराधीनतारूपी लोहेकी जंजीरके स्थानमें सोने अथवा चाँदीकी जंजीर पड़ जाती। बुन्देलखण्डको सच्चे स्वराज्यरूपी सुखका कभी अनुभव न होता। अतएव शिवाजीने छत्रसालको जो कुछ परामर्श और उपदेश दिया, उसका फल छत्रसाल और बुन्देलखण्ड दोनोंके लिये अच्छा हुआ।*

---

* मिश्र बन्धुओंने भूषण-ग्रन्थावलीकी भूमिकामें शिवाजी और छत्रसालकी भेंटका समय सन् १६८० ई० लिखा है, यह गलत है। मिश्रबन्धुओंने शिवाजीका औरङ्गजेबके यहां दिल्लीमें कैद होना लिखा है सो भी गलत है। औरङ्गजेबने शिवाजीको आगरेमें कैद किया था न कि दिल्लीमें।

तेईसवां परिच्छेद

बीमारी और मृत्यु

"यम-सेनाकी विमल ध्वजा अब 'जरा' दृष्टिमें आती है।
करती हुई युद्ध रोगोंसे देह हारती जाती है॥"

"हाय! क्या जल्द य मिट्टीका घरौंदा बिगड़ा।
मौतका कुछ न गया खेल हमारा बिगड़ा॥"

अनेक युद्धोंमें विजय और सफलता प्राप्त होनेपर भी शिवाजी अपने अन्तिम समयमें बहुत उदास रहते थे। अन्तिम समयमें उन्हें अनेक पारिवारिक झगड़ोंके कारण भी बहुतसे कष्ट उठाने पड़े थे। उनकी बड़ी स्त्री सइबाईका पहले ही देहान्त हो गया था, उनके ज्येष्ठ पुत्र सम्भाजीने जो उत्पात मचाया था, उससे भी वे बड़े दुःखी थे। पाठक सुन चुके हैं कि मुगलिया सेनामेंसे सम्भाजीके लौट आनेपर शिवाजीने उन्हें पन्हाला दुर्गमें नजरबन्द कर दिया था। सम्भाजीको नजर बन्द करनेसे पहले शिवाजीने बहुत कुछ समझाया, उन्हें अपने किलोंकी तालिका दिखलायी, खजाना भी दिखलाया, राज्य भरकी आमदनी बतलायी और यह भी समझाया कि इस समय हिन्दुओंकी कैसी अधोगति हो रही है और विदेशियोंके पंजेसे स्वराज्यकी किस प्रकारसे रक्षा करनी चाहिये। पर सम्भाजीने

हृदयपर अपने पिताके उपदेशोंका कुछ भी प्रभाव नहीं हुआ। इससे वे चिन्तित और दुःखी रहते थे। इतनेमें उन्हें समाचार मिला कि "जबसे उनके छोटे और सौतेले भाई व्यङ्कोजी, बीजापुर दरबारकी अधीनतासे मुक्त होकर शिवाजीकी अधीनतामें आये हैं तबसे वे बहुत उदास रहते हैं। जागीरका काम काज करना भी छोड़ दिया है। उन्होंने रघुनाथ हनुमन्ते (शाहजीका कारकुन) से भी मिलना बन्द कर दिया है। वैराग्यकी ओर वे विशेष झुके हुए हैं।" शिवाजी अपने छोटे भाईके सम्बन्धमें यह संवाद सुनकर बहुत दुःखी हुए। उन्होंने अपने भाईके पास एक पत्र भेजा, जिसमें अपने भाईको समझाया और जागीरका कार्य करनेके लिये उत्साहित किया। अन्तमें लिखा कि "पिताके समान कार्य करो, अपने लिये बहुतसी पृथ्वी जीतनेकी चेष्टा करो।"

इस पत्रके लिखनेके पीछे शिवाजी बहुत उदास रहते थे, उन्हें अपना अन्त समय प्रतीत होने लगा। शिवाजीके राजाराम नामक एक और पुत्र अपनी तीसरी स्त्री सोयराबाईसे था। सोयराबाई चाहती थी कि उसका पुत्र राजाराम ही महाराष्ट्र का अधिपति हो, राजाराम और सम्भाजीकी आपसकी अनबन और प्रतिद्वन्द्वितासे शिवाजी और भी दुःखी हुए। इसी बीचमें शिवाजी पारली गांवमें अपने गुरु श्रीसमर्थ रामदास स्वामीके दर्शन करने गये। वहां उन्होंने श्रीसमर्थ रामदाससे अपने दोनों पुत्र सम्भाजी और राजारामकी पारस्परिक अनबन और

अस्थिरताकी बात कही। इसपर समर्थ रामदास स्वामीने उन्हें सान्त्वना देते हुए कहा कि दोनों लड़कोंको समझाओ, सब राम भला करेंगे। पीछे शिवाजीने समर्थ रामदास स्वामीसे अत्यन्त गम्भीर और दुःखसीन भावसे कहा कि "भगवन्! यदि मैंने बिना जाने बूझे, अज्ञानतावश कोई अपराध किया हो तो क्षमा कीजियेगा।" इसपर समर्थ रामदास स्वामीने शिवाजीके मुखकी ओर देखा और पूछा कि तुम्हें क्या कष्ट है? उत्तरमें शिवाजीने कहा कि "गुरुवर! शायद मैं आपके अन्तिम दर्शन कर रहा हूँ।" यह कहकर वे समर्थ रामदास स्वामीके गलेसे लिपट गये। यह देखकर समर्थ रामदास स्वामीने उन्हें प्रसन्न करनेकी चेष्टा की और कहा—"शिवा क्या मेरी शिक्षाका यही परिणाम है। शिवाजीने इसका कुछ उत्तर नहीं दिया और अपने गुरुको अन्तिम प्रणाम करके वहाँसे राय गढ़ चल दिये। इसके कुछ दिन पीछे उन्हें पता लगा कि दिल्लीसे बहुतसा रुपया औरङ्गाबादमें स्थित मुगलसिपा-सेनाके खर्चेके लिये आ रहा है। वे अपने कुछ घुड़सवारोंके साथ वहाँ गये और उस धनको लूट लाये। चैत्र शुक्ला १ संवत् १७३७ वि० २८ वीं मार्च सन् १६८० ई० को उनकी छातीमें दर्द उठा। थूकमें लोहू गिरा। जीर्ण ज्वर आ गया, घुटनोंमें दर्द हुआ। बहुत कुछ चिकित्सा की गयी पर "मर्ज बढ़ता गया ज्यों ज्यों दवा की।" जब शिवाजीने देखा कि किसी दवासे लाभ नहीं होता है तब उन्होंने अपने पासके आदमियोंको सब

कड़ी आज्ञा दी कि "मेरी बीमारीका समाचार किसीसे न कहा जाय।" कहते हैं कि इस बीमारीसे पहले शिवाजीके मरनेकी झूठी खबर कई बार फैल चुकी थी, जिससे लोगोंको उनकी बीमारीका भी विश्वास नहीं होता। जिन दिनों शिवाजी रोग शय्यापर पड़े हुए थे, उन दिनों उनके वीर कर्मचारी मुगल साम्राज्यमें उत्पात मचा रहे थे। उनकी सेना लूट मार करती हुई सूरततक पहुंच गयी थी। सूरतनिवासी पहले कईबार शिवाजीके हाथोंसे तंग हो चुके थे, अतएव उनमें पहलेके समान ही घबराहट फैली और समझा कि अबकी बार भी शिवाजी स्वयं आये हुए हैं। अङ्गरेज व्यापारियोंने अपने बहुमूल्य पदार्थ, नावोंमें लादकर ताप्ती नदीके दूसरी ओर भेज दिया। मुगलोंके सूबेदारने मराठी-सेनाको बहुतसा धन देकर शिवाजीके आदमियोंसे सन्धि की। मोरोपन्त पेशवा बहुतसा लूटका माल लेकर रायगढ़ आये। स्वयं शिवाजी इस युद्धमें जानेवाले थे पर बीमारीके कारण नहीं जा सके। मोरोपन्त पेशवा यह देखकर अत्यन्त दुःखित हुए कि शिवाजी असाध्य बीमार हैं।

कई मराठी इतिहास-लेखकोंने लिखा है कि शिवाजीने जब देखा कि मेरा अन्तिम काल आ रहा है तब उन्होंने अपने कुछ मित्रों और सरदारों तथा राज्यके उच्च कर्मचारी मोरोपन्त पेशवा, प्रह्लाद पन्त न्यायाधीश, बालाजी आवजी, चिटनीस, रामचन्द्रपन्त अमात्य, रावजी सोमनाथ, सूर्याजी मोलसरे, बाजी कदम, महादाजी नामक पानसंबल और दूसरे लोगोंको अपने

निकट बुलाया और कहा कि मेरा अन्तकाल निकट आ गया है। अब मैं इस संसारमें बहुत दिनतक नहीं रहूंगा। पर इसमें शोक करनेकी कोई बात नहीं है, जो जन्म लेता है वह मरता है। मेरी आयु पूर्ण हो गयी है, मैं स्वर्गको जाता हूं। मेरे पिताकी चालीस हजारकी जागीर थी, मैंने एक करोड़का राज्य कर दिया है। मेरी सेनामें इस समय अस्सी हजार पागया है। तुमलोग सावधान रहना और मेरे पीछे युक्तिपूर्वक राज्यकी रक्षा करना। मेरा ऐसा कोई योग्य पुत्र नहीं है जो वीरता और हिम्मतसे इतने विस्तृत राज्यकी रक्षा कर सके। राजाराम अभी बच्चा है, बड़े होनेपर वह राज्यकी रक्षा कर सकता है। मेरा बड़ा पुत्र सम्भाजी अवश्य इस योग्य है, वह राज्यकी रक्षा करनेमें समर्थ हो सकता है, पर वह बुद्धिसे काम नहीं करता। मेरी इच्छा राज्यके दो बराबर भाग करके दोनों बेटोंको बांटनेकी थी। पर सम्भाजी इस सम्मतिको माननेके लिये तैयार नहीं है और यदि मैं इस राज्यको बांट भी दूं तो परिणाम अच्छा नहीं होगा। सम्भाजीके ज्येष्ठ पुत्र होनेके कारण बहुतसे सरदार उसका पक्ष लेंगे, इसका परिणाम यह होगा कि घरमें ही कलह मच जायगी। राज्यकी वृद्धि और उन्नति दोनों तो दूर रहीं, राज्यकी जल्दी अवनति होगी। राज्यमें शान्ति और सुव्यवस्था नहीं रहेगी। सदैवसे यही नियम चला आता है कि बड़ा पुत्र, राज्यका उत्तराधिकारी हो और छोटा भाई बड़े भाईकी आज्ञाके अनुसार चले। परन्तु मुझको अपने पुत्रोंमें इस नियमके पालन

होनेकी सम्भावना प्रतीत नहीं होती है। मेरी मृत्युके पीछे सम्भाजी इस राज्यका उत्तराधिकारी होगा, सेनाके वीर सरदार उसका ही पक्ष लेंगे। बालक राजारामको सेनासे बहुत कम सहायता मिलनेकी आशा है। मन्त्री और मुल्की (सिविलियन) अफसर राजारामका पक्ष लेंगे। इससे बखेड़ा मचेगा। सम्भाजी कितने ही योग्य और उच्च पदाधिकारियोंको पकड़ेगा और मरवा डालेगा। राज्यके बड़े बड़े सरदार अपमानित किये जायेंगे। क्षुद्र मनुष्योंका जोर बंध जायगा। जिन नामी व्यक्तियोंने अपने श्रम और साहससे इस राज्यके स्थापन करनेमें मुझे सहायता दी थी, उन्हीं पुरुषोंका अपमान करके राज्यपद्धति बिगाड़ी जायगी। अपमानित व्यक्ति राज्यको छोड़ जायँगे, दुष्ट प्रकृति और व्यभिचारी होनेके कारण उस (सम्भाजी) की बुद्धि पर पर्दा पड़ गया है, उसकी मति भ्रष्ट हो गयी है। वह शक्तिके मदमें आकर मनमानी करेगा जिससे राज्यमें निर्दयी, अविचारी और कृतघ्न व्यक्तियोंकी बन पड़ेगी और सर्वत्र अराजकता छा जायगी। राज्यकोश खाली हो जायगा। राज्यमें इस तरह गड़बड़ी होनेपर इस नवप्रतिष्ठित राज्यको उलटना औरङ्गजेबके लिये आसान हो जायगा। अबतक बादशाह औरङ्गजेबने मेरे डरसे ही सन्धिकी रक्षा की है। मराठा राज्यमें गड़बड़ी देखकर वह प्रचण्ड सेना लेकर दक्षिणमें मराठा राज्यको मटियामेट करनेके लिये आवेगा। आदिलशाही और कुतुबशाही दोनों राज्य दुर्बल पड़ गये हैं, अतएव वह पहले उन

दोनों राज्योंकी हस्ती मिटायेगा और फिर मराठा-राज्यपर चढ़ाई करेगा। सम्भाजी, राज्यकी रक्षा न कर सकेगा और औरङ्गजेब उसका नाश करनेकी चेष्टा करेगा। दुराचारी मनुष्य का शीघ्र ही अधःपतन और विनाश हो जाता है। अतएव सम्भाजी औरङ्गजेबका सामना करनेमें समर्थ नहीं हो सकेगा। यदि राजाराम जीता रहा तो शत्रुसे राज्य प्राप्तिकी कुछ आशा प्रतीत होती है, नहीं तो मुझे भविष्यमें इस राज्यकी रक्षाका कुछ उपाय नहीं सूझता है।"

शिवाजीकी ऐसी निराशा-जनक बातें सुनकर सभी पास बैठे हुए श्रोताओंकी आँखोंसे वर्षा ऋतुकी नदीके समान आँसुओंकी धारा बहने लगी। सभी दुःखसे कातर, उदास और निराश थे। उन सबको शोकातुर और दुःखी देखकर शिवाजीने कहा—"तुम लोगोंको शोक नहीं करना चाहिये। संसारका यही नियम है कि जो जन्म लेता है, वह मरता है। संसारमें कोई अमर नहीं रहता है। इस संसारमें जो आया है, वह अवश्य ही जायगा। धन, पुत्र, स्त्री, साधन, विभव, अन्तःपुर सब माया है। ये सब यहीं रह जाते हैं। इनमें फँसकर मनुष्य का चित्त चञ्चल हो जाता है। इन वस्तुओंसे किसीका लाभ नहीं होता है। मुक्तिका केवल एक ही द्वार है कि संसारमें प्रवृत्त होकर उसमें मनुष्य लीन न हो जाय, निस्पृह, निर्विकार और निर्भय भावसे रहे। तुम सब लोग शूरवीर हो और तुम्हारा यह कर्तव्य है कि राज्यकी रक्षा करो और तुम सब लोग

आपसमें प्रेम और सद्भावसे रहो। आपसमें वैरभाव न करके एकमत होकर, प्रीतिपूर्वक काम करो। तुम सब मेरी बीमारी को दूर करनेकी बहुत कुछ चेष्टा करके हैरान हो गये हो, पर मेरा रोग न छूटा। इस अक्लान्त चेष्टाका कुछ भी फल न हुआ। यह मनुष्यकी शक्तिसे बाहर है। अब मेरे आरोग्य करनेका प्रयत्न छोड़ दो, अब मेरी आयु पूरी हो गयी है, अतएव अब मैं स्वर्गको जानेके लिये तैयार हूं। अब तुम लोगोंका यही कर्त्तव्य है कि राज्यकी रक्षा करो और सावधान रहो। मेरी यही इच्छा थी कि मैं समस्त भारतवर्षपर विजय प्राप्त करू, दिल्ली जीतू और कटकसे अटकतक अपनी ध्वजा पताका फहराऊं। पर अब मेरे जीवनका स्रोत मन्द होनेवाला है। इसलिये मैं इन कार्योंको नहीं कर सका। तुम लोग हिम्मत मत हारो, शोकाकुल मत हो। धैर्य धारण करो और अपने कर्त्तव्य पालनमें जुटे रहो।" यह उपदेश देकर उन्होंने अपनेसे सामने सरदारोंको विदा किया। सभासद् आदि कई लेखकोंने शिवाजीके यह अन्तिम वाक्य लिखे हैं। कहा नहीं जा सकता कि यह कहांतक सच है। और यदि मराठा इतिहास-लेखकोंका यह कथन सच है तो कहना पड़ता है कि शिवाजीकी मृत्युसे चौरासी वर्ष पहले बादशाह अकबरके समयमें भी राजस्थानकी मरुभूमिमें ऐसी ही घटना हुई थी। इतिहास प्रेमी पाठकोंसे यह अविदित नहीं है कि प्रबल पराक्रम प्रकट करके अपनी स्वाधीनताको अक्षुण्ण रखनेवाले, राजस्थानके ध्रुव तारा महाराणा प्रताप

संवत् १६५३ वि०में देहान्त हुआ था। जिस प्रकार शिवाजीने अपने स्वराज्यकी रक्षाके लिये चिन्ता प्रकट की थी, उसी प्रकार प्रातःस्मरणीय राजर्षि महाराणा प्रतापसिंह कुटीमें तृण-शय्यापर लेटे हुए अपनी मृत्युके समय स्वाधीनताके अक्षुण्ण रखनेके लिये विशेष चिन्तित हुए थे। उनके चारों ओर मेवाड़के नामी नामी सरदार उपस्थित थे, सब चुपचाप थे। किसीके मुंहसे एक भी अक्षर न हीं निकलता था, सभी व्यथित हृदय होकर महाराणा के अन्तिम दर्शन कर रहे थे। महाराणाका अन्तिम कष्ट देख कर चन्द्रावत सरदारने बड़े कोमल शब्दोंमें पूछा—"अन्नदाता जी! इस समय ऐसा कौन सा कष्ट है, जो श्रीमान्को विश्राम नहीं करने देता।" इसपर वीरेन्द्र प्रतापने सदैवकी भाँति उत्तर दिया—"मुगलोंके हाथमें मेवाड़भूमि न जाने पायेगी" यह प्रतिज्ञा सुननेपर शान्तिके साथ प्राणत्याग करूंगा। शिवाजी ने जिस भाँति अपने पुत्र सम्भाजीके दुराचारी होनेपर चिन्ता प्रकट की थी, उसी भाँति वीरवर प्रतापने अन्तिम समय अपने पुत्र अमरसिंहके सम्बन्धमें यह चिन्ता प्रकट की कि "यह भोग विलासी होनेके कारण, स्वाधीनताके लिये कष्ट सहन न कर सकेगा।" महाराणा प्रतापसिंहके सरदारोंने प्रतिज्ञा करके उनको विश्वास दिलाया कि "प्राण रहते, हमलोग मेवाड़की स्वाधीनता नहीं मिटने देंगे" इतना सुनते ही महाराणा प्रतापसिंहने शान्तिपूर्वक प्राण त्यागे। महाराणा प्रतापसिंह और शिवाजीकी अन्तिम चिन्तामें समरूप होनेपर भी यह पता नहीं लगता है

कि महाराणा प्रतापके राजपूत सरदारोंकी भांति, शिवाजीके मराठे सरदारोंने शिवाजीके अन्तिम अनुरोधके पालन करनेकी प्रतिज्ञा की थी या नहीं।

शिवाजीने अपने सरदारोंको दीवानखानेसे विदा करके, धार्मिक कृत्य किये। गङ्गाजल मंगवाकर, शास्त्रोक्त विधिसे स्नान किया। अपने सारे शरीरमें अग्निहोत्रकी भस्म पोती। रुद्राक्ष और तुलसीकी मालायें पहनीं। कुशाओंके आसनपर विराजे। महान् विद्वान, पण्डितों और सन्यासियोंको अपने पास बुलवाया। उनसे आत्मा, अनात्मा सम्बन्धी विषयपर चर्चा की। इस प्रकार पूर्ण विरक्त होकर महाराज शिवाजीने कुछ कालतक भगवद्भजन किया। फिर कथा, कीर्त्तन आदि सुने। फिर अपने सामने सौ गो मंगवाकर दान की और एक हजार गोदानका सङ्कल्प किया। श्रीमद्भगवद्गीता और श्रीविष्णुसहस्रनामका पाठ सुना। वेदपाठी ब्राह्मणोंने सस्वर वेदपाठ किया। यह सब कृत्य हो जानेके पीछे संवत् १७३७ वि० शाके १६०२ रौद्र नाम संवत्सरे उत्तरायणी चैत्र शुक्ल पूर्णिमा रविवारके दिवस, मध्याह्नके समय (ता० ५ वीं अप्रेल सन् १६८० ई०) को "श्रीराम" "श्रीराम" उच्चारण करते हुए, अत्यन्त शान्तचित्त होकर, इस लोकको परित्याग किया। महाराष्ट्रका सूर्य अस्त हो गया। जिस महाराष्ट्र-केशरीकी गर्जना से छब्बीस वर्ष तक प्रबल प्रतापी बादशाह औरङ्गजेबके छक्के छूट गये थे, उस दिन वही महाराष्ट्र केशरी सदैवके लिये महा-

निद्राकी गोदमें सो गया। जिस नृसिंहने लगातार छत्तीस वर्षतक बीजापुर और गोलकुण्डाके राज्योंको अनेक प्रकारके नाच नचाये थे, वह सब सदैवके लिये विलीन हो गया। उस समय जिस नर केशरीके बल, शौर्य और कीर्तिके सामने भारत के भावी भाग्य विधाता अङ्गरेजोंने भी सिर झुकाया था वह स्वयं सदैवके लिये इस संसारसे विदा हो गया। जिसने छत्तीस वर्ष तक अनेक सामन्त सरदारोंको उखाड़ा, पछाड़ा अनेक राजा, महाराजाओंके मुकुटोंको पैर तले रौंदा, जिसने बड़े बड़े भयानक संकटोंमें पड़कर भी अपने कर्तव्यसे मुंह नहीं मोड़ा, वही महाराष्ट्र वीर मौतके चङ्गुलमें फंस गया और भारत जननीको अनाथ कर गया। यहां यह लिख देना भी अनुचित न होगा कि शिवाजीकी बीमारी और मृत्युके सम्बन्धमें इतिहास-लेखकोंका परस्पर मतभेद है। सभासद और चिटगुन दोनोंने लिखा है कि शिवाजीको कम्प ज्वर आया था। चित्नीस और रायरीके बखरमें लिखा हुआ है कि उन्हें ज्वरकी व्याधि हुई थी। मार्टिनने लिखा है कि उनके घुटनोंके जोड़में दर्द हुआ था। पुर्तगालके इतिहास लेखकने लिखा है कि जब जंजीरा टापूपर शिवाजीने चढ़ाई की थी तब वहांके सिपाहियों और फकीरोंको उन्होंने बहुत सताया था जिसके शापसे शिवाजी बीमार पड़े और मर गये। पुर्तगाली इतिहास-लेखककी भांति ही और भी कई मुसल्मान इतिहास-लेखकोंने लिखा है कि जंजीरा टापूके सय्यद जामुहम्मदके शापसे ही शिवाजीको

मृत्यु हुई। वे कभी किसी मुसलमान फकीर अथवा साधुको नहीं लूटते थे पर जालनाके फकीर सय्यद जानमुहम्मदको लूटा इसलिये उसने उन्हें श्राप दिया। शिवदिग्विजयमें शिवाजीको मृत्युके विषयमें लिखा हुआ है कि शिवाजीकी दूसरी (तृतीय !) पत्नी सोयराबाईने अपने पुत्र राजारामको गद्दीपर बैठानेके लिये अपने पति शिवाजीको विष दे दिया था। प्रोफेसर यदुनाथ सरकारने लिखा है कि शिवाजीको २४ वीं मार्च सन् १६८० ई० के दिन ज्वर और संग्रहणी हुई थी। शिवदिग्विजयके इस मत (अर्थात् शिवाजीको विष दिया गया) का उल्लेख करते हुए, प्रो० सरकार लिखते हैं कि मराठी भाषाके सबसे पुराने बखर सभासदमें इस विषयका उल्लेख न करनेका स्पष्ट कारण यह है कि राजारामकी आज्ञासे सभासदने अपना बखर लिखा था, यदि विष दिये जानेकी बात सच भी हो तो राजारामका नौकर यह कदापि नहीं लिख सकता कि राजारामकी माने अपने पतिको विष दिया। इतना लिखकर सरकार महोदयने चिटनीसके मतका भी खण्डन किया है। चिटनीस (सभासद)ने लिखा है कि सम्भाजीने अपनी विमाता सोयराबाईको ऐसा मरवा डाला कि उसने अपने पतिको जहर दिया था। इसपर सरकार महोदयका मत है कि सोयराबाई अपने पुत्र राजाराम को राजगद्दीपर बिठलाना चाहती थी। सम्भव है कि उसका बदला लेनेके लिये सम्भाजीने यह झूठा बहाना ढूंढ़ लिया हो।

किलेका दरवाजा बन्द करवाके यह चेष्टा की कि शिवाजीकी मृत्युका समाचार कुछ दिनोंतक फैलने न पावे। कुछ राजकीय व्यक्तियोंके साथ रायगढ़के किलेमें ही उनकी अन्त्येष्टि क्रिया की गयी। उनकी दूसरी स्त्री पुतलाबाई उनके साथ सती हुई। उनके कनिष्ठ पुत्र राजारामने साबाजी भोंसले शिंगरामपुर की सहायतासे उनका अन्त्येष्टि संस्कार किया। इस प्रकार शिवाजीकी मृत्युको छिपानेका कारण यह था कि उनके ज्येष्ठ पुत्र सम्भाजी उस समय पन्हाला दुर्गमें कैद थे, रायगढ़में उपस्थित न थे। घरकी फूट बुरी होती है। शिवाजीकी तीसरी स्त्री *सोयराबाईने उनके जीवित कालमें ही अपने बेटे राजारामको उनके पीछे राजसिंहासनपर बैठानेका उद्योग प्रारम्भ कर दिया था, जिसका फल यह हुआ कि प्रधान मण्डलमेंसे कितने ही व्यक्ति राजारामकी ओर हो गये थे, जिनमेंसे मुख्य आणाजी दत्तो पन्त सचिव थे। स्वयं शिवाजी महाराजने कई बार सम्भाजीके चरित्रकी निन्दा की थी और कहा था कि सम्भाजी राजसिंहासनके योग्य नहीं हैं। इससे भी सोयराबाईके लक्ष्यको उत्तेजना मिली। अन्त समयमें भी शिवाजीने सम्भाजीके प्रति उदासीनता प्रकट की थी, इसलिये सोयराबाईने सम्भाजीको शिवाजीकी मृत्युके पीछे भी सदाके लिये पन्हाला दुर्गमें कैद कराने और अपने बेटेकी उन्नतिके मार्गको निष्कंटक करनेकी चेष्टा की। उसके प्रभावमें आकर मन्त्रि-मण्डलने

* परिशिष्टमें शिवाजीकी स्त्रियों और सन्तानका वर्णन देखो।

शिवाजीकी बीमारीका समाचार ही सम्भाजीतक पहुंचने नहीं दिया। कहते हैं कि स्वयं शिवाजीने अपनी बीमारीका समाचार छिपानेका अनुरोध किया था कि मेरी बीमारीका समाचार फैलने न पाये। प्रधान-मण्डलने उनकी मृत्युका समाचार भी छिपानेकी चेष्टा की जिसका परिणाम अच्छा नहीं हुआ।

इस विषयमें किनकेड और पारसनीसने अपनी पुस्तक "History of the Maratha People" में लिखा है कि पन्हालागढ़में नजरबन्द रहते समय ही सम्भाजीको शिवाजीकी बीमारीका समाचार मिला था। अपने पिताकी रुग्णावस्थाका संवाद पाकर वे अत्यन्त दुःखी हुए और उसी समय वे अपने पिताके अन्तिम दर्शन करनेके लिये पन्हाला दुर्गसे एक ऊंटपर सवार होकर चल दिये। पन्हालासे रायगढ़तक बराबर वे कई दिन रातातक ऊंटपर सवार चलते ही रहे। परन्तु तिसपर भी वे अपने पिताका अन्तिम दर्शन न कर सके। रायगढ़ पहाड़ीके नीचे उन्हें अपने पिताकी मृत्युका समाचार मिला। जिससे वे अत्यन्त क्रोधित हुए और उन्होंने बेचारे बेजबान जानवर ऊंटपर क्रोध उतारा। उसका सिर काट डाला और जिस स्थानपर ऊंटका सिर काटा उसी स्थानपर वह गिर पड़ा हुआ ऊंट, इसलिये बनवा दिया कि जिससे दूसरे ऊंटोंको शिक्षा मिले। किनकेड साहब कहते हैं कि सम्भाजीकी निर्दय भावनाका यह चिह्न अबतक रायगढ़में मौजूद है।

शिवाजीकी मृत्युके पीछे प्रधान मण्डलने अनाईम मन

सुमन्तको सेनासहित पन्हाला दुर्गकी ओर भेजा और राय गढ़के किलेपर बहुतसे सैनिक रखवारीके लिये रखे। इसके अतिरिक्त पंचवटीमें दस हजार घुड़सवार रखे और कराडमें सेनापति हम्मीररावको सेनासहित रहनेकी आज्ञा दी। पन्हाला दुर्गमें सम्भाजी, हीराजी फर्जन्दकी देखमालमें थे अतएव प्रधान मण्डलने हीराजी फर्जन्दके पास भी कई पत्र भेजे कि जिनमें शिवाजीकी मृत्युका समाचार था और भविष्यमें विशेष साव धान रहनेका आदेश था। पर हीराजी फर्जन्द उस समय वहां न था, वह कोंकण गया हुआ था। शायद सम्भाजीको अपने पिताकी मृत्युका पता लग गया था अथवा दूतको देखकर उन्हें कुछ वहम हुआ, अतएव उन्होंने दूतसे कहा कि यह चिट्ठियोंका मण्डल मुझे दे दो, नहीं तो मैं तुझे अभी मार डालूंगा। प्राण जानेके भयसे बेचारे पत्र-वाहकने हीराजी फर्जन्दके नामकी चिट्ठियां सम्भाजीको दे दीं और असली बात कह दी। बस फिर क्या था, सब भण्डा फूट गया। सम्भाजीने पन्हाला दुर्गको अपने कब्जेमें कर लिया और किलेमें जो सैन्यदल था, उसके आज्ञानुसार कार्य आरम्भ किया। सम्भाजीने उसी समय अपने विरोधी दो मुख्य सरदारोंको मरवा डाला। भविष्यमें क्या हो, यह सोचकर उन्होंने किलेकी रक्षाका प्रबन्ध किया। इसके पीछे जनार्दन पन्त अपनी सेनासहित वहां पहुंचा और किलेपर सम्भाजीका अधिकार देखकर उसने किलेको घेरा और कई सप्ताहतक पन्हाला दुर्गको घेरे रहा। पर पीछे सेनाको वहीं छोड़कर वह कोल्हापुर चला गया।

प्रधान-मण्डलने मई मासमें राजारामको राजसिंहासनपर बैठाया और उसके नामसे राजकार्य चलाना आरम्भ कर दिया था पर प्रधान-मण्डलमें भी फूट पड़ी हुई थी। सचिव और पेशवा शिवाजीके सामनेसे एक दूसरेके प्रतिकूल थे। राजा रामको गद्दीपर बैठानेकी सलाह हम्मीररावसे नहीं ली गयी, इसलिये वह भी विरोधी हो गया।

इसी बीचमें सम्भाजीने जनार्दन पन्तके सैन्यदलपर आक्रमण किया जिसमें सम्भाजीको विजय प्राप्त हुई। फिर वे कुछ मावले सवार लेकर कोल्हापुरमें गये और जनार्दन पन्तको पकड़कर पन्हालेके किलेमें कैद कर दिया। हम्मीररावने इन सब बातोंको देखकर कहा कि सम्भाजी शिवाजीके लड़के हैं और उन्होंने शिवाजीके पुत्र योग्य ही यह कार्य किया है। जब जनार्दन पन्तके कैद होनेका समाचार रायगढ़ पहुंचा तब मोरो पन्त पेशवा वहांसे बहाना बनाकर सेनासहित पन्हाला पहुंचा। पर पन्हाला पहुंचकर पेशवाने जनार्दन पन्तको सम्भाजीकी कैदमेंसे नहीं छुड़ाया, बल्कि वहां जाकर पेशवा उनसे मिल गया। इससे पहले हम्मीरराव भी अपने अधीनस्थ सेनाके सहित उनसे मिल गया था। हम्मीरराव और मोरोपन्तके मिल जानेसे सम्भाजीका दल बढ़ गया। संवत् १७३७ वि०—सन् १६८० ई०के जून मासमें वे रायगढ़ पहुंचे। यह देखकर पंचहाड़ीमें जो सेना थी वह भी उनके साथ हो गयी।

रायगढ़में पहुंचकर सम्भाजीने अनेक पाशविक और क्रूर

कर्म किये। इसमें सन्देह नहीं कि वे वीर थे। उनमें अपने पिताके समान कुछ वीरता अवश्य थी, पर उनमें अपने पिताके समान धीरता और उदारता बिलकुल न थी। रायगढ़ पहुंच कर उन्होंने आणाजी दत्तो पन्त सचिवके पैरोंमें बेड़ी डालकर कैद कर दिया, उसकी सब सम्पत्ति जब्त कर ली और अपने छोटे भाई राजारामको भी कैद कर दिया। अपनी विमाता सोयराबाईके प्रति उन्होंने अत्यन्त निष्ठुरताका व्यवहार किया, उसे पकड़वाकर अपने सामने बुलाया। उससे कहा कि "तूने शिवाजीको ज़हर दिया है," फिर उसे कैद करवा दिया, पीछे उसे मरवा डाला। जिन मराठा सरदारोंने सोयराबाईका पक्ष लिया था, उन सबको सम्भाजीने कत्ल करवा डाला और उन मेंसे एकको रायगढ़की पहाड़ीसे गिराकर मार डाला। इस प्रकार अपने प्रतिद्वन्द्वियोंका दमन करके सम्भाजीने अगस्त मासमें अपना राज्याभिषेक किया।

सम्भाजीके समयमें महाराष्ट्र प्रान्तकी परिस्थिति कैसी रही, यह इस पुस्तकका आलोच्य विषय नहीं है। लेखकने विषयका विस्तारपूर्वक उल्लेख अपनी दूसरी पुस्तक "मराठोंके उत्थान और पतन"में किया है। यहाँ केवल इतना ही कहना है कि संवत् १७४६ वि०—सन् १६८९ ई०में बादशाह औरङ्गजेबने सम्भाजीको निष्ठुरता-पूर्वक मरवा डाला।

पच्चीसवां परिच्छेद

चरित्र-समीक्षा

"सुन्दरता, गुरुता, प्रभुता भनिभूषन होत है अन्दर जामें।
सज्जनता औ दयालुता दीनता कोमलता झलकै परजा में ॥
दान कृपानहुको करिबो, करिबो अभै दीननको बरजामें।
सोहन सोरन टेक विवेक, इत गुन एक सिवा सरजामें ॥"

मुगल सम्राटोंमें अकबर अत्यन्त प्रबल प्रतापी बादशाह हुए थे, जिन्होंने साम-दाम, दण्डभेदसे हिन्दुओंकी स्वातन्त्र्य प्रिय वीर जातिको अपने वशमें कर लिया था। जिन राजपूतोंने अकबरके पूर्वजोंका सामना किया था, उनमें भी अनेकों व्यक्तियोंने सम्राट् अकबरकी अधीनता स्वीकार कर ली थी। अकबरके समयमें हिन्दुओंका गौरव लुप्तप्राय हो गया था। मणिहीन सर्प ,पंखहीन गरुड़के समान उस समयसे हिन्दू जाति रसातलको पहुंच रही थी कि ऐसे समयमें महाराणा प्रतापसिंह महाराज शिवाजी और महाराज रणजीतसिंह क्रमागत तीन स्वतन्त्र हिन्दू राजा हुए थे। इतिहास-रसिक पाठकोंसे छिपा हुआ नहीं है कि महाराणा प्रतापसिंहने अनेक कष्ट सहे, घासकी रोटियां खायीं, जङ्गल और वनमें राजपाट

राजर्षिने कभी अपना मस्तक नहीं नवाया, अकबरके परपोते औरङ्गजेबके समयमें मुगल साम्राज्यकी उन्नतिका सूर्य मध्याह्न पर पहुंच गया था, उस समय मुगल-साम्राज्यका विस्तार भी बहुत हो गया था। जब औरङ्गजेब अपने पिता शाहजहाँ पितामह,प्रपितामह जहाँगीर, अकबरके पदचिह्नोंपर न चलकर और उनकी नीतिका उल्लङ्घन करके और हिन्दुओंको सताने लग गये थे, उस समय शिवाजी महाराजने महाराष्ट्रमें स्वतन्त्रताका झण्डा उठाया और अपना स्वतन्त्र राज्य स्थापित किया। शिवाजीके पीछे जब मुगल साम्राज्यका सूर्य्य अस्त हो चला था और जिन विदेशी व्यापारियोंको मुगल सम्राटोंसे गिड़गिड़ाकर भारतमें व्यापार करनेके लिये आज्ञा माँगनी पड़ी थी, थोड़े दिनोंमें वे ही अङ्गरेज व्यापारी, भारतकी राजसत्ता हथियाकर, भारतके कर्त्ता धर्त्ता विधाता बन गये थे और अब भी हैं, तब ऐसे समयमें पञ्जाबमें अन्तिम हिन्दू-स्वाधीन नरेश महाराजा रणजीतसिंहने स्वतन्त्र सिक्ख साम्राज्यकी स्थापना की थी। महाराणा प्रतापसिंह वीर और त्यागी थे, उनमें स्वधर्म और स्वजातिका अभिमान था, परन्तु अकबर जिस प्रकारकी नीतिसे बर्त्तता था, उस प्रकारकी नीति महाराजा रणजीतसिंहमें न थी। अन्तिम हिन्दू-नरेश महाराज रणजीतसिंह भी वीर थे और अपने प्रतिद्वन्द्वी अङ्गरेजोंसे उन्होंने नीतिसे ही काम निकाला था। परन्तु विचारपूर्वक देखा जाय तो शिवाजीमें एक गुण नहीं अनेक गुण थे। जैसे वे अत्यन्त शूर, वीर और

पच्चीसवां परिच्छेद

चरित्र-समीक्षा

"सुन्दरता, गुरुता, प्रभुता भनिभूषन होत है मन्दर जामें।
सज्जनता औ दयालुता दीनता कोमलता झलके परजा में॥
दान कृपानहुको करिबो, करिबो अभै दीनन को बरजामें।
सोहन सोरन टेक बिबेक, इत गुन एक सिवा सरजामें॥"

मुगल सम्राटोंमें अकबर अत्यन्त प्रबल प्रतापी बादशाह हुए थे, जिन्होंने साम-दाम, दण्डभेदसे हिन्दुओंको स्वातन्त्र्य प्रिय वीर जातिको अपने वशमें कर लिया था। जिन राजपूतोंने अकबरके पूर्वजोंका सामना किया था, उनमें भी अनेकों व्यक्तियोंने सम्राट् अकबरकी अधीनता स्वीकार कर ली थी। अकबरके समयमें हिन्दुओंका गौरव लुप्तप्राय हो गया था। मणिहीन सर्प ,पंखहीन गरुड़के समान उस समयसे हिन्दू जाति रसातलको पहुंच रही थी कि ऐसे समयमें महाराणा प्रतापसिंह, महाराज शिवाजी और महाराज रणजीतसिंह क्रमागत तीन स्वतन्त्र हिन्दू राजा हुए थे। इतिहास रसिक पाठकोंसे छिपा हुआ नहीं है कि *महाराणा प्रतापसिंहने* अनेक कष्ट सहे, घासकी रोटियां खायीं, जङ्गल और वनमें राजपाट छोड़कर तपस्वीके समान अपना जीवन व्यतीत किया, परन्तु सम्राट् अकबरके सामने कभी

औरङ्गजेबकी कैदमेंसे शिवाजी युक्तिसे न निकलकर केवल वीरताके भरोसे ही छूटनेकी चेष्टा करते तो उन्हें कदापि सफलता प्राप्त न होती। महाराष्ट्र-स्वराज्य-स्थापनाका जो सङ्कल्प उन्होंने किया था वह अधूरा ही रह जाता। गुरु तेगबहादुर, गुरु गोविन्द सिंह महाराणा राजसिंह, राठौर दुर्गादास, पन्ना-नरेश छत्रसाल सिंह आदिने भी औरङ्गजेबकी शक्ति नष्ट करनेका उद्योग किया था पर शिवाजीके समान किसीको सफलता प्राप्त नहीं हुई। शिवाजीके प्रति इतिहासकारोंने जितना अन्याय किया है इतना शायद किसी महापुरुषके प्रति न किया होगा। कई इतिहास लेखकोंने शिवाजीको धूर्त, छली, कपटी ही नहीं बल्कि "पहाड़ी चूहा" तक लिखकर गालियाँ दी हैं। किन्तु देखा जाय तो शिवाजीके समान संसारमें बहुत कम महापुरुष निकलेंगे। इतिहासमें शिवाजीका बहुत ऊंचा स्थान है। भारतके इतिहासमें ही नहीं अन्य देशोंके इतिहासोंमें भी उनके समान बहुत कम महापुरुष मिलेंगे। उन्होंने अपने अतुल साहस, असाधारण पराक्रम और अलौकिक दृढ़ निश्चयके गुणसे परम पूजनीय जन्मभूमिको मुक्ति प्रदान की थी और ऐसे समयमें मुक्ति प्रदान की कि जब औरङ्गजेबरूपी समुद्रकी प्रचण्ड तरङ्गोंका प्रवाह भयानक गर्जनाके साथ भारतके उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिमको डुबानेको उद्यत हुआ था। शिवाजीने दक्षिणमें अटल गिरिराजके समान खड़े होकर अद्भुत तेजस्विताके साथ इन तरङ्गोंके वेगको रोका था। ई० १७ वीं शताब्दीके अन्तमें शिवाजीके कारण भारतका दक्षिण

साहसी थे, वैसे ही ये नीतिपरायण थे। वे जानते थे कि बिना शूरता केवल कोरी नीति कायरता है और बिना नीतिके केवल शूरता, पशुताके सिवा और कुछ नहीं है। इसलिये जहां वे जैसा अवसर देखते थे वैसा ही काम करते थे। यदि शिवाजी केवल अपनी वीरताके भरोसे ही प्रबल प्रतापी मुगल-सम्राट् औरङ्गजेबसे विरोध ठानते तो उन्हें कदापि सफलता प्राप्त न होती। हिन्दुओंके इतिहासमें अनेक व्यक्ति वीरता और शूरताके उदाहरण स्वरूप मिलेंगे पर नीतिके बहुत कम। इतिहास इसका साक्षी है कि हिन्दुओंकी स्वतन्त्रता हरण करते समय, उनके प्रतिद्वन्द्वियोंको उनकी स्वाधीनताका विशेष मूल्य चुकाना पड़ा था, क्योंकि हिन्दू वीर थे परन्तु कुटिल नीतिके पुतले न थे। इसी कारण वीर होनेपर भी वे अपनी स्वाधीनताकी रक्षा नहीं कर सके। किसीको भी अन्तिम हिन्दू सम्राट् महाराज पृथ्वीराजके वीर होनेमें किसी प्रकारका सन्देह नहीं है परन्तु वे कुटिल नीतिके पुतले न थे। इसका दुःखदायी परिणाम आजतक भारत भोग रहा है। शिवाजीने जब जैसा अवसर देखा वैसा काम किया। जहां वीरताकी जरूरत थी, वहां उन्होंने वीरतापूर्वक कार्य किया और जहां नीतिकी आवश्यकता हुई वहां उन्होंने नीतिसे और जरूरत पड़ी तो कूटनीतिसे भी काम लिया। यदि वे इस प्रकारसे काम न करते तो कदापि उन्हें सफलता प्राप्त न होती, बल्कि कई अवसर ऐसे आये, जहां वे वीरताके भरोसे कार्य करते तो उन्हें अपने जीवनसे ही हाथ धोना पड़ते। उदाहरणतः

बादशाह औरङ्गजेब, शिवाजीको "पहाड़ी चूहा" कहा करते थे और सदैव घृणा करते थे, परन्तु जब शिवाजीकी मृत्युका समाचार उन्हें मिला तब उन्होंने कहा—"शिवाजी एक प्रधान सेनापति थे। जिस समय मैं अपनी सेनाके संग भारतवर्षके पुराने राज्योंको नष्ट करनेकी चेष्टा कर रहा था, उस समय केवल इस वीरने ही अपना नया राज्य स्थापन किया। यह कार्य सिवाय शिवाजीके और किसीसे नहीं हो सकता था। उन्नीस वर्षसे मेरी सेना उनके साथ लड़ती रही। परन्तु उनके राज्यकी किसी प्रकारकी अवनति नहीं हुई।" औरङ्गजेबके इस कथनसे ही पाठक शिवाजीकी शक्तिका अनुमान कर लें।

शिवाजीमें अनेक गुण थे जिनके विषयमें प्रसङ्गवश अनेक स्थानोंमें इस पुस्तकमें उल्लेख किया जा चुका है। शिवाजी राष्ट्र निर्माता थे। इसमें सन्देह नहीं कि गोलकुण्डा और बीजापुरमें मुसलमानी राज्योंकी दुर्बलताके कारण भी उन्हें कुछ सफलता प्राप्त हुई थी परन्तु दक्षिणके मुसलमानी राज्योंकी निर्बलताके अतिरिक्त उन्हें अपने स्वावलम्बनके कारण भी सफलता प्राप्त हुई थी। शासन सुधार, सैन्यसंगठन, युद्ध-सञ्चालन आदिकी सूझ और उपज उनके मस्तिष्ककी थी। महाराज महादाजी सेन्धिया, पञ्जाब-केशरी महाराज रणजीतसिंह आदिने अपने सैन्यसंगठनके लिये फ्रेंच अफसर रखे थे और उनकी सहायतासे अपने सैन्यबलका संगठन किया था, परन्तु शिवाजीने अपनी सेनाके संगठनमें किसीकी सहायता नहीं ली, उन्होंने अपने

प्रदेश वीरताके प्रकाशसे दमक उठा था। भारतके तत्कालीन अद्वितीय बादशाह भी उनकी शक्ति और प्रधानताको रोकनेमें समर्थ नहीं हुए थे।

शिवाजी अपनी जातिके पुराने गौरवका उद्धार करनेवाले थे। बहुतसी शताब्दियोंके अत्याचार और अविचारसे जो जाति परम कष्टके साथ पिस चुकी थी, जिस जातिने स्वाधीनताका विसर्जन करके पराधीनताको ही मुख्य पुरुषार्थ समझ लिया था, शिवाजी धीरे धीरे उसी जातिको उन्नतिके मार्गपर लाय और धीरे धीरे उस जातिके हृदयमें अचिन्तनीय साहस तथा उत्साह भरकर उसमें स्वाधीनताका मंत्र फूंका, मृतप्राय जातिमें संजीवनी शक्तिका सञ्चार कर दिया।

मुगल साम्राज्यकी उन्नतिके समयमें उनकी शक्तिसे एक स्वाधीन हिन्दू-राज्यकी स्थापना हुई, पराधीनताके शोचनीय समयमें—निपीड़नके भयदायक कालमें, हिन्दुओंकी पवित्र भूमिमें और किसी हिन्दू वीरने शिवाजीके समान पराक्रमसे राज्यकी स्थापना नहीं की थी।

परम साहस और अटल शक्तिके कारण शिवाजी जिस कामको करते थे उसीमें सफलता पाते थे, उनकी शक्तिके सामने सब प्रकारसे शिक्षित मुगल-सेनाको भी कई बार भागना पड़ा था। सच्चा वीर वही है जिसकी प्रशंसा उसके वैरी भी करें—कविका कहना ठीक ही है कि,

"साधु सराहैं साधुता जती जोखिता जान।
रहिमन साँचे सूरको बैरी करै बखान॥"

की थी जो जबरदस्ती मुसलमान किये जाते थे। उन्होंने अनेक महाराष्ट्रोंको शुद्धि करके अपनी जातिकी वृद्धि की। यह कहावत प्रचलित है कि कवि बनायेसे नहीं बनते, जन्मसे स्वतः हा होते हैं। यह कहावत नेता और शासकोंके सम्बन्धमें भी चरितार्थ होती है। एक नेता और शासकमें स्वभावतः ही यह शक्ति होती है। जिस नेता और शासकमें यह स्वाभाविक शक्ति नहीं होती है, उसे बहुत कम सफलता प्राप्त होती है। नेतामें जो स्वाभाविक गुण होने चाहिये वे शिवाजीमें थे। जिनके कारण उन्हें उस विकट समयमें सफलता प्राप्त हुई थी। अनेक सङ्कटोंमें पड़नेपर भी अपनी स्वाभाविक बुद्धि और चातुर्य्यके बलसे ही वे आत्मरक्षा करनेमें समर्थ हुए थे।

शिवाजी अपने माता पिताके भी परम भक्त थे। पर मातृ पितृ-भक्तिके आवेशमें अपने कर्त्तव्यसे च्युत नहीं हुए थे। उनके पिता बीजापुरके आदिलशाहके यहां जागीरदार थे। वे चाहते थे कि शिवाजी, आदिलशाहसे युद्ध न ठाने पर उन्होंने अपने पिताकी आज्ञासे बढ़कर अपना कर्त्तव्य समझा और जाति और देशके प्रति कर्त्तव्य पालन करनेमें उन्होंने पिताकी आज्ञाकी परवा नहीं की और अपने इस कर्त्तव्यको इस ढङ्ग और युक्तिसे पालन किया कि अन्तमें उनके पिताको भी उनके अत्युच्च विचार और कर्त्तव्यके प्रति सहानुभूति प्रकट करनी पड़ी। उनके सिद्धान्तोंके सामने उनके पिताको भी झुकना पड़ा और यह मानना पड़ा कि जो कुछ शिवाजी कर

मावले सैनिकोंको स्वराज्य-स्थापनके लिये तैयार किया और उन्हींकी सहायतासे स्वराज्य-स्थापन किया था।

शिवाजी अपने शत्रुओंको हानि पहुंचाते थे, शत्रुओंके स्थानोंपर उन्हें हानि पहुंचानेके लिये ही आक्रमण करते थे; परन्तु जो हार जाते या बन्दी हो जाते, उनके साथ वे अच्छा व्यवहार करते थे। स्त्रियोंके प्रति सदैव उनकी पूज्य बुद्धि रही थी। जब किसी शत्रुकी स्त्री उनके यहाँ कैदमें आ जाती थी तब वे उसको अत्यन्त सम्मानपूर्वक उसके पति अथवा पिताके पास भेज देते थे। बड़ी भारी शक्ति और परम सम्पत्तिके स्वामी होनेपर भी वे कभी शौकीनी नहीं करते थे। वे भोग विलास में नहीं फँसे थे। सदैव वे साधारण वेश और सामान्य भोजन से ही सन्तुष्ट रहते थे।

शिवाजीका निजी (प्राइवेट) चरित्र भी उज्ज्वल था। यद्यपि अपने समयकी बहुविवाह आदिकी बुराइयोंसे वे नहीं बच सके, उन्होंने अपने कई विवाह किये थे। इस विषयमें इतना ही कहा जा सकता है कि वे वर्त्तमान शताब्दीके समाज-सुधारकों मेंसे न थे। उस समय जो रीति प्रचलित था, उसके अनुसार उन्होंने अपनी एक स्त्रीके जीवित कालमें ही कई विवाह किये तो भी वे आत्मसंयमी थे। उनका चरित्र उच्च कोटिका था, अतएव उन्होंने अपने शत्रुओंकी स्त्रियोंको भी माताके समान समझा था और उनका आदर किया था। वर्त्तमान समयके सुधारक न होनेपर भी उन्होंने उन महाराष्ट्रोंकी शुद्धि

यहां दानी और धर्मनिष्ठ प्रसिद्ध था इस कारण शिवाजीने उसे कभी नहीं सताया। सूरतमें एक यहूदी व्यापारी रहता था। बादशाहके पास बेचनेके लिये उसने बहुतसे बहुमूल्य रत्न एकत्र किये थे। इस बातकी खबर शिवाजीको लगी। तीन बार उसे मार डालनेकी धमकी दी गयी पर उसने द्रव्य न दिया, अन्तमें शिवाजीने उसे छोड़ दिया। शिवाजीको लुटेरा और डाकू कहकर आक्षेप करनेवाले न मालूम वर्नियर आदि की कही हुई बातोंपर क्यों नहीं ध्यान देते?

अफजलखांका वध करनेके कारण जो लोग शिवाजीको हत्यारा और घातक कहकर घृणा करते हैं, उनसे हमारा निवेदन है कि इस पुस्तकमें अफजलखांके वधके सम्बन्धमें जो पीछे लिखा जा चुका है, उसको पढ़कर अपनी सम्मति स्थिर करें कि शिवाजीको अफजलखाके वध करनेकी क्यों आवश्यकता हुई। शिवाजीका यह कार्य्य आत्मरक्षा और स्वराज्य-रक्षाके लिये ही था।

अन्तमें पाठकोंको स्मरण रखना चाहिये कि शिवाजी अकेले और एक व्यक्ति न थे, उनके शरीर और मनमें महाराष्ट्रका शरीर और मन लिप्त था। उनकी इच्छा, महाराष्ट्रकी इच्छा थी। उनकी महत्त्वाकांक्षा, महाराष्ट्रकी महत्त्वाकांक्षा थी। उन्होंने सब प्रकारसे महाराष्ट्रकी उन्नति करनेकी चेष्टा की थी। निरन्तर छत्तीस वर्षतक महाराष्ट्र प्रदेशके अतिरिक्त उन्हें कुछ ध्यान ही न रहा था। चारों ओरसे शत्रुओंसे घिरे रहनेपर भी

रहे हैं, वह ठीक कर रहे हैं। अत्याचारसे पीड़ित और अन्याय से सताये हुए, पद-दलित जातिके लिये इससे बढ़कर और कोई उपाय नहीं है।

निरन्तर उद्योग करनेसे शिवाजीको अपने कार्यमें सफलता प्राप्त हुई और अच्छी सफलता प्राप्त हुई। यहांतक कि उनके विरोधियोंतकको उनकी शक्तिका लोहा मानना पड़ा।

जो लोग शिवाजीको डाकू, लुटेरा और हत्यारा आदि कहते हैं वे इतिहासमें सत्यकी हत्या करते हैं। शिवाजी डाकू थे अथवा हत्यारे थे, इस विषयकी मीमांसा इस पुस्तकमें कई बार प्रसङ्गवश की जा चुकी है, अब केवल इतना ही कहना है कि जब वे महाराष्ट्र प्रान्तको स्वतन्त्र करनेके लिये उद्यत हुए, तब उन्हें धनकी आवश्यकता हुई। उस समय सिवा लूट-मारके और कोई साधन धन इकट्ठा करनेका नहीं था। राष्ट्रीय कार्यके लिये यह धन इकट्ठा किया गया था। जब राजा खुशीसे मांग धन देनेको तैयार न होते तब उन्होंने सख्तीसे और जबरदस्तीसे वसूल किया। ऐसी सख्ती और जबरदस्ती क्या "वार लोन" के नामसे इन दिनोंमें नहीं की गयी थी? स्मरण रखना चाहिये, किसी भी अवस्थामें गरीब, बालक, स्त्री, वृद्ध और किसानोंको शिवाजीके राज्यमें नहीं सताया जाता था। बर्नियर नामक एक फ्रेंच यात्री लिखता है कि शिवाजी कहा करते थे कि ये फिरंगी पादरी बहुत सज्जन हैं इसलिये उनको कष्ट न देना चाहिये। बिलेम नामक एक डच व्यापारी सूरतमें था। वह

बड़ा दानी और धर्मनिष्ठ प्रसिद्ध था इस कारण शिवाजीने उसे कभी नहीं सताया। सूरतमें एक यहूदी व्यापारी रहता था। बादशाहके पास बेचनेके लिये उसने बहुतसे बहुमूल्य रत्न एकत्र किये थे। इस बातकी खबर शिवाजीको लगी। तीन बार उसे मार डालनेकी धमकी दी गयी पर उसने द्रव्य न दिया, अन्तमें शिवाजीने उसे छोड़ दिया। शिवाजीको लुटेरा और डाकू कहकर आक्षेप करनेवाले न मालूम बर्नियर आदि की कही हुई बातोंपर क्यों नहीं ध्यान देते?

अफजलखांका वध करनेके कारण जो लोग शिवाजीको हत्यारा और घातक कहकर घृणा करते हैं, उनसे हमारा निवेदन है कि इस पुस्तकमें अफजलखांके वधके सम्बन्धमें जो पीछे लिखा जा चुका है, उसको पढ़कर अपनी सम्मति स्थिर करें कि शिवाजीको अफजलखांके वध करनेकी क्यों आवश्यकता हुई। शिवाजीका यह कार्य्य आत्मरक्षा और स्वराज्य-रक्षाके लिये ही था।

अन्तमें पाठकोंको स्मरण रखना चाहिये कि शिवाजी अकेले और एक व्यक्ति न थे, उनके शरीर और मनमें महाराष्ट्रका शरीर और मन लिप्त था। उनकी इच्छा, महाराष्ट्रकी इच्छा थी। उनकी महत्वाकांक्षा, महाराष्ट्रकी महत्वाकांक्षा थी। इन्होंने सब प्रकारसे महाराष्ट्रकी उन्नति करनेकी चेष्टा की थी। निरन्तर छत्तीस वर्षतक महाराष्ट्र प्रदेशके अतिरिक्त उन्हें कुछ ध्यान ही न रहा था। चारों ओरसे शत्रुओंसे घिरे रहनेपर भी

बन्होंने महाराष्ट्रको स्वाधीन किया। लाल कवि छत्रप्रकाशमें शिवाजीके सम्बन्धमें ठीक लिखते हैं :—

'पेट एक सिवराज निवाही, करै आपन चितकी चाही
आठ पात साही झुक झोरे, सूबनि बाँधि डाड लै छोरे॥

इन पंक्तियोंको समाप्त करते हुए हम महात्मा श्री समर्थ रामदास स्वामीके वाक्य उद्धृत करना चाहते हैं जिससे पाठकों को शिवाजीके चरित्रकी विशेष महत्ता ज्ञात होगी। समर्थ राम दास स्वामीके वाक्य ये हैं :—

शिव राजास आठवावें, जीवित्व तृणा सम मानावें।
इह परलोकी तरावें, कीर्ति रूपें।
शिवराजाचें आठवावें रूप, शिवराजाचा आठवावा साक्षेप।
शिवराजाचा आठवावा प्रताप, भूमण्डली।

इसका भावार्थ यह है कि शिवाजीको याद रखना चाहिए, जीवन तृणवत् मानना चाहिये। इस लोक परलोकमें कीर्ति रूपमें जीवित रहना चाहिये। शिवाजीके रूपका स्मरण रखना चाहिये, उनके महत्वपूर्ण कार्यों का स्मरण रखना चाहिए, इस संसारमें शिवाजीके प्रतापको नहीं भूलना चाहिये। इससे अधिक शिवाजीके सम्बन्धमें पाठकोंसे क्या कहा जा सकता है।

छब्बीसवाँ परिच्छेद
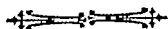
शिवाजी और मुसलमान

"मजहब नहीं सिखाता, आपसमें बैर करना
हिंदोस्ताँके हम हैं हिंदोस्ताँ हमारा।"

जिस प्रकार शिवाजी अपने धर्मके पक्के थे उसी प्रकार वे दूसरोंके धर्म सम्बन्धी विचारोंका आदर करते थे। शिवाजीके चरित्रसे ज्ञात होता है कि उनमें धर्म-सम्बन्धी विद्वेष भाव कदापि नहीं था। न उन्होंने कभी किसीके धर्म सम्बन्धी विश्वास में हस्तक्षेप किया था। इतिहासमें इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता कि उन्होंने कभी किसीके धर्म सम्बन्धी विचारोंका अपमान किया था। उनके समकालीन और प्रबल शत्रु औरङ्गजेबको धर्म सम्बन्धी विचारोंका बड़ा पक्षपात था। औरङ्गजेबने अपने धर्म सम्बन्धी विचारोंसे भिन्न होनेके कारण हिन्दुओंके मन्दिर तोड़े, उनकी देवमूर्त्तियोंको ठुकराया, और भी अनेक तरहसे उन्हें सताया। हिन्दू ही क्यों जो मुसलमान औरङ्गजेबसे धर्म-सम्बन्धी मतभेद रखते थे वे भी सम्राट् औरङ्गजेबकी क्रोधाग्निसे नहीं बच सके थे। शिवाजी चाहते तो वे भी सम्राट् औरङ्गजेबकी भाँति धर्म-सम्बन्धी पक्षपात कर सकते

थे पर नहीं, जिस प्रकार एक विशाल वृक्षपर अनेक पक्षी बसते हैं, उसी प्रकार एक राजाके आश्रित भिन्न भिन्न धर्मावलम्बी अपने अपने धर्म सम्बन्धी विचारकी रक्षा करते हैं। शिवाजी इसी नीतिके अनुसार अपने राज्यमें किसीके धर्म-सम्बन्धी विचारोंमें हस्तक्षेप नहीं करते थे, दूसरोंके धर्म-सम्बन्धी विचारों का भी आदर—सत्कार करते थे। खाफीखांने शिवाजीको "पहाड़ी चूहा" "सग" (कुत्ता) आदि शब्द लिखकर गालियां दी हैं पर वही खाफीखां लिखता है कि "शिवाजीने मसजिदोंको नुकसान नहीं पहुंचाया। उसको कहीं कुरानकी प्रति मिल जाती तो वह उसका सम्मान करके अपने आदमियोंको जो सामने होते उन्हें दे दिया करता था।" आगे खाफीखां लिखता है— "अपने राज्यके लोगोंका सम्मान कायम रखनेके लिये वह सदा प्रयत्न करता रहा। गदर और लूटसे लोगोंको कुछ कष्ट अवश्य होते थे, परन्तु और कोई बुरा काम उसने नहीं किया। जो मुसलमानोंकी स्त्रियां अथवा लड़के उसके हाथ पड़ जाते, उनकी इज्जतमें कभी कुछ कमी न होने देता था। इस बातमें उसके नियम बड़े सख्त होते थे। जो बेकायदे काम करते थे बड़ा कठिन दण्ड पाते थे।" समझे पाठक! यह सम्मति खाफीखांकी है, जिसने दिल खोलकर शिवाजीको गालियां दी हैं।

सन् सन् सौ वर्ष हुए, ग्राण्ट डफ साहबने तीन भागोंमें मराठों का इतिहास लिखा है। उक्त इतिहासमें उन्होंने खाफीखांके

आधारपर शिवाजीको लुटेरा डाकू कपटी विश्वासघाती आदि लिखा है। परन्तु "भूत वही जो सिर चढ़कर बोले"—शिवाजीको कपटी आदि लिखनेपर भी ग्राण्ट डफ साहबकी लेखिनीसे शिवाजीके धर्म-सम्बन्धी विचारोंके सम्बन्धमें निम्नलिखित वाक्य निकले हैं— 'Religious establishments were carefully preserved, and temples for which no provision existed, had some adequate assign ment granted to them; but the Brahmins in charge were obliged to account for the expenditure. Sivajee never requestrated any allowance fixed by the Mahomedan Government for the support of tombs mosques, or places of commemoration in honour of saints'—इसका तात्पर्य्य यह है कि "धर्म सम्बन्धी संस्थाओंके खर्चके लिये जो बन्धेज पहलेसे चले आ रहे थे उनकी शिवाजीके समयमें पूरी रक्षा की गयी थी, मन्दिरोंके खर्चके लिये शिवाजीसे पहले कुछ ऐसे बन्धेज न थे। शिवाजीने मन्दिरोंके खर्चके लिये यथेष्ट प्रबन्ध किया। पर जिन ब्राह्मणोंकी देख-रेखमें मन्दिर थे, उन्हें व्ययका ब्यौरा देना पड़ता था। मुसलमानी राज्यने किसी कब्रस्थान, मसजिद अथवा किसी फकीरके स्मारकस्वरूप स्थानमें जो धन सम्बन्धी सहायता नियत की थी, उसको शिवाजीने जब्त नहीं किया।" ग्राण्ट डफ साहबके ये शब्द हैं, आजकल सभ्यताका बहुत कुछ ढिंढोरा पीटनेपर भी इस प्रकारकी धार्मिक सहनशीलता बहुत

कम देखनेमें आती है। जो लोग यह कहते हैं कि शिवाजी मुसलमानोंके विरोधी थे वे भूलते हैं, शिवाजी मुसलमानोंके विरोधी न थे। इस विषयमें ग्राण्ट डफ और खाफीखाँकी साक्षी लिखी जा चुकी है कि उनके हृदयमें मुसलमानोंकी धार्मिक संस्थाओंके प्रति कितना सम्मान था। यही नहीं पाठकोंने इस पुस्तकमें पीछे पढ़ा होगा कि शिवाजीकी जल सेनाका सेनापति एक मुसलमान था और इसके अतिरिक्त और भी कितने ही मुसलमान उनके यहां उच्च पदोंपर थे। उनकी सेनामें भी अनेक मुसलमान सिपाही थे। फिर कैसे कहा जाय कि शिवाजी मुसलमानोंके विरोधी थे। पर सच पूछिये तो शिवाजीको मुसलमान जातिसे कुछ भी विद्वेष भाव न था। हां वे अत्याचारी शासनके अवश्य विरोधी थे। उनका हृदय अत्याचार और अन्यायको सहन नहीं कर सकता था। यदि उस समय कोई हिन्दू सम्राट् भी अत्याचार और अन्याय करता तो शिवाजी उसका भी प्रतिकार उसी ढङ्गसे करते जिस प्रकारसे उन्होंने औरङ्जेबका किया था। जिन शिवाजीने न्यायकी मर्यादा स्थिर रखनेके समय, अपने प्राणोंसे प्यारे बेटे सम्भाजीको जेलकी सजा दी थी, वे अपने देश और जातिके ऊपर अत्याचार और अन्याय कैसे देख सकते थे? वे अत्याचार और अन्यायका प्रतिकार किये बिना नहीं रह सकते थे। शिवाजीने केवल मुसलमानोंकी धार्मिक संस्थाओं और धार्मिक ग्रन्थोंके प्रति ही सम्मान प्रकट नहीं किया था, किन्तु मुसलमान फकीरोंके प्रति भी उनका बड़ी

जिस प्रकार एक गाड़ीमें चार घोड़े जुते होते हैं और वे आपसमें लड़ते, झगड़ते और एक दूसरेपर लात फेंकते हैं परन्तु उनका सदैव उद्देश्य गाड़ीको नियत स्थानपर पहुंचानेका होता है, ठीक वैसे ही हिन्दू, जैन, मुसलमान, पारसी, यहूदी, ईसाई आदि सबका कर्त्तव्य है कि वे चाहे आपसमें लड़ें, झगड़ें, पर भारतमाताकी गाड़ी स्वराज्यकी मञ्जिलतक पहुंचायें। इस समय हम सबका यही उद्देश्य रहना चाहिये —

जवानो! उठो हिन्द-सन्तान,
चाहती माता है बलिदान।

जिससे हमें स्वराज्य मार्गमें सुगमता प्राप्त हो।

परिशिष्ट

स्त्रियाँ और सन्तान

हिन्दुस्तानमें शिवाजीके समयमें बहु विवाहकी प्रथा प्रचलित थी जो अभीतक दूर नहीं हुई है। शिवाजीके भी कई विवाह हुए थे। इतिहास लेखकोंमें शिवाजीके अन्य बातोंके समान ही उनकी स्त्रियोंके विषयमें भी मतभेद है। किसीने उनकी चार स्त्रियाँ और किसीने उनकी ७ स्त्रियाँ बतायी हैं। रामदास स्वामीके बखरमें उनकी चार पत्नियाँ और दो उपपत्नियाँ लिखी हैं। सभासदने उनकी सात स्त्रियाँ लिखी हैं। श्रीराजवाडेको तञ्जोरमें एक पत्र मिला था जिसके आधार पर उन्होंने शिवाजीकी आठ स्त्रियाँ गिनी हैं। किनकेड साहबने शिवाजीकी निम्नलिखित सात स्त्रियोंके नाम दिये हैं। (१) सईबाई—ये विठोजी मोहिते निम्बालकरकी पुत्री थीं। यह शिवाजीके सामने ही मर गयी थीं। यह सम्भाजीकी माता थीं। (२) पुतलाबाई जो शिवाजीके साथ सती हुई थीं। (३) सोयराबाई—शिर्के खानदानकी बेटी थीं। इनका पुत्र राजाराम था। इनसे एक लड़की भी हुई थी जिसका नाम दीपाबाई था और जिसका विवाह वीसाजीराव नामक एक मराठे-सरदारके साथ हुआ था। (४) सकवारबाई—जिनकी लड़की कमलाबाई थी।

कमळाबाईका विवाह आमोजी पाळकरके साथ हुआ था। (५) लक्ष्मीबाई (६) सगुणाबाई—मामोबाईकी माता थीं। नानीबाईका विवाह गामोजी राजेशिरके माळेकरके साथ हुआ था। (७) गुणवन्तीबाई। इन नामोंमें पुतळाबाई, लक्ष्मी बाई और गुणवन्तीबाईकी कोई सन्तति नहीं लिखी है। ऊपर लिखी हुई शिवाजीकी पुत्रियोंके अतिरिक्त किनकेड साहब ने शिवाजीकी दो और पुत्रियोंका उल्लेख किया है। अम्बिका बाई नामक शिवाजीकी एक पुत्री पहली स्त्रीसे थी, जिसका विवाह हरीजी राजे महाडीकके साथ हुआ था। दूसरी राज कुमारी सखूबाई थी, जिसका विवाह फालटनके महादाजी नामक निम्बालकरके साथ हुआ था। निम्बालकर घरानेसे ही, शिवाजीके पितामह मालोजी भोंसलेकी स्त्री दीपाबाई आयी थीं * जिसके विषयमें इस पुस्तकके बारहवें परिच्छेदमें लिखा जा चुका है कि आदिलशाहने बाजीजी निम्बालकरको जबरदस्ती मुसलमान कर लिया था। शिवाजीकी माता जीजाबाईने बाजीजी निम्बालकरकी शुद्धि करवाके पुन: हिन्दू किया। तब उसके बेटे महादाजी निम्बालकरके साथ अपनी पोती अर्थात् शिवाजीकी पुत्री सखूबाईका विवाह कर दिया था। शिवाजीने ताहू का

* शिवाजीकी स्त्रियों और लड़कियोंका ब्यौरा यहांपर केलुसकरकृत—मराठी भाषाके शिवाजी चरित्रके आधारसे [illegible] लिया गया है। इस पुस्तकके पृष्ठ १९९ के फुटनोटमें लिखा हुआ है

निम्बालकरकी बहिन थीं।

परिशिष्ट

स्त्रियाँ और सन्तान

हिन्दुस्तानमें शिवाजीके समयमें बहु विवाहकी प्रथा प्रचलित थी जो अभीतक दूर नहीं हुई है। शिवाजीके भी कई विवाह हुए थे। इतिहास लेखकोंमें शिवाजीके अन्य कार्योंके समान ही उनकी स्त्रियोंके विषयमें भी मतभेद है। किसीने उनकी चार स्त्रियाँ और किसीने उनकी छः स्त्रियाँ बतायी हैं। रामदास स्वामीके बखरमें उनकी चार पत्नियाँ और दो उपपत्नियाँ लिखी हैं। सभासदने उनकी सात स्त्रियाँ लिखी हैं। श्रीराजवाडेको तञ्जोरमें एक पत्र मिला था जिसके आधार पर उन्होंने शिवाजीकी आठ स्त्रियाँ लिखी हैं। किनकेड साहबने शिवाजीकी निम्नलिखित सात स्त्रियोंके नाम लिखे हैं। (१) सोयाबाई—ये विठोजी मोहिते निम्बालकरकी पुत्री थीं। यह शिवाजीके सामने ही मर गयी थीं। यह सम्भाजीकी माता थीं। (२) पुतलाबाई जो शिवाजीके साथ सती हुई थीं। (३) सोयराबाई—शिर्के घरानेकी बेटी थी। इसका पुत्र राजाराम था। इसके एक लड़की भी हुई थी जिसका नाम दीपाबाई था और जिसका विवाह येसाजीराव नामक एक मराठे सरदारके साथ हुआ था। (४) सकवारबाई—जिसकी लड़की कमलजाबाई थी।

कमलजाबाईका विवाह जानोजी पालकरके साथ हुआ था। (५) लक्ष्मीबाई (६) सगुनाबाई—मानीबाईकी माता थीं। मानीबाईका विवाह गानोजी राजेशिरके मालेकरके साथ हुआ था। (७) गुणवन्तीबाई। इन नामोंमें पुतलाबाई, लक्ष्मी बाई और गुणवन्तीबाईकी कोई सन्तति नहीं लिखी है। ऊपर लिखी हुई शिवाजीकी पुत्रियोंके अतिरिक्त किनकेड साहब ने शिवाजीकी दो और पुत्रियोंका उल्लेख किया है। अम्बिका बाई नामक शिवाजीकी एक पुत्री पहली स्त्रीसे थी, जिसका विवाह हरीजी राजे महाडीकके साथ हुआ था। दूसरी राज कुमारी सखूबाई थी, जिसका विवाह फाल्टनके महादाजी नामक निम्बालकरके साथ हुआ था। निम्बालकर घरानेसे ही, शिवा जीके पितामह मालोजी भौंसलेकी स्त्री दीपाबाई आयी थीं * जिसके विषयमें इस पुस्तकके बारहवें परिच्छेदमें लिखा जा चुका है कि आदिलशाहने बाजीजी निम्बालकरको जबरदस्ती मुसलमान कर लिया था। शिवाजीकी माता जीजाबाईने बाजीजी निम्बालकरकी शुद्धि करवाके पुनः हिन्दू किया। तब उसके बेटे महादाजी निम्बालकरके साथ अपनी पोती अर्थात् शिवाजीकी पुत्री सखूबाईका विवाह कर दिया था। शिवाजीने साळु का

* शिवाजीकी स्त्री और पुत्रियोंका वृत्तान्त बखरपर [illegible]—मराठी भाषाके शिवाजी चरित्रके आधारसे [illegible] किया गया है। इस पुस्तकके पृष्ठ २६६ के फुटनोटमें लिखा हुआ है [illegible]

निम्बालकरकी भगिनी थीं।

पुरन्दरके एक गांवकी बारह सौ पगोडामें पटेलदारी खरीद कर, अपने जामाताको उक्त गांवका पटेल किया था।

श्री सर देसाईने अपनी "मराठी रियासत" नामक पुस्तकमें शिवाजीकी एक लड़कीका नाम राजकुंवरबाई लिखा है। किसी किसीका मत है कि शायद राजकुंवरबाईका प्यारा नाम नानीबाई हो, जिसके विषयमें ऊपर लिखा जा चुका है।